CSGGO-04

मानव भूगोल

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

CSGGO-04 – मानव भूगोल

इकाई–01 मानव भूगोल : अर्थ, विषय क्षेत्र, उपागम एवं विकास। 3–17

इकाई–02 मानव भूगोल के अध्ययन के उपागम–ऐतिहासिक, पारिस्थितिकी, आचारपरक,कल्याणपरक उपागम।18–32

इकाई–03 मानव भूगोल के मूल सिद्धान्त–सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त, क्रियाशीलता का सिद्धान्त, वातावरण मानव अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त। 33–47

इकाई–04 निश्चयवाद, सम्भववाद, नव निश्चयवाद, जर्मन विचारधारा, फ्रांसीसी विचारधारा एवं अमेरिकन विचारधारा। 48–61

इकाई–05 मानव एवं विशिष्ट जीवन पद्धति का विकास। 62–77

इकाई–06 मानव प्रजातियाँ–उद्भव, आस्ट्रेलोपिथेकस, होमोहैबिलिस, पिथेकान्थ्रोपस,होमोइरेक्टस, होमोसेपियन, नियन्डरथल, होमोसेपियन्स, सेपियन। 78–92

इकाई–07 प्रजाति संकल्पना, प्रजातियों का वर्गीकरण, कद, नासिका, आकृति, त्वचावर्ण, कापालिक परिमिति, विश्व की प्रजातियां। 93–116

इकाई–08 विश्व की प्रमुख जनजातियाँ–सेमांग, एस्किमो, बद्दू, बुशमैन, मसाई, किरगीज। 117–137

इकाई–09 जनसंख्या : वितरण प्रतिरूप एवं संसाधन अन्तर्सम्बन्ध महत्व। 138–160

इकाई–10 विश्वजनसंख्या वितरण प्रतिरूप–अधिक जनसंख्या वाले, मध्यमजनसंख्या, जनरिक्त क्षेत्र, जनसंख्या घनत्व। 161–184

इकाई–11 जनसंख्या के असमान वितरण के कारक, प्राकृतिक तत्व, संसाधन आधार, प्रव्रजन–आव्रजन, राजनीतिक, पूर्वी एशिया, द0पू0 एशिया। 185–200

इकाई–12 जनसंख्या वृद्धि के सिद्धान्त, माल्थस, नव माल्थस, ऐतिहासिक, जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त, सामाजिक–सांस्कृतिक सिद्धान्त। 201–212

इकाई–13 मानव अधिवास–अधिवास की परिभाषा, अधिवास के तत्व। 213–235

इकाई–14 अधिवास का वर्गीकरण, ग्राम एवं नगर, बस्तियों के प्रकार, प्रविकीर्ण बस्तियां, सामूहिक अधिवास, भारतीय गाँव। 236–262

इकाई–15 नगरीकरण का विश्व प्रतिरूप, नगरीकरण का प्रभाव, नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के कारण, नगरों का वर्गीकरण। 263–291

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परामर्श समिति

प्रो0 सत्यकाम	कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
विनय कुमार	कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति : (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार	आचार्य, इतिहास, निदेशक, समाजविज्ञान, विद्याशाखा, उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोलसमाजविज्ञानविद्याशाखा उ0 प्र0 रा0 ट0 मुक्तविश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 अभिषेक सिंह	सहा0 आचार्य समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो0 एन.के राना	आचार्य, भूगोलविभाग बी0एच0यू0, वाराणसी
प्रो0 ए0 आर0 सिद्दीकी	आचार्य, भूगोल विभाग इलाहाबाद विश्वविलय प्रयागराज
प्रो0 अरूण कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल विभाग बी0एच0यू0, वाराणसी

लेखक

प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ0 अभिषेक सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
सुनील कुमार विश्वकर्मा	सहायक प्राध्यापक भूगोल स्नातकोत्तर महाविद्यालय पट्टी, प्रतापगढ़

सम्पादन

प्रो0 बी एन सिंह	आचार्य, भूगोल विभाग इलाहाबाद विश्वविलय प्रयागराज

समन्वयक

प्रो0 संजय कुमार सिंह	आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सह -समन्वयक

डॉ0 अभिषेक सिंह	सहायक आचार्य, भूगोल समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रित वर्ष– 2024

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. – 978-81-19530-96-0

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ प्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे।मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट :पाठय साम्रगी में मुद्रित साम्रगी के विचारों एवं आकड़ो। आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रकाशन विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2024।

मुद्रक – **के0 सी0 प्रिटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स, पंचवटी, मथुरा – 281003.**

इकाई–1 मानव भूगोल : अर्थ, विषय–क्षेत्र, उपागम एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मानव भूगोल का अर्थ

1.4 मानव भूगोल का विषय–क्षेत्र

1.4.1 ब्लॉश के अनुसार मानव भूगोल के तथ्य

1.4.2 ब्रून्श के अनुसार मानव भूगोल के तथ्य

1.4.3 डिमांजिया के अनुसार मानव भूगोल के तथ्य

1.4.4 फिंच एवं ट्रिवार्था के अनुसार मानव भूगोल के तथ्य

1.5 मानव भूगोल का विकास

1.5.1 मानव भूगोल का विकास क्रम

1.6 सारांश

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

1.8 बोध प्रश्न

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.10 उपयोगी पुस्तकें

1.0 प्रस्तावना (Preface)

किसी विषय का अध्ययन करने से पूर्व उस विषय की गूढ़ता एवं उद्भव के साथ –साथ उस विषय के अर्थ एवं परिभाषा आदि तथ्यों का अध्ययन करना आवश्यक होता है। मानव भूगोल, भूगोल की दो प्रमुख शाखाओं भौतिक एवं मानव भूगोल में से एक प्रमुख शाखा है, जिसमें मानव एवं उसके सम्बन्ध में समस्त पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि मानव भूगोल सदैव गतिशील पृथ्वी और चंचल मानव के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है। मानव भूगोल की इस इकाई में मानव भूगोल का अर्थ, परिभाषा एवं विषय क्षेत्र के साथ–साथ मानव भूगोल के विभिन्न उपागमों (Approaches) का अध्ययन सरल एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। यह इकाई मानव भूगोल के सम्बन्ध में विद्यार्थियों के दृष्टिकोण को सार्वभौमिक बनाने में सहायक सिद्ध होगी।

1.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप समझ सकेंगे–

i. मानव भूगोल के अर्थ परिभाषा एवं विषय क्षेत्र को समझ सकेंगे।

ii. भूगोल में मानव भूगोल के विभिन्न उपागमों (Approaches) को समझ सकेंगे।

iii. मानव भूगोल की विषयवस्तु के सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों के विचार स्पष्ट कर सकेंगे।

iv. भौतिक भूगोल के सापेक्ष मानव भूगोल के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

v. मानव जीवन, क्रिया कलापों और उसके मानव के पर्यावरण के पारस्परिक अन्तर्सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

vi. मानव भूगोल की प्रमुख शाखाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

vii. मानव केन्द्रित अध्ययन के प्रति विद्यार्थियों को प्रोत्साहित कर सकेंगे।

1.2 मानव भूगोल का अर्थ : (Meaning of Human Geography)

मानव भूगोल को भूगोल की एक प्रमुख शाखा के रूप में देखा जाता है। इस दृष्टिकोण को यदि विशेषीकृत किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि भूगोल की यह शाखा मानव केन्द्रित अध्ययन पर जोर देती है। मानव भूगोल एवं उसके अर्थ को समझने (अध्ययन) से पूर्व भूगोल शब्द का अर्थ समझना श्रेयस्कर होगा। भूगोल अर्थात् Geography शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों Geo एवं Graphy से मिलकर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है **'पृथ्वी'** एवं **'वर्णन करना'।** इस प्रकार ज्योग्राफी (Geography) का सामान्य शाब्दिक अर्थ होता है ''पृथ्वी का वर्णन अथवा व्याख्या करना। इसी क्रम में मानव भूगोल अर्थात् Human Geography का शाब्दिक अर्थ होता है **पृथ्वी पर पाये जाने वाले मानव व उसके क्रियाकलापों का अध्ययन करना।** इस प्रकार कह सकते हैं कि मानव भूगोल में पृथ्वी के साथ–साथ इस पर पाये जाने वाले मानव समुदाय के द्वारा निर्मित किये गये सांस्कृतिक स्वरूप यथा खेत, परिवहन, अधिवास, विभिन्न सांस्कृतिक प्रतिष्ठान आदि के अध्ययन को सम्मिलित किया जाता है।

इस धरातल पर मानव सर्वाधिक क्रियाशील प्राणी माना जाता है तथा भौगोलिक अध्ययन में मानव एवं उसकी क्रियाशीलता का महत्वपूर्ण स्थान है। किसी क्षेत्र के भौगोलिक स्वरूप (भू–विन्यास) की विशिष्टता में मानव एवं मानवकृत सांस्कृतिक तत्वों (खेत, कारखाने, रेल, सड़क, गांव, नगर) का विशेष स्थान होता है। इसी क्रम में कहा जा सकता है कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में मानव समुदाय के जीविकोपर्जन की विधियों, सामाजिक ताना–बाना अथवा सामाजिक व्यवस्था अलग–अलग प्रकार की होती है अथवा एक स्थान से दूसरे पर इसमें पर्याप्त विभिन्नता एवं समानता पायी जाती है। इन्हीं समानताओं एवं विभिन्नताओं का अध्ययन करना मानव भूगोल की विषय वस्तु है। समवेत् रूप में कहा जा सकता है कि प्रकृति नें हमें प्राकृतिक भू–दृश्य (स्थल, जल, वायु, चट्टानें) दिया है जिसमें स्थान–स्थान पर विषमता एवं समानता पायी जाती है। कुछ मानव के अनुकूल होते हैं तो कुछ मानव स्वभाव के प्रतिकूल। इन्हीं प्राकृतिक भू–दृश्यों में मानव अपने अनुसार अपेक्षित व अनापेक्षित परिवर्तन करता है जिसे सांस्कृतिक भू–दृश्य की संज्ञा दी जाती है। इसमें स्थानिक एवं प्रादेशिक स्तर पर विभिन्नता पायी जाती है। इन्हीं भू–दृश्यों के पर्यावरण पर प्रभाव एवं पर्यावरण के इन पर प्रभाव का अध्ययन मानव भूगोल में विशेष रूप से किया जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानव भूगोल, भूगोल की वह शाखा है जिसमें पृथ्वी पर पाये जाने वाले मानव के सांस्कृतिक भू–दृश्यों एवं उनके साथ–साथ सामाजिक स्वरूप एवं संगठन, अर्थव्यवस्था, परिवहन व्यवस्था, व्यापार आदि का अध्ययन किया जाता है।

1.3 मानव भूगोल की परिभाषा (Definition of Human Geography)

विभिन्न क्षेत्रों में मानव जीवन पद्धति में विभिन्नता प्राकृतिक वातावरण (स्थल, जल, वायु) संसाधन (शक्ति) तथा मानव समुदाय के सांस्कृतिक विकास का परिणाम हैं और किसी प्रदेश का सांस्कृतिक विकास क्रम वहाँ के प्राकृतिक वातावरण एवं मानव के मध्य लम्बे समय तक सत्त् क्रियाशील अन्तःक्रिया का प्रतिफल होता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि किसी प्रदेश में रहने वाले मानव समुदाय की जीवन पद्धतियों में होने वाले सत्त् परिवर्तनों की व्याख्या मानव एवं पर्यावरण के मध्य होने वाले पाये जाने वाले अन्तर्सम्बन्धों एवं अन्तःक्रिया के सन्दर्भ में की जाती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानव भूगोल में मानव का अध्ययन प्राकृतिक पर्यावरण के सम्बन्ध में परिवर्ती एवं परिवर्तनकर्ता के रूप में की जाती है। इसी सन्दर्भ में मानव भूगोल की अनेक परिभाषाएं निष्चित की गई हैं। कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं–

फ्रेडरिक रैटजेल (Fridrich Ratzel)–

रेटजेल को मानव भूगोल का जन्मदाता कहा जाता है। रेटजेल ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'एन्थ्रोपोज्योग्राफी' (Anthropogeography) में मानव भूगोल को निम्नलिखित रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया है–'' मानव भूगोल के दृश्य सर्वत्र वातावरण से सम्बन्धित होते हैं, जो स्वयं भौतिक दशाओं का योग होता है।''

कुमारी एलेन चर्चिल सैम्पुल (Sample E.C.)–

कुमारी सैम्पुल मानव भूगोल के जनक रेटजेल की शिष्या थीं। आपने अपनी कृति ''भौगोलिक वातावरण का प्रभाव'' Influences of Geographic Environment में मानव भूगोल को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है–''मानव भूगोल क्रियाशील मानव और अस्थिर पृथ्वी के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है।''

'Human Geogaphy is A study of changing relationship between unresting man And the unstable Earth.'

कुमारी सैम्पुल के अनुसार मानव भूगोल क्रियाशील मानव एवं अस्थिर पृथ्वी के परिवर्तनशील सम्बन्धों की व्याख्या करता है। मनुष्य इस धरातल का सबसे अधिक क्रियाशील प्राणी है जिसने अपने कौशल से धरातल पर अपने अनुकूल परिवर्तन एवं परिमार्जन किया है। उसने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है। धरातल पर मनुष्य की क्रियाएं कभी भी निष्क्रिय नहीं होती हैं। जिस प्रकार मानव का स्वभाव अस्थिर और चंचल है उसी प्रकार पृथ्वी के स्वभाव में भी स्थिरता नहीं है। पृथ्वी में नित नवीन परिवर्तन होते रहते हैं। इन परिवर्तनों को कहीं प्रत्यक्ष तथा कहीं अप्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है। मानव इन परिवर्तनों के साथ सामंजस्य स्थापित कर क्रमशः विकास की और उन्मुख होता है। अस्थिर पृथ्वी और क्रियाशील मानव के परिवर्तन शील सम्बन्ध ही मानव प्रतिक्रियाओं के रूप में सभ्यता एवं संस्कृति कहलाते हैं।

वाइडल डी ला ब्लॉश (Vidal de la Blache)–

''मानव भूगोल पृथ्वी और मानव के पारस्परिक सम्बन्धों का एक नया विचार है, जिसमें पृथ्वी को नियन्त्रित करने वाले भौतिक नियमों तथा इस पर निवास करने वाले जीवों के पारस्परिक सम्बन्धों का अधिक संयुक्त ज्ञान समाविष्ट होता है।''

''Human Geography offers A new conception of the inteÙkelationship between earth And man……a more synthetic knowledge of physical laws governing out earth And of the relation between the living beings which inhabitate it.''[01]

इस प्रकार ब्लॉश महोदय मानव भूगोल को भौगोलिक ज्ञान की एक नयी शाखा के रूप में देखते हैं जिसमें पृथ्वी और मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। ब्लॉश पुनः आगे कहते हैं कि हम उन भौतिक नियमों का सैद्धान्तिक अध्ययन करते हैं, जिनसे पारस्परिक सम्बन्ध का प्रभाव पृथ्वी के धरातल एवं उन पर निवास करने वाले जीवों पर पड़ता है। ब्लॉश अपनी परिभाषा में निम्नलिखित तत्वों पर जोर देते हैं–

अ–मानव भूगोल का जन्म खोज युग के बाद हुआ। भौगोलिक अन्वेषणों के फलस्वरूप मानवीय विचारों के क्रमिक विकास से मानव भूगोल की सुदृढ़ नींव पड़ी। मानव भूगोल की प्रमुख विषय–वस्तु परिवर्तित होते हुए भौगोलिक परिवेश में किस प्रकार मानव वातावरण से समायोजन स्थापित करता है।

ब–जिन प्रदेशों में मानव निवास जब तक नहीं पाया जाता है तब तक उस प्रदेश का भौगोलिक दृष्टिकोण से प्रादेशिक अध्ययन महत्वपूर्ण नहीं है।

स–मानव एवं पृथ्वी के अर्न्सम्बन्धों पर भौतिक नियमों के प्रभाव का अध्ययन मानव भूगोल के अध्ययन की प्रमुख विषय–वस्तु है।

जीन ब्रून्श (Jean Brunhes) :–

''वे सभी मानवीय क्रियाएं जो पृथ्वी पर विशेष प्रकार के दृश्य प्रस्तुत करती हैं, मानव भूगोल की विषयवस्तु है''

''All these phenomena in whichActivity playsA part to fromA very special groupAmong the surface phenomena of our planetAnd the study of this class of geographical facts,we give the name Human Geography.''

जीन ब्रून्श, वाइडल डी ला ब्लॉश के शिष्य एवं उनके अनुयायी थे। इन्होंने मानव भूगोल को अधिक स्पष्ट रूप से परिभाषित किया है। ब्रून्श की परिभाषा में निम्नलिखित तीन दृष्टिकोण प्राप्त होते हैं–

अ–पृथ्वी के धरातल पर घटित होने वाली शक्तियों से भौगोलिक ज्ञान की अभिवृद्धि होती है।

ब–मानव भूगोल में भौतिक एवं सांस्कृतिकभू–दृश्यों का अध्ययन महत्वपूर्ण है।

स–ब्रून्श के मतानुसार कुछ भौतिक शक्तियों एवं मानवीय क्रियाओं के पारस्परिक सामंजस्य के रूप में जो कार्य सम्पादित होते हैं वे पार्थिव एकता को बनाए रखते हैं।

एल्बर्ट डिमांजिया (Albert Demangeon)–

''मानव भूगोल मानव समुदायों और समाजों के भौतिक वातावरण से सम्बन्धों का अध्ययन है।''

''Human Geography is the study of human groupsAnd society in their relationship to the physical environment.''

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों डेविस, हण्टिंगटन, कामिल, मैक्स सौर, ह्वाइट और रेनर, फिंच और ट्रिवार्था आदि ने मानव भूगोल को परिभाषित किया है। उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन से एक बात स्पष्ट होती है कि मानव भूगोल के विषय में विद्वानों के विचारों एवं शब्दों में विभेद होने के बाद भी मानव भूगोल के अर्थ एवं संकल्पना में सबके विचार लगभग एक समान हैं। कह सकते हैं मानव भूगोल मानव का पर्यावरण के साथ अन्तर्सम्बन्ध तथा एक दूसरे की प्रभाविता का तर्कपूर्ण विश्लेषण करने वाला विज्ञान है तथा इस तथ्य पर भी विचार करता है कि मानव पर्यावरण के साथ किस प्रकार अनुकूलन करता है तथा परिवर्तन एवं परिमार्जन करता है।

प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता कामिले वेला (Camille-Vallaux) ने मानव भूगोल को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार ''मानव भूगोल, मानव समुदायों एवं पृथ्वी की सतह के पारस्परिक सम्बन्धों का संश्लेषणात्मक अध्ययन है।'' इस परिभाषा पर मानव भूगोल के जन्मदाता फ्रेडरिक रेटजेल के ग्रन्थ एन्थ्रोपोज्योग्राफी की छाप स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

मानव भूगोल का विषय–क्षेत्र (Scope of Human Geography) –

वर्तमान में अध्ययन की सुविधा के अनुसार विषयों का वर्गीकरण किया जा चुका है प्रत्येक जैविक, भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान का अपना दार्शनिक दृष्टिकोण एवं पद्धतियां तथा विषयक्षेत्र होता है जैसे अर्थशास्त्र में मुख्यरूप से आर्थिक गतिविधियों, वस्तुओं के उत्पादन, उपभोग एवं वितरण आदि का, समाजशास्त्र में सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक समूहों के निर्माण एवं उनमें समयानुरूप परिवर्तन का, भूगर्भ शास्त्र में भू–पृष्ठ की संरचना का अध्ययन किया जाता है या कह सकते हैं कि उपरोक्त इन विषयों के विषयक्षेत्र होते हैं जिनका अध्ययन विषय के अन्तर्गत किया जाता है। उसी प्रकार भूगोल में पृथ्वी एवं उसके गृहीय सम्बन्धों के साथ–साथ मानव समुदाय अथवा मूर्त एवं अमूर्त प्राकृतिक एवं मानव निर्मित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल में भौतिक घटकों (पर्यावरण) से सम्बन्धित मानव समाजों एवं उनके कार्यकलापों के विशेष अध्ययन पर बल दिया जाता है। मानव भूगोल के अध्ययन में निम्नलिखित दो पक्षों को विशेष रूप से सम्मिलित किया जाता है–

- प्राकृतिक वातावरण
- मनुष्य की क्रियाशीलता

मानव भूगोल का विषय–क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है पूर्व में भी हम लोगों ने चर्चा की है कि मानव भूगोल भौतिक पर्यावरण एवं मानव के परस्पर परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर मानवीय क्रियाकलापों द्वारा निर्मित भू–दृश्य भिन्न होते हैं जिनका मूल कारण है प्राकृतिक तत्वों की कठोरता एवं उनके सापेक्ष मानव हस्तक्षेप एवं प्रौद्योगिक सामर्थ्य।

मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों के विचार–

प्रसिद्ध जर्मन विद्वान रेटजेल मानव भूगोल के पिता के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने मानव भूगोल को एक समृद्ध विषय के रूप में स्थापित करने का कार्य किया। रेटजेल की विश्व प्रसिद्ध कृति एन्थ्रोपोज्योग्राफी (Anthropogeography) में मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को बताया गया है जो कि इस विषय का मूल आधार है। समयोपरान्त जो भी विद्वान इस विषय पर अध्ययन किए उन समस्त विद्वानों के मूल विचार कहीं न कहीं रेटजेल की विचारधारा से मेल खाते हैं। विभिन्न फ्रांसीसी एवं अमेरिकन भूगोलवेत्ताओं ने मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र को स्पष्ट करने का प्रयास किया है–

1.4.1 वाइडल डी ला ब्लॉश (Vidal de la Blache)–

ब्लॉश (Vidal de la Blache) को आधुनिक फ्रांसीसी मानव भूगोल का संस्थापक माना जाता है। ब्लॉश

प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता थे, उन्होंने मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र को परिसीमित करने का प्रयास किया। ब्लॉश के अनुसार **"मानव प्रकृति का सक्रिय सदस्य होता है"** मानव अपने क्रियाकलापों द्वारा प्रकृति को प्रभावित करता है। ब्लॉश ने बताया कि मानव भूगोल का प्रमुख विषय मानव जाति एवं समाज की व्याख्या है जो प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप विकसित होता है। इन्होंने मानव भूगोल में तीन प्रमुख तत्वों जनसंख्या, सांस्कृतिक तत्व, एवं यातायात के साधनों में विभक्त किया है। ब्लॉश के मानव भूगोल की विषयवस्तु को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया है:–

मानव भूगोल की विषयवस्तु

जनसंख्या	**सांस्कृतिकघटक**	**आवागमनप्रजाति,**	**जाति एवं नगर**
जनसंकुल	वातावरण अनुकूलन,	पशु गाड़िया	मानव प्रजातियां एवं
जन0 वितरण,	भोजन	सड़क परिवहन	उनके लक्षण
ज0 घनत्व,	वस्त्र पहनावा	रेल परिवहन	प्रजाति समूह
विश्व के प्रमुख जन, अधिवास			विभिन्न प्रकार के नगर
संकुल प्रदेश।			मानव समाज, समूह
			शिक्षा, धर्म, भाषा

इस प्रकार ब्लाश महोदय ने मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र में चार प्रमुख तत्वों को सम्मिलित किया है जिसमें जनसंख्या एवं जनसंख्या सम्बन्धी तत्व, सभ्यता एवं संस्कृति के तत्व, परिवहन के साधन (जिसमें वायु परिवहन सम्मिलित नहीं है क्योंकि उस समय वायु परिवहन का विकास नहीं हुआ था) तथा मानव प्रजातियां, जातियां तथा नगर।

1.4.2 जीन ब्रून्श (J Brunhes) :–

जीन ब्रून्श प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता थे। ब्रून्श ने भी मानव भूगोल के अध्ययन के विषय क्षेत्र को स्पष्ट करने का सराहनीय कार्य किया। ब्रून्श ने मानव भूगोल में मानव समूह एवं समाज से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों को अपने वर्गीकरण में स्थान दिया है–

A –मानव की सभ्यता के विकास के फलस्वरूप विभिन्न प्रकार की आवश्यकताएं :–

i. मानव की जीवन निर्वाहक आवश्यकताएं–

मानव जीवन के विकास के लिए जीवन निर्वाह के लिए कुछ आवश्यकतत्वों (वस्तुओं) की आवश्कता होती है जिसके अभाव में मानव जीवन की कल्पना करना सम्भव नहीं होगा। इसमें जीन ब्रून्श ने भोजन, वस्त्र, आवास, जल, वायु को सम्मिलित किया है। ये वस्तुएं मानव एवं मानव समाज के साथ–साथ राष्ट्र एवं राज्य के समस्त जनों के लिए अति आवश्यक होती है।

ii. भूमि उपयोग एवं अनुप्रयोग सम्बन्धी आवश्यकताएं :–

मानव जीवन की उपरोक्त आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भूमि आधार प्रदान करती है और मानव समुदाय, समाज भूमि का विभिन्न रूपों में उपयोग करता है जिसे मानव की प्राथमिक क्रियाएं भी कहा जाता है। प्राथमिक क्रियाओं के अन्तर्गत मानव द्वारा किए गये कृषि, वनोपयोग, पशुपालन, उद्योग एवं खनन को सम्मिलित किया जाता है। इन्हीं के द्वारा मानव अपने जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं का संग्रह करता है।

iii. मानव के आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाकलाप :–

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है क्योंकि मनुष्य की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति समाज में रहकर ही पूरी होती

है। मानव समाज विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से जुड़ा रहता है। मनुष्य इसी समाज में रहकर विभिन्न आर्थिक क्रियाओं (प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक आदि) एवं सामाजिक क्रियाओं को मूर्तरूप प्रदान करता है। मानव भूगोल में उत्पादन, उपभोग, वितरण एवं विनिमय के साथ सामाजिक संगठन का अध्ययन किया जाता है।

iv. राज्य एवं देश की राजनीतिक दशाएं :–

किसी प्रदेश में व्यवस्था के सुचारू रूप से संचालन के लिए विभिन्न प्रशासनिक संस्थाओं की आवश्यकता होती है एवं समाज एवं राष्ट्र में किसी के अधिकारों का हनन न हो इस हेतु अनेकों राजनीतिक गतिविधियां सम्पन्न होती हैं इसके लिए राजनीतिक संगठन एवं सरकार का गठन होता है, जो समाज को एक सुदृढ़ एवं सुरक्षित पर्यावरण प्रदान करते हैं। इन गतिविधियों का अध्ययन मानव भूगोल की विषयवस्तु है।

B–मानव की उपभोग (आर्थिक विकास) की गतिविधियां :–

मानव समाज प्रकृति के से प्राप्त विभिन्न वस्तुओं संसाधनों का उपभोग करता है और इसके अपेक्षित परिणाम भी सामने आते हैं जिनका अध्ययन मानव भूगोल में किया जाता है जैसे–

क–भूमि के अनुत्पादक उपयोग :–

इसके अन्तर्गत भूमि के ऐसे उपयोग को सम्मिलित किया जाता है जिन पर कृषि की तरह बारम्बार उत्पादन न हो सके। इसके अन्तर्गत प्रमुख रूप से दो तत्वों को रखा जाता है। **प्रथम**–विभिन्न प्रकार की अवस्थापनात्मक संस्थाएं, मकान, बस्तियां एवं बस्तियों के प्रकार, नगरों का विकास एवं **द्वितीय** परिवहन सेवाएं जैसे रेल मार्ग, सड़क मार्ग, जल मार्ग। इनका अध्ययन मानव भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।

ख–पौधों एवं पशु जगत पर विजय प्राप्त करना :–

आर्थिक मनुष्य विकास के चरम को प्राप्त करने की स्थिति को प्राप्त कर लिया है। मानव ने जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं हेतु पौधों एवं वनों का अप्रत्याशित गति से शोषण किया है। आर्थिक विकास की होड़ में निरन्तर जैव विविधता में कमी आ रही है। मनुष्य ने कृषि, उद्योग और नगरीकरण के लिए वन सम्पदा का तीव्र गति से दोहन किया है जिससे जैव विविधता में कमी आयी है। ब्रून्श महोदय ने इस प्रकार की व्यवस्था को ''डकैती अर्थव्यवस्था'' (Robber Economy) (जिसे जर्मन भाषा में ''Raub Wrischaft'' कहा जाता है) के नाम से सम्बोधित किया।

1.4.3 डिमांजिया (Demangeon) :–

डिमांजिया प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता थे। इन्होंने मानव भूगोल को प्राकृतिक विज्ञानों की अपेक्षा इतिहास एवं सामाजिक विज्ञान से अधिक सम्बन्धित बताया क्योंकि मानव भूगोल में विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं एवं पूर्व के काल में किये गये मानवीय कार्यकलापों का अध्ययन किया जाता है। इसके साथ–साथ मानव भूगोल ने मानव को प्रकृति का एक सबल प्राणी माना है। डिमांजिया के अनुसार ''**मानव प्रकृति का दास मात्र नहीं है बल्कि मानव पर्यावरण का एक सक्रिय तत्व है। जो कि पर्यावरण के साथ सामंजस्य कर पर्यावरण को परिवर्तित करने की क्षमता रखता है।**'' डिमांजिया ने मानव भूगोल के विषय क्षेत्र को निम्नलिखित चार भागों में विभक्त किया है–

i. विश्व के अनेक प्राकृतिक भागों में मानव जीवन की स्थिति (प्रादेशिक विश्लेषण)

ii. जीविकोपार्जन की विधियां–

इसके अन्तर्गत विभिन्न प्राकृतिक प्रदेशों में पायी जाने वाली मानव की जीविकोपार्जन की विधियों का अध्ययन किया जाता है जैसे कांगो में रहने वाली जनजातियों (पिग्मी) की जीवनशैली अरब क्षेत्र के बद्दू जनजाति से भिन्न पायी जाती हैं जब कि दोनों क्षेत्रों की प्राकृतिक दशाएं लगभग एक समान हैं। ध्यातव्य है, भिन्न प्राकृतिक दशाओं में जीवनशैली का भिन्न होना स्वाभाविक प्रक्रिया है जैसे– भूमध्यरेखीय प्रदेशों में घने जंगलों के मध्य कहीं–कहीं अस्थाई खेत एवं एकांकीझोपड़ियां पायी जाती हैं एवं टुण्ड्रा प्रदेशों में सर्वत्र बिखरे बर्फीले क्षेत्रों में कहीं–कहीं पर हिमशिला से निर्मित आवास (इग्लू) पाये जाते हैं। इस प्रकार मानवीय गतिविधियां भिन्न प्राकृतिक प्रदेशों में भिन्न–भिन्न पायी जाती हैं जिनका अध्ययन मानव भूगोल में किया जाता है।

iii. मानव निवास एवं मानवीय स्थानान्तरण–

इसके अन्तर्गत मानव निवासियों का अध्ययन किया जाता है। मनुष्य के एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रव्रजन

(भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक) का अध्ययन मानव भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।

iv. मानव अधिवास–

मानव अधिवास मानव सभ्यता के संकेतक माने जाते हैं। मानव भूगोल में प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक के अधिवासों के प्रकार तथा प्रतिरूप का अध्ययन मानव भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है।

1.4.4–फिंच एवं ट्रिवार्था (FinchAnd Triwartha)–

फिंच एवं ट्रिवार्था ने अपने अध्ययन में जनसंख्या अध्ययन को विशेष महत्व दिया है। प्रारम्भ में अपनी पुस्तक में इन्होंने मानव भूगोल के अध्ययन क्षेत्र का वर्णन किया है जिसके अन्तर्गत जनसंख्या को सांस्कृतिक तत्वों के रूप सम्मिलित किया था परन्तु बाद में जनसंख्या को स्वतन्त्र चर के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने बताया कि जनसंख्या किसी सभ्यता का आधार होती हैं तथा यह मानव भूगोल के अध्ययन का केन्द्रीय विषय है। मानव समुदाय (जनसंख्या) के द्वारा ही किसी प्रदेश की संस्कृति का निर्माण होता है।

इन विद्वानों ने मानव भूगोल के अध्ययन क्षेत्र को निम्नलिखित वर्गों में रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया है–

i. भौतिक अथवा प्राकृतिक तत्व :–

इसके अन्तर्गत भौतिक स्वरूप यथा जल, वायु, मृदा, वनस्पति, जीव–जन्तु तथा खनिज पदार्थों को सम्मिलित किया जाता है क्योंकि यही वे तत्व हैं जो मानव सभ्यता एवं समाज के निर्माण के लिए आधार प्रस्तुत करते हैं।

ii. जनसंख्या (मानव संसाधन) :–

जनसंख्या मानव भूगोल के अध्ययन की केन्द्रीय विषय–वस्तु हैं क्योंकि मानव भूगोल का अस्तित्व ही जनसंख्या के अध्ययन पर आधारित है। जनसंख्या के अन्तर्गत इसका विश्व वितरण, घनत्व, लिंगानुपात, महिला–पुरूष संख्या, आयु वर्ग, जनसंख्या बसाव का स्वरूप अर्थात् ग्रामीण एवं नगरीय, का अध्ययन किया जाता है।

iii. जीविकोपार्जन की विधियां (सांस्कृतिक तत्व)–

प्रकृति ने मानव को कोरा प्राकृतिक भू–दृश्य प्रदान किया था लेकिन इस धरा के सबसे अधिक क्रियाशील प्राणी मनुष्य ने प्राकृतिक भू–दृश्य में अपने मनोनुकूल परिमार्जन किया एवं एक नये भू–दृश्य का निर्माण किया जिसे सांस्कृतिक भू–दृश्य कहा जाता है। इसमें मानव जीवन के लगभग सभी पहलू समाहित किये जाते हैं जैसे– मानव अधिवास, आर्थिक क्रियाएं(प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक), कृषि, उद्योग, व्यापार, परिवहन, धर्म, रीति–रिवाज आदि।

1.4.5–एल्सवर्थ हंटिंगटन (E. Huntington)–

प्रख्यात अमेरिकी विद्वान हंटिंगटन ने मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र को स्पष्ट करने का प्रयास किया। हंटिंगटन ने सर्वप्रथम प्राकृतिक वातावरण (स्थिति, उच्चावच, जलाशय, मृदा, खनिज सम्पदा तथा जलवायु) के साथ जीवों एवं वनस्पतियों के पारस्परिक सम्बन्धों के महत्व को स्थापित किया तथा परस्पर प्रभावों का अध्ययन किया। यही तत्व मानवीय क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। हंटिंगटन ने मानव भूगोल की विषय–सामग्री के अन्तर्गत मानव को केन्द्रीय स्थान प्रदान किया है। भौतिक दशाएं प्रत्यक्षतः मानवीय प्रक्रियाओं को प्रभावित करती हैं तथा साथ ही साथ पौधे एवं पशु प्राकृतिक वातावरण द्वारा नियन्त्रित होते हैं जिनका प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से मानवीय क्रियाकलापों पर पड़ता है। हंटिंगटन ने मानव भूगोल की विषय सामग्री को निम्नलिखित मॉडल द्वारा प्रस्तुत किया है–

अ–भौतिक दशाएं :–इसमें मनुष्य के सम्बन्ध में भौतिक तत्वों के अध्ययन को सम्मिलित किया है।

- उच्चावच (भौगोलिक स्वरूप)
- स्थिति एवं विस्तार
- जल
- वायु

- मृदा
- खनिज सम्पदा

ब–जैविक तत्व :–

- प्राकृतिक वनस्पति
- जन्तु एवं प्राणी

स–मानव समुदाय (जनसंख्या)–

घनत्व, लिंगानुपात, साक्षरता, जीवन स्तर, आयु वर्ग।

द–मानवीय क्रियाएं–

- **चरम आवश्यकताएं**–भोजन, वस्त्र, आवास, परिवहन
- **आर्थिक क्रियाएं**–प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक क्रियाएं जैसे कृषि, पशुपालन, खनन, उद्योग, मत्स्ययन, व्यापार।
- **भौतिकतावादी आवश्यकताएं**–खेल, मनोरंजन, स्वास्थ्य, कला।
- **वैश्विक एकीकरण कार्यकलाप**–व्यापक चिंतन, चेतना, धैर्य, साहस, वैश्वीकरण आदि।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बुद्धिजीवी, चतुर एवं सहनशील मानव ने भौतिक तत्वों में परिवर्तन कर स्वयं एवं अपने परिवार, समाज, देश, धर्म, के लिए एक सांस्कृतिक भू–दृश्य का निर्माण किया है। इन्हीं तत्वों का अध्ययन मानव भूगोल के अन्तर्गत किया जाता है और यही मानव भूगोल के विषय–क्षेत्र हैं।

1.4.6–प्रो0 वी0 पी0 राव–

प्रो0वी0पी0राव ने अपनी पुस्तक ''मानव एवं आर्थिक भूगोल'' में मानव को भौतिक परिवेश के जैविक तत्वों के अन्तर्गत सम्मिलित किया है जिसके चतुर्दिक सभी तत्व विद्यमान हैं। आपके अनुसार मानव भूगोल के क्षेत्र निम्नलिखित है–

मानव भूगोल के विषय क्षेत्र

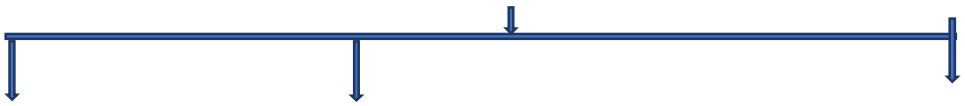

भौतिक परिवेश **विशिष्ट केन्द्रीयतत्व** **मानव प्रतिक्रियाएं**

मानव01–आधार भूत आवश्यकताएं–

भोजन, वस्त्र, आवास, उपकरण, परिवहन

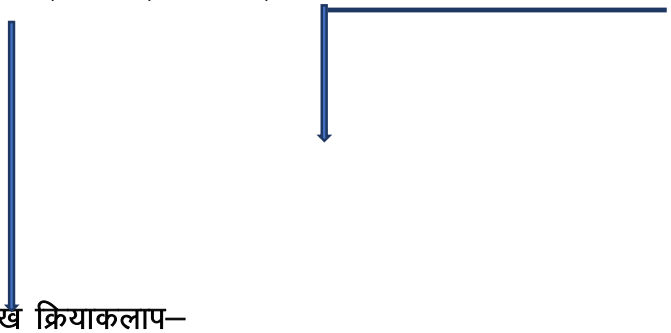

02–प्रमुख क्रियाकलाप–

आखेट, पशुपालन, कृषि, उद्योग, खनन,

अजैविक तत्वजैविक तत्वयातायात

• अवस्थिति • वनस्पति

03–सामाजिक आवश्यकताएं–

• भू–आकृति विज्ञान • पशु जगत एवं सभी प्रकार सरकार, अन्तर्राष्ट्रीय
के जीव–जन्तुसम्बन्ध, धर्म, विज्ञान

• जलस्रोत

04–उच्च आवश्यकताएं–

• जलवायु शिक्षा, मनोरंजन, स्वास्थ्य, कला

• मृदा

05– अन्तरिक्ष सम्बन्धी क्रियाकलाप–

• खनिज सम्पदा संचार, उपग्रह, शटल, खोजी उपग्रह

06– विश्व शान्ति हेतु क्रियाकलाप–

सही चिन्तन, दृष्टि, चेतना, धैर्य, साहस,
नैतिक गुण, वसुधैव कुटुम्बकम की भावना

1.5 मानव भूगोल का विकास (Development of Human Geogrphy)

पूर्व के अध्याय में देखा गया कि मानव भूगोल, भूगोल की एक प्रमुख शाखा है जिसके विकास को विभिन्न चरणों में स्पष्ट किया जाता है। सर्वप्रथम जर्मन विद्वान वार्नहार्ड वारेनियस (1650 ई) ने भूगोल के अध्ययन को दो भागों (सामान्य एवं विशिष्ट) में वर्गीकृत किया। जिसमें सामान्य भूगोल के अन्तर्गत प्राकृतिक भूगोल एवं विशिष्ट भूगोल के अन्तर्गत प्रादेशिक अर्थात् मानव भूगोल के अध्ययन को समाहित किया गया। इस विशिष्ट भूगोल के अन्तर्गत वारेनियस ने किसी स्थान (प्रदेश) में रहने वाले लोगों की दशाओं एवं विशेषताओं के विस्तृत वर्णन को सम्मिलित किया। धीरे–धीरे भूगोल की ये दोनों शाखाएं विकसित होकर निम्नलिखित दो विषयों के रूप में आयीं–

- भौतिक भूगोल
- मानव भूगोल

1.5.1– मानव भूगोल का विकास क्रम :–

किसी भी विषय की विशिष्टता का अनुमान उसकी विषय यात्रा से लगाया जा सकता है। मानव भूगोल एक गतिशील विषय है। मानव भूगोल के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए आवश्यक रूप इस विषय के विकास क्रम को समझना होगा। हालॉकि मानव भूगोल का वर्तमान स्वरूप जो कि काफी विकसित अवस्था को प्राप्त कर चुका है का अधिकतम विकास बीसवीं शताब्दी में हुआ। इस दौरान मानव भूगोल के विकास में संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि पर अधिक जोर दिया गया। मानव भूगोल का विकास अनेक चरणों से होकर गुजरा है। मानव भूगोल के विकास क्रम विभिन्न भागों में वर्गीकृत कर इसका अध्ययन किया जाता है–

प्राचीन काल में मानव भूगोल–

मानव सभ्यता के विकास के प्रारम्भिक काल में विभिन्न देशों भारत, चीन, मिश्र, यूनान के लोग प्राकृतिक शक्तियों की सत्ता को स्वीकार करने लगे थे। विभिन्न प्राकृतिक तत्वों यथा जल, वायु, सूर्य, वर्षा, अग्नि, पृथ्वी आदि को देवता मानकर उसकी पूजा आराधना करने लगे थे। भारत में वैदिक साहित्य में विभिन्न प्राकृतिक तत्वों, नक्षत्रों, सौरमण्डल, ग्रहों, वायु आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। पृथ्वी, वायुमण्डल, वनस्पति जगत आदि के मानव के सापेक्ष सम्बन्धों को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है। ग्रहों एवं नक्षत्रों के विषय में यूनानी विद्वानों के अनुभव विशेष रहे हैं। कहा जाता है– यूनानी प्रदेश के कट–फटे समुद्री तट, स्वच्छ नीला आकाश, शान्त और स्पष्ट रात्रि यूनान में ज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया जिसके कारण यूनान में भौगोलिक ज्ञान का

विकास अपने चरम को प्राप्त कर सका। भारतीय वैदिक ग्रन्थों ऋग्वेद, सामवेद एवं यजुर्वेद, उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, बाल्मीकि रामायण, महाभारत, पुराणों आदि में प्राकृतिक एवं मानवीय घटनाक्रमों के सन्दर्भ में अनेकानेक उदाहरण देखे जा सकते हैं। प्राचीन काल में मानव भूगोल के विकास की निम्नलिखित तीन विशेषताएं रहीं–

अ– विभिन्न खोजों द्वारा पृथ्वी के विभिन्न भू–भागों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया गया।

ब– विश्व के खोजे गये स्थानों के मानचित्रण किए गये तथा सम्बन्धित आरेख तैयार किए गये।

स– उपलब्ध तथ्यों के आधार पर भविष्यवाणी की जाती थी।

उपर्लिखित विशेषताओं में प्रथम दो विशेषताएं विशेष रूप से मध्य–पूर्वी एशिया के सन्दर्भ में समीचीन हैं जबकि तीसरी विशेषता यूनान से।

हालॉकि मानव भूगोल भौगोलिक ज्ञान की नवीन शाखा के रूप में अभिहीत की जाती है किन्तु आज से ही नहीं अपितु चिरसम्मत काल अर्थात् प्राचीन काल से ही इस विषय ने विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया है। इस विषय को बृहत्तम रूप देने का कार्य 17 वीं से 18 वीं शताब्दी में हुआ लेकिन प्राचीन काल से ही विभिन्न ग्रीक विद्वानों ने भूगोल की मानव केन्द्रित विचार धारा को पोषित किया है। विभिन्न यूनानी एवं रोमन विद्वान प्लेटो, अरस्तू, थेल्स, अनैक्जीमेण्डर, थेल्स, स्ट्रैबो जैसे प्रसिद्ध दार्शनिकों की रचनाओं में मानव भूगोल की विषयवस्तु का अध्ययन देखने को मिलता है यथा–

प्लेटो ने मानवीय क्रियाकलापों वातावरण (भौतिक घटकों) के प्रभाव को स्वीकार किया।

अनैक्जीमेण्डर एवं थेल्स ने पृथ्वी के जलवायु एवं वनस्पति तथा मानव समाज पर विचार किया एवं अपनी रचनाओं में स्थान दिया।

अरस्तू नियतिवाद के समर्थक थे। उन्होंने मानव के आचार विचार एवं शारीरिक विशेषताओं पर पर्यावरण के तत्वों के प्रभाव को स्वीकार किया। अरस्तू के अनुसार ठण्डे प्रदेश के निवासी बहादुर किन्तु कम विचारवान एवं रचनात्मकता में कमजोर होते हैं।

हेरोडोट्स ने इस बात पर जोर दिया था कि किसी राष्ट्र या लोगों की जीवनशैली को समझने के लिए घटना तथा वातावरण के परस्पर सम्बन्धों पर ध्यान देना आवश्यक है।

स्ट्रैबो ने रोमन साम्राज्य के उत्थान एवं विस्तार के कारणों में इटली के भौगोलिक वातावरण, भू–स्वरूप, जलवायु एवं सामुद्रिक स्थिति को माना है। स्ट्रैबो ने अधिवासित प्रदेशों के लिए '**ओकुमेन**' (Oikoumene) शब्द का प्रयोग किया जिसे बाद में 'इकुमेन' (Ecumene) कहा जाता है। रोमन साम्रज्य के पतन के पश्चात भूगोल के विकास में **'अन्धकार युग'** (DarkAge of Geography) का सूत्रपात हुआ। यह काल 350 ई0 से 1200 ई0 तक रहा। इस काल में धर्मसत्तावादी विचारधारा चरम पर आ गई। इस युग में इसाई धर्म के बढ़ते प्रभाव के कारण बाइबिल के विचार भूगोल पर छा गये, और पृथ्वी की आकृति को गोल के बजाय तस्तरीनुमा माना जाने लगा।

सोलहवीं सदी के प्रसिद्ध विद्वान **जीन बोदीन** (Jean Bodin) ने अक्षांश, कटिबन्ध एवं ऊँचाई के प्रभाव का मानव व्यवहार पर अध्ययन किया और बताया कि समशीतोष्ण के निवासी औद्योगिक दृष्टिकोण से सबल एवं बुद्धिमान होते हैं। **सत्रहवीं शताब्दी** में जर्मन भूगोलवेत्ताओं की वैचारिक सत्ता जोर पकड़ने लगी। **क्लूवेरियस** (Cluberius) ने अपने ग्रन्थ **'इन्ट्रोडक्शन टु यूनिवर्सल ज्योग्राफी'** में प्रादेशिक विचारधारा को रखा। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान **वर्नहार्ड वारेनियस** ने एक ग्रन्थ **ज्योग्राफिया जेनेरेलिस** (Geographia Generalis) की रचना की। यह कृति दो भागों में विभाजित थी–

अ– सामान्य भूगोल अर्थात् विश्व भूगोल

ब– विशिष्ट भूगोल अर्थात् क्षेत्र विवरण भूगोल

वारेनियस ने सामन्य भूगोल में भूगोल के गणितीय एवं ब्रह्माण्डीय पहलुओं को सम्मिलित किया जबकि विशिष्ट भूगोल में भौतिक एवं मानवीय पहलुओं को सम्मिलित किया है। **18 वीं से 19 वीं सदी** के बीच मानव भूगोल के क्षेत्र में अपेक्षित प्रगति हुई। इस काल में अनेक भूगोलवेत्ता यथा इमैनुएल काण्ट, रिटर, हम्बोल्ट, फ्रोबेल, आस्कर पेशेल, रिचथोफेन और रेटजेल जैसे विद्वानों ने योगदान दिया। उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चरण में जर्मनी भौगोलिक ज्ञान के साथ–साथ अन्य विषयों का केन्द्र बिन्दु रहा। जहां वैज्ञानिकों, विचारकों तथा लेखकों ने अपने

कार्यो द्वारा ज्ञान का प्रसार किया।

मानव भूगोल के प्रमुख प्रवर्तक

जर्मन भूगोलवेत्ता	**फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता**	**ब्रिटिश भूगोलवेत्ता**	**अमेरिकी भूगोलवेत्ता**
इमैनुएल काण्ट	ब्लॉश	हर्बर्टशन	एलेन चर्चिल सैम्पुल
हम्बोल्ट	जीन ब्रून्श	ब्रायन	ईसा बोमैन
कार्ल रिटर	डिमांजिया	राक्सबी	कार्ल ओ सावर
रैटजेल	ब्लैंचर्ड	फ्लूयर	एल्सवर्थ हण्टिंगटन
रिचथोफेन	दैफोन्ते	ईसाबेला	ग्रिफिथ टेलर
जीन गॉटमैन	डैनियल	फोर्ड	ह्विटलसी
मै सौरे	आर0ई0डिकिन्सन	रिचर्ड होर्टशोर्न	डडले स्टाम्प

जर्मन विचारधारा

सोलहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य मानचित्र कला का विकास अधिक हुआ जिससे भौगोलिक ज्ञान में उल्लेखनीय प्रगति हुई परन्तु इस समय सैद्धान्तिक पक्ष पर जोर नहीं दिया गया। सत्रहवीं–अठारहवीं शताब्दियों में भौतिक विज्ञानों का पर्याप्त विकास हुआ परन्तु मानवीय पक्षों पर कम ध्यान दिया गया। उन्नीसवीं सदी के मध्य तक सम्पूर्ण भूगोल का अध्ययन सामान्य भूगोल के अन्तर्गत किया जाता था। जिसमें भौतिक तत्वों के साथ मानवीय तत्वों को भी सम्मिलित किया जाता था जिसमें भौतिक तत्वों–अवस्थिति, स्थलाकृति, जलवायु, जलाशय वनस्पति, जीव–जन्तु आदि पक्षों पर अधिक बल दिया जाता था तथा इनके मानव जीवन पर प्रभाव का सामान्य अध्ययन किया जाता था, लेकिन वारेनियस द्वारा रचित पुस्तक ने इस विचारधारा में परिवर्तन कर दिया और मानवीय अध्ययन पर जोर दिया जाने लगा।

काण्ट इमैनुएल (Kant Immanuel 1724 to1804AD)

प्रसिद्ध जर्मन विद्वान इमैनुएल काण्ट एक दार्शनिक थे जिन्होंने भूगोल में नियतिवाद (प्रकृतिवाद) की विचारधारा को आरम्भ किया। काण्ट ने मानव भूगोल का विश्लेषण करने पर जोर दिया और बताया कि मानव भूगोल का विश्लेषण ऐतिहासिक दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए। काण्ट के अनुसार 'इतिहास समय का परिचायक है जबकि भूगोल स्थान का' परिचायक । काण्ट ने भौतिक भूगोल को भौगोलिक विभाजन आधार माना तथा भूगोल को निम्नलिखित शाखाओं में विभाजित किया–

अ– भौतिक भूगोल **ब–** गणितीय भूगोल **स–** नैतिक भूगोल

स– राजनैतिक भूगोल **द–** व्यापारिक भूगोल **य–** आध्यात्मिक भगोल

काण्ट ने मानवीय क्रियाकलापों के साथ वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने का प्रयास किया।

अलैक्जैण्डर वॉन हम्बोल्ट (Alexander Von Humbolt 1769 to 1859AD) :–

हम्बोल्ट को 'मानव भूगोल का जन्मदाता' कहा जाता है। हम्बोल्ट एवं रिटर का नाम जर्मन विचारधारा के अग्रज विद्वानों में अभिहीत किया जाता है। इन्होंने सामाजिक समूहों तथा उनके पर्यावरण के साथ पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन पर बल दिया। हम्बोल्ट द्वारा लिखित प्रसिद्ध ग्रन्थ **कॉसमॉस** (COSMOS) में मानव एवं पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। हम्बोल्ट ने पृथ्वी के निर्जीव पदार्थों और जीवधारियों (पशु, वनस्पति, मानव) के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों का स्पष्टतः विष्लेषण किया है। यह विचारधारा **''पार्थिव एकता'' को** प्रदर्शित करती है। हम्बोल्ट ने दक्षिणी अमेरिका की यात्रा के उपरान्त कहा कि–''सारी पृथ्वी पर उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक, समस्त प्रकृति केवल एक आत्मा (One Spirit) प्राप्त है। पत्थरों, पौधों, पशुओं एवं मानवों में भी केवल एक

आत्मा समाहित है।''

''There is one spiritAnimating the whole of nature from Pole to Pole but 'one life' infused into stone, plantAndAnimalsAnd even into men himself.**''**

हम्बोल्ट ने अपनी पुस्तक 'मानव भूगोल के सिद्धान्त' में लिखा कि ''मानव भूगोल पृथ्वी और मानव के मध्य अन्तर्सम्बन्धों पर एक नई संकल्पना प्रस्तुत करती है।''

कार्ल रिटर भी एक जर्मन वैज्ञानिक थे जो कि हम्बोल्ट के समकालीन माने जाते हैं। इन दोनों विद्वानों के विचारों में समानता देखी जाती है। रिटर की दो पुस्तकें अग्रगण्य मानी जाती हैं–

अ– यूरोप : एक भौगोलिक, ऐतिहासिक, एवं सांख्यिकीय सर्वेक्षण, 1840 ई0।

ब– अर्डकुण्डे (Erdkunde – Universal, Historical, And Statistical Survay**) |**

मानव भूगोल में रिटर ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिये हैं। उन्होंने यह माना कि इस सृष्टि की रचना ईश्वर की प्रयोजना का परिणाम है तथा मानव इस प्रकृति की सर्वोत्कृष्ट रचना है जिसके समुचित विकास के लिए प्रकृति अनुकूल दशाएं प्रस्तुत करती हैं। इसीलिए रिटर के विचार ''मानव केन्द्रित'' बनते हैं। रिटर के अनुसार–''**पृथ्वी मनुष्य के लिए और मनुष्य पृथ्वी के लिए बना है।**'' ''ManAnd physical Globe is made for eachother. ''

फ्रैडरिक रैटजेल (Friedrich Ratzel 1844 to1940AD)**:–**

को मानव भूगोल का पिता कहा जाता है, एवं राजनीतिक भूगोल का पिता भी कहा जाता है। रैटजेल की प्रमुख रचना **एन्थ्रोपोज्योग्राफी** (Anthropogeogrphy) तीन खण्डों 1882, 1891, एवं 1892 ई0 में प्रकाशित हुई तथा एक पुस्तक '**वाल्क कुण्डे**' (Walks Kunde) दो खण्डों 1885, 1886 ई में प्रकाशित हुई। रैटजेल ने पृथ्वी पर मानव समुदाय के वितरण एवं एकत्रीकरण, मानव प्रवास पर पर्यावरण का प्रभाव, मानव समाज पर एवं मानव पर प्राकृतिक वातावरण के प्रभाव आदि को अपने अध्ययन का केन्द्र बनाया। रैटजेल ने विभिन्न भौतिक तत्वों यथा धरातलीय स्वरूप, वनस्पति, जलवायु, मृदा आदि के आधार पर प्रदेशों की पहचान कर मानव के साथ उसके अन्तर्सम्बन्धों को निरूपित करने का प्रयास किया। रैटजेल को **निश्चयवाद** (Determinism) का प्रतिपादक माना जाता है। रैटजेल, डार्विन के सिद्धान्त ''**जीवों की उत्पत्ति के सिद्धान्त**'' से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने अपनी पुस्तक **राजनीतिक भूगोल (**Political Geogrphy**)** में राज्य की तुलना एक जीव से की और कहा कि–''जिस प्रकार कोई जीव अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है, उसी प्रकार राज्य को अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना चाहिए। राज्य को या तो सामान्य जीव की भांति विकसित होना चाहिए अथवा उसे समाप्त हो जाना चाहिए।''

रिचथोफेन (Richthofen) ने मानव भूगोल के बदलते स्वरूप पर अपना कार्य किया। रिचथोफेन के मतानुसार, मानव पर्यावरण के तत्वों द्वारा प्रभावित होता है, तथा मानव ने भी पर्यावरण को परिवर्तित एवं परिष्कृत करने का प्रयास करता है और इसमें एक सीमा तक सफल भी हुआ है।

फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता :–

फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं ने मानव भूगोल के क्षेत्र में पर्याप्त कार्य किये। मानव पर्यावरण के सम्बन्ध में '**सम्भववाद**' (Possibilism) की विचारधारा का सूत्रपात फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं द्वारा किया गया। ब्लॉश, ब्रून्श, डिमांजिया, फैब्रे आदि प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता हैं।

वाइडल डी ला ब्लॉश (Vidal de la Blache 1854 to 1918AD)**:–**

फ्रांसीसी भौगोलिक विचारधारा के प्रवर्तक माने जाते हैं। ब्लॉश एक उत्कृष्ट शिक्षक माने जाते हैं। आपने भूगोल की एक शोध पत्रिका ''Annales de Geographie'' का प्रकाशन किया, जिसमें ब्लॉश के मानव सम्बन्धी सभी

निबन्ध प्रकाशित हुए। इन लेखों पर आधारित एक पुस्तक '**मानव भूगोल के सिद्धान्त** '(Principles de Geographic Humaine) ब्लॉश की मृत्यु के पश्चात प्रकाशित हुई। ब्लॉश महोदय को सम्भववादी विचारधारा का प्रवर्तक माना जाता है। ब्लॉश की निम्नलिखित चार मान्यताएं भूगोल को प्राकृतिक विज्ञान एवं मानव विज्ञान में प्रमुख स्थान दिलाती हैं–

अ– मानव तथा भौगोलिक पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्ध समयानुसार परिवर्तित होते रहते हैं। मानव भूगोल इन्हीं परिवर्तनशील सम्बन्धों का विश्लेषण करता है।

ब– भौगोलिक पर्यावरण मानव के समक्ष सम्भावनाएं प्रस्तुत करता है तथा मनुष्य इन सम्भावनाओं का स्वामी होने के नाते इनके चयन हेतु स्वतन्त्र है।

स– मानव वातावरण से व्यक्तिगत रूप से नहीं बल्कि सामूहिक स्तर पर अन्तप्रक्रिया करता है। वस्तुतः वातावरण के परिष्करण में मानव की परम्परागत संस्कृति अर्थात् संचित अनुभव एवं प्रौद्योगिकी का प्रभाव होता है।

द– वातावरण एवं मानव के अन्तर्प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप एक विशिष्ट जीवन पद्धति का निर्माण होता है।

जीन ब्रून्श (Jean Brunhes 1839 to 1930AD) ब्लॉश के शिष्य थे। सन् 1892 में ब्रून्श को भूगोल एवं इतिहास विषयों के साथ उपाधि प्राप्त हुई। इनकी विख्यात पुस्तक '**मानव भूगोल**' (Geographic Humaine) सन् 1910 में प्रकाशित हुई जिसका सन् 1920 में ईषा वोमैन द्वारा अंग्रजी में अनुवाद किया। ब्रून्श ने मानव को भूतल की उपज न मानकर एक सक्रिय कारक माना। ब्रून्श ने मानव भूगोल के निम्नलिखित तीन पर विचार व्यक्त किया–

i. भूमि के अनुत्पादक उपयोग
ii. मानव द्वारा वनस्पति एवं पशु जगत पर विजय
iii. मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का शोषण।

इसके अलावा ब्रून्श ने जनसंख्या वितरण, उत्पादन, उपभोग तथा विनिमय, राज्य एवं राज्यों की सीमा विस्तार, सामाजिक संगठन पर भी कार्य किया। इस प्रकार ब्रून्श के साथ–साथ डिमांजिया ने '**मानव भूगोल की समस्याएं**' नामक पुस्तक की रचना की। इन्होंने फ्रांस के गांवों पर विशेष अध्ययन प्रस्तुत किया। **ब्लैंचार्ड** ने पेरिस में रहकर ब्लॉश से शिक्षा प्राप्त की। ब्लैंचार्ड ने नगरीय भूगोल पर कार्य किया। **ईसा वोमैन** जो कि अमेरिकी भूगोलवेत्ता माने जाते हैं ने फ्रांसीसी विचारधारा का समर्थन किया।

अमेरिका एवं ब्रिटिश विचारधारा :–

अमेरिकी एवं ब्रिटिश भूगोलवेत्ताओं ने मानव भूगोल के क्षेत्र में विशेष कार्य किया। रैटजेल की शिष्या कुमारी सैम्पुल ने माना कि ''**मानव भूतल की उपज है** '' (Man is the child of Nature) यह उक्ति उन्होंने अपनी पुस्तक ''भौगोलिक वातावरण का प्रभाव'' में कही। सैम्पुल निश्चयवाद की प्रबल समर्थक थीं। कुमारी सैम्पुल का अनुसरण **एल्सवर्थ हण्टिंगटन** नें किया। हण्टिंगटन ने भी मानव पर पर्यावरण के सर्वव्यापी प्रभाव को सिद्ध करने का प्रयास किया। हण्टिंगटन ने 'एशिया की नाड़ी' (Pulse ofAsia), 'सभ्यता एवं जलवायु', (Civilçation And Climate), 'मानव भूगोल के सिद्धान्त' (Principales of Human Geography) नामक पुस्तकों की रचना की।

इस प्रकार **हारलान, पैट्रिक गेड्स, मैकिण्डर (हृदय स्थल सिद्धान्त), हर्बर्टशन** आदि विद्वानों नें मानव भूगोल को आधुनिक रूप देने में महती भूमिका अदा की। वर्तमान में मानव भूगोल अपने विकास के चरम पर है। मानव भूगोल की अनेकों शाखाएं जैसे सांस्कृतिक भूगोल, सामाजिक भूगोल, जनसंख्या भूगोल, आर्थिक भूगोल, नगरीय भूगोल, अधिवास भूगोल आदि इस विषय की महत्ता को सिद्ध कर रही हैं। इस समय मानव भूगोल में अनेक दार्शनिक विचार भी इस विषय की सार्थकता को सिद्ध कर रहे हैं जैसे–मार्क्सवाद, प्रत्यक्षवाद, उग्र सुधारवाद, यथार्थवाद, व्यवहारवाद, मानववाद, नारीवाद, प्रकार्यवाद आदि।

1.6 सारांश (Conclusion)

इस प्रकार स्पष्ट है कि मानव भूगोल, भूगोल विषय की एक सर्वप्रमुख शाखा है जिसके अभाव में भूगोल विषय को पूर्ण नहीं कहा जा सकता है। क्योंकि यदि भूगोल में मात्र भौतिक कारकों का अध्ययन किया जाये तो यह यथोचित नहीं है क्योंकि इस संसार की सभी वस्तुएं वगैर मानव की उपस्थिति के निरर्थक हैं और इनका अध्ययन करने वाला कारक ही मनुष्य है। इस हेतु मानव का अध्ययन अपरिहार्य हो जाता है। मानव भूगोल में मानव जीवन के सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन किया जाता है। ऐसा विभिन्न विद्वानों द्वारा बताएगये मानव भूगोल के विषय क्षेत्र से स्पष्ट है। ब्लॉश, ब्रून्श, डिमांजिया, हण्टिंगटन, वी0पी0 राव आदि विद्वानों ने मानव भूगोल के विषय क्षेत्र को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इसके साथ–साथ उल्लेखनीय है कि आज मानव भूगोल एक ऐसा विषय बन कर उभरा है जो अनेक विषयों को आधार प्रदान कर रहा है। इस विषय का एक लम्बा विकास क्रम है, तथा विभिन्न विद्वानों ने मिलकर इस विषय को पुष्ट करने का सफल प्रयास किया है। मानव भूगोल वर्तमान में भूगोल की एक शाखा ही नहीं बल्कि यह भूगोल का अभिन्न अंग है जिसकी अनुपस्थिति में भूगोल का अस्तित्व अधूरा है। इस इकाई में मानव भूगोल के अर्थ एवं परिभाषा, विषय क्षेत्र एवं विकासक्रम से पता चलता है कि मानव भूगोल किसी विषयवस्तु का निर्माण करती है। यह अनेक सामाजिक विज्ञानों (विषयों) का मार्ग प्रशस्त करने वाला विषय है। इसके अध्ययन से आप लोगों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक सोंच का उत्थान होने वाला है।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

- **एकुमेन (Ecumane) :**–मानव के अधिवासित क्षेत्र को एकुमेन की संज्ञा दी जाती है। **(स्ट्रैबो)**।

1.8 बोध प्रश्न

01–'मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी एवं क्रियाशील मानव के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है।' किसने कहा है ?

(अ) जीन ब्रून्श (ब) रैटजेल

(स) कुमारी सैम्पुल (द) डिमांजिया

02– एन्थ्रोपोज्योग्राफी नामक ग्रन्थ की रचना किसने की ?

(अ) कुमारी सैम्पुल (ब) रैटजेल

(स) हण्टिंगटन (द) ईसा वोमैन

03– मानव भूगोल का जन्मदाता किसे कहा जाता है ?

(अ) रैटजेल (ब) कुमारी सैम्पुल

(स) विडाल डी ल ब्लॉश (द) जीन ब्रून्श

04– 'पार्थिव एकता' के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने वाले विद्वान हैं–

(अ) हम्बोल्ट (ब) लूसियन फैब्रे

(स) हंटिंगटन (द) मैकिण्डर

05– निम्नलिखित में से किस भूगोलवेत्ता का सम्बन्ध फ्रांस से नहीं है–

(अ) ब्लॉश (ब) जीन ब्रून्श

(स) लूसियन फैब्रे (द) हण्टिंगटन

06– 'इतिहास समय का परिचायक है जबकि भूगोल स्थान का'यह कथन किसका है?

(अ) इमैनुएल काण्ट (ब) हम्बोल्ट

(स) कार्ल रिटर (द) वारेनियस

07– ब्लॉश द्वारा प्रस्तुत मानव भूगोल की विषय–सामग्री में जो सम्मिलित नहीं है, वह है–

(अ) जनसंख्या (ब) सांस्कृतिक तत्व

(स) परिवहन (द) उद्योग

उत्तरमाला :–01–स **02–**ब **03–**अ **04–**अ **05–**द **06–**अ **07–**द

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1– 'मानव भूगोल क्रियाशील मानव एवं अस्थिर पृथ्वी के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है।' व्याख्या कीजिए।

2– मानव भूगोल का अर्थ बताते हुए इसके विषय–क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।

3– मानव भूगोल के विकास पर एक लेख लिखिए।

4– ब्रून्श के अनुसार मानव भूगोल के तथ्य समझाइए।

5– मानव भूगोल को परिभाषित करते हुए ब्लॉश के अनुसार इसके विषय क्षेत्र को बताइए।

1.10–उपयोगी पुस्तकें

1– डॉ काशीनाथ सिंह एवं जगदीश सिंह; मानव भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, 234 दाउदपुर गोरखपुर।

2– प्रो0 बी0 एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह; मानव भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, 20 ए यूनिवर्सिटीरोड प्रयागराज 211002। पृष्ठ 25,26,27,28

3– संजय कुमार सिंह, वैकल्पिक भूगोल, क्रॉनिकल पब्लिकेशन्स प्रा0 लिमिटेड ए–27 डी0सेक्टर 16, नोएडा 201301।

4– डॉ चतुर्भुज मामोरिया, डॉ रतन जोशी; साहित्य भवन पब्लिकेशन हॉस्पिटल रोड आगरा 28003।

5– Lebon, J N H;An Introduction to Human Geography.

6– Blache, Vidal De La; Principles of Human Geography,1950, P-3-4.

इकाई–2 मानव भूगोल के अध्ययन के उपागम–ऐतिहासिक, पारिस्थितिकी, आचारपरक, कल्याणपरक उपागम

इकाई की रूपरेखा

2.1– प्रस्तावना

2.2– उद्देश्य

2.3– मानव भूगोल में उपागम

2.4– मानव भूगोल के अध्ययन के प्रमुख उपागम

2.4.1– वस्तुगत उपागम

2.4.2– क्रमबद्ध उपागम

2.4.3– प्रादेशिक उपागम

2.5– मानव भूगोल के अध्ययन के अभिनव उपागम

2.5.1– ऐतिहासिक उपागम

2.5.2– पारिस्थितिकी उपागम

2.5.3– आचारपरक उपागम

2.5.4– कल्याणपरक उपागम

2.6– सारांश

2.7– पारिभाषिक शब्दावली

2.8– बोध प्रश्न

2.9– संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.1–प्रस्तावना

'मानव भूगोल' धरातल पर पाये जाने वाले जन समुदाय (जनसंख्या) के वितरण, मानव प्रजाति, एवं प्रजाति वर्गीकरण के साथ–साथ मनुष्य की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं का विवेचन करता है जो कि मानव समुदाय की पर्यावरण के साथ अन्तःक्रिया का परिणाम होती हैं। इसके साथ–साथ मानव भूगोल में विभिन्न अध्ययन पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। इस इकाई में मानव भूगोल में प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न उपागमों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। किसी विषय के उपागम उस विषय की सारगर्भिता को बढ़ाते हैं। इस इकाई में ऐतिहासिक, पारिस्थितिक, आचारपरक, कल्याणपरक उपागम का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें मानव भूगोल के अध्ययन के विभिन्न उपागमों में मानव एवं भौतिक तत्वों के सम्बन्धों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

2.2–उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई में मानव भूगोल के उपागमों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। मानव भूगोल के इन उपागमों के अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

अ– मानव भूगोल की विषय वस्तु को स्पष्ट करना।

ब– विद्यार्थी विभिन्न उपागमों के अध्ययन से मानव भूगोल की विषय की पकड़ (पहुँच) को समझ सकेंगे।

स– मानव पर्यावरण के सम्बन्धों को विभिन्न उपागमों के माध्यम से स्पष्ट करना।

द– मानव–पर्यावरण सम्बन्ध का ऐतिहासिक एवं प्रादेशिक आचारपरक अध्ययन प्रस्तुत करना।

य– विद्यार्थियों को उपागम क्या है ? से अवगत कराना एवं यह बताना कि विषयगत उपागम किस प्रकार किसी विषय की सारगर्भिता को बढ़ाते हैं।

र– विभिन्न उपागमों के माध्यम से मानव भूगोल के तथ्यों की विवेचना के लिए प्रेरित करना।

2.3– मानव भूगोल में उपागम (Approaches in Geography)

भूगोल में मनुष्य तथा पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन किसी न किसी रूप में केन्द्रीय विषय रहा है। पर्यावरणीय विज्ञान के रूप में मानव एवं पर्यावरण के सन्दर्भ में भूगोल की संकल्पना निरन्तर परिवर्तनशील रही है। मनुष्य अपने विकास के प्रारम्भिक चरण में भौतिक तत्वों का योग मात्र था, कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि मानव पूर्व के काल में भौतिक मानव के रूप में अभिहीत किया जाता था क्योंकि उसकी समस्त आवश्यकताएं (जल, वायु, भोजन, वस्त्र, आवास) सीमित थे और पूर्णतः प्रकृति पर (भौतिक पर्यावरण) पर निर्भर करती थीं। समयोपरान्त भौतिक मानव ने अपना स्वरूप बदलना प्रारम्भ किया और भौतिक मानव, सामाजिक, आर्थिक, प्रौद्योगिक, मानव के रूप में परिणत होता चला गया। मनुष्य ने अपने बुद्धि, कौशल, चातुर्य से भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन कर अपनी आवश्यकतानुरूप मनोनुकूल नवीन पर्यावरण का निर्माण किया जिसे सांस्कृतिक या मानवीय पर्यावरण की संज्ञा दी जाती है। इस समय मनुष्य न सिर्फ पर्यावरण (भौतिक तत्व यथा–जल, वायु, मृदा आदि) से प्रभावित होता है अपितु इस भौतिक पर्यावरण को प्रभावित व परिवर्तित करने की स्थिति में आ गया है।

मानव भूगोल में मानव के सांस्कृतिक पर्यावरण (अधिवास, भोजन, वस्त्र, रहन–सहन, रीति–रिवाज जीवन चर्या आदि) का सम्यक अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल के निर्माण काल (एक विषय के रूप में स्थापित होने का काल) से लेकर बीसवीं सदी के प्रारम्भिक काल तक मानव भूगोल में मानव के सांस्कृतिक पर्यावरण का अध्ययन व्यवहारपरक दृष्टिकोंण से किया जाता रहा है, लेकिन मात्रात्मक क्रांति नें इस व्यवहारपरकता को कहीं न कहीं नकारने का कार्य किया और मानव भूगोल में मात्रात्मक विधियों (नियमों, मॉडलों, सिद्धान्तों) का प्रयोग किया जाने लगा। कहा जा सकता है कि मानव भूगोल जो कभी व्यवहारपरक हुआ करता था वहीं अब इसमें कुछ सिद्धान्तों एवं नियमों के आधार पर मानव का अध्ययन किया जाने लगा है। इस समय मानव भूगोल का अध्ययन विभिन्न उपागमों के माध्यम से किया जाता है।

सामान्य अर्थों में देखा जाये तो उपागम ऐसी विधा है जो किसी विषय की उसके विषयवस्तु सम्बन्ध को रेखांकित करती है और यह बताने का प्रयास करती है कि सम्बन्धित विषय की पहुँच कहाँ तक है ? अर्थात् किसी विषय में किन–किन विषय वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल में विषयवस्तु के स्पष्टीकरण के लिए जिस विधि का प्रयोग किया जाता है, उसे ही **मानव भूगोल के उपागम** की संज्ञा दी जाती है।

2.4–मानव भूगोल के अध्ययन के प्रमुख उपागम (MainApproaches in Human Geography)

वर्तमान में विभिन्न तकनीकों एवं कम्प्यूटर तथा मात्रात्मक विधियों ने प्रत्येक विषय को महत्वपूर्ण बना दिया है। मानव भूगोल में भी इन तत्वों का समावेश कोई नई बात नहीं है। मानव भूगोल में उपरोक्त के साथ विभिन्न उपागमों के अध्ययन से विषय की ग्राह्यता को निरन्तर बढ़ाया जा रहा है। एक बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि मानव भूगोल के उपागम समय–समय पर परिवर्तित होते रहे हैं। वर्तमान में अनेक अत्याधुनिक उपागमों के माध्यम से मानव भूगोल का अध्ययन किया जा रहा है परन्तु इससे पूर्व कुछ परम्परागत उपागमों के विषय में अध्ययन आवश्यक है। 1970 के दशक तक मानव भूगोल में निम्नलिखित तीन उपागमों का वर्चस्व बहुतायत देखने को मिलता है–

1–वस्तुगत उपागम (CommodityApproach)

2–क्रमबद्ध उपागम (SystematicApproach)

3–प्रादेशिक उपागम (RegionalApproach)

2.4.1–वस्तुगत उपागम (CommodityApproach)–

वस्तुगत उपागम समष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। इस सम्बन्ध में एक उक्ति उल्लेखनीय है–

''अलग–अलग भागों के समुच्चय की तुलना में एक सम्पूर्ण समष्टि का महत्व अधिक है।'' अर्थात् किसी

वस्तु (तथ्य) का अध्ययन अलग–अलग करने से अधिक महत्वपूर्ण है, उस वस्तु का सम्पूर्णता में अध्ययन करना। जनसंख्या, अधिवास, कृषि, उद्योग आदि में से किसी एक तथ्य का चयन करके उसका सम्पूर्ण अध्ययन करना इस उपागम का मूल उद्देश्य है, जैसे जनसंख्या के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि इसके सम्पूर्ण तथ्यों घनत्व, लिंगानुपात, वृद्धि, साक्षरता, प्रव्रजन आदि तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। कृषि में किसी घटना को उसके अंशों अथवा भागों के समुच्चय में नहीं बल्कि उसकी सम्पूर्णता में आकना चाहिए। कृषि में विभिन्न प्रकार की उपजें गन्ना, गेंहूँ, चाय, जौ, बाजरा, आदि विश्व भर में पैदा की जाती है लेकिन इस उपागम में किसी एक फसल के समग्र विश्लेषण को रखा जाता है। इस सन्दर्भ में एक उदाहरण उल्लेखनीय है– मान लिया गेंहूँ की फसल का अध्ययन वस्तुगत उपागम के अन्तर्गत करना है तो इसके लिए सर्वप्रथम गेंहूँ के लिए आवश्यक पर्यावरणीय दशाओं (उच्चवाच, तापमान, आर्द्रता, मिट्टी, वर्षा आदि) का आंकलन करेंगे त्तपश्चात् उसका वितरण, उत्पादन, उपभोग, एवं व्यापार (स्थानीय, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय) एवं सम्भावनाओं की व्याख्या करेंगे।

यह उपागम मुख्यतः औपनिवेशिक काल में यूरोप में विकसित हुआ। इस अध्ययन के द्वारा यह पता लग सकता है कि किस प्रदेश में जनसंख्या का वितरण कैसा है? इसी उपागम के परिणाम स्वरूप दक्षिण पूर्वी एशिया के घने आबाददेशों से मानव समुदाय का पश्चिमी द्वीप समूह पर स्थानान्तरण किया गया। प्रो0 मजूमदार एवं प्रो0 लेखराज सिंह के अध्ययन इस उपागम की उपादेयता को सिद्ध करते हैं।

2.4.2–क्रमबद्ध उपागम (Sysmatic Approach) :–

मानव भूगोल के क्रमबद्ध उपागम में विभिन्न मानवीय क्रियाकलाप, संगठन, बसाव प्रतिरूप, संस्थाएं, अर्थव्यवस्था, अधिवास आदि का अध्ययन विशिष्टतत्व के रूप में किया जाता है। मानव भूगोल का क्रमबद्ध उपागम मानव भूगोल की विषय वस्तु का क्रमबद्ध अध्ययन प्रस्तुत करता है। यदि देखा जाये तो एक बात स्पष्ट होती है कि मानव भूगोल मानव केन्द्रित विषय है जो विभिन्न प्राकृतिक तत्वों (स्थल, जल, वायु) से प्रभावित होता है एवं अपने कार्यकलापों से इन तत्वों को प्रभावित भी करता है। मानव भूगोल का क्रमबद्ध उपागम मुख्यरूप से मानव एवं उसकी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन प्रमुख रूप से करता है। मानव भूगोल को एक विज्ञान के रूप में स्थापित करने में क्रमबद्ध उपागम की महती भूमिका है। क्रमबद्ध उपागम के सहयोग से स्थानिक परिप्रेक्ष्य में अनेक मानवीय प्रक्रियाओं, व्यवस्थाओं, संगठनों, संरचनाओं आदि का सम्यक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

2.4.3–प्रादेशिक उपागम (Regional Approach)–

प्रादेशीकरण का सामान्य अर्थ होता है पृथ्वीतल को विभिन्न प्रकार के या विभिन्न वर्गों के प्रदेशों में बांटकर उनका विश्लेषण, अध्ययन और वर्णन करना है। प्रादेशीकरण में पृथ्वीतल की स्थानिक संरचना (Spatial Structure) का अध्ययन किया जाता है जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित दो विशेषताओं को समाहित किया जाता है–

- प्रतिरूपों का अध्ययन **(Study of Patterns)**
- जटिल अन्तर्सम्बन्धों की संलग्नताएं **(Coplex interrelationship linkages)**

मानव भूगोल में प्रादेशिक उपागम का विशेष महत्व है। मानव भूगोल में प्रादेशिक उपागम की महत्ता को उपेक्षित नहीं किया जा सकता है। इस उपागम से किसी क्षेत्र की विशिष्टता एवं विभिन्न प्रदेशों की विषमता का ज्ञान होता है। मानव भूगोल का मानव के जीविकोपार्जन की विधियों–भोजन, वस्त्र एवं आवास, का एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में पायी जाने वाली विभिन्नताओं एवं समानताओं का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल के प्रादेशिक उपागम से क्षेत्र की आन्तरिक दशाओं जैसे क्षेत्रीय असन्तुलन तथा विभिन्न प्रदेशों के बीच भौगोलिक अन्तर्सम्बन्धों का ज्ञान होता है। पृथ्वी के अध्ययन को प्रादेशीकरण सरल बनाता है।

प्रादेशिक उपागम के अन्तर्गत विश्व के विशिष्ट प्रदेशों के मानव जीवन के विभिन्न तत्वों (जीविकोपार्जन की विधियों, तन्त्रों) में पायी जाने वाली प्रादेशिक विषमताओं का अध्ययन किया जाता है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता **वाइडल डी ला ब्लॉश** ने मानव भूगोल में प्रादेशिक भूगोल को पुष्ट करने का कार्य किया तथा बताया कि मानव अपने अनुसार प्रकृति के साथ समायोजन करता है एवं पर्यावरणीय तत्वों में परिवर्तन एवं परिमार्जन भी करता है। **ब्लॉश** का एक कथन उल्लेखनीय है–**''भूगोल का क्रोड प्रादेशिक भूगोल है।''**

मानव भूगोल में प्रादेशिक उपागम के माध्यम से किसी क्षेत्र विशेष की मानवीय क्रियाकलापों का सम्पूर्णता के साथ विश्लेषण एवं व्याख्या करने की क्षमता का विकास हुआ। विश्व में पाये जाने वाले संसाधनों (चाहे वे मानव

सहित प्राकृतिक संसाधन हों या सांस्कृतिक संसाधन) का प्रादेशीकरण कर अध्ययन किया जाता है। जे0 डी0 डूरण्ड ने इस उपागम की सार्थकता को सिद्ध किया है जिन्होंने 1750 ई के बाद विश्व की जनसंख्या में प्रादेशिक प्रतिरूप का अध्ययन किया। प्रादेशिक उपागम में सम्पूर्ण क्षेत्र को प्रदेशों में विभाजित कर प्रत्येक प्रदेश के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं (प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक) का विश्लेषण एवं संश्लेषण किया जाता है तथा इनके पारस्परिक सम्बन्धों को समझने के साथ–साथ उसका स्पष्टीकरण किया जाता है। प्रसिद्ध विद्वान रिटर की शिक्षा इतिहास में भी हुई थी जिस कारण वह धरातल पर मानव एवं मानव सम्बन्धी समस्त विशेषताओं का अध्ययन इस दृष्टिकोंण से किया जाता था। उसका प्रसिद्ध ग्रन्थ अर्डकुण्डे Erdkunde (The Science of the earth in relation to NatureAnd History of Mankind or gerneral comparative GeographyAs the solid foundation for the study of,And instructionin PhysicalAnd the Historical Science.) प्रादेशिक विधि समझा तथा प्रस्तुत किया।

यूरोप में इस उपागम का प्रयोग अधिकतर हुआ क्योंकि यूरोपियन देशों ने विश्व का विभिन्न आधारों पर वर्गीकरण किया एवं अपने उपनिवेश स्थापित किए तथा एक कारण यह भी था कि यहाँ के विद्वानों नें आर्थिक लाभ के लिए विश्व के प्रत्येक इंच भू–भाग के उपयोग पर बल दिया। भारत के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि भारत में इस उपागम का प्रयोग पर्याप्त स्तर पर किया गया क्योंकि भारत विविधताओं का देश है। देश की सामाजिक आर्थिक समस्याओं को समझने, नीतियों के विनियोग में, क्षेत्र के विकास हेतु, भूमि का कृषि योग्य क्षेत्र में परिवर्तन आदि को प्रादेशिक आधार पर कार्यान्वित किया जाता है। जैसा कि मानव भूगोल की परिभाषा से ही स्पष्ट है कि मानव भूगोल में किसी निश्चित प्रदेश के भौतिक एवं मानवीय प्रदेश के परिवेश में कृषि, उद्योग, जीवन स्तर और जीवन पद्धति से सम्बन्धित विभिन्न घटकों का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल का प्रादेशिक उपागम छोटे–छोटे क्षेत्रों के गहन अध्ययन के द्वारा किसी बड़े प्रदेश का अध्ययन प्राप्त कर लेने की क्षमता रखता है। प्रादेशिक उपागम में निम्नलिखित रूप में किसी विषय या प्रदेश का अध्ययन किया जाता है–

सूक्ष्म प्रदेश (Micro Region)

मध्यम प्रदेश (Meso Region)

बृहत् प्रदेश (Macro Region)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि परम्परागत रूप से मानव भूगोल में उपरोक्त उपागमों के माध्यम से अध्ययन को विभिन्न आयाम दिये जा रहे हैं।

2.5 मानव भूगोल के अध्ययन के अभिनव उपागम– (Recent Approaches in Human Geograph)

जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि मानव भूगोल में कुछ परम्परागत उपागमों (वस्तुपरक उपागम, क्रमबद्ध उपागम, प्रादेशिक उपागम) के द्वारा अध्ययन किया जाता रहा है। इनके साथ–साथ मानव भूगोल में निम्नलिखित कुछ नवीन उपागमों का समावेश किया गया है जिनके प्रयोग से मानव भूगोल के अध्ययन में विशेष परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। मानव भूगोल के अभिनव उपागमों को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है–

1– ऐतिहासिक उपागम (Historical Approach)

2– पारिस्थितिक उपागम (Ecological Approach)

3– आचारपरक उपागम (Behavioural Approach)

4– कल्याणपरक उपागम (Welfare Approach)

2.5.1– ऐतिहासिक उपागम (Historical Approach)

यह भौगोलिक अध्ययन का वह उपागम है जिसके अन्तर्गत किसी भौगोलिक तत्व या तत्वों की व्याख्या समय या काल के सम्बन्ध में की जाती है। उत्पत्ति और विकास से सम्बन्धित होने के कारण इसे **विकासात्मक उपागम** भी कहते हैं। मानव जो कि एक इस धरातल का प्रमुख तत्व है और मानव भूगोल में मानव का अध्ययन किया जाता है। मानव की उत्पत्ति काल से वर्तमान काल तक की यात्रा का अध्ययन जिस उपागम के अन्तर्गत किया जाता है, उसे ऐतिहासिक उपागम कह सकते हैं। भूतल के किसी भी भू–भाग में किसी जाति, प्रजाति, भाषा, धर्म, प्रथा आदि या तत्वों के उद्भव से लेकर वर्तमान स्थिति तक के क्रमिक विकास को प्रदर्शित करने हेतु

ऐतिहासिक उपागम का प्रश्रय लिया जाता है। इस प्रकार चुने गये अध्ययन क्षेत्र में मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष एवं मानव जीवन के विभिन्न तत्वों (मानव के इस धरातल पर आगमन से लेकर वर्तमान अर्थात् आदि मानव से आधुनिक वैज्ञानिक, औद्योगिक एवं आर्थिक मानव तक की यात्रा) के कालिक परिवर्तन अर्थात् इतिहास को प्रकट करना ही इस उपागम का प्रमुख उद्देश्य है। मानव भूगोल में मानव के साथ भौतिक पर्यावरण एवं जैविक पर्यावरण के परस्पर परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। भौतिक पर्यावरण स्थिर नहीं है बल्कि सदैव परिवर्तनशील है। यह विभिन्न स्रोतों यथा भूवैज्ञानिक समयमापनी के अध्ययन से भलीभांति ज्ञात होता है। धरातल का उच्चावचीय स्वरूप विभिन्न प्रकार की अन्तर्जात एवं वहिर्जात (अनाच्छादन) प्रक्रमों द्वारा लगातार बदलता रहा है। अपरदनात्मक कारक सदैव उच्चावचीय स्वरूपों के आकार में परिवर्तन करते रहते हैं। यों तो कहा जाता है कि जलवायु दीर्घकालीन परिवर्तन का परिचायक है लेकिन यह सत्य है कि जलवायु भी समय–समय पर परिवर्तित एवं स्थानांतरित होती रहती है। ऐसा विभिन्न प्रकार के साक्ष्य बताते हैं।

उदाहरण स्वरूप देख सकते हैं, यूरोप जैसे शीत कटिबन्धीय क्षेत्र में कोयले का पाया जाना यह सिद्ध करता है कि कभी न कभी यहाँ पर उष्ण प्रकार की जलवायु रही होगी। जलवायु के साथ–साथ वनस्पति का विकास, मिट्टी का निर्माण, चट्टानों के स्वरूप या यों कह सकते हैं कि विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक, जैविक तत्वों में नैसर्गिक परिवर्तन सदैव संचालित होता रहता है। नैसर्गिक रूप में यह परिवर्तन करोड़ों वर्षों की प्रक्रिया है। चट्टानों का बनना एवं इन चट्टानों के अनाच्छादन से मिट्टी का निर्माण इसी दीर्घावधि का ही परिणाम है। मानव इस सम्पूर्ण धरातल का सबसे अधिक क्रियाशील प्राणी है यह प्रकृति की नैसर्गिक प्रक्रिया की गति को विभिन्न क्रियाकलापों (वनों का कटाव, मिट्टी की उर्वरता में परिवर्तन, जलवायुविक परिवर्तत में भूमिका) द्वारा प्रभावित करता है। प्लीस्टोसीन काल के चार हिमयुगों (**गुंज, मिण्डेल, रिस, तथा वुर्म**) का उल्लेख करना आवश्यक है। ये चार हिमयुग करोड़ों वर्षों के परिवर्तन का परिणाम हैं। किसी क्षेत्र की जलवायु की अपनी विशेषता (तापमान, आर्द्रता, वर्षा) होती है। किसी स्थान पर 2 से 4 डिग्री सेन्टीग्रेड ताप की कमी या वृद्धि होने में लाखों वर्ष का समय लगता है, बशर्ते मानवीय हस्तक्षेप न हो तो। आर्थिक मानव ने अपनी वैकासिक गतिविधियों से सिर्फ जलवायु परिवर्तन की दर को प्रभावित किया है वरन् धरातलीय तापमान (Global Temperature) को बढ़ाने में महत्वपूर्ण कारक बन गया है। वैसे तो प्राकृतिक रूप से प्राप्त चट्टान से 1 फिट मृदा निर्माण में लाखों वर्ष का समय लगता है, वानस्पतिक समुदाय का बीजों के आगमन से लेकर विकास को प्राप्त करते हुए चरम वनस्पति (Climax Vegitation) तक पहुंचने में भी बहुत अधिक समय लगता है लेकिन इसमें मानवीय हस्तक्षेप या प्रत्यक्ष संलग्नता से यह समय अप्रत्याशित रूप से बदल जाता है।

मानव अपने उत्पत्ति काल में जबकि वह जैविक मानव के रूप में था अल्पविकसित अवस्था में था। उसे अपने क्षुधापूर्ति के अतिरिक्त किसी वस्तु का ज्ञान नहीं था। किसी तरह वह प्राकृतिक थपेड़ों को सहन करते हुए आगे बढ़ा। परन्तु पिछले 10 हजार वर्षों में मानव ने पशुओं को पालतू बनाया, कृषि कार्य की शुरूआत की, भोजन बनाने एवं उसके सेवन में पर्याप्त मात्रा में विकास हुआ, समय के साथ–साथ मानव, मानव समुदाय में परिवर्तित होता गया। साथ ही मानव की प्रौद्योगिकी में पुष्टता आती गई। पहले जहां मानव एवं पर्यावरण का सम्बन्ध **दाता एवं पाता** की थी अर्थात् प्रकृति जो देती थी वही मानव प्राप्त करता था और उसी से सन्तोष करता था परन्तु यह स्थिति अब बदल गई है। मनुष्य अब प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने लगा है। मनुष्य अपने भोजन, कृषि, आवास, वस्त्र एवं अपनी निजी आवश्यकताओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अन्धाधुंध दोहन करने लगा। शनैः–शनैः प्रौद्योगिकी विकसित होती गई ऊर्जा की मांग भी बढ़ती गई। और संसाधनों के दोहन को बढावा मिलता गया। वैश्विक रूप पर प्रभाव तब हुआ जबकि 18 वीं सदी में यूरोप में औद्योगिक क्रांति आयी। औद्योगिक क्रांति के परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण विश्व संसाधनों के ऊपर अपनी निर्भरता को बढ़ाता चला गया। विभिन्न प्रकार के वाष्प चालित इंजन एवं मशीनों का विकास किया गया। त्तपश्चात प्राकृतिक तेल से ऊर्जा, फिर प्राकृतिक गैस, जल विद्युत, परमाणु ऊर्जा, और अब तो पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा आदि माध्यमों से ऊर्जा की प्राप्ति होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि ऊर्जा के साधनों में नित नवीन प्रौद्योगिकी विकसित होती गई, इसके

साथ–साथ प्रौद्योगिकी के विकास के परिणाम स्वरूप जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ। आज विभिन्न प्रकार के कम्प्यूटर, सैटेलाइट्स, संचार माध्यम जैव अभियन्त्रण जैसी आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है।

निरन्तर विकास के अध्ययन से पता चलता है कि जो मानव कभी प्रकृति का दास हुआ करता था, आज वही प्रकृति का स्वामी बनने को तैयार बैठा है। कहा जा सकता है कि मानव एवं पर्यावरण के संबन्ध बहुत तीव्र गति से बदल रहे हैं। प्राचीन काल में मानव प्रौद्योगिकी अल्पविकसित थी जबकि वर्तमान प्रौद्योगिकी विकसित और नवीन है। मानव ने प्राचीन काल में प्राप्त प्राकृतिक भूदृश्य में परिवर्तन करके एक नए सांस्कृतिक भूदृश्य का निर्माण किया है। मानव और पर्यावरण के इसी बदलते प्रतिरूप का अध्ययन मानव भूगोल के ऐतिहासिक उपागम के अन्तर्गत किया जाता है। इस प्रकार अन्योन्य भौगोलिक तत्वों के समान ही विविध प्रकार के सामाजिक तत्वों के विकासात्मक पक्षों के विश्लेषण हेतु ऐतिहासिक उपागम एक महत्वपूर्ण विधा है। ऐतिहासिक उपागम के अन्तर्गत सामान्यतः सम्पूर्ण अध्ययन अवधि को कुछ प्रमुख कालिक विभागों में विभाजित करके अध्ययन करने की परम्परा है। जैसे यदि मानव विकास के काल को देखा जाये तो इसका अध्ययन विभिन्न कालों यथा–प्रागैतिहासिक काल, प्राचीन काल, मध्य काल आधुनिक काल, अभिनव काल आदि। इसी प्रकार विकास प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए मानव विकास काल को प्रारम्भिक काल, चिरसम्मत काल, अंधकार काल (अंध युग), खोज एवं यात्राओं का काल, पुनर्जागरण काल, वर्तमान आधुनिक काल आदि कालिक विभागों के अनुसार भी विकासात्मक विष्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा सकता है। यद्यपि इन अवस्थाओं में किसी निष्चित क्रम या अवधि का पाया जाना अनिवार्य नहीं है। वर्तमान में यह उपागम एक नये विषय का रूप ले चुका है जिसे सांस्कृतिक भूगोल के नाम से जाना जाता है।

2.5.2–पारिस्थितिक उपागम (Ecological Approach)–

मानव भूगोल के उपागमों में पारिस्थितिक उपागम सबसे महत्वपूर्ण उपागम है। इसके अन्तर्गत पृथ्वी तल के मानव समूह तथा वहाँ के प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य स्थापित सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इस उपागम के अन्तर्गत पर्यावरण का मानव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। इसके साथ–साथ मानवीय प्रतिक्रियाओं को भी सम्मिलित किया जाता है। मानव भूगोल में इस प्रकार के अध्ययन को मानव पारिस्थितिकी की संज्ञा दी जाती है। जैसा कि पारिस्थितिकी शब्द से ही स्पष्ट होता है कि पारिस्थितिकी वह विज्ञान है जिसमें पारिस्थितिकी तन्त्र का अध्ययन किया जाता है। पारिस्थितिकी तन्त्र (Ecology) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग प्रसिद्ध विद्वान **ए0 जी0 टान्सले** द्वारा किया गया। पारिस्थितिकी तन्त्र को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया जा सकता है– ''किसी स्थान पर जीवित जीवों एवं वनस्पतियों के मध्य सम्बन्ध एवं इन समस्त का भौतिक तत्वों के मध्य अन्तर्सम्बन्ध के तन्त्र को पारिस्थितिकी तन्त्र कहते हैं।'' मानव भूगोल में पारिस्थितिकी तन्त्र के अन्तर्गत किसी प्रदेश के मानव समूह तथा वहाँ के प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य स्थापित अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल के पारिस्थितिकी उपागम के अन्तर्गत मानव के ऊपर पर्यावरण के प्रभाव के अध्ययन को सम्मिलित किया जाता है।

इस प्रकार कह सकते हैं कि मानव के सम्बन्ध में पर्यावरण के अध्ययन को मानव पारिस्थितिकी (Human Ecology) के रूप में अभिहीत किया जाता है। मानव पारिस्थितिकी शब्द का प्रयोग 1960 ई0 में सर्वप्रथम एच0एच0 बैरोज ने किया। मानव भूगोल के अध्ययन का प्रधान बिन्दु मानव व मानव समुदाय है जो कि इस धरातल का सबसे अधिक क्रियाशील प्राणी है। साथ ही पर्यावरण के साथ चलने वाला एक सक्रिय कारक भी है। मानव अपने जन्मकाल से पर्यावरण के विभिन्न घटकों (जैविक, अजैविक, ऊर्जा) से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता रहा है। प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक तत्वों का मानव के प्रत्येक क्रियाकलाप, जीवन शैली, खान–पान, वस्त्र, आवास (आश्रय), व्यवसाय, संस्कृति पर पड़ता है। मनुष्य पर्यावरण के विभिन्न घटकों से प्रभावित तो हुआ लेकिन मानव सभ्यता के विकास के साथ तकनीकी एवं वैज्ञानिक प्रगति करता रहा तथा अपने बुद्धि एवं कौशल से पर्यावरण को प्रभावित भी किया। इसके लिए पहले मनुष्य ने पर्यावरण के साथ समायोजन किया। फिर धीरे–धीरे

अपनी पकड़ मजबूत करते हुए पर्यावरण को प्रभावित करना शुरू किया। विश्व के विभिन्न भागों में अलग–अलग प्रकार की प्राकृतिक दशाएं पायी जाती हैं तथा उसी पर आधारित वहाँ का जन समुदाय भी पाया जाता है।

इस प्रकार अलग–अलग प्रदेश के लिए अलग प्रकार के मानव पारिस्थितिकी का निर्माण होता है। जैसे शीत प्रकार की जलवायु के अनुसार शीत प्रदेश की मानव पारिस्थितिकी तन्त्र का निर्माण होता है, क्योंकि किसी भी प्रदेश के मानव पारिस्थितिकी तन्त्र का निर्माण उस प्रदेश के पर्यावरण एवं वहाँ पर रहने वाले लोगों के पारस्परिक अन्तःक्रिया का परिणाम होता है। मानव भूगोल का पारिस्थितिकी उपागम विश्व के विभिन्न भागों में पायी जाने वाली मानव पारिस्थितिकी तन्त्र का अध्ययन विभिन्न तथ्यों के माध्यम से करता है।

पारिस्थितिकी तन्त्र का आरेखी निरूपण

मानव पारिस्थितिकी तन्त्र

मानव भूगोल के पारिस्थितिकी उपागम में मानव जीवन से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों एवं सभ्यताओं का अध्ययन किया जाता है। विश्व की अनेक संस्कृतियों का यदि सूक्ष्म अवलोकन करें तो एक तथ्य उभरकर सामने आता है कि प्रत्येक संस्कृति अपने भौतिक पर्यावरण के साथ मानव के संघर्ष या प्रतिक्रिया का परिणाम होती है, चाहे वह अनुकूल हो या प्रतिकूल क्योंकि प्रकृति हमें एक कोरा भौतिक वातावरण एवं उसके घटक (जलवायु, मिट्टी) प्रदान करती है। वहाँ पर निवास करने वाला मानव समुदाय अपनी सामर्थ्य एवं तकनीकी के सहारे उस भौतिक पर्यावरण समायोजन करता है, तथा धीरे–धीरे अपने अनुकूल एक मानवकृत वातावरण का निर्माण करता है जिसे सांस्कृतिक वातावरण कहते है लेकिन इस सांस्कृतिक वातावरण पर प्रकृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जैसे यूरोप में निवासित लोगों की संस्कृति विकसित, गर्म प्रदेशों की संस्कृति अल्पविकसित जबकि शीतोष्ण या उपोष्ण प्रदेशों की संस्कृति विकसित अवस्था में पायी जाती है। अरब प्रदेश के लोग चन्द्रमा को अपना आराध्य मानते हैं। जबकि दक्षिण एशिया मुख्यरूप से भारत में सूर्य को आराध्य माना जाता है तथा नदियों के किनारे बसे होने के कारण नदियों को मानव संस्कृति में प्रमुख एवं सम्माननीय दर्जा प्रदान किया जाता है। मानव पर्यावरण के सम्बन्ध में पारिस्थितिकी उपागम के सापेक्ष निम्न पक्ष हैं–

01– प्रकृति प्रदत्त वातावरण के साथ मानवीय कार्य–कलाप का समायोजन जैसे–किसी क्षेत्र में मानव अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर करता है तो प्राकृतिक–जैविक वातावरण के तत्वों मिट्टी, वनस्पति, वर्षा, वायु शुष्कता आदि के साथ एक विशेष प्रकार का समायोजन करता है जिससे सुचारू रूप से कृषि कार्य सम्पन्न कर सके और अपना जीवन–यापन कर सके तथा अपेक्षित लाभ प्राप्त कर सके। इसी प्रकार टुण्ड्रा प्रदेश में विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न प्रकार की जनजातियां पायी जाती हैं। यह समस्त विस्तृत क्षेत्र, कुछ जल भागों के अतिरिक्त एक अखण्ड बर्फ की चादर से ढका रहता है जो शीत काल में शेष भागों को भी ढक लेती है। अपनी सारी शक्ति को लेकर भी प्रकृति मानव को वहाँ रहने से विचलित न कर सकी। मानव यहाँ की विपरीत परिस्थितियों के साथ अनुकूलन कर वहाँ पर निवास कर रहा है।

इस प्रदेश में रहने वाली जनजातियों को एस्किमों, इनुइत आदि नामों से जाना जाता हैं। यहाँ की जनजातियों ने प्रकृति के साथ बेहतर तरीके से अनुकूलन किया। इस प्रदेश में कृषि कार्य सम्भव न हो पाने की दशा में यहां के निवासी आखेट पर आश्रित होकर अपना जीवन यापन कर रहे हैं। इस प्रकार शीत प्रदेशों में रहने वाले लोग अपने वातावरण के साथ अनुकूलन बनाकर एक अलग प्रकार के पारिस्थितिकी तन्त्र की रचना कर अपना जीवन यापन कर रहे हैं। इसी प्रकार प्रकृति प्रदत्त वातावरण चाहे वे शीत प्रदेश हों, समुद्र तटीय प्रदेश हों, अतिशुष्क प्रदेश हों, भूमध्यरेखीय आर्द्र प्रदेश हों, या मध्य अक्षांशीय मानव के लिए विशेष सम्भावनाओं के प्रदेश हों, इन सभी के साथ मानव समुदाय ने अपनी क्षमतानुसार अनुकूलन किया है और अपने लिए एक विशेष प्रकार के

वातावरण का निर्माण कर जिसे सांस्कृतिक वातावरण कहतें हैं का निर्माण किया है।

02– प्राकृतिक–जैविक वातावरण के प्रतिकूल तत्वों को प्रौद्योगिकी द्वारा उपेक्षा– मानव के लिए सभी प्राकृतिक तत्व अनुकूल नहीं हो सकते जैसे–कृषि कार्य के लिए विभिन्न आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता आसान नहीं होती है। इसलिए मानव नवीनतम प्रौद्योगिकी द्वारा उन्हें अनुकूल बनाता है, जैसे–अनुर्वर मिट्टी को उर्वर बनाना, पशुओं के लिए चारा पैदा करना, सिंचाई के लिए कृषि साधनों का विकास करना, वारानी कृषि को कृत्रिम कृषि के रूप में परिवर्तित करना अर्थात् सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भरता को कृत्रिम सिंचाई द्वारा कम करना (जैसे ड्रिप–सिंचाई), कृत्रिम बादलों का निर्माण आदि। इसको निम्नलिखित उदाहरणों द्वारा समझा जा सकता है। टैगा एवं टुण्ड्रा प्रदेशों में वर्ष के अधिकांश दिनों में हिमावरण बना रहता है जहां पर कृषि कार्य करना लगभग असम्भव है क्योंकि कृषि उन भागों में की जाती है, जहां उर्वर मिट्टी पायी जाती हो, यहां ऐसी परिस्थिति सर्वथा अनुपस्थित है। इस विपरीत परिस्थितियों में मानव ने इन प्रदेशों में ग्रीन हाऊस बनाकर फल एवं सब्जी का उत्पादन करना सुनिश्चित किया और अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त किया। इसी प्रकार राजस्थान के अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जहां पर न्यूनतम वर्षा प्राप्त होती है, ऐसे क्षेत्र गुजरात और पंजाब में भी हैं, इन प्रदेशों में भी मनुष्य ने अपने कौशल से कृषि कार्य को सम्भव बनाया। इसके लिए नर्मदा नदी पर बांध का निर्माण कर विभिन्न नहरों एवं इनकी सहायक नहरों द्वारा सिंचाई कर कृषि कार्य को सम्भव कर दिखाया। इसी प्रकार भारत के अलावा विश्व में अनेक दुरूह क्षेत्रों में कृषि कार्य को सम्भव बनाया। इस प्रकार मानव नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर दुरूह प्राकृतिक संसाधनों की उपेक्षा कर अपने अनुकूल वातावरण का निर्माण करता है।

03– प्रतिकूल जैविक वातावरण के विभिन्न तत्वों में व्याप्त नैसर्गिक सन्तुलन पर प्रभाव– यहां पर मानव भूगोल के एक प्रमुख सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी के प्रत्येक तत्व एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है। इस क्रम में कहना आवश्यक है कि मानव नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके अपने अनुकूल वातावरण तो बना लेता है लेकिन कहीं न कहीं इसके प्रतिकूल प्रभाव भी हमारे सामने प्रकट होते हैं। जैसे–मिट्टी की उर्वरता तथा अपेक्षाकृत अधिक उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करते हैं जिससे खाद्यान्नों पर इसका विपरीत प्रभाव तो पड़ता ही है, इसके साथ–साथ इन खेतों से निष्काषित जल का प्रभाव इनके जलग्रहण साधनों यथा नदियों के जल पर पड़ता है। सिंचाई के लिए कृत्रिम वर्षा द्वारा वायुमण्डलीय सन्तुलन को प्रभावित करते हैं जिससे अतिवृष्टि एवं अल्पवृष्टि की समस्या उत्पन्न होती है। विभिन्न सिंचाई के साधनों यथा ट्यूवेल से भूमिगत जल का अधिक दोहन करने से भूमिगत जल स्तर की समस्या का सामना करना पड़ता है और अधिक भूमिगत जल को बाहर निकालने से जलभराव की समस्या उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार प्राकृतिक संसाधनों का विकल्प तलाश करने के प्रयास में मानव पर्यावरण के विभिन्न संसाधनों को हानि पहुँचाता है। इसके पश्चात श्रृंखलाबद्ध प्रभाव द्वारा वातावरण के सभी तत्व जलवायु, मिट्टी, जल, वनस्पति आदि कुप्रभावित हो सकते हैं। इस प्रकार उस क्षेत्र पर मानव जीवन के आधारी संसाधन विनष्ट हो जाने से मनुष्य को उस क्षेत्र को त्यागने अथवा आजीविका के अभाव में भुखमरी का शिकार के अतिरिक्त कोई तीसरा विकल्प नहीं रह जाता है। इस प्रकार की स्थितियां भयावह हो सकती हैं। आज के आधुनिक युग में मानव भौतिकता की और तीव्र गति से बढ़ रहा है इसके लिए वह विभिन्न भौतिक साधनों का प्रयोग वृहत् स्तर पर कर रहा है जैसे–प्रशीतन गृह का निर्माण, एयर कंडीशन (ए0सी0) का प्रयोग, रेफ्रीजेरेटर का प्रयोग, हरित गृहों का निर्माण, परम्परागत ऊर्जा के स्रोतों पर निर्भरता आदि के कारण एक बहुत बड़ी समस्या मानव समाज के समक्ष विकराल रूप धारण किये खड़ी है जिसे वैष्विक तापवृद्धि के नाम से जाना जाता है। आज वैष्विक तापवृद्धि के परिणाम हमारे सामने प्रकट हो रहे हैं। वैष्विक तापवृद्धि के प्रभाव इस पारिस्थितिकी तन्त्र के विभिन्न तत्वों पर पड़ रहे हैं। इसका प्रभाव जीव–जन्तुओं, पक्षियों, वनस्पतियों के साथ–साथ मानव पर विशेष रूप से पड़ रहा है। हिमस्खलन इसके वृहत्तर परिणामों में से एक हैं।

वर्तमान समय में मानव भूगोल के पारिस्थितिकी उपागम के परम्परागत स्वरूप को त्यागकर एक नया रूप देने में पारिस्थितिकी संकल्पना का विशेष योगदान है। इसमें तन्त्र सिद्धान्त में मानव एवं वातावरण के तत्वों को एक सम्मिलित तंत्र का रूप दिया है। प्रसिद्ध विद्वान स्टोडार्ट ने 1967 ई0 में एक लेख "**Organism And Ecosystem As Geographical Model**" प्रकाशित किया जिसमें मानव भूगोल के इस उपागम की सार्थकता पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट किया है कि पारिस्थितिकी तन्त्र में जीव जगत एवं निवास क्षेत्र को सम्मिलित किया जाता है। ऐसे पारिस्थितिकी तन्त्र में जैविक एवं अजैविक एवं निवास क्षेत्र में पारस्परिक अन्तःक्रिया होती है तथा एक सुविकसित पारिस्थितिकी तन्त्र में सभी तत्व लगभग संतुलन की दशा में रहते हैं। इनकी अन्तःक्रिया के परिणामस्वरूप पारिस्थितिकी तन्त्र स्थिर रहता है। स्टोडार्ट के अनुसार पारिस्थितिकी तन्त्र की निम्नलिखित विशेषताएं–

01– यह जैविक समुदाय एवं उनके निवास स्थान को परस्पर एक सूत्र में बांधकर रखती है।

02– यह संरचनात्मक इकाई होती है। इसकी संरचना व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध होती है। इसलिए इसकी संरचनात्मक विशेषताओं का अध्ययन एवं निरूपण किया जा सकता है।

03– पारिस्थितिकी तन्त्र एक कार्यशील इकाई है, अर्थात इसमें विभिन्न क्रियाएं संचालित होती रहती हैं। इसमें सदैव ऊर्जा का प्रवाह होता है। अतः एक बार तन्त्र का परिसीमन कर लेने के बाद इसके संघटक तत्वों की पारस्परिक अन्तःक्रिया का अध्ययन किया जाता है।

04– यह एक सामान्य तन्त्र है जिसमें सामान्य तन्त्र की सभी विशेषताएं पायी जाती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मानव भूगोल के अध्ययन को पूर्णरूप से पारिस्थितिकी उपागम के माध्यम से समझा जा सकता है, क्योंकि पारिस्थितिकी तन्त्र के माध्यम से मानव भूगोल के अध्ययन को पूर्ण रूप से समझा जा सकता है। इस सन्दर्भ में बेरी ने कहा है कि ''Geographers integrating conceptAnd processes concern the world-wide Ecosystem which man is the dominant part.''

इस प्रकार मानव भूगोल का पारिस्थितिकी उपागम में मानव वातावरण की अन्तःक्रिया के विश्लेषण इस दृष्टिकोण से किया जाता है कि किस प्रकार और कितना संसाधनों का उपयोग किया जाये कि चिरसम्मत काल तक मानव अपना जीवन व्यतीत कर सके। यह उपागम सत्त् विकास पर भी बल देता है और इस बात पर जोर देता है कि प्राकृतिक संसाधनों का ऐसा दोहन किया जाये कि भविष्य में आने वाली पीढ़ियाँ उक्त संसाधन के अभाव में अपना जीवन न त्याग दें। बीसवीं सदी में मानव भूगोल में वैज्ञानिकता के प्रवेश के परिणामस्वरूप मानव–पर्यावरण सम्बन्ध को विभिन्न '**वाद**' यथा– नियतिवाद, सम्भववाद, निश्चयवाद एवं प्रसम्भववाद के अन्तर्गत देखा जाने लगा। इस प्रकार मानव भूगोल का पारिस्थितिकी उपागम एक प्रमुख उपागम है। आज के नये शोधों में पारिस्थितिकी तन्त्र में सांस्कृतिक पारिस्थितिकी तन्त्र से सम्बन्धित अध्ययन पर जोर दिया जा रहा है। पारिस्थितिकी तन्त्र उपागम का यह पहलू मानव भूगोल के अध्ययन में पूर्व के काल में भी महत्वपूर्ण था तथा आज इसका महत्व और भी बढता जा रहा है।

2.5.3–आचारपरक उपागम (Behavioural Approach)–

मानव भूगोल के विभिन्न उपागमों में आचारपरक उपागम मानव का पर्यावरण के साथ व्यावहारिक सम्बन्धों पर बल देता है। यह उपागम मानव भूगोल में **इम्मैनुअल काण्ट** के समय से ही प्रभावी रहा। आचारपरक या व्यवहारपरक उपागम उपागम को यदि सूक्ष्मावलोकन किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि यह उपागम मात्रात्मक क्रान्ति के अतिवाद से उत्पन्न परिस्थितियों के प्रत्युत्तर में अस्तित्व में आया, इस बात को समझना आवश्यक है। मात्रात्मक क्रान्ति के काल में **डेविड हार्वे** ने अपनी पुस्तक 'एक्सप्लेनेशन्स इन ज्योग्राफी '(Explanations in Geography-1969) की प्रसिद्धि के बाद 1973 ई0 में यह घोषणा की कि मात्रात्मक क्रान्ति अब अपनी पूर्णता को प्राप्त कर चुकी है तथा हमारा यह चिंतनफलक (पैराडाइम) अब भौगोलिक समस्याओं का उपयुक्त निदान नहीं कर पा रहा है। सत्तर के दशक में भूगोल के नियम खोजने एवं बनाने वाले उपागम यथार्थ से परे नजर आने लगे।

इसको एक उदाहरण से समझा जा सकता है जैसे– अवस्थिति सिद्धान्त (बेबर का उद्योगों के स्थानीयकरण का सिद्धान्त एवं वॉन थ्यूनेन के कृषि के स्थानीयकरण का अवस्थिति मॉडल) जिसके मूलभूत आधार आर्थिक मानव (Economic Man) पर आधारित थे तथा मान्यताएं निराधार थीं जबकि वास्तविक रूप से ऐसा मानव एवं मान्यताएं मूर्तरूप में हैं ही नहीं, जिसके निर्णय केवल अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए होते हैं और वह पूरा निर्णय लेने की क्षमता रखता है, तथा भविष्य में अधिकतम लाभ की गारण्टी दे सकता हो। मात्रात्मक क्रान्ति के प्रणेताओं ने ऐसा अनुभव किया कि ऐसा मानव केवल कल्पना में हो सकता है। और जिन नियमों एवं मान्यताओं पर ये मॉडल आधारित थे वे मान्यताएं व्यवहार में लागू करना कठिन है। इसके विपरीत यदि मानव कोई तार्किक निर्णय भी ले तो उसके तर्क प्राकृतिक पर्यावरण के प्रति बोधगम्य एवं त्तसम्बन्धित होने चाहिए। पर्यावरण के प्रति

मानव का जो बोध होता है उसी अनुसार उसके निर्णय भी होते हैं। ऐसा माना जा सकता है कि इस आधार पर लिए गये निर्णय कहीं न कहीं उपयोगी सिद्ध होंगे।

मानव समुदाय का पर्यावरण के साथ सम्बन्ध का अध्ययन मानव भूगोल की प्रमुख विषय वस्तु रही है। मानव इस पर्यावरण का ऐसा प्राणी है जो प्रकृति द्वारा प्राप्त किये गये भौतिक वातावरण में अपने मनोनुकूल परिवर्तन कर एक सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करता है तथा प्रत्येक मानव समुदाय का पर्यावरण के साथ आचार व्यवहार अलग–अलग होता है। एक ही समाज के प्रत्येक मानव का संसाधन, स्थान और पर्यावरण तथा अन्य प्राकृतिक तत्वों के सम्बन्ध में प्रत्यक्षीकरण भिन्न–भिन्न होता है तथा वह भिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया भी करता है। इस बात के अनेकों उदाहरण संसार में स्थान–स्थान पर देखने को मिल जायेंगे। जैसे गंगा–यमुना के उपजाऊ मैदान में विभिन्न जाति, धर्म, लिंग, सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं लेकिन वहाँ की भूआकृति बनावट (अथवा किसी भी प्राकृतिक तत्व) के साथ लोगों के विचार अलग–अलग हैं। एक ही क्षेत्र में निवास करने वाले पशुपालक, मौर्या, कुम्हार, कृषक, कुर्मी वर्ग आदि अपने पर्यावरण को भिन्न रूप में समझते हैं। पशुपालक सामान्यतः दुग्ध के उत्पादन के हरे चारे की कृषि, मौर्या फसल एवं सब्जी की कृषि, कुम्हार मिट्टी का उपयोग बर्तन बनाने में एवं कृषक समुदाय वृहत भू भाग पर अन्नोत्पादन का कार्य करते हैं तथा अपने अनुसार विभिन्न प्रकार के कृषीय औजारों का उपयोग करते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि एक ही स्थान पर विभिन्न कृषकों के अपने पर्यावरण के साथ एक दूसरे से भिन्न देखने को मिलते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रायः सभी मानव भूगोलवेत्ता इस आचारपरक उपागम के अन्तर्गत किसी भी क्षेत्र में जीवन पद्धति अथवा सांस्कृतिक भूदृश्य की व्यवस्था इस मान्यता के आधार पर करते हैं कि इस क्षेत्र में विद्यमान सांस्कृतिक स्वरूप मानव का पर्यावरण के साथ आचरण व्यवहार का प्रतिफल हो। मनुष्य का यह आचार–विचार उसके वातावरण के साथ सदियों की अन्तःक्रिया का परिणाम है। मानव समुदाय अपने पर्यावरण के साथ संघर्ष करता है, फिर समायोजन करता है और उसके बाद अपने प्रभाव से उस पर्यावरण में परिवर्तन करता है एवं एक नये सांस्कृतिक भू–दृश्य का निर्माण करता है तथा कभी–कभी मानव व्यवहार इसी के लिए घातक सिद्ध हो जाता है।

सूक्ष्म अवलोकन करना आवश्यक है कि उष्ण प्रदेश में रहने वाले लोग चिड़चिड़े, कम ऊर्जा वाले, आलसी होते हैं। पष्चिम एशिया में शुष्क जलवायु पायी जाती है तो इसके अनुसार मानव संस्कृति या व्यवहार देखने को मिलता है जैसे शीतलता के लिए सिर पर पगड़ी, भोजन में खजूर आदि, देवताओं में शीतलता देने वाले सभी संकेत मुस्लिम धर्म के हैं। कहने का तात्पर्य है कि उष्ण प्रदेश के निवासियों का आचार व्यवहार अलग हो जाता है और कृषि कार्य पर्यावरण एवं वर्षा के अनुकूल देखने को मिलेती है तथा इसी सभी आचार एवं व्यवहारों से एक पुरातन संस्कृति का बोध होता है। इसी प्रकार टुण्ड्रा प्रदेशों में रहने वाले लोगों का आचार व्यवहार, यूरोपवासियों से भिन्न, यूरोपवासियों का अमेरिकियों से भिन्न तथा अमरीकावासियों का व्यवहार भारतीय संस्कृति से भिन्न पाया जाता है। इसका मूल कारण ही पर्यावरण एवं भौतिक तत्वों के साथ मानव का आचरण एवं समायोजन।

इस सन्दर्भ में एक उदाहरण का उल्लेख करना समीचीन होगा। वन सम्पदा को विकसित मानव व्यापारिक दृष्टिकोण से देखता है। जिसका एक मात्र उद्देश्य वनों से आर्थिक लाभ प्राप्त करना होता है जबकि दूसरा उसे मानव जीवन का आधार मानता है और यह सोचता है कि वनों की अनुपस्थिति में मानव जीवन सम्भव नहीं होगा और वही मानव वनों को ईश्वर मानकर उसकी पूजा करता है। इसी प्रकार आर्थिक मानव व्यापारिक दृष्टि से बागाती कृषि पद्धति में एक प्रकार के वृक्षों का उत्पादन कर लाभ प्राप्त करता है तो वहीं दार्शनिक मानव नैसर्गिक रूप से उगे हुए विविध पौधों को देखकर मानसिक शान्ति एवं जीवन का दर्शन प्राप्त करता है। इस सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि मानव का व्यवहार ही मानव एवं पर्यावरण के मध्य अन्तःक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है, न कि बाह्य मानव का दृष्टिकोण। प्रायः मानव का पर्यावरण के साथ सम्बन्ध उसके स्वयं के व्यवहार आचरण का प्रोत्साहन होता है। विश्व का प्रत्येक मानव समुदाय अपनी मान्यताओं, मूल्यों, रीति–रिवाजों, परम्पराओं के अनुसार

पर्यावरण के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है और इसी से उसे सन्तोष प्राप्त होता है।

इस प्रकार कह सकते हैं कि मानव भूगोल का आचारपरक उपागम मानव के आचरण–व्यवहार पर जोर देता है तथा यह उपागम आर्थिक मानव के स्थान पर विवेकी मानव को अधिक महत्व प्रदान करता है। आर्थिक मानव का ध्यान धनार्जन पर होता है जबकि विवेकी, पर्यावरण प्रेमी मानव अर्थ के स्थान पर अच्छे व्यवहार को महत्व देता है। जैसे पंजाब में तम्बाकू की खेती की अपार सम्भावनाओं के होने के बावजूद यहाँ पर उसके उत्पादन पर रोक है क्योंकि सिख पंथ में तम्बाकू सेवन को निषेध माना गया है। इसी प्रकार कश्मीर की जलवायु एवं पर्यावरणीय दशाएं अफीम की खेती के लिए अनुकूल हैं लेकिन यहाँ राज्य कृषि प्रशासनिक नीति ने इस पर रोक लगा रखी है। इसके स्थान पर केसर का उत्पादन किया जाता है। समवेत रूप से कह सकते हैं कि आचारपरक उपागम मानव के अनुकूलतम आचरण एवं व्यवहार के अध्ययन पर बल देता है। उपरोक्त तथ्यों को निम्नलिखित मॉडल से प्रदर्शित किया जा सकता है–

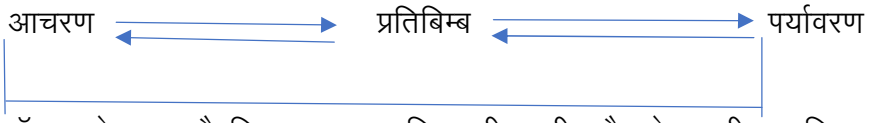

इस मॉडल से स्पष्ट है कि मानव एक विचारशील जीव है जो अपनी मानसिक प्रक्रियाओं एवं ज्ञानात्मक प्रतिनिधित्व के द्वारा बाह्य पर्यावरण का अनुभव करता है जिसकी पर्यावरण के साथ कार्यवाही मध्यस्थ है। भूगोल जगत में यह विचार बाल्डिंग के विचारों से लिया गया है कि विश्व का व्यक्तिगत विकासीय प्रभाव उसके पर्यावरण के प्रत्येक दिन के सम्पर्क से बनता है और यही प्रतिबिम्ब मानवीय आचरण का आधार बनता है।[03]

पोर्टियस (Porteous-1977AD) ने आचरण एवं पर्यावरण से सम्बन्धित जटिल वर्गीकरण प्रस्तुत किया है जो निम्नलिखित है–

अ– असाधारण पर्यावरण (भौतिक पदार्थ)

ब– व्यक्तिगत पर्यावरण (अनुबोधक प्रतिबिम्ब, असाधारण अथवा वास्तविक पर्यावरण के अनुबोधक प्रतिबिम्ब)।

स– प्रासंगिक पर्यावरण (संस्कृति, धर्म, आस्था, एवं, सम्भावनाएं जो आचरण को प्रभावित करती हैं)

सोनेफैल्ड, 1972 ई, ने पर्यावरण के अध्ययन को निम्नलिखित चार स्तरों पर प्रस्तुत किया है–

अ– भौगोलिक पर्यावरण (इस लोक अर्थात् जगत)

ब– कार्यात्मक पर्यावरण (इसमें विश्व के वे तथ्य सम्मिलित हैं, जो मानव पर अतिक्रमण करते हैं चाहे वे उनसे अवगत हों या नहीं)

स– आचरण (ज्ञानात्मक पर्यावरण का वह भाग जो आचरण प्रतिक्रिया को प्रकाशित करता है।)

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भौगोलिक अध्ययन के व्यावहारिक उपागम के अन्तर्गत आने वाले केन्द्रीय बिन्दु का निर्धारण मानवीय प्रत्यक्षीकरण और निर्णय द्वारा निर्धारित होते हैं। इस प्रकार मानव के धर्म, उसके जातीय लक्षण का प्रभाव मानवीय समूहों एवं मानव एवं वातावरण के ऊपर पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय वितरण, मानवीय संगठन, प्रादेशिक विभिन्नता और अन्तर्सम्बन्धों की उत्पत्ति्ज्ञा होती है। इसके साथ इस उपागम के अन्तर्गत अवस्थिति विष्लेषण एवं तन्त्र विष्लेषण जैसी विधियों का अध्ययन किया जाता है जो कि अन्य विषयों से ली गयी हैं।

मानव भूगोल में इस उपागम की सार्थकता अधिक है क्योंकि मानव भूगोल में दीर्घावधि से मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता रहा है तथा इसे शोध का विषय माना जाता है और इस विषय पर अनेकों अनुसंधान भी हुए हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि आचरण भूगोल या आचरण उपागम, आचरणवाद पर आधारित है। यह एक ऐसी महत्वपूर्ण पद्धति है जिसे मनोवैज्ञानिकों और दार्शनिकों द्वारा मुख्यरूप से मानव पर्यावरण के सम्बन्धों के विश्लेषण करने हेतु अपनाया गया है। मानव भूगोल में आचरण पद्धति का मूल है मानव का आचरण कैसा है अर्थात् वह विभिन्न तत्वों के साथ किस प्रकार से आचरण करता है। मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्ध में कहा जाता है कि पर्यावरण और मनुष्य का आचरण घनिष्ठरूप से अन्तर्सम्बन्धित है और इनके मध्य

घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। इस पद्धति का दृष्टिकोंण इस प्रकार है कि मानव एवं पर्यावरण अन्योन्याश्रित हैं और इनका गहन ज्ञान विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को देखनेसे प्राप्त किया जा सकता है जिसके द्वारा मनुष्य पर्यावरण का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इससे मनुष्य को यह ज्ञान प्राप्त होता है कि पर्यावरण किस प्रकार मानव आचरण को प्रभावित करता है।

इसके साथ ही आचरण भूगोलवेत्ज्ञा यह स्वीकार भी करता है कि मानव किस प्रकार पर्यावरण को आकार प्रदान करता है, साथ ही प्रतिक्रिया भी करता है। स्पष्ट रूप में कहें तो यह तथ्य बिल्कुल साफ है कि ''जहां एक और पर्यावरण मानव को एवं मानव आचरण को प्रभावित करता है तथा मानव के आचरण को निर्धारित करता है वहीं दूसरी और मानव पर्यावरण के साथ प्रतिक्रिया भी करता है तथा उसी प्रकार मानव पर्यावरण को भी प्रभावित करता है तथा अपने साथ–साथ उसकी सीमा का निर्धारण करने के लिए अपने को सक्षम बना लिया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मानव एवं पर्यावरण एक दूसरे से सक्रिय रूप से आपस में अन्तर्सम्बन्धित हैं। इस धरातल पर मनुष्य को प्रेरित होने वाला प्राणी माना जाता है, उसके निर्णय और क्रियाएं स्थानिक पर्यावरण उसके ज्ञान द्वारा मध्यस्थ बनते हैं।

आचरण भूगोल की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

अ– आचरण भूगोलवेत्ताओं का तर्क है कि पर्यावरणीय ज्ञान जिस पर मानव प्रक्रिया करता है वह वास्तविक पर्यावरण एवं वास्तविक जगत की सही प्रकृति से भिन्न हो सकता है। इस प्रकार पर्यावरण के दोहरे लक्षण हो सकते हैं–

01– वास्तविक जगत–इसमें उस जगत को सम्मिलित करते हैं जिसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा होता है और जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से देख एवं अनुभव कर सकते हैं।

02– आचरण जगत–जिसका ज्ञान केवल अप्रत्यक्ष साधनों द्वारा किया जाता है।

यह महत्वपूर्ण नहीं है कि आचरण पर्यावरण कितना आंशिक और चयनात्मक है। यह पर्यावरण जो कि मानव के लिए निर्णय करने और क्रिया का आधार होता है। इस प्रकार आचरण का दृष्टिकोंण विश्व में सूक्ष्मरूप से गहनतम है, अपेक्षाकृत वास्तविकता के। जगत के इन दो प्रकारों के पर्यावरण वितरण के प्रकार के बीच और उनके व्यवहार में तात्पर्य स्पष्ट रूप से **कौफका (1935–36 ई0)** की स्विस शीतकालीन कहानी से स्पष्ट है–

''एक शीत भरी शाम, हिमपाती तूफान में घोड़े पर सवार होकर एक व्यक्ति सराय के द्वारा पर पहुँचा, हिम से ढके भू–भाग के ऊपर घन्टों की सवारी करने पर वह प्रसन्न था, क्योंकि हिम की चादर से मार्ग चिह्न ढके हुए थे। सराय का मालिक दरवाजे पर आया और नवागन्तुक ने सराय मालिक से संकेत में ही दूर दिशा से आने का संकेत किया। इसके बाद सराय मालिक ने आश्चर्य और भय भरी आवाज में उस पथिक को अवगत कराया कि आप जिस मार्ग से आये हैं, वह विस्तृत **कोस्टेन्स** झील थी। यह सुनते ही वह घुड़सवार सराय मालिक के पैरों में गिर पड़ा और तत्काल मर गया।

उपर्युक्त सजीव उदाहरण से स्पष्ट है कि वास्तविक पर्यावरण की भांति आचरण पर्यावरण में किया गया है। जब सराय मालिक ने घुड़सवार से चलकर आने के विषय में पूछा तो उसकी प्रतिक्रिया शुष्क स्थल भाग पर चलकर आने के समान थी, जबकि वास्तविक पर्यावरण इससे सर्वथा भिन्न था। वह पथिक शुष्क भू–भाग पर न चलकर एक विशाल झील पर चल कर आया था। यदि उसे वास्तविक पर्यावरण का ज्ञान होता तो उसका आचरण दूसरे प्रकार का होता। उसे यह ज्ञान न था कि वह झील बर्फ से ढकी हुई थी।

01– आचरण भूगोलवेत्ता व्यक्ति को अधिक महत्व देता है। इसकी तुलना में मानव समुदाय एवं संगठन को कम महत्व देता है। आचरण भूगोलवेत्ता यह मानता है कि व्यक्ति अपने भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का निर्माण करता है तथा अनुक्रिया व्यक्त करता है, सही अर्थों में व्यक्ति आचरण से प्रभावित होता है और पर्यावरण पर अपनी छाप छोड़ता है, चाहे वह कितना ही जटिल एवं दुष्कर क्यों न हो। मानव एक ऐसा प्राणी है जिसका ध्येय निर्धारित होता है जो पर्यावरण से प्रभावित होता है और पर्यावरण को प्रभावित भी करता है।

02– व्यवहारवादियों की महत्वपूर्ण विशेषता है कि उनका दृष्टिकोंण बहुविषयक होता है। ये भूगोलवेत्ता, मनोवैज्ञानिकों, दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, मानवशास्त्रियों, आचरणशास्त्रियों और नियोजकों के द्वारा किये गये विचारों और सिद्धान्तों की सहायता से समस्या का समाधान करता है।

2.5.4 कल्याण परक उपागम (WelfareApproach)–

मानव भूगोल के विभिन्न उपागमों में कल्याणपरक उपागम महत्वपूर्ण उपागम माना जाता है। एक सामान्य सी बात है जहाँ पर सिद्धान्त एवं सैद्धान्तिक नियमों की अधिकता हो जाती है, वहाँ मानव कल्याण का विचार पीछे होने लगता है क्योंकि सिद्धान्त ठोस नियमों पर अधिक जोर देता है जबकि मानव कल्याण के लिए मानवीय नैतिक मूल्य व्यवहार आदि महत्वपूर्ण होता है। 20वी सदी के प्रारम्भिक वर्षों से लेकर 1960 के दशक तक मात्रात्मक क्रांति का प्रभाव भूगोल में विशेष रूप से प्रभावी रहा। मात्रात्मक क्रान्ति का परिणाम यह हुआ कि भूगोल एवं इसकी विभिन्न शाखाओं में मात्रात्मक विधियों का प्रयोग अनिवार्य सा हो गया। मात्रात्मक क्रान्ति में मैकार्टी, कोनान्त, बेरी एवं मारबल के कार्य, ग्रेगरी, कोल एवं यीट्स के सांख्यिकीय भूगोल के कार्य एवं लॉश, इजार्ड ग्रीन हट का गणितीय एवं अवस्थिति मॉडल, क्रिस्टालर की केन्द्र स्थल परिकल्पना, स्मिथ आदि विद्वानों की संकल्पनाओं की प्रतिक्रिया में विश्व में अनेक घटनाएं घटी, जैसे–उपनिवेशवाद, सामंतवादी विचार, उपनिवेशवादी देशों का षोषण आदि।

यू0एस0ए0 एवं यूरोप में पूंजीवादी व्यवस्था के विरोध में विश्व के विकसित एवं विकासशील देशों में विद्वानों का एक वर्ग उभर कर आया और अपनी आवाज उठाई। इस प्रकार भूगोल में कल्याणपरक उपागम के समावेश से मार्क्सवादी विचारधारा को बल मिला। उन्होंने अपने दर्शन में कहा है कि पूंजीवादी व्यवस्था मानव श्रम द्वारा उत्पन्न संसाधनों की कीमत में वृद्धि का अपहरण किया है। इसके साथ पूंजी संचय से श्रम का षोषण किया गया, इस समस्या पर भूगोलवेत्ताओं का ध्यान आकर्षित हुआ। उस समय के भूगोलवेत्ताओं ने निर्धनता, अभावग्रस्ता, सामाजिक एवं जातिगत असमानता, अन्योन्य उपनिवेशी षोषण तथा उद्योगपतियों द्वारा पूंजी एवं पूंजी संचयन पर अपने विचार प्रकट किए।

इस प्रकार भूगोल में एक ऐसे वर्ग का उदय हुआ जो मात्रात्मक क्रान्ति द्वारा उत्पन्न विभिन्न बिन्दुओं, सिद्धान्तों को वेबर, लॉश, ईजार्ड, स्मिथ, हैगरस्टैण्ड आदि के द्वारा प्रस्तुत सिद्धान्तों की ग्राह्यता को स्वीकार करने से मना कर दिया क्योंकि ये सिद्धान्त विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं के निदान करने में सक्षम नहीं हैं। इस प्रकार विश्व के सभी विश्वविद्यालयों में एक ऐसा वर्ग तैयार हो गया जो प्राचीन परम्परागत मान्यताओं, सिद्धान्तों, मूल्यों से हटकर नये समाज के निर्माण हेतु क्रान्तिकारी परिवर्तन एवं सुधारवादी विचारों का समर्थक था। इन विद्वानों के कार्य विभिन्न प्रकार की पत्र–पत्रिकाओं में देखने को मिलते हैं। इस प्रंकार के साहित्य से समाज को एक नई दिशा प्राप्त हुई। इन विद्वानों के अध्ययन का मुख्य विषय निर्धनता से सम्बन्धित दो अंकों (Antipode) (1970–72 ई0) में प्रकाशित हुआ। सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित लेख **मोरिल एवं ह्वेलवर्ग (1971 ई0),** काले **घेटो से सम्बन्धित, रोज 1871 ई** का लेख, अपराध पर हैरिस, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा पर शेनान दीवर, सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित एलबम, सामाजिक कल्याण पर स्मिथ, आर्थिक कल्याण पर चिशोल्म, आदि के लेख मानव भूगोल में कल्याणपरक उपागम के लिए नींव के पत्थर साबित हुए। **बुंगी और डेविड हार्वे** ने मानव भूगोल में परम्परागत अध्ययन के स्थान पर सामाजिक मूल्यों पर आधारित अध्ययन पर जोर दिया।

डेविड हार्वे ने अपनी पुस्तक ''Explanations in geography'' में सामाजिक क्रान्ति को आवश्यक एवं अपरिहार्य बताया, इन्होंने समाज में व्याप्त पूँजीवादी व्यवस्था, सामाजिक विसंगतियों एवं न्याय की आवश्यकता की और लोगों का ध्यानाकर्षण किया तथा न्याय की आवश्यकता पर बल दिया। तत्कालीन भूगोलवेत्ताओं ने यह स्पष्ट किया कि भूगोलवेत्ता को भूगोल के बाह्य स्वरूप के अध्ययन के साथ–साथ आन्तरिक पक्ष अर्थात् समाज विशेष का अभिन्न अंग बनकर उसके मानवीय परिवेश का अध्ययन करना चाहिए। यहीं एक बात उल्लेखनीय है कि जब मानवीय समाज में जाकर उसका अध्ययन करेंगे तो मानव जीवन के प्रत्येक पहलू का अध्ययन सुचारु रूप से किया जा सकता है।

कल्याणपरक उपागम के अध्ययन का मुख्य केन्द्र बिन्दु ''किसको, क्या, कहां और कैसे मिलता है, का अध्ययन करता है। 'किसको' का संकेत उस जनसंख्या से है जो नगर प्रदेश, राष्ट्र अथवा सम्पूर्ण विश्व में विभिन्न वर्गों, उपवर्गों, जातियों अथवा विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत है। 'क्या' से तात्पर्य विभिन्न माध्यमों से प्राप्त सेवाओं वस्तुओं, वातावरणीय गुण, सामाजिक सम्बन्ध आदि हैं जो जनसंख्या को प्राप्त होते हैं। 'कहां' का अर्थ उस निवास क्षेत्र (प्रदेश) से है जहां पर जनसंख्या निवास करती है। स्मरणीय है क्षेत्र बदलने से जीवन स्तर बदल जाता है। इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में विविधताएं पायी जाती हैं तथा 'कैसे' से तात्पर्य उस व्यवस्था अथवा प्रक्रिया से है जिनके माध्यम से पदार्थ, सेवाएं, सुविधाएं लोगों को प्राप्त होती हैं। इस प्रकार कल्याणपरक उपागम समाज की वर्तमान दशा 'किसको क्या मिलता है, को सम्मान देती हैं।

यद्यपि मानव भूगोल के विकल्प के रूप में मूलतः प्रस्तावित कल्याण परक उपागम जो मुख्य रूप से मानवीय समानताओं, असमानताओं एवं सामाजिक विखण्डन को जोड़ने वाला था, आज की भूगोल की नवीन अन्वेषण की विचारधारा (शाखाओं) में विलीन हो गया। कल्याणपरक उपागम वास्तव में नैतिक सिद्धान्तों एवं गणितीय सम्बन्धों की सीमांओं को कमजोर बनाते हैं जो कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समीचीन नहीं है। तार्किक दृष्टिकोण से कल्याणपरक उपागम को एक समष्टिवादी समाज वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य की जरूरत है।

2.6 सारांश

वास्तव में यदि देखा जाये तो उपागम किसी विषय की पहुँच का प्रदर्शन करते है अर्थात किसी विषय की पहुँच कहाँ तक है तथा यह भी संकेत करते हैं कि किसी विषय की सोंच या विषयवस्तु के पीछे मूल आधार क्या है, तो मानव भूगोल का विषय क्षेत्र व्यापक है। मानव भूगोल में मानव एवं पर्यावरण के निरन्तर परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। प्रिय विद्यार्थियों इस इकाई में मानव भूगोल के विभिन्न उपागमों, ऐतिहासिक, पारिस्थितिकी, आचारपरक एवं कल्याणपरक उपागम का वर्णन उपयुक्त उदाहरणों के साथ किया गया है तथा अपेक्षा की जाती है कि इस इकाई का अध्ययन आपको पर्यावरण एवं मानव के सम्बन्धों को समझने में सहायक होगा।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

1–प्रौद्योगिकी मानवः– प्रौद्योगिकी मानव से तात्पर्य ऐसे मानव समूह से है जो गहन रूप से उद्योगों से जुड़ा होता है और अपने जीवन का सम्पूर्ण तत्व उसी के प्रति समर्पित करता है।

02–बारानी कृषि :–ऐसी कृषि जो पूर्णतः वर्षा पर आधारित होती है, उसे बारानी कृषि के नाम से जाना जाता है। भारत में इस प्रकार की कृषि अधिकतर देखी जाती है क्योंकि भारत में अधिकांशतः कृषि मानसूनी वर्षा पर आधारित है।

2.8 बोध प्रश्न

2.8.1–दीर्घ उत्तरीय प्रश्नोत्तर–

प्रश्न 1– मानव भूगोल के उपागमों का नाम बताते हुए किसी एक का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 2– मानव भूगोल के पारिस्थितिकी उपागम का सोदाहरण वर्णन कीजिए।

प्रश्न 3– मानव भूगोल के आचारपरक उपागम का वर्णन कीजिए।

2.8.2–लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 1– कल्याणपरक उपागम का संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2– मानव भूगोल के उपागमों पर संक्षिप्त लेख लिखिए।

प्रश्न 3– ऐतिहासिक उपागम क्या है? संक्षेप में समझाइए।

2.8.3–बहु विकल्पीय प्रश्नोत्तर –

प्रश्न 1– भौतिक घटक का उदाहरण नहीं है।

(क) अधिवास (ख) वायु

(ग) जल (घ) सौर–ऊर्जा

प्रश्न 2– सांस्कृतिक घटक का उदाहरण नहीं है।

(क) स्थल (ख) जल

(ग) वायु (घ) परिवहन

प्रश्न 3– किसने कहा है– भूगोल का केन्द्र प्रादेशिक भूगोल है।

(क) ब्लॉश (ख) ब्रून्स

(ग) सैम्पुल (घ) उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 4– अर्डकुण्डे किसकी रचना है।

(क) रेटजेल (ख) हम्बोल्ट

(ग) रिटर (घ) ब्लॉश

प्रश्न 5– पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किसने किया है?

(क) रिटर (ख) ए0जी0 टान्सले

(ग) सैम्पुल (घ) रेटजेल

प्रश्न 6–Explanation in Geography किसकी रचना है।

(क) डेविड हार्वे (ख) डी मार्टोनी

(ग) ब्रून्श (घ) माल्थस

उत्तर माला–

1– के 2–घ3– के 4–ग5– ख 6–क

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1– मानव भूगोल मोहम्मद हारुन, विजडम पब्लिकेशन, शॉप नं0–12 ज्ञान मण्डल प्लाजा, मैदागिन वाराणसी 221001, तृतीय संस्करण।

2– मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन, सत्यम अपार्टमेन्टस, सेक्टर–3, जवाहर नगर जयपुर 302004, पेज सं038, 39

3– मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह0, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए यूनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002, पेज सं0 105 से 121,114,115।

4– मानव भूगोल, डॉ0 एस0डी0 मौर्य, शारदा पुस्तक भवन, 11 युनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002, पेज सं0 12 से 18।

इकाई–3 मानव भूगोल के मूल सिद्धान्त–सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त, क्रियाशीलता का सिद्धान्त, वातावरण मानव अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त।

इकाई की रूपरेखा

3.1– प्रस्तावना

3.2– उद्देश्य

3.3– मानव भूगोल के प्रमुख सिद्धान्त

3.3.1– सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त

3.3.2– क्रियाशीलता या परिवर्तनशीलता का सिद्धान्त

3.3.3– वातावरण–मानव अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त

3.3.3 अ– प्रकृतिवादी विचारधारा या नियतिवादी विचारधारा

3.3.3 ब– मानव एवं पर्यावरण की सम्भववादी विचारधारा

3.3.3 स– मानव पर्यावरण की नव–निश्चयवादी विचारधारा

3.3.3 द– प्रसम्भववाद

3.4– सारांश

3.5– बोध प्रश्न

3.6– सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.1 प्रस्तावना

भूगोल एक विशिष्ट विज्ञान है जो भूतल (Earth Surface) के परिवर्तनशील सम्बन्ध का क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन करता है। भूतल का अध्ययन करने का एक प्रमुख कारण यह है कि यह मानव का निवास है एवं मानव समुदाय प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इससे सम्बन्धित है। **होर्टशोर्न**का कथन उल्लेखनीय है– **भूगोल पृथ्वी के परिवर्तनशील सतह (धरातल) का सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत करता है जो मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण है।** मानव एवं धरातल के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन भूगोल की प्रमुख शाखा मानव भूगोल में विशेष रूप से किया जाता है। मानव भूगोल विभिन्न तथ्यों के आधार पर मानव पर्यावरण सम्बन्धों का स्पष्टीकरण विधिवत रूप से करता है। मानव भूगोल मानव के सांस्कृतिक भूदृश्य (भोजन, वस्त्र, आवास, परिवहन, व्यापार, प्रशासन, अधिवास) आदि का अध्ययन प्रस्तुत करता है।

किसी भी विषय में सिद्धान्तों के समावेश से उस विषय की वैधता एवं गूढ़ता का निर्धारण करता है। कह सकते हैं किसी विषय के सिद्धान्त उस विषय की यथार्थता एवं उपयोगिता का भी निर्धारण करते है एवं उस विषय की विषयवस्तु को सशक्त करते हैं। मानव भूगोल के सिद्धान्तों का वर्णन मानव भूगोल की इस इकाई में प्रस्तुत किया जा रहा है जो विद्यार्थियों को मानव भूगोल की विषयवस्तु को समझने में सहायक सिद्ध होगा।

3.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

01– छात्र/छात्राओं का ध्यान मानव भूगोल की और आकृष्ट करना।

02– मानव भूगोल की विषयवस्तु को सिद्धान्तों के द्वारा स्पष्ट करना एवं इसकी वैधता को पुष्ट रूप प्रदान करना।

03– छात्र/छात्राओं को मानव भूगोल के मूलभूत सिद्धान्तों से अवगत कराना।

04– मानव भूगोल में विभिन्न मूलभूत सिद्धान्तों की भूमिका को स्पष्ट करना।

05– मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को विभिन्न सिद्धान्तों के माध्यम से स्पष्ट करना।

06– छात्र/छात्राओं को इस बात के लिए प्रेरित करना सिद्धान्तों का प्रयोग किसी विषय एवं मानव जीवन में कितने महत्वपूर्ण हैं।

3.3– मानव भूगोल के आधारभूत सिद्धान्त (Fundamental Principles of Human Geography)

मानव भूगोल मूल रूप से ऐसा विषय है जो कि मानव केन्द्रित अध्ययन पर जोर देता है। मानव भूगोल में भौतिक भूगोल से इतर अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है परन्तु यह बात सदैव ध्यान में रखनी होगी कि मानव भूगोल के अध्ययन की विषयवस्तु प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इन्हीं भौतिक तत्वों से सम्बन्धित है। मानव भूगोल मानव के सांस्कृतिक वातावरण (भोजन, वस्त्र, अधिवास, जनसंख्या, यातायात, प्रशासन आदि) का अध्ययन प्रस्तुत करता है, जबकि भौतिक भूगोल भौतिक वातावरण (स्थल, जल, वायु, मृदा, ऊर्जा आदि) का अध्ययन करता है। भौतिक भूगोल की विषयवस्तु अर्थात् इसके तत्व मानव जीवन को निर्धारित एवं नियन्त्रित करते हैं। ऐसा मानव भूगोल की विभिन्न विचारधाराओं वातावरण निश्चयवाद, नवनिश्चयवाद में स्पष्ट रूप से देखा गया है। **कु0 सैम्पुल** का कथन उल्लेखनीय है–

''**मानव भूतल की उपज है (Man is the child of Nature)**'' जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्राकृतिक वातावरण एक माँ की भांति मानव समुदाय का पालन पोषण करता है उसके लिए कार्य निर्धारित करता है, उसके विचारों का दिग्दर्शन करता है तथा मानवीय शरीर को पुष्ट करने के लिए मानव के समक्ष कठिनाइयां प्रस्तुत की हैं। मनुष्य की आत्मा, शरीर, मस्तिष्क में भौतिक वातावरण (प्रकृति) व्याप्त है। जबकि नव निश्चयवाद इससे अलग विचारधारा रखता है। नव निश्चयवाद मानव पर्यावरण के सम्बन्धों को तार्किक एवं वैज्ञानिक रूप से विभिन्न तथ्यों के माध्यम से स्पष्ट करते हैं। मानव पर्यावरण के सम्बन्धों के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो इसे निम्नलिखित कालों के रूप में देखा जा सकता है–

01– आखेट एवं भोजन संग्रह काल

02– पशुपालन एवं पशुचारण काल

03– पौधपालन एवं कृषि काल

04– विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं औद्योगीकरण काल

इस प्रकार मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों का अध्ययन मानव भूगोल का प्रमुख विषय है। मानव भूगोल निरन्तर प्रगतिशील एवं परिवर्तनशील विज्ञान रहा है क्योकि मनुष्य जो कि मानव भूगोल के अध्ययन का केन्द्र बिन्दु है। मानव एक क्रियाशील प्राणी है जो निरन्तर अपने जीवन शैली में परिवर्तन करता आया है और उसका यह परिवर्तन पर्यावरण के सापेक्ष रहा है। इस प्रकार मानव एवं भौतिक परिवेश के सम्बन्ध परिवर्तित होते रहे हैं। मानव भूगोल पर भी मात्रात्मक क्रान्ति का प्रभाव देखने को मिला जिसके अन्तर्गत मानव भूगोल में विभिन्न सिद्धान्तों का प्रयोग किया गया। मानव भूगोल के कुछ आधारभूत सिद्धान्त ऐसे हैं जो इस विषय की गम्भीरता एवं उपयोगिता को सिद्ध करते हैं। ये सिद्धान्त मानव भूगोल के तथ्यों को सही सिद्ध करते हैं। मानव भूगोल के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

1– सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त

2– क्रियाशीलता का सिद्धान्त

3– वातावरण मानव अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त

इन सिद्धान्तों को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है–

3.3.1– सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त–

मानव भूगोल के विभिन्न सिद्धान्तों में सार्वभौमिक एकता का सिद्धान्त महत्वपूर्ण है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन जर्मन भूगोलवेत्ता **अलेक्जेन्डर वॉन हम्बोल्ट** ने किया था। प्रिय विद्यार्थियों हम अपने दैनिक जीवन में प्रत्यक्ष रूप से विभिन्न भौतिक तत्वों में विभिन्नता एवं एकरूपता का अनुभव करते हैं। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि इस संसार के सभी भौगोलिक तत्व चाहे वे प्राकृतिक हों या सांस्कृतिक, जड़ हों या चेतन ये सभी तत्व

किसी न किसी रूप में (प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से) आपस में अन्तर्सम्बन्धित हैं। अर्थात् विश्व के सभी भौगोलिक तथ्य, चाहे वे जड़ हों या चेतन, एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। इन तथ्यों में कोई भी स्वतन्त्र इकाई नहीं है इसलिए इनका पृथक अध्ययन करना सम्भव नहीं हैं, जैसे जल को देखने पर उसका अपना एक स्वरूप स्पष्ट होता है तथा अनेकों विशेषताओं से भरा हुआ प्रतीत होता है, लेकिन जल की अपनी एक संयुक्ता होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोंण से इसका मूल्यांकन करें तो स्पष्ट होता है कि **जल एक यौगिक है।** जो हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन के अणुओं के संयोग से अस्तित्व में आता है। यदि इन अणुओं (H_2O = हाइड्रोजन के दो अणु एवं ऑक्सीजन के एक अणु) को यदि अलग कर दिया जाये तो जल का अस्तित्व सम्भव नहीं होगा। इसी प्रकार इस संसार के प्रत्येक तत्व आपस में सम्बन्धित हैं। मानव भूगोल मानव समाज या सांस्कृतिक स्वरूप का क्रमबद्ध अध्ययन प्रस्तुत करता है। साथ ही इस विज्ञान में विभिन्न प्रदेशों में पाये जाने वाले मानव समूहों का उनके भौतिक तत्वों के पारस्परिक सामंजस्य के परिणामस्वरूप उत्पन्न सांस्कृतिक स्वरूप का अध्ययन करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भौतिक तत्वों का मानव को सामाजिक ताने–बाने पर विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है, एवं मानव समाज इन भौतिक तत्वों से प्रभावित होने के साथ–साथ उनको प्रभावित करता है। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि भौतिक एवं सांस्कृतिक तत्व एक दूसरे से परस्पर जुड़े हुए हैं।

किसी प्रदेश की मानव जीवन शैली को समझने के लिए आवश्यक है कि वहाँ के भौतिक तत्वों (विशेषकर जलवायु, उच्चावच) का अध्ययन आवश्यक है। उदाहरण के लिए–भूमध्यरेखीय उष्णार्द्र जलवायु के अध्ययन से पता चलता है कि इस प्रदेश में रहने वाले मानव समुदाय एवं वनस्पति समुदाय इन सभी के स्वरूप को नियन्त्रित एवं निर्धारित करती हैं। इस प्रदेश में जलवायु के प्रभाव का अवलोकन स्पष्ट रूप से किया जा सकता है। इस प्रदेश में नित–प्रतिदिन वर्षा होती है इसलिए सघन वनावरण देखा जा सकता है। इन घनघोर वनों में वृक्षों की लम्बाई 30 से 60 मीटर तक पायी जाती है और घने वनावरण के कारण जैव विविध जन्तु समुदाय का समूह पाया जाता है। जलवायु के कठोर होने एवं सघन वन के कारण यहाँ पर मानव जीवनयापन एक चुनौती भरा कार्य है क्योंकि जंगलों को काटना एक दुरूह कार्य है। तथा यहाँ की मिट्टी लीचिंग के कारण पर्याप्त उपजाऊ नहीं होती है। कहने का तात्पर्य है कि मानव जीवन और भौतिक पर्यावरण एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और मानव इसी भौतिक पर्यावरण का अंग है। मानव भूगोल में मानव का अध्ययन उसके भौतिक परिवेश के सम्बन्ध में किया जाता है। इसी मानव भूगोल को मानव पारिस्थितिकी (Human Ecology) का अध्ययन माना जाता है।

पार्थिव एकता के सिद्धान्त के प्रतिपादक हम्बोल्ट के अतिरिक्त प्रसिद्ध जर्मन विद्धान फ्रेडरिक रेटजेल पार्थिव एकता के सिद्धान्त के पक्ष अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। वे विश्व के विभिन्न तत्वों का अलग–अलग व्यक्तिगत रूप में न देखकर एक समष्टि के रूप में देखते थे और इस जगत के सभी तत्वों को एक मानते थे। रेटजेल ने सम्पूर्ण विश्व को उसके वैयक्तिक अवयवों के रूप में न देखकर सभी तत्वों के पारस्परिक सम्बन्ध अथवा समष्टि के रूप में देखा था। रेटजेल ने अपनी पुस्तक एन्थ्रोपाज्योग्राफी (Anthropo-geographie) में इस बात पर जोर दिया है कि पृथ्वी पर मानव का विभाजन एवं वितरण प्राकृतिक शक्तियों द्वारा नियन्त्रित एवं संचालित होता है। रेटजेल ने पृथ्वी को एक समष्टि माना है तथा उसमें एकता का अनुभव किया। रेटजेल के अनुसार–'' मानव का सम्पूर्ण जीवन, उसकी बहुआयामी एवं बहुमुखी क्रियाएं, मानव समुदाय एवं मानव समाज सभी का अध्ययन विवेकपूर्ण एवं व्यवस्थित ढंग से किया जाता है। इस अध्ययन में पृथ्वी के विभिन्न अवयवों के पारस्परिक सम्बन्धों पर जोर दिया जाता है जिसमें भौगोलिक एकता के दर्शन होते हैं।'' रेटजेल के अनुसार 'मानव भूगोल'के दृष्य पर्यावरण से संरचित एवं सम्बन्धित होते हैं तथा पर्यावरण भौतिक दशाओं का योग होता है अर्थात मानव भूगोल मानव जीवन के सांस्कृतिक तत्व का अध्ययन पर्यावरण के सम्बन्ध में करता है और पर्यावरण के अन्तर्गत विभिन्न घटक तथा स्थल, जल, वायु सम्बन्धित माने जाते हैं, और ये तत्व एक दूसरे से परस्पर सम्बन्धित हैं। रेटजेल की विचारधारा भौगोलिक (पार्थिव) एकता पर आधारित थी तथा रेटजेल पार्थिव एकता सिद्धान्त को मानव भूगोल के अध्ययन का आधारी तत्व मानते थे।

प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता फ्रे0 रेटजेल की शिष्या कुमारी सैम्पुल पार्थिव एकता सिद्धान्त को महत्वपूर्ण मानती थी तथा इसको प्रधान सिद्धान्त की श्रेणी में रखती थी। सैम्पुल के अनुसार–''पृथ्वी की एकता और उसके अवयवों के पारस्परिक सम्बन्धों का सिद्धान्त रेटजेल के उस दृष्टिकोंण का फल है जो पर्वत पर खड़े होकर देखने वाले को प्राप्त होता है।'' कु0 सैम्पुल ने रेटजेल के विषय में कहा है कि ''उन्होंने पर्वत शिखर पर खड़े मानव के दृष्टिकोंण से वस्तुओं को देखा और अपनी दृष्टि को दूर क्षितिज पर लगाए रखा। इसी विहंगम दृष्टि के कारण उन्होंने अपनी दृष्टि को पृथ्वी के किसी एक अवयव पर सीमित नहीं रखी, इसी के फलस्वरूप उन्होंने प्रकृति के अन्दर प्रवाहित एकता के दर्शन किए।'' उनके अनुसार मनुष्य का वैज्ञानिक अध्ययन उस भूमि को जिससे वह जोत्ता है

अथवा वह भूमि जो उसे यात्रा केलिए सुलभ मार्ग प्रदान करती है, अथवा वह भूमि जिसपर वह कृषि कार्य करता है तथा समुद्र जिससे वह व्यापारिक गतिविधि को मूर्त रुप प्रदान करता है से अलग करके नहीं किया जा सकता।

अत्यन्त प्राचीन काल से ही भूगोलशास्त्रियों ने पृथ्वी की मूलभूत एकता को स्वीकार किया है। प्रमुख फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता वाइडल डी ला ब्लॉश, जीन ब्रूश, डिमांग्जिया आदि ने पार्थिव एकता सिद्धान्त के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किए हैं और इस सिद्धान्त को महत्वपूर्ण बताया। ब्लॉश के अनुसार "सभी भौगोलिक उन्नति में प्रमुख विचार पार्थिव एकता का है। "The dominant idea inAll geographical progress is that of teÙkestrial unity" **ब्लॉश** के अनुसार मानव भूगोल के तत्व पार्थिव एकता (सार्वभौमिक) से सम्बन्धित है और केवल उसी के माध्यम से मानव व्याख्या की जा सकती है। सम्पूर्ण पृथ्वी की एकता की कल्पना,जिसके समस्त भाग एक दूसरे से सम्बन्धित हैं, ज्योतिषशास्त्र द्वारा पूर्व काल में ही सम्मिलित कर ली गयी थी जहाँ की प्रत्येक घटना में एक निश्चित क्रम है तथा जो सामान्य नियमों का अनुसरण करती है जिनसे विशेष परिस्थितियां सम्बन्धित हैं। प्रसिद्ध विद्वान टॉलेमी ने भूगोल के सम्बन्ध में कहा है–**भूगोल वह आभामय विज्ञान है जो पृथ्वी की झलक स्वर्ग में देखता है।''** **'**Geography is a sublime science that sees the reflection of earh in heavens." एक लम्बे समय तक यह विचार भूगोल की अन्य शाखाओं में स्थान न बना सका। इस विचारधारा का विकास वायुमण्डल के परिभ्रमण के ज्ञान के कारण हुआ जिस पर जलवायु के नियम आधारित हैं। ब्रूंश के अनुसार, विभिन्न शक्तियां एक दूसरे पर केवल निष्चित दशाओं में ही कार्य नहीं करती हैं और न ही वे केवल कुछ निष्चित दृष्टान्तों में पारस्परिक क्रिया का प्रयास करते हैं, अपितु विभिन्न दशाओं केनिरन्तर आदिकालीन अन्तर्सम्बन्धों के कारण ये सभी शक्तियां परस्पर घनिष्ठ रूप से अन्तर्सम्बन्धित बंधी हुई हैं।

प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता ब्लॉश ने इस विचारधारा को पुष्ट किया, तथा 19 वीं सदी में इस सिद्धान्त को और अधिक सुव्यवस्थित तरीके से प्रस्तुत किया। ब्लॉश के अनुसार– ''मानव भूगोल के तथ्य पार्थिव एकता से सम्बन्धित हैं, जिनका विवेचन या व्याख्या केवल उन्हीं की सहायता से किया जा सकता है। प्रत्येक स्थान पर वे इस वातावरण से सम्बन्धित हैं, जो स्वयं कई भौतिक दशाओं के संयोग का परिणाम है।'' **The phenamens of Human GeographyAre related to teÙkestrial unity by means of WhichAlone can the be explained. TheyAre everywhere related to environment, itself the creature ofA combination of physical conditions.**

ब्लॉश अपने सिद्धान्त को पुष्ट करने के लिए आगे कहते हैं कि– वनस्पति का सामान्य रूप ही किसी प्रदेश का सर्वप्रधान लक्षण है। किसी प्रदेश में वनस्पति का न होना एक बड़ी विचित्रता है। जब हम किसी ऐसे प्रदेश को याद करते हैं जिसे काफी दिनों से भूला जा चुका था तो हमारे मन में किसी विशेष वृक्ष नहीं बल्कि समस्त विभिन्न वृक्षों और पौधों का एक समष्टि रूप आता है जिसे हम वनस्पति के नाम से जानते हैं। वृक्षों से केवल भू–आकृतियों को ही प्रमुखता प्राप्त नहीं होती अपितु अपने आकार, रंग, परिमाण और एकत्र होने की रीति से उस भूखण्ड का एक सामान्य व्यक्तित्व प्रकट होता है। स्टेपी, सवाना, सेल्वा, मानसूनी वन, भूमध्यसागरीय वन आदि नाम सामूहिकता के सूचक हैं जो किसी प्रदेश की समस्त वनस्पति के सम्पूर्ण दृश्य के द्योतक हैं। विषुवतरेखीय वन समवेत रूप से एकसमान दिखाई देते हैं परन्तु स्थान के अनुसार उनमें भी कुछ वृक्षीय विविधता दृष्टिगोचर होती है तथा वहाँ के जीवों में भी विविधता देखने को मिलेती है, परन्तु इन विभिन्नताओं के उपस्थित होने के बाद भी वहाँ के जीवों में एवं मानव क्रियाओं में आष्चर्यजनक एकरूपता देखने को मिलेती है।

विभिन्न जलवायु कटिबन्धों (उष्ण एवं शीतोष्ण) के सूक्ष्मावलोकन से स्पष्ट होता है कि इन प्रदेशों में पायी जाने वाली वनस्पतियों में अपने विकास को लेकर एक होड़ सी लगी रहती है और जो इस संघर्ष में विजय प्राप्त करता है। वह अपना आवरण बना लेता है अर्थात् इन प्रदेशों अथवा किसी प्रदेश में वही पौधें जीवित रहते हैं जो पर्यावरण से अनुकूलन कर लेते हैं। वातावरण से वनस्पतियों का अनुकूलन अनेक विधियों द्वारा होता है–पत्तियों की ऊँचाई, परिमाण एवं स्थिति, वृक्षों के तनों का आवरण, रेशेदार तन्तुओं की रचना, जड़ों का विकास आदि द्वारा। पशु एवं मानव भी अपनी गतिशीलता एवं मानसिक विकास के कारण अपने आप को पौधों की अपेक्षा अधिक अनुकूल बना लेते हैं। वास्तव में इस धरातल का कोई भी जीवधारी अपने पर्यावरण के प्रभाव से बच नहीं सकता। यह वातावरण विभिन्न जातियों के प्राणियों में परस्पर जीवनदायी अन्तर्सम्बन्ध बनाए रखता है। यही पर्यावरण की एकरूपता है।

प्रसिद्ध अमेरिकी भूगोलवेत्ता एल्सवर्थ हंटिंगटन ने अपनी पुस्तक Principals of Human Geography जो कि विश्व प्रसिद्ध रचना है में भौगोलिक तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों का एक चार्ट तैयार किया जिससे इस

अन्तर्सम्बन्ध को स्पष्टीकरण मिलता है उनके अनुसार –

- प्राकृतिक वातावरण के तत्व एक दूसरे से घनिष्ठ रुप से अन्तर्सम्बन्धित है तथा एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। किसी भी तत्व को बिना उसके साथी तत्वों के नहीं समझा जा सकता है। तत्व से किसी तत्व को अलग करने से सन्तुलन बिगड़ जाता है।
- हंटिंगटन के अनुसार प्राकृतिक वातावरण का मानव पर सीधा प्रभाव पड़ता है।
- प्राकृतिक वातावरण पशुओं एवं मनुष्य को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। वनस्पति एवं पशुओं का प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है लेकिन,
- मनुष्य एक क्रियाशील प्राणी है, वह स्वयं प्राकृतिक वातावरण पशु एवं वनस्पति को प्रभावित करता है हांलॉकि हंटिंगटन प्रकृतिवादी चिंतक थे, पर उन्होंने मानव के प्रभाव को भी स्वीकार किया। पार्थिव एकता के सम्बन्धों को निम्नलिखित रूप में और भी स्पष्ट किया जा सकता है –
- पशुओं एवं वनस्पति में घनिष्ठ सम्बन्ध देखा जा सकता है जैसे रेगिस्तान में ऊँट, घास के मैदोनों में घोड़े, ठंडे प्रदेशों में समूरदार पशु, भूमध्य रेखीय भागों में विषैले एवं जैवविविध जीव–जन्तु (पशु) पाये जाते हैं। ये सभी अपने–अपने पर्यावरण से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होते हैं।

''पर्यावरण के अनुसार पशु अपने आप को ढालने का प्रयास करते हैं।''

डॉ0 राधाकृष्णन मुखर्जी ने इस युक्ति को पुष्ट करने हेतु कहा है कि– " पौधे एवं पशु एक ही क्रियात्मक मन्त्र के परस्पर अंग हैं। इनमें कुछ के साथ पारस्परिक सम्बन्ध है और कुछ के सम्बन्ध स्वतंत्र रूप से देखे जा सकते हैं। शरीर रचना की दृष्टि से विभिन्न आवासों में उनमें परिवर्तन हो जाता है। परन्तु अधिक समय के पश्चात वे अपने आवासों में भी परिवर्तन उत्पन्न कर देते हैं।

- मानव के विकास भौगोलिक परिस्थितियों यथा सूर्य का प्रकाश, वायु जल का प्रभाव पड़ता है। मानव चाहें सभ्य हों, अर्द्धसभ्य हों या असभ्य सभी को उपरोक्त तत्वों की समान आवश्यकता पड़ती है। भौगोलिक परिस्थितियों के प्रभाव के कारण मानव जनसंख्या बसाव उन क्षेत्रों में हुआ है जहाँ पर उसके अनुकूल भौगोलिक दशाएं तथा उपजाऊ मैदान, सागर तट, नदी तट, धरातलीय स्वरूप मानव के अनुकूल रहे हों।
- जलवायु का सम्बन्ध भी मानव जनसंख्या पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सम्पूर्ण धरातल का लगभग 50 प्रतिशत भू भाग अत्यधिक शीत, ताप एवं वर्षा के कारण मानव उपयोग के लिए अयोग्य है।

उपरोक्त तथ्य यह बताते हैं कि मानव जो कि इस पृथ्वी का सर्वोत्कृष्ट प्राणी है और कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि मानव शरीर का निर्माण लगभग समस्त भौतिक तत्वों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाह्य भिन्नता के बावजूद पृथ्वी तल के सभी तत्व परस्पर ग्रंथित एवं अन्तर्सबन्धित हैं। मानव, पशु, वनस्पति समुदाय एवं जड़ प्रकृति के सभी तत्व एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं और इनको एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है भले ही वे प्रत्यक्ष रूप से अन्तर्सम्बन्धित न दिखते हों। अंत्तः कहा जा सकता है कि मानव भूगोल की सभी घटनाएं पृथ्वी की सार्वभौमिक एकता से सम्बन्धित हैं और मानव भूगोल अपने अध्ययन से उन्हीं तत्वों की पहचान करने का प्रयास करता है।

3.3.2– क्रियाशीलता या परिवर्तनशीलता का सिद्धान्तः–

"परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है।" अर्थात इस प्रकृति अथवा धरा के भौतिक जैविक एवं सांस्कृतिक तत्वों में सदैव परिवर्तनशीलता का गुण पाया जाता है। इन्हीं तत्वों में संसार का समस्त सार समाहित है। पृथ्वी के प्रत्येक तत्व में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में सदैव परिवर्तन होता रहता है। इस सन्दर्भ में फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता **जीन ब्रून्श** ने व्यक्त किया है कि–"हमारे चतुर्दिक तथा हमसे सम्बन्धित प्रत्येक वस्तुएं परिवर्तित हो रही हैं। ये वस्तुएं या तो विकसित हो रहीं है या इनमें ह्रास हो रहा है। कोई भी वस्तु गति रहित या परिवर्तन रहित नहीं है। भौतिक एवं सांस्कृतिक तथ्य निरन्तर परिवर्तनशील हैं इसलिए उनका अध्ययन किया जाना चाहिए।"

प्राकृतिक नियम के अनुसार इस संसार के प्रत्येक जीव का जन्म होता है। उसका क्रमिक विकास होता है और समय चक्र पूरा होने पर अन्तः वह नष्ट हो जाता है। विकास का क्रम भौतिक एवं सांस्कृतिक सभी तत्वों पर

लागू होता है। एक जीवन चक्र में बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था, एवं वृद्धावस्था पायी जाती है। प्रत्येक तत्व में परिवर्तन भिन्न–भिन्न होता है किन्तु परिवर्तन की प्रक्रिया निरन्तर चलेती रहती है। ज्यों ही किसी भी पर्वत का किसी भी माध्यम से (वलन, भ्रंशोत्थ, क्रिया, ज्वालामुखी लावा) उत्थान होता है, त्यों हि समतल स्थापक क्रियाएं सक्रिय हो जाती हैं और विभिन्न प्रकार के अनाच्छादनात्मक प्रक्रम द्वारा वह उत्थित पर्वत समप्राय मैदान के रूप में परिवर्तित हो जाता है और वह सारा अवसाद अन्यत्र ले जाकर बिछा दिया जाता है। फिर यह अवसाद भार के कारण नीचे बैठता है और अन्यत्र कहीं नये पर्वत का निर्माण होता है। इस प्रकार यह प्रक्रिया सदैव चलेती रहती है। जेम्स हट्टन का कथन उल्लेखनीय है कि –**"वर्तमान में जो प्रक्रिया कार्यरत हैं वे प्रक्रम पृथ्वी के पूर्व इतिहास में भी कार्यरत थे परन्तु उनकी सक्रियता में अन्तर था।"** अर्थात प्रत्येक प्रक्रम आदि काल से प्रारम्भ होकर भविष्य में चलते रहेगें पुनः जेम्स हट्टन की उक्ति उल्लेखनीय है –"**न आदि का पता है न अन्त का भविष्य।"**

प्रत्येक क्रिया का एक निश्चित क्रम होता है जिसके अनुसार–परिवर्तन क्रिया सम्भव होती है। जैसे जैविक अनुक्रमकों दिखे तो उसका एक निश्चित क्रम होता है जो कि पाँच चरणों में पूरा होकर पुनः नए चक्रण के लिए तैयार हो जाता है ये क्रम हैं–

- नव निर्मित मैदान का (वायु, जल, सागर, नदी आदि के द्वारा) बनना।
- बीजों का आगमन (प्रकीर्णन एवं परिवहन द्वारा)
- बीजों का अंकुरण
- पौधों एवं बीजों में संघर्ष
- चरम वनस्पति का स्थापित होना एवं नवीन चक्र के लिए तैयार होना।

किसी नवनिर्मित मैदान में सर्वप्रथम किसी माध्यम मानव, पशु–पक्षियों, वायु अथवा अन्य माध्यमों से इस नवनिर्मित मैदान में बीजों का आगमन होता है और समय अपनी गति से परिवर्तनशील रहता है। फिर बीजों का अंकुरण होता है और उस नव–निर्मित मैदान पर छोटी–छोटी घासों के साथ बीच–बीच में पहुँचे बीजों के साथ संघर्ष होता है और इस आगे बढ़ने की होड़ में जो संघर्ष करने में सफल हो जाता है, उसी वनस्पति का उस क्षेत्र में विकास होता है और उस सफल वनस्पति का आचरण उस क्षेत्र में हो जाता है लेकिन परिवर्तन लगातार जारी रहता है तथा यह वनस्पति समुदाय अपनी चरम अवस्था को प्राप्त कर विनष्ट हो जाता है। किसी प्रदेश की जलवायु भी स्थिर न होकर परिवर्तनशील होती है। लेकिन यह परिवर्तन त्वरित न होकर दीर्घकालिक होता है और मौसम में परिवर्तन त्वरित हो

स्मरणीयः–किसी स्थान विशेष की दीर्घकालिक पर्यावरणीय दशाओं को जलवायु कहते हैं जबकि किसी स्थान की अल्पकालिक पर्यावरणीय दशाओं को मौसम कहते हैं।

जाता है। सौर मण्डल में स्थित सूर्य के साथ विभिन्न ग्रहों का अस्तित्व पाया जाता है। उनमें से पृथ्वी ग्रह सबसे महत्वपूर्ण है, वह इसलिए कि उसका वायुमण्डल इस ग्रह को सजीव बनाता है। इस पृथ्वी पर पाये जाने वाले पर्यावरण को तीन प्रमुख घटकों–जैविक, अजैविक एवं ऊर्जा के रूप में देखा जाता है। पृथ्वी स्वयं में गतिशील है एवं इस पर पाये जाने वाले विभिन्न घटक भी निरन्तर परिवर्तनशील हैं। पृथ्वी भौतिक घटकों में स्थल, जल, वायु को सम्मिलित किया जाता है और यह सर्वविदित है कि ये सभी तत्व निरन्तर परिवर्तनशील हैं जैसे स्थलीय भाग पर विभिन्न प्रकार के रूप यथा पर्वत, पठार, झील, तालाब आदि पाये जाते हैं जो कि निरन्तर परिवर्तनशील हैं वैज्ञानिक प्रमाण यह बताते हैं कि हिमालय की ऊँचाई आज भी बढ़ रही है इसी प्रकार धरातल पर पाये जाने वाले पर्वतों का विकास (उत्थान) होता है और उत्थान के पश्चात (पेंक के अनुसार उत्थान के साथ अपरदन प्रारम्भ हो जाता है) अनाच्छादन प्रक्रम प्रारम्भ हो जाता है जो उस उठे हुए भाग में कांट–छांट करना प्रारम्भ कर देता है एवं समय के साथ इतना परिवर्तन हो जाता है कि वह ऊँचा पर्वत समप्राय मैदान के रूप में परिवर्तित हो जाता है इसी प्रकार जैविक घटकों में दो तरह के परिवर्तन होते हैं जिसमें एक तो उनकी संख्या परिवर्तित होती रहती है और दूसरे जैविक घटकों का आकारकीय परिवर्तन होने लगता है इसी प्रकार ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत सूर्य निरन्तर परिवर्तनशील है, सौर कलंक इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

सौर कलंक परिवर्तनशील होते हैं। इन भौतिक तत्वों में परिवर्तन के साथ–साथ जैविक समुदाय का सबसे

महत्वपूर्ण प्राणी में भी परिवर्तन स्पष्टतः देखे जाते हैं। मानव भौतिक वातावरण में परिवर्तन करके सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करता है कोई भी परिवर्तन किसी भी घटक में स्थाई रुप नहीं होता एवं अन्तिम नहीं होता एवं विकास प्रक्रिया की अवस्था को प्रकट करता है जो प्राचीन काल में कुछ और भी और भविष्य में कुछ और हो जायेगी। इस संसार में होने वाले परिवर्तनों के पीछे कुछ शक्तियां कार्य करती हैं जिनका विवरण अग्रलिखित हैं–

1. ग्रहीय सम्बन्ध
2. अभ्यांतरिक शक्तियाँ या अन्तर्जात बल
3. सौर–शक्ति
4. पृथ्वी की परिभ्रमण गति
5. गुरुत्वाकर्षणशक्ति
6. जैविक शक्ति
7. मानवीय शक्ति

स्मरणीयः–सौर कलंक–सूर्य के परिमण्डल में दिखने वाले धब्बे जिनका तापमान सूर्य की सतह के तापमान 6000^0C से कम 1500^0C होता है सौर कलंक कहलाते हैं। जब सूर्य में धब्बों की संख्या अधिक दिखाई देती है तो उनके प्रभाव से पृथ्वी पर चुम्बकीय झंझावात आते हैं। ऐसा लगभग 11 वर्ष के अन्तराल पर होता है।

1. ग्रहीय सम्बन्ध–

पृथ्वी सौरमण्डल का सबसे महत्वपूर्ण ग्रह है। यही वह ग्रह है जिस पर जीवन पाया जाता है, पृथ्वी का उसके आस–पास के ग्रहों एवं उसके उपग्रहों से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हैं। इस समय ऊर्जा के प्रमुख स्रोत ज्वारीय ऊर्जा के लिए ज्वार की उत्पत्ति चन्द्रमा की आकर्षणशक्ति द्वारा होती है जो कि पृथ्वी की गति का ही परिणाम है, पृथ्वी अपने अक्ष पर परिभ्रमण करती है और 24 घंटे में एक चक्कर पूरा कर लेती है एवं यह एक आरबिट पर सूर्य की परिक्रमा भी करती है जिसमें कभी सूर्य से दूरी अधिक (प्रत्येक 4 जुलाई) तो कभी कम (3 जनवरी) होती है पृथ्वी का अपने स्थान पर घूर्णन के कारण दिन रात तथा अपने आरबिट पर चक्कर लगाने से विभिन्न प्रकार परिवर्तनकारी घटनाएं होती है। पृथ्वी के साथ सूर्य के सम्बन्ध के नाते ही पृथ्वी पर जीवन सम्भव हो सका है। इस प्रकार कह सकते हैं कि पृथ्वी एक क्रियाशील तत्व है जो क्रियाशील के सिद्धान्त को कृतार्थ करती है।

2. अन्तर्जात बल–

पृथ्वी में एक बल हमेंशा क्रियाशील रहता है जिसे अन्तर्जात बल के नाम से जाना जाता है। अन्तर्जात बलों से विभिन्न प्रकार की घटनाएं घटित होती हैं जैसे–दीर्घकालिक भू संचलन या पटल विरूपण जैसे–पर्वत निर्माण, सागर तल उमज्जन एवं निमज्जन, सागर नितल प्रसरण, वलन एवं संवलन।

अ–पटल विरूपणी शक्तियाँ–पटल विरूपणी भूपटल की वे सभी हलचलें जिन से पृथ्वी की पपड़ी झुकती है, मुड़ती है और टूटती है और परिणामस्वरूप धरातल पर विषमताएं उत्पन्न करती हैं। पटलविरूपण कहलाती हैं। **फिंच एवं ट्रिवार्था** के अनुसार ''पटलविरूपण से आशय उन समस्त प्रक्रमों से है जिनका भूपटल के उन्मज्जन, निमज्जन या किसी एक भाग के सन्दर्भ में दूसरे भाग का विस्थापन और उसके टूटने, मुड़ने तथा संवलित होने में योग होता है।'' पटल विरूपणी बल पृथ्वी के अन्दर धीरे–धीरे कार्य करते हैं और इनका प्रभाव हजारों और लाखों वर्षों के बाद दिखाई देता है। उदाहरणतया बाल्टिक सागर का तट प्रति हजार वर्षों में 1.3 मीटर उठ जाता है।

आकस्मिक शक्तियाँ :–

ये ऐसी शक्तियां हैं जो अल्पसमय में अधिक परिवर्तन कर देती है। जैसे– भूकम्प, ज्वालामुखी, सुनामी आदि।

स्मरणीयः– भूकम्प की तीव्रता को मापने वाले यन्त्र को 'सीस्मोग्राफ' कहा जाता है इसमें स्केल पर भूकम्पीय तरंगों का अंकन होता है जिसे रिक्टर स्केल कहते हैं जिसकी खोज अमेरिकी वैज्ञानिक चार्ल्स रिक्टर ने की थी।

इस प्रकार पृथ्वी की अन्तर्जात शक्तियाँ निरन्तर सक्रिय रूप से कार्य करती रहती हैं और अनेकानेक धरातलीय परिवर्तन को जन्म देती रहती हैं। ये सक्रियता की सूचक हैं।

3. सौर शक्ति–

पृथ्वी के ऊपर संचालित होने वाले क्रियाकलापों एवं परिवर्तनों में सूर्य की गति (ऊर्जा) का विशेष योगदान होता है। समस्त पारितन्त्र सूर्य द्वारा विकीर्णित ऊर्जा से ही संचालित होता है। विभिन्न प्रकार की घटनाएं ताप, दाब, वर्षा, ओला, चक्रवात, प्रति चक्रवात, आदि कहीं न कहीं सौर–शक्ति से उत्पन्न होते हैं। जलवायु परिवर्तन के साथ–साथ मौसम सम्बन्धी घटनाओं के पीछे सौर–शक्ति का योगदान होताहै।

अरस्तू ने कहा था–

"प्रत्येक वस्तु अपनी शक्ति को प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहती है" अर्थात जो जिससे उत्पन्न हुआ है उसी में मिलने के लिए सत्त् क्रियाशील रहता है जैसे वनस्पति के उद्‌भव के पीछे मूल रूप से सौर ऊर्जा की भूमिकाा होती है और सभी वनस्पतियाँ सूर्य की और बढ़ने का सत्त् प्रयास करती रहती हैं।

4. गुरुत्वाकर्षण शक्ति–

गुरुत्वाकर्षण देखने में तो प्रभावशाली नहीं दिखती पर यदि पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षण बल न होता तो यहाँ पर जीवन सम्भव न हो पाता। इसी के कारण धरातल पर सन्तुलन बना हुआ है। यह गुरुत्वाकर्षण बल सदैव सक्रिय रहता है। इसके प्रभाव को निम्नलिखित उदाहरण से समझा जा सकता है। कोई भी वस्तु जहाँ है वहाँ से पृथ्वी की केन्द्र की और जाने का प्रयास करती रहती हैं जैसे पर्वतों से निकलने वाली नदियाँ अपने ढाल एवं गुरुत्वबल अनुशासन करती हुई आगे बढ़ती हैं। यदि गुरुत्वबल न होता तो शायद वर्षा की बूंदे धरातल की और न आकर अन्यत्र कहीं चली जाती। सौर शक्ति से जो अनियमित्ता उत्पन्न होती रहती हैं, उसे यह शक्ति नियमित्ता में सदैव बदलेती रहती हैं। इसी कारण ब्रून्स ने कहा है कि "सौर शक्ति 'मूर्ख शक्ति' तथा गुरुत्वाकर्षण शक्ति ''बुद्धिमान शक्ति'' है।" इसी शक्ति के कारण पृथ्वी की शैलें सन्तुलित अवस्था में रहती हैं और वायु के स्तर एक दूसरे से सम्पर्क में रहते हैं।

5.परिभ्रमण शक्ति–

पृथ्वी के परिभ्रमण की शक्ति का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। यह शक्ति एक नियम के प्रभाव को भी निरस्त कर देती है। पृथ्वी के घूर्णन के कारण कोरियालिस बल का जन्म होता है जो वायु की दिशा का निर्धारण तत्व माना जाता है।

स्मरणीय–कोरियालिस प्रभाव पृथ्वी के घूर्णन के कारण बनता है और इसके प्रभाव से उत्तरी गोलार्द्ध में हवाएं दायीं ओर दक्षिणी गोलार्द्ध में अपने बायीं ओर मुड़ जाती हैं।

पृथ्वी के परिभ्रमण के कारण ही रात और दिन का होना सम्भव हो पाता है। अगर पृथ्वी परिभ्रमण न करती तो इस धरातल पर जीवन सम्भव न हो पाता। यह क्रिया सत्त् चलेती रहती है।

5. जैविक शक्ति–

प्रिय विद्यार्थियों पृथ्वी के तल पर परिवर्तन लाने में जैविक शक्तियाँ सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है। पहले तो देखना होगा कि वनस्पति एवं जीव जन्तु इस धरा को हरा–भरा एवं जीवन बनाने में योगदान देते हैं। वनस्पतियों को पृथ्वी का फेफड़ा कहा जाता है। कहीं पर ये मिट्‌टी एवं चट्‌टानों (सागरीय तटों पर) को जकड़े रहती हैं तो कहीं चट्‌टानों की दरारों में जड़ों को प्रवेश कराकर उन्हें कमजोर बनाती हैं। इसके अलावा जन्तु समुदाय भी पृथ्वी तल में परिवर्तन लाती हैं। जीव–जन्तुओं का पृथ्वी पर आश्रित होने के कारण उनका उपभोग करते हैं। विभिन्न कार्यों (आवास के लिए) मिट्‌टी और चट्‌टानों को तोड़कर अपना घोसला, बिल खोदकर, गुफाओं का निर्माण करके आदि रूपों में, तथा अन्त में वनस्पतियां एवं जीव–जन्तु अर्थात जैविक तत्व मरणोंपरान्त ह्यूमस के द्वारा मिट्‌टी को

उपजाऊ बनाते हैं। जीव–जन्तु विभिन्न घटनाओं के संकेतक होते हैं। जैसे पशुओं का रेघना, कुत्तों का रोना, घोड़ों का हिनहिनाना, गौरैया का धूल से नहाना (बरसात के संकेत) आदि हैं।

7. मानव शक्ति–

मानव इस प्रकृति का सर्वोत्तम प्राणी है। वैज्ञानिक साक्ष्य बताते हैं कि मानव शरीर में धरातल के अधिक तत्वों का मिश्रण पाया जाता है और मानव ही एक ऐसा प्राणी है जो पृथ्वी के किसी भी तत्व में हस्तक्षेप कर सकता है। मनुष्य पृथ्वी का एक भौगोलिक कारक है और सबसे क्रियाशील प्राणी भी है जो भौतिक पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन कर सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करता है। मानव अपने जन्म के समय से ही इस क्रिया में अनवरत सक्रिय रूप से लगा हुआ है। मनुष्य जंगलों को साफ करके अपने लिए आवास एवं कृषि कार्य के लिए भूमि तैयार करता है। धरातलीय विविधता के बावजूद इसमें परिवर्तन कर अपने लिए मार्ग का निर्माण कर लिया है। विभिन्न प्रकार की जीवनोपयोगी कार्यों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भौतिक पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन किया जाता रहा है। ये कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि मनुष्य जो कभी पर्यावरण का दास माना जाता था, आज अपने बुद्धि और कौशल से पर्यावरण का स्वामी बन बैठा है। उसने पर्यावरणीय भौतिक संसाधनों का उपयोग कर भोजन प्राप्त किया, कृषि कार्य किया, आवास का निर्माण किया, उद्योगों की स्थापना की, परिवहन के लिए मार्गों का निर्माण किया आदि कार्यों से प्रकृति में अंधाधुंध परिवर्तन किया है। यह कह सकते हैं कि मनुष्य इस पर्यावरण में परिवर्तन का सर्वप्रमुख जैविक कारक है।

यद्यपि मनुष्य ने उपरोक्त सफलताएं प्राप्त की हैं परन्तु कहीं–कहीं उसकी अपनी सुविधाएं ही मनुष्य के लिए घातक सिद्ध हो रही हैं। विभिन्न प्रकार के पर्यावरण प्रदूषण (स्थल, जल, वायु आदि) हो रहे हैं जिनके कारण विभिन्न प्रकार की घातक बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं और मानव को काल कवलित बना रही हैं।

उपरोक्त तथ्यों के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि इस संसार की समस्त वस्तुएं एवं क्रियाएं किसी भी रूप में स्थिर नहीं रह सकती हैं। मनुष्य का जन्म एक शिशु के रूप में होता है फिर बाल्यावस्था को प्राप्त होता है। त्तपश्चात युवावस्था, प्रौढ़ावस्था एवं अन्तः वृद्धावस्था को प्राप्त हो जाता है और उसका एक चक्र समाप्त हो जाता है। यहाँ पर एक उदाहरण समीचीन होगा। इस पृथ्वी पर तीन प्रमुख प्रकार की चट्टानें (आग्नेय, अवसादी, एवं रुपान्तरित) पायी जाती हैं लेकिन इनका स्वरूप स्थिर न होकर परिवर्तित होती रहती हैं यथा–

चट्टानों का चक्रण

प्राथमिक आग्नेय चट्टान परिवर्तित होकर अवसादी एवं पुनः ताप एवं दाब के कारण कायान्तरित एवं रुपान्तरित चट्टान का अति रुपान्तरण होकर पुनः आग्नेय शैल के रुप में परिवर्तन हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि संसार के प्रत्येक पदार्थ चाहे जड़ हो या चेतन सभी परिवर्तनशील है। इस सन्दर्भ में ब्रून्स का कथन वास्तविक है–**पृथ्वी तल पर कोई भी वस्तु स्थिर नहीं है सभी में गतिशीलता है चाहे वह**

विकास हो या ह्रास। सभी तत्वों पर परिवर्तन का क्रियाशीलता का सिद्धान्त पूर्ण रूपेण लागू होता है। उपरोक्त तथ्यों से इस सिद्धान्त की उपादेयता सिद्ध होती है।

3.3.3– वातावरण–मानव अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त–

मानव भूगोल का केन्द्रीय विषय मानव एवं पर्यावरण के मध्य के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन करना है। उपरोक्त वर्णित सिद्धान्त पर्यावरण के मध्य के अन्तर्सम्बन्धों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अध्ययन प्रस्तुत करते हैं, परन्तु मानव की उत्पत्ति से लेकर आज तक के बदलते सम्बन्ध का अध्ययन इस सिद्धान्त के अन्तर्गत किया जाता है। पर्यावरण के साथ मानव के व्यवहार का विश्लेषण विभिन्न आधारों एवं विभिन्न रूपों में किया गया है। इस विश्लेषण के कभी पर्यावरण पर तो कभी मानव की क्रियाशीलता पर अधिक जोर दिया गया है। इस हेतु उत्पन्न विचारधाराओं में अनेक वैचारिक सम्प्रदायों (Schools) का जन्म हुआ, जिन्होंने पर्यावरण के मध्य के अन्तर्सम्बन्धों को स्पष्ट करने का प्रयास किया। ये वैचारिक सम्प्रदाय निम्नलिखित हैं–

3.3.3 अ– प्रकृतिवादी विचारधारा या नियतिवादी विचारधारा–

इस विचारधारा को अन्य कई नामों से भी जानते हैं जैसे पर्यावरणवाद, प्रकृतिवाद, निश्चयवाद आदि। इस विचारधारा का प्रभाव 19 वीं सदी में अधिक था। 19 वीं सदी के अन्तिम वर्षों में वातावरण को अधिक प्रभावशाली माना जाता था तथा मानवीय क्रियाकलाप अथवा प्रभाव को गौड़ माना गया। इससे पूर्व भी इस सम्बन्ध में प्राचीन काल से मनीषियों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं। लेकिन समयोपरान्त यूरोप में पुनर्जागरण काल के बाद इस पर वैज्ञानिक आधारों पर विचार विमर्श शुरू हुआ। यह विषय बहुत दिनों तक चर्चा का विषय बना रहा। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान चार्ल्स डार्विन की 1859 ई में प्रकाशित पुस्तक " The origin of Species " और विशेषकर उनके प्राकृतिक चयन के सिद्धान्त " Doctrine of Natural Selection " का प्रभाव विभिन्न विषयों के साथ भूगोल पर विशेष रूप से दिखाई दिया। इसी के प्रभावस्वरूप मानव के व्यवहार व क्रियाशीलता का तथा इसका प्राकृतिक वातावरण के साथ कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित हुआ। ऐसा माना गया कि मनुष्य का प्रत्येक क्रियाकलाप वातावरण से नियन्त्रित होता है। इस विचारधारा को वातावरणवाद या निश्चयवाद कहा जाता है। इस विचारधारा के अनुसार, मानव के प्रत्येक क्रियाकलाप पर प्रकृति का सीधा प्रभाव होता है। प्राकृतिक वातावरण (भू–स्वरूप, जलवायु, वनस्पति, जीव–जन्तु, मृदा, ऊर्जा स्रोत) का उस प्रदेश में रहने वाले निवासियों के भोजन, जीवनयापन के ढंग, वस्त्र, आवास, परिवहन यातायात के साधन, कृषि पद्धति, फसल प्रतिरूप, सामाजिक संगठन आदि के साथ–साथ मनुष्य की शारीरिक बनावट, चरित्र, आचरण, व्यवहार, क्षमता, प्रवृत्ति और इच्छाओं पर विशेष रूप से पड़ता है। इन्होंने बताया कि प्रकृति एक सांचा है जो मानव को अपने अनुसार ढ़ालेती है।

नियतिवादी विचारधारा की जड़ें अत्यन्त पुरानी हैं। मानव सभ्यता के विकास के आरम्भिक काल में जबकि मानव अल्पविकसित था अर्थात् तकनीकी रूप से आज जितना सशक्त नहीं था, तब समस्त मानवीय क्रियाओं पर प्रकृति का नियन्त्रण होता था। त्तसमय भूकम्प, अतिवृष्टि, बाढ़, सूखा, ज्वालामुखी आदि से भयाक्रान्त रहता था और इन प्राकृतिक घटनाओं को ईश्वर का प्रकोप मानता था। प्राचीन भारतीय तथा यूनानी विचारकों ने मानव जीवन पर प्रकृति के प्रभाव को दर्शाया है। भारतीय दार्शनिकों एवं विचारकों ने इसी के प्रभाव स्वरूप प्राकृतिक शक्तियों को देवी–देवताओं का रूप दिया था। हिन्दू धर्म में सूर्य, अग्नि, वायु, जल, पत्थर आदि प्राकृतिक शक्तियों की पूजा का प्रावधान है। इससे प्राकृतिक शक्तियों की प्रबलता की पुष्टि होती है। यूनानी विचारक **हिप्पोक्रेट्स** (420 ई0पू0) आराम पसन्द एशियाई एवं यूरोप में मानव की मेहनती प्रवृत्ति के पीछे का कारण प्रकृति को बताया है। **हेरोडोट्स** ने मिश्र की सभ्यता के विकास का कारण वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों को बताया है। अरस्तू ने भी मानवीय प्रवृत्तियों एवं शारीरिक बनावट पर प्रकृति के प्रभाव को स्वीकार करते हुए उल्लेख किया है कि–यूरोप के ठण्डे प्रदेश के निवासी बहादुर किन्तु तकनीकी कुशलता में क्षीण होते हैं, तथा एशिया के निवासी बुद्धिमान और कुशल होते हैं परन्तु उनमें आत्मशक्ति का अभाव मिलता है। इसी प्रकार थ्यूसीडाइड्स, मान्टेस्क्यू आदि विद्वानों नें मानव पर वातावरण के प्रभाव को स्वीकार किया है।

18 वीं और 19 वीं शताब्दी में काण्ट, वारेनियस, स्ट्रैबो ने प्राकृतिक सत्ता को सर्वशक्तिमान मानते हुए

मानव को प्रकृति का उपहार माना। इसके बाद निश्चयवाद को सबसे अधिक पुष्ट करने का कार्य (पूर्ववर्णित) **डार्विन** की पुस्तक ने किया।प्रसिद्ध जर्मन जीवविज्ञानी **ई0 हैकल** ने पारिस्थितिकी पर जोर देते हुए बताया कि मानव वातावरण के साथ अनुकूलन करता है। उन्होंने स्पष्ट किया कि मानव प्रजातियों में भिन्नता होने का प्रमुख कारण प्राकृतिक पर्यावरण में भिन्नता है। **डेमोलिंस** ने लिखा है कि एशिया के स्टेपी प्रदेश की मंगोल प्रजाति, टुण्ड्रा में एस्किमो एवं लैप्स और अफ्रीका में पायी जाने वाली नीग्रो प्रजाति अपने–अपने पर्यावरण के साथ अनुकूलन करने के कारण विकसित हुई। **बकल** (Buckle) ने अपनी पुस्तक ''इंग्लैण्ड में मानव सभ्यता का विकास ''(History of civilization in England) में लिखा है–" जब हम मनुष्य और बाह्य संसार के मध्य सत्त् सम्बन्ध पर विचार करते हैं तो यह निश्चित हो जाता है कि मानवीय क्रियाओं और भौतिक नियमों के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है।"

रेटजेल ने नियतिवाद का समर्थन किया। हालॉकि वे एक मानववाद चिंतक माने जाते हैं। उन्होंने प्राकृतिक चयन पर आधारित विकासवाद को स्वीकार किया और प्राकृतिक पर्यावरण को प्रमुखता दी। रेटजेल की शिष्या एवं प्रसिद्ध भूगोलविद् **एलेन चर्चिल सैम्पुल** नियतिवाद की प्रबल समर्थक मानी जाती हैं। सैम्पुल की विश्वविख्यात पुस्तक "भौगोलिक वातावरण का प्रभाव" (Influences of Geographic Environment) में लिखा है कि '**मानव भूतल की उपज है**' (Man is the child of Nature) अमेरिकी भूगोलवेत्ता **हण्टिंगटन** भी नियतिवादी चिन्तक माने जाते हैं। हण्टिंगटन समस्त भौतिक तत्वों में जलवायु को सर्वोपरि माना है, उन्होंने मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर जलवायु के प्रभाव की अनिवार्यता को व्यक्त किया है।

इस प्रकार असंख्य उदाहरणों द्वारा विभिन्न विद्वानों ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि प्रकृति (भौतिक पर्यावरण) ही मनुष्य के प्रत्येक पक्ष को नियन्त्रित करती है। वातावरण तथा मनुष्य के इस अन्तर्सम्बन्ध की अवधारणा को नियतिवाद की संज्ञा दी जाती है। नियतिवाद यह स्पष्ट करता है कि मनुष्य के आर्थिक कार्य ही नहीं अपितु उसका समस्त आचरण पर वातावरण का नियन्त्रण माना जाता है।

3.3.3 ब– मानव एवं पर्यावरण की सम्भववादी विचारधारा :–

सम्भववादी विचारधारा मुख्यरूप से नियतिवाद की अतिवादिता का परिणाम मानी जाती है क्योंकि प्राकृतिक सत्ता का प्रभाव कुछ अधिक ही विद्वानों के मस्तिष्क पर छा गया था। 20 वीं सदी के पूर्वाद्ध में फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं ने मानवीय स्वतन्त्रता तथा उसकी कार्यकुशलता पर बल दिया और मानव पर पर्यावरण की सत्ता की आलोचना की और मानव को सक्रिय कारक मानते हुए प्रकृति के सापेक्ष मानवीय क्रियाकलापों को प्रधानता प्रदान की। सम्भववादियों का मानना था कि मनुष्य पर्यावरण का शक्तिशाली कारक है जो अपनी कार्यकुशलता से अपना अस्तित्व बनाए रख सकता है। मनुष्य अपने कार्यों से भौतिक पर्यावरण में अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करता है। ग्राम, नगर, सड़क, रेलें, नहरें, पुल, खेत, बागान, कारखाने और अन्य अवस्थापनात्मक इमारतें आदि मनुष्य की इच्छाशक्ति एवं क्रियाशीलता के परिणाम हैं। जो मनुष्य कभी पर्यावरण का दास माना जाता था आज अपने कौशल से प्रकृति का स्वामी बन बैठा है।

सर्वप्रथम फ्रांसीसी विद्वान **लूसियन फैब्रे** ने 1902 ई0 में सर्वप्रथम **सम्भववाद** शब्द का प्रयोग किया, इसीलिए इन्हें सम्भववाद का जनक भी कहा जाता है। फैब्रे ने अपनी पुस्तक ' Geographical Introduction to History' में इस विचारधारा का विस्तृत विवेचन किया है। इन्होंने लिखा है–" कहीं भी अनिवार्यता नहीं है बल्कि सर्वत्र सम्भावनाएं हैं और मनुष्य इन सम्भावनाओं का स्वामी होने के नाते उन सम्भावनाओं के चयन के लिए स्वतन्त्र है।" अर्थात् प्रकृति ने सर्वत्र मनुष्य के लिए सर्वत्र विभिन्न तत्वों के रूप में सम्भावनाएं प्रस्तुत की हैं। पर उन सम्भावनाओं के चयन के लिए मनुष्य पर दबाव नहीं डाल सकती है। मनुष्य अपनी इच्छा एवं आवश्यकतानुसार इनका चयन कर सकता है क्योंकि वह इन सम्भावनाओं का स्वामी है। प्रबल सम्भववादी अनुकूलन, समायोजन, एवं अनुक्रिया आदि शब्दों को पसन्द नहीं करते क्योंकि इनमें मानव की बाध्यता महसूस होती है।

इस विचारधारा के विकास का केन्द्र फ्रांस था, जहाँ पर फ्रांसीसी विद्वानों **ब्लॉश, ब्रून्स, डिमांजिया** आदि ने इस विचारधारा का समर्थन किया। ब्लाश मानवीय शक्ति को अधिक महत्व देते थे, उनके मतानुसार " **मनुष्य स्वयं समस्या और हल दोनों है तथा प्रकृति उसकी उपदेशिका मात्र है।**" ब्लॉश ने मनुष्य के विवेक, कौशल तथा क्रियाकलापों को अधिक महत्वपूर्ण और मानव शक्ति में विश्वास किया। इनके मतानुसार प्रकृति ने कोई ऐसा मार्ग निश्चित नहीं किया है जिस पर चलने के लिए मनुष्य को बाध्य होना पड़े बल्कि प्रकृति मनुष्य के लिए अनेक साधन एवं सम्भावनाएं प्रस्तुत करती है जिसका उपयोग मनुष्य अपनी इच्छानुसार करता है, इसी क्रम में उन्होंने कहा कि "**प्रकृति एक सलाहकार के अतिरिक्त कुछ नहीं**" (Nature is never more than an advisor)।

इस प्रकार ब्लॉश, ब्रून्श, डिमांजिया, ईसा बोमैन आदि विद्वानों ने सम्भववादी विचारधारा को पुष्ट करने का कार्य किया। यदि सूक्ष्मावलोकन किया जाये तो एक तथ्य स्पष्ट होता है कि मानव निश्चित रूप से इस प्रकृति की सबसे उत्कृष्ट भेंट है। आज मानव ने अपने कौशल से मंगल एवं चन्द्रमा तक पर अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज करायी है। ठंडे प्रदेशों में ग्रीन हाउस बनाकर फल, सब्जी एवं अनेक ऐसी वस्तुओं के उत्पादन को सम्भव बनाया जिसका आधार लेकर नियतिवादी चिंतक तर्क प्रस्तुत करते थे कि ठंडे प्रदेशों में फल, सब्जी आदि का उत्पादन करना सम्भव नहीं है। पर्वतीय क्षेत्रों में एवं मैदानी भागों में बड़े बांधों का निर्माण किया, कृषि कार्य किया, उद्योगों की स्थापना की और आत्मनिर्भर बना। दूसरा पक्ष यह है कि–मान लिया जाये कि मनुष्य इस भौतिक जगत का सबसे बुद्धिमान घटक है परन्तु निश्चित रूप से कहीं न कहीं वह इस विकास का दुष्परिणाम भी भोग रहा है और दिनों–दिन अप्रत्याशित घटनाओं का शिकार हो रहा है।

3.3.3 स–मानव पर्यावरण की नव–निश्चयवादी विचारधारा :–

नव–निश्चयवाद, नियतिवाद एवं सम्भववाद दोनों के समन्वय के परिणामस्वरूप निष्चित की गई विचारधारा है लेकिन इसका मूलकार्य निश्चयवाद के पूर्वाग्रहों को कम करना था। यह विचारधारा व्यावहारिक जगत के अधिक समीप है। इस विचारधारा के तथ्य वैज्ञानिक तर्कों पर आधारित है। इसीलिए इसे वैज्ञानिक निश्चयवाद भी कहा जाता है। इस विचारधारा के जनक (मूल प्रवर्तक) **ग्रिफिथ टेलर** महोदय थे। इन्होंने नव–निश्चयवाद को ''रुको और जाओ नियतिवाद'' (Stop And Go Determinism) की संज्ञा प्रदान की। 20वीं सदी में अनेक भूगोलविदों की आस्था सम्भववाद में बढ़ने लगी थी। जो प्राचीन नियतिवाद के समर्थक थे, वे इसके आलोचक बनने लगे क्योंकि यह विचारधारा अतिश्योक्ति होती जा रही थी। आज सभ्य संसार में मनुष्य ने अपने कौशल के बल पर प्राकृतिक दासता से मुक्ति प्राप्त कर ली थी। सम्भववादी विचारधारा में भी कट्टरवादिता ने अपनी जगह बना ली। सम्भववादियों ने मानव को प्रकृति का विजेता समझ लिया था। इसलिए दोनों कट्टर विचारों के उपरान्त एक समन्वयकारी विचारधारा का सूत्रपात हुआ जिसे नव–निश्चयवाद नाम दिया गया। इस विचारधारा के अनुसार–हालॉकि मनुष्य प्रकृति के तत्वों के उपयोग के लिए स्वतन्त्र है परन्तु मनुष्य को प्रकृति की सीमाओं एवं नियमों को ध्यान में रखना होगा और अनुसरण करना होगा। यदि उसे वातावरण में परिवर्तन लाना है तो उसे समायोजन करना ही पड़ता है।

मनुष्य इस वातावरण का एक अंग है तो वह इसका स्वामी कैसे बन सकता है मनुष्य प्रकृति के व्यवहार में परिवर्तन कर सकता है। लेकिन समन्वय के द्वारा ही ऐसा सम्भव है। यह समन्वय दो रूपों में देखा जा सकता है सम्भववादी समर्थकों के अनुसार प्राकृतिक वातावरण को जीतकर उसमें परिवर्तन किया जा सकता है जबकि नव–निश्चयवाद इसको मानव की मूर्खता मानता है। वास्तव में प्रकृति के साथ समन्वय स्थापित करके प्रकृति को समझकर एवं उसकी सीमा में रहकर इसमें परिवर्तन किया जा सकता है। **टेलर के अनुसार–**'मनुष्य न तो प्रकृति का दास है और न ही उसका स्वामी और न ही मानव के कार्य करने की क्षमता असीमित है।' मानव जीवन के चलने का प्रमुख कारण मनुष्य का प्रकृति के साथ समन्वय ही है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय है–

1– मानव समुदाय या मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से या धीमी गति से शोषण तो कर सकता है

परन्तु इन संसाधनों का निर्माण करना उसकी सामर्थ्य के बाहर है।

2– मनुष्य बाढ़, सूखा, भूकम्प आदि से प्रभावित क्षेत्रों में मानव निवास का निर्माण तो का सकता है लेकिन इन घटनाओं को एवं इससे होने वाले नुकसान को रोक नहीं सकता।

3– मनुष्य नदियों पर बांध का निर्माण करके नदी के पानी को कुछ देर के लिए तो रोक सकता है लेकिन स्थाई तौर पर नहीं तथा नदी की दिशा को भी बदल नहीं सकता।

4– मनुष्य शीत प्रदेशों में ग्रीन हाऊस बनाकर फसलोत्पादन कर सकता है लेकिन इससे उत्पन्न तापिक असन्तुलन (वैष्विक तापवृद्धि) से होने वाले नुकसान को रोकने में असहाय है।

इस प्रकार मनुष्य द्वारा अनेक कार्य प्रकृति की वगैर अनुमति करने का समर्थन सम्भववादी करते हैं परन्तु इसके नुकसान के लिए भी उन्हें तैयार रहना होगा। मानव किसी देश के विकास की गति को नियन्त्रित कर सकता है परन्तु यदि बुद्धिमान है तो प्रकृति के नियमों से विमुख नहीं हो सकता। " **वह (मनुष्य) चौराहे पर खड़े एक ट्रैफिक पुलिस की भांति है जो आने जाने वाले लोगों की गति को तो कम कर सकता है लेकिन उनकी दिशा को बदल नहीं सकता।**" इसी कारण इस संकल्पना का नाम '**रुको और जाओ**' नियतिवाद किया गया। **ग्रिफिथ टेलर** अपने इस मत को वैज्ञानिक नियतिवाद की संज्ञा दी है। **जार्ज टैथम** ने इसको अधिक वैज्ञानिक व्यावहारिक माना है। और इसे व्यावहारिक सम्भववाद घोषित किया है।

3.3.3 द– प्रसम्भववाद :– (Probabilism)

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात मानव भूगोल में मानव पर्यावरण सम्बन्धों में तेजी से परिवर्तन आने लगे तथा मानव केन्द्रित विचारधारा बलवती होने लगी और मानव के द्वारा तेजी से प्रकृति पर विजय का नारा बुलन्द होने लगा। इस सन्दर्भ में भूगोलवेत्ताओं ने निश्चयवाद, सम्भववाद एवं नवनिश्चयवाद को गौड़ मानकर एक नवीन विचारधारा सम्भावनावाद अथवा प्रसम्भववाद का सूत्रपात किया।

इस तर्क के अनुसार आज मानव ने अति वैज्ञानिक प्रगति कर ली है तथा सर्वत्र मानव के लिए सम्भावनाओं के द्वारा खुल गये हैं। इस संसार का कोई भी क्षेत्र वगैर मानवीय हस्तक्षेप के छूटा नहीं है। मनुष्य ने संकर बीज के माध्यम से फसलोंत्पादन को अपने अनुकूल बनाया, जीव–जन्तुओं के जीन में परिवर्तन कर क्लोन तैयार कर उनसे नयी नस्लें तैयार की। निर्विवाद रूप से आज का विज्ञान तन्त्र बहु–पक्षीय, बहु–आयामी एवं विशिष्ट परिणामों वाला तथा मानव, प्रकृति एवं जीवों के विभिन्न पक्षों को प्रभावित कर रहा है। कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि मनुष्य ने आज प्रकृति को बहुत अधिक सीमा तक प्रभावित कर दिया है, हालॉकि आज मनुष्य इस विकास रूपी पिशाच का भोजन बनता जा रहा है। लेकिन कुछ क्षेत्रों में मानव अजेय है। **ओ0 एच0 के0 स्पेट** का मानना है कि–" वातावरण मानव के लिए अनेक सम्भावनाएं रखता है तथा मानव इन सम्भावनाओं का चयन कर उपयोग में लाता है।" स्पेट को इस विचारधारा का प्रवर्तक माना जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट हो रहा है कि मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्ध मानव के उद्भवकाल से ही परिवर्तित होते रहे हैं एवं विभिन्न विचारधाराओं के माध्यम से इनका स्पष्टीकरण भी किया जाता रहा है। कभी निश्चयवाद तो कभी सम्भववाद, नव–निश्चयवाद प्रसम्भववाद, कृतिवाद, सांस्कृतिक अथवा सामाजिक निश्चयवाद आदि के माध्यम से मानव पर्यावरण के सम्बन्धों को समझा जा सकता है।

3.4–सारांश (Conclusion)

मानव भूगोल, भूगोल की ऐसी प्रमुख शाखा है जो कि वास्तविक रूप में अध्ययन करने योग्य है और अच्छी बात यह है कि इस विषय में मानव एवं मानव से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों का अध्ययन किया जाता है। इस पृथ्वी पर मानव के आगमन से प्रकृति के साथ समायोजन तथा मानव की वर्तमान स्थिति तक के विकसित मानव अर्थात् आर्थिक, औद्योगिक एवं विध्वंशकारी मानव तक का सफर कई चरणों से होकर गुजरा है। प्रस्तुत इकाई में

मानव भूगोल के तीन प्रमुख सिद्धान्तों अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त, क्रियाशीलता का सिद्धान्त तथा मानव वातावरण सिद्धान्त का वर्णन प्रस्तुत किया गया है जो मानव भूगोल की उपयोगिता को समझने में विद्यार्थियों के लिए सहायक होगी तथा इन सिद्धान्तों के माध्यम से विद्यार्थियों को मानव एवं प्रकृति के सम्बन्धों को समझने तथा पृथ्वी पर जीवन के संचालन के नियमों की जानकारी प्राप्त होगी।

3.5– बोध प्रश्न

3.5.1– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 1– मानव भूगोल के आधारभूत सिद्धान्त क्या हैं ? किसी एक का विस्तृत विवरण दीजिए।

प्रश्न 2– क्रियाशीलता सिद्धान्त का विस्तृत विवरण दीजिए।

प्रश्न 3– पार्थिव एकता सिद्धान्त को समझाते हुए मानव भूगोल में इसके महत्व की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 4– जीन ब्रून्श के पार्थिव एकता सिद्धान्त की विस्तृत विवेचना कीजिए।

3.5.2– लघु उत्तरीय प्रश्न :–

प्रश्न 1– मानव पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्ध सिद्धान्त को संक्षिप्त रूप में स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2– अन्तर्सम्बन्धीय सिद्धान्त की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3– मानव भूगोल में सिद्धान्तों के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

3.5.3– वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर :–

प्रश्न 1– किसने कहा है?'' परिवर्तन प्रकृति का नियम है। ''

अ– जीन ब्रून्स ब ब्लॉश

स– एल्सवर्थ हण्टिंगटन द हम्बोल्ट

प्रश्न 2– पार्थिव एकता सिद्धान्त का मूल दर्शन क्या है?

अ– भौगोलिक एकता ब– भौगोलिक विकास

स– भौगोलिक परिवर्तन द– भौगोलिक स्वतन्त्रता

प्रश्न 3– किसने कहा है? मानव भूगोल के तथ्य पार्थिव एकता से सम्बन्धित है।"

अ– रेटजेल ब– सैम्पुल

स– फैब्रे द– ब्लॉश

प्रश्न 4– ''मानव भूतल की उपज है'' यह कथन किसका है?

अ– ई0सी0 सैम्पुल ब– रेटजेल

स– डिमांजिया द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 5– "मानव भूगोल के सिद्धान्त" किसकी रचना है?

अ– ब्लॉश ब– ब्रून्श

स– हण्टिंगटन द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 6– किसने कहा है '' न आदि का पता है और न ही अन्त का भविष्य''?

अ– हण्टिंगटन ब– सैम्पुल

स– रेटजेल द– जेम्स हट्टन

प्रश्न 7– ''रुको और जाओ नियतिवाद'' की विचारधारा किस विद्वान ने दी?

अ– रेटजेल ब– सैम्पुल

स– ग्रिफिथ टेलर द– अरस्तू

प्रश्न 8– "हमारे चतुर्दिक तथा हमसे सम्बन्धित प्रत्येक वस्तुएं परिवर्तित हो रही हैं। ये वस्तुएं या तो विकसितहो रहीं है या इनमें ह्रास हो रहा है" यह कथन किसका है?

अ– जीन ब्रून्श ब– ब्लॉश

स– लूसियन फैब्रे द– डिमांजिया

उत्तरमाला :– 1. अ **2.** अ **3. द 4. अ 5. स 6. द 7. स 8. अ**

3.6–सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल मोहम्मद हारुन, विजडम पब्लिकेशन, शॉप नं0–12 ज्ञान मण्डल प्लाजा, मैदागिन वाराणसी 221001, तृतीय संस्करण, पृष्ठ सं 16,17,21,26,27।

02– मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन, सत्यम अपार्टमेन्टस, सेक्टर–3, जवाहर नगर जयपुर 302004, पेज सं0 17,33,34

03– मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह0, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए यूनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002, पेज सं0 91,93,94।

04– मानव भूगोल, डॉ0 एस0डी0 मौर्य, शारदा पुस्तक भवन, 11 युनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002, पेज सं0 21,22,26,30,।

05– Sample, E.C.,Influences of Geographic Environment,p.vi.

इकाई–4 : निश्चयवाद, सम्भववाद, नव निश्चयवाद, जर्मन विचारधारा, फ्रांसीसी विचारधारा एवं अमेरिकन विचारधारा

इकाई की रूपरेखा

4.1– प्रस्तावना

4.2– उद्देश्य

4.3– मानव भूगोल की विचारधाराएं

4.4– वातावरण निश्चयवाद

4.4.1– मानव भूगोल की जर्मन विचारधारा

4.5– सम्भववाद

4.5.1– मानव भूगोल की फ्रांसीसी विचारधारा

4.6– नव निश्चयवाद

4.7– पारिभाषिक शब्दावली

4.8– बोध प्रश्न

4.9– सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.1 प्रस्तावना–(Preface)

मानव भूगोल की एक प्रमुख परिभाषा के अनुसार "मानव भूगोल मानव एवं उसके प्राकृतिक वातावरण के साथ समायोजन का अध्ययन है।" विश्व में विभिन्न प्रकार की मानव प्रजातियां एवं मानव नृजातीय समूह हैं जो पूरे विश्व में प्रकीर्णित है। विश्व के विभिन्न भागों की जलवायु की दशाओं एवं भू आकृतियों में पर्याप्त विविधता है। विश्व में पाया जाने वाला प्रत्येक मानव समाज एवं मानव नृजातीय समूह अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी कुशलता के अनुसार अपने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग, दुरुपयोग एवं अल्प उपभोग करते हैं। जैसे पूर्वी अफ्रीका के मसाई जनजाति की जीवनशैली, अरब के बद्दू जनजाति की जीवनशैली से भिन्न है। ऐस्किमो जनजाति के पर्यावरण के साथ सम्बन्ध में देखा जा सकता है कि टुण्ड्रा प्रदेश की जलवायु इन जनजातियों को शिकार करने के लिए विवश कर रखी है। इस प्रकार विश्व के विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों का पर्यावरण के साथ अपना अलग–अलग सम्बन्ध है। कहीं–कहीं पर विविधता के साथ समानता देखने को मिल जाती है। एक बात उल्लेखनीय है कि प्राचीन काल (मानव के इस धरातल पर अवतरण के समय) से लेकर वर्तमान तक मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्ध निरन्तर परिवर्तशील रहें हैं। कभी पाता (प्राप्त करने वाला) की स्थिति में रहने वाला मानव आज अपहरणकर्ता की स्थिति में आ गया है। प्रस्तुत इकाई में मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को विशद रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1– मानव जीवन–शैली की विविधता एवं एकता को प्रस्तुत करना।

2– मानव जीवन के पर्यावरण के साथ परिवर्तनशील सम्बन्धों को स्पष्ट करना।

3– विद्यार्थियों को पर्यावरण के साथ किए गये व्यवहार (समायोजन–परिमार्जन एवं अनुकूलन) से अवगत कराना।

4– वर्तमान पर्यावरणीय दशाओं का मूल्यांकन करना, एवं वास्तविक दशा से विद्यार्थियों को अवगत कराना।

5– मानव पर्यावरण सम्बन्धों की विभिन्न विचारधाराओं, निश्चयवाद, सम्भववाद, एवं नव–निश्चयवाद के माध्यम से प्रकट करना।

6– विद्यार्थियों को पर्यावरण के साथ अपने व्यवहार में सुधार लाने के लिए प्रेरित करना।

7– विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति मानव व्यवहार से उत्पन्न दशाओं को समझकर सुधार के लिए नव चेतना का विकास करना।

4.3 मानव भूगोल की विचारधाराएं (Concepts of Human Geography)

भौगोलिक जगत के दो पक्ष हैं प्रकृति और मानव। प्रारम्भिक काल में मानव प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों की अवधारणा प्रकृति प्रधान थी, अर्थात् मानवीय क्रियाएं प्राकृतिक नियमों से नियन्त्रित एवं संचालित होती थीं। इस विचारधारा को प्रकृतिवाद के रूप में निरूपित किया गया। मानव के मानसिक और तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों में निरन्तर परिवर्तन होते रहे हैं। मानव का पर्यावरण के साथ सम्बन्ध कभी अनुकूल तो कभी प्रतिकूल रहा है। इसलिए इस सन्दर्भ में दो रूपों में मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को निरूपित किया जाता है–

अ– ऐतिहासिक दृष्टिकोण–

मनुष्य तथा पर्यावरण के मध्य बदलते सम्बन्धों के ऐतिहासिक परिवेश में अध्ययन का अत्यधिक महत्व होता है क्योंकि इस तरह के अध्ययन द्वारा मानव के उपभोगवादी क्रियाकलापों द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक मानव पर्यावरण के बदलते हुए सम्बन्धों को निम्नलिखित चार चरणों में विभाजित किया जा सकता है–

- **आखेट एवं भोजन संग्रह काल**
- **पशुपालन एवं पशुचारण काल**
- **पौधपालन एवं कृषि काल**
- **विज्ञान अभियांत्रिकी एवं औद्योगिक मानव का काल**

ब– आधुनिक दृष्टिकोण–

यह दृष्टिकोण विभिन्न तर्कों पर आधारित है। इसमें मानव एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में निरूपित किया गया है। मानव एवं उसके समाज के उद्भव एवं विकास की प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण में इस ग्रहीय पृथ्वी पर मानव एवं पर्यावरण की रचना भौतिक एवं जैविक तत्वों(स्थल, जल, वायु, मृदा, वनस्पति तथा जन्तु) से होती थी। उस समय मानव **भौतिक मानव (Physical Man)** के रूप में था क्योंकि उसकी समस्त जीवनोपयोगी वस्तुएं (भोजन, वस्त्र, आवास) प्रकृति से ही प्राप्त हो जाया करती थीं। परन्तु जैसे–जैसे यह भौतिक मानव तकनीकी, सामाजिक, आर्थिक, और प्रौद्योगिक मानव होता गया, उत्कृष्ट जीवन शैली के चक्कर में प्रकृति में अपने अनुसार परिवर्तन एवं परिमार्जन करने लगा और एक उपभोगवादी सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पर्यावरण के साथ मानव के सम्बन्धों को विभिन्न विचारधाराओं के रूप में प्रकट किया जाता है–

4.4 वातावरण निश्चयवाद या नियतिवाद (Determinism)

इस विचारधारा के अन्तर्गत मानवीय क्रिया–कलापों पर भौतिक पर्यावरण का पूर्णतः नियन्त्रण माना गया है। पर्यावरण की तुलना में मानव की शक्तियाँ प्रायः महत्वहीन एवं अप्रभावी हैं। मानव का प्रत्येक क्रियाकलाप उसके वातावरण से नियन्त्रित होती हैं, यही इस विचारधारा का केंन्द्र बिन्दु है। **डार्विन** की पुस्तक **"The Origin of Species" और** विशेषकर उनके " Doctrin of Natural Selection " का चमत्कारी प्रभाव इस विषय पर भी पड़ा। दार्शनिकों की ही भांति भूगोलविद्ों ने भी प्राकृतिक वातावरण तथा मानवीय व्यवहारों के बीच कार्य–कारण सम्बन्ध स्थापित करना शुरू किया। प्राकृतिक वातावरण के तत्व या तत्व समूह मानव को नियन्त्रित करते हैं, की विचारधारा का प्रादुर्भाव हुआ, जिसे निश्चयवाद कहा गया। इस विचारधारा को निम्नलिखित नामों से जाना जाता है–

- **पर्यावरणवाद (Environmentalism)**

- **नियतिवाद या निश्चयवाद (Determinism)**
- **वातावरण–निश्चयवाद (Environmental-Determinism)**
- **भौगोलिक–निश्चयवाद (Geographical-Determinism)**

इस विचारधारा में प्राकृतिक वातावरण को सार्वभौमिक प्रधानता प्रदान की गई है तथा मानव को प्रकृति के दास के रूप में माना गया है। इस विचारधारा के मुख्य पोषक **ग्रीक (यूनानी)** विद्वान **हिप्पोक्रेट्स (420 ई0पू0)** ने अपनी पुस्तक **" OnAir WaterAnd Places "** में एशियाई एवं यूरोपीय निवासियों के स्वभाव की भिन्नता को प्राकृतिक कारक जन्य माना था। हिप्पोक्रेट्स ने अपने विचार व्यक्त करते हुए एशिया के आराम–पसन्द एशियाई लोगों की तुलना सक्रिय एवं कार्यकुशल यूरोपीय निवासियों से की है तथा दोनों की विभिन्नता का कारण वहाँ की जलवायु को बताया है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक वातावरण की स्थिरता की पुष्टि उन पर्वतीय प्रदेशों के निवासियों की तुलना जो लम्बे, विनम्र एवं साहसी हैं, विपरीत शारीरिक गठन वाले पतले, दुबले, सुन्दर तथा बलवान शुष्क तथा निचले प्रदेशों के लोगों से की है। इसी प्रकार **अरस्तू** ने अपनी पुस्तक " Politics " में प्रकृति का प्रभाव मनुष्य के मानसिक एवं भौतिक गुणों के महत्व को स्वीकारते हुए बताया है कि "यूरोप के ठण्डे देश के निवासी बहादुर होते हैं परन्तु विचारों एवं तकनीकी कौशल का अभाव होता है, परिणामतः अन्य क्षेत्रों की तुलना में वे स्वतन्त्र कहे जा सकते हैं तथापि उनमें राजनीतिक संगठन का सर्वथा अभाव रहता है जिससे अपने पड़ोसी देशों पर शासन करने में असमर्थ रहते हैं। इसके विपरीत एशिया के निवासी ज्ञानी एवं चतुर हैं परन्तु इनके अन्दर भावनात्मक लगाव की कमी है जिसके कारण वे दासता एवं गुलामी में जकड़े हुए हैं जबकि मध्यक्षेत्र में रहने वाले यूनानवासियों को इन दोनों की विशेषताओं वाला माना है।

इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन **स्ट्रैबो** के लेखों में कई जगहों पर मिलते हैं। स्ट्रैबो ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि किस प्रकार इटली के आकार, धरातल, जलवायु और विश्व सम्बन्धों ने रोम के उद्‌भव, विकास एवं शक्ति को प्रभावित किया। **बोदिन** ने 16 वी शताब्दी के मध्यान्तिम वर्षों में इन्हीं विचारों की पुष्टि में अपनी कृति 'रिपब्लिक' में लिखा है। उन्होंने अक्षांश, ऊँचाई तथा कटिबन्ध आदि को बहुत प्रभावशाली माना है एवं इसी आधार पर उसने उत्तरी एवं दक्षिणी देशों के निवासियों में एक विशेष अन्तर की बात की कि उत्तर के लोग निर्दयी, पशुवत एवं साहसी होते हैं जबकि दक्षिण के निवासी प्रतिहिंसक, चतुर एवं विद्वान होते हैं। बोदिन के अनुसार समशीतोष्ण कटिबन्ध मानव विकास के लिए अत्यन्त उत्तम एवं उपयुक्त क्षेत्र है। यहाँ की जलवायु लोगों को परिश्रमी, स्फूर्तिदायक और उद्योगशील बनाये रखती है तथा यहाँ के लोग उत्तर के लोगों की तुलना में अधिक बुद्धिमान तथा दक्षिण के लोगों की अपेक्षा अधिक उद्योगशील होते हैं। **मान्टेस्क्यू ने** भी वातावरण की प्रधानता के इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। **मान्टेस्क्यू ने** जलवायु के प्रभाव को अन्य प्रभावों की तुलना में अधिक प्रभावशाली माना है। मान्टेस्क्यू के अनुसार ठण्डी जलवायु के लोग शारीरिक रूप से मजबूत, साहसी, स्पष्टवक्ता, कम शंकालु और कपट रहित होते हैं। इनकी तुलना में दक्षिण के लोग बूढ़े लोगों की भांति भीरू, शारीरिक रूप से दुर्बल, उद्योगों के प्रति उदासीन तथा निष्क्रिय होते हैं। जब उत्तर के लोग दक्षिण की और आते हैं तो उनमें भी ये गुण आ जाते हैं तथा शीघ्र ही अपनी शक्ति खो देते हैं तथा शिथिलता उन्हें घेर लेती है। जलवायु के महत्व को स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है '' पूर्वी देशों में धर्म, रीति–रिवाज, एवं विधान की स्थिरता का प्रमुख कारण गर्म जलवायु है। विधि निर्माताओं को इसकी जानकारी अवश्य होनी चाहिए। उन्होंने ऐसे विधानकर्ता को बुरा बताया है जो जलवायु के दोषों की पुष्टि करते हैं। इसके विपरीत जलवायु के ऐसे दोषों का सुधार करने के पक्षधर विधानकर्ताओं को अच्छा बताया। किसी प्रदेश की मिट्‌टी जलवायु की तुलना में कम प्रभावी कारक है।

4.4.1–मानव भूगोल की जर्मन विचारधारा : नियतिवाद :–

मानव भूगोल का वैज्ञानिक अध्ययन 18 वीं सदी से शुरू हुआ। इसे जर्मन विद्वानों ने प्रारम्भ किया। इन्होंने भूगोल को एक " **विज्ञान** " के रूप में विकसित किया। इन विद्वानों में **इमैनुएल कान्ट, कार्ल रिटर, हम्बोल्ड्ट, रिचथोफेन, पेशेल और रेटजेल** के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

इमैनुएल कान्ट (Immanuel Kant-1724–1804 ई0) :–

इमैनुएल काण्ट प्रसिद्ध जर्मन विद्वान एवं दार्शनिक थे। काण्ट ने भूगोल में नियतिवाद की विचारधारा का प्रारम्भ किया। काण्ट ने भूगोल के विषय–क्षेत्र को परिभाषित किया। काण्ट की पुस्तक " भौतिक भूगोल " (Physical Geography) में प्राकृतिक भूगोल का मानव इतिहास पर प्रभाव दर्शाया है। काण्ट ने अपनी पुस्तक में

यूरोप के विभिन्न प्रदेशों की विभिन्न मात्रा में उन्नति का कारण वातावरण को बताया है। काण्ट ने धार्मिक सिद्धान्तों परिवर्तन के पीछे पर्यावरण की भूमिका का वर्णन भी किया है। इन्होंने मानव इतिहास पर पर्यावरण के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए बताया कि **"गर्म क्षेत्रों के निवासी सामान्यतः आलसी व डरपोक होते हैं।"** काण्ट ने मनुष्य और वातावरण की प्रक्रियाओं का उल्लेख किया, परन्तु इस विषय को विस्तार से प्रतिपादित नहीं किया। काण्ट के पश्चात् भूगोल को एक नया आयाम **हम्बोल्ट एवं रिटर** ने प्रदान किया और नियतिवाद की विचारधारा को आगे बढ़ाने का कार्य किया। ये दोनों विद्वान काण्ट के विचारों से बहुत प्रभावित थे।

अलेक्जेन्डर वॉन हम्बोल्ट–

प्रसिद्ध जर्मन विद्वान हम्बोल्ट नियतिवाद के समर्थक माने जाते हैं। इनके विचारों से निश्चयवादी विचारधारा को बल मिला। इस विचारधारा का एक नया स्वरूप झलकता दिखाई दिया। हम्बोल्ट ने स्पष्ट रूप से मानव पर पर्यावरण के प्रभाव को स्वीकार किया। हम्बोल्ट की सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक " कॉसमॉस " (Cosmos), 5 खण्डों में प्रकाशित हुई, जिसमें सम्पूर्ण विश्व की विस्तृत व्याख्या है। इनका विचार था कि " **भौतिक शक्तियाँ मानवीय क्रियाशीलता से अधिक शक्तिशाली हैं।"** हम्बोल्ट ने पृथ्वी के निर्जीव और जीवधारियों के बीच पारस्परिक सम्बन्धों का विश्लेषण किया। इनके अनुसार मनुष्य की अपेक्षा वनस्पति तथा जीव–जन्तु अपने निवास क्षेत्र की मिट्टी, जलवायु तथा ऋतु परिवर्तन से अधिक प्रभावित होते हैं। मनुष्य अपने बुद्धि और विवेक से भौतिक नियन्त्रण को कम करने का प्रयास करता हैं। साथ ही हम्बोल्ट ने यह भी अनुभव किया कि मनुष्य सभी प्रकार की जलवायु में निवास करने में सक्षम है।

हम्बोल्ट की विचारधारा मानव भूगोल की प्रमुख उपलब्धि है। इन्होनें भौगोलिक अध्ययन में तुलनात्मक विधि का प्रयोग किया है, विशेषकर घास के मैदान एवं मरुस्थलों का अध्ययन इस परिप्रेक्ष्य में किया। हम्बोल्ट प्राकृतिक एकता में विश्वास करते थे। इनकी अपनी मान्यता कि पृथ्वी पर ही आत्मा व्याप्त है। सजीव और निर्जीव जैसे पेड़–पौधों, पशुओं, पत्थरों और मानव सभी में केवल एक ही जीवन है तथा सभी अन्तर्सम्बन्धित हैं, जिसमें पार्थिव एकता की झलक स्पष्ट दिखाई देती है।

कार्ल रिटर (Karl Ritter 1779–1859 ई0) :–

मानव भूगोल के विकास में रिटर का विशेष योगदान है। रिटर को मानव के क्रियाकलापों पर वातावरण के नियन्त्रण में विश्वास था। उनका मानव केन्द्रित दृष्टिकोंण तत्कालीन वातावरण प्रधान विचारधारा का पोषक है। परन्तु रिटर ने स्वयं मानव की कार्यकुशलता को समान महत्व दिया है। रिटर की धारणा कुछ अधिक विस्तृत तथा तार्किक दृष्टि से अधिक युक्तिसंगत थी। इन्होंने बताया कि पृथ्वी और उसके निवासियों में घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। इनमें से कोई भी बिना एक दूसरे की सहायता के अपने सभी रूपों को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित नहीं हो सकते। भूमि मानव एवं मानव समुदाय को प्रभावित करती है और मानव समुदाय भूमि का अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप उपयोग करता है तथा उसे प्रभावित करता है। उन्होंने यूरोप के इतिहास पर उसके समुद्री तट के महत्व की व्याख्या की तथा यूरोप के विकास पर इसके भौतिक स्वरूप के प्रभाव का विश्लेषण किया। तटवर्ती प्रदेश के निवासियों पर उसके जन्म क्षेत्र का प्रभाव एवं भूमध्य सागर में स्थित द्वीपों का छोटी–छोटी नर्सरियों के सदृश जहाँ सुरक्षित रूप में सभ्यता का प्रसार हो सके आदि की विशेषताओं पर बल दिया। वे तथ्यों के मात्र संकलन को भूगोल का उद्देश्य नहीं मानते थे।

उनका प्रमुख जोर प्रादेशिक इकाई के अध्ययन पर था परन्तु सभी इकाइयों को ब्रह्माण्ड के अंग के रूप में स्वीकार किया तथा पृथ्वी को उसी ब्रह्माण्ड का अंश स्वीकार किया। वे ये मानते थे कि प्रकृति के सभी कार्य एक निश्चित नियम के अनुसार संचालित होते हैं। रिटर यह मानते थे कि इस जगत की जीवन्त समष्टि के पीछे ईश्वर का विशेष प्रयोजन है। रिटर की विश्वविख्यात ग्रन्थमाला **"अर्डकुण्डे" (Erd-kunde)** का प्रकाशन 1917 ई0 से प्रारम्भ हुआ, जिसमें कुल 19 ग्रन्थ थे। रिटर के अनुसार "जिस प्रकार मानव का शरीर आत्मा के लिए बना है, उसी प्रकार भौतिक ग्लोब मानव जाति के लिए बना है।" रिटर का मानना है कि भूगोल स्थानों, नदियों, पर्वतों, यात्रा मार्गों का शुष्क शब्दकोष मात्र नहीं है, वरन् यह एक ऐसा विषय है जो मानव प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या करता है। काण्ट के दर्शन को रिटर और हम्बोल्ट ने आत्मसात् किया। रिटर ने 19 वीं सदी के प्रारम्भ में हम्बोल्ट के **आगमनात्मक** उपागम को अपनाया जिसके आधार पर पर्यावरण निश्चयवाद को प्रस्तुत किया। विभिन्न प्रदेशों की भौतिक दशाओं का वहाँ के निवासियों के शारीरिक गठन एवं उसकी जीवन शैली के साथ सम्बन्ध का निरीक्षण किया एवं पर्यावरणीय प्रभाव का आंकलन किया। रिटर ने बताया कि तुर्कोमन लोगों की संकड़ी पलकें

जीव पर मरूस्थल के प्रभाव को स्पष्ट रूप से दर्शाती हैं।

हैकल एवं बकल ने इस नियतिवादी विचारधारा को और आगे बढ़ाया तथा '**पारिस्थितिकी विज्ञान'** को जन्म दिया। उसने मनुष्य को अन्य जीवों की तरह माना है, जिस प्रकार अन्य जीव वातावरण के साथ अनुकूलन स्थापित करते हैं, उसी प्रकार मनुष्य भी अपने वातावरण से अनुकूलन एवं घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है। हैकल ने अपनी रचना "Ecology " में यह उल्लेख किया कि प्राकृतिक शक्तियां मानव प्रजातियों को प्रभावित करती हैं। उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि " यूरोपीय निवासियों में प्रकृति को अपने वश में करने की प्रवृत्ति मिलेती है जबकि एशियाई लोगों में प्रकृति के अनुरूप कार्य करने की प्रवृत्ति मिलेती है। बकल (Buckle) ने अपनी पुस्तक "इंग्लैण्ड की सभ्यता का विकास" (History of Civilization in England Vol-I-1857, Vol-II-1861) में लिखा कि प्राकृतिक जलवायु, भोजन, मिट्टी, समुद्र, वनस्पति आदि की अनुकूलता के कारण ही इंग्लैण्ड के लोग साहसी, परिश्रमी और राष्ट्रीयता के समर्थक हैं। इनके अनुसार जलवायु, मिट्टी एवं भोजन तीनों ऐसे प्रमुख तत्व हैं जो मनुष्य में विभिन्न विचारों को उत्पन्न करते हैं जिससे एक क्षेत्रीय विशिष्टता का एक क्षेत्रीय गुण निर्धारित होता है। बकल के उपरान्त **डिमोलिन्स** (1882 ई0) भी नियतिवाद के पोषक हुए हैं जिन्होंने मानव की प्रत्येक क्रिया एवं प्रतिक्रिया में निश्चयवाद की झलक देखी। उन्होंने विस्तार पूर्वक स्पष्ट किया कि मानव समाज के सभी आर्थिक और सांस्कृतिक कार्य वातावरण से सम्बन्धित होते हैं। प्रत्येक दशा में वे एक ही निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि "समाज का निर्माण वातावरण द्वारा ही होता है।"

फ्रेडरिक रेटजेल (Friedrich Ratzel 1844-1904 ई0) 19 वीं शताब्दी के महत्वपूर्ण भूगोलवेत्ता रेटजेल को मानव भूगोल की सुदृढ़ नींव डालने वाला कहा जाता है। रेटजेल प्रथम भूगोलवेत्ता थे, जिसने स्पष्टतः निश्चयवाद की व्याख्या की। इसलिए आधुनिक युग में रेटजेल को ही वैज्ञानिक निश्चयवादी सिद्धान्त का प्रतिपादक माना जाता है। इन्होंने 'शास्त्रीय' भौगोलिक निश्चयवाद की 'सामाजिक डार्विनवाद' के तत्वों से आपूर्ति की और राज्य के जैविक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार जिस प्रकार एक जीव अपने जीवन के लिए संघर्ष करता है उसी प्रकार राज्य को अपने विस्तार के लिए संघर्ष करना चाहिए। और निरन्तर अधिकाधिक क्षेत्र के अधिग्रहण का प्रयास करना चाहिए। रेटजेल की प्रसिद्ध पुस्तक **"एन्थ्रोपोज्योग्राफी"** (Anthropogeography) 1882 ई0 में बताया कि पृथ्वी पर मनुष्य (जनसंख्या) का वितरण प्राकृतिक वातावरण का परिणाम है। इन्होंने ही ' **पार्थिव एकता** ' (Terrestrial Unity) के सिद्धान्त की विवेचना की। उन्होंने अपनी पुस्तक "The History of Mankind " में लिखा है कि 'हमारी बुद्धि संस्कृति एवं सभ्यता की उपलब्धियों की तुलना एक चिड़ियाँ की स्वच्छन्द उड़ान से नहीं की जा सकती है, उसकी तुलना तो पौधे के एक तने से की जा सकती है क्योंकि हम सदैव से आबद्ध हैं तथा शाखाएं तने पर ही अवलम्बित हो सकती हैं। तने पर आने वाली टहनियाँ चाहे आकाश की और जाती हों परन्तु पैर तो जमीन पर ही टिके होते हैं और धूल को धूल में मिलना पड़ता है। 'रेटजेल ने यह भी तार्किक विचार रखा कि 'समान दशाएं समान जीवनशैली को जन्म देती हैं। इसे रेटजेल के द्वारा बताए गये एक उदाहरण से समझा जा सकता है कि ब्रिटिश द्वीप समूह और जापान की द्वीपीय स्थिति ऐसी है जो उन्हें बाहरी आक्रमणकारियों से प्राकृतिक रूप से सुरक्षा प्रदान करती है। इसका प्रभाव यह है कि यहाँ के निवासी तीव्र प्रगति कर रहे हैं और इन देशों ने महाशक्तियों का स्तर प्राप्त कर लिया है।

विश्व प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता और रेटजेल की शिष्या **कुमारी एलेन चर्चिल सैम्पुल (E.C. Sample 1863–1932 ई)**का नाम निश्चयवादी विचारधारा के पोषकों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सैम्पुल परअपने शिक्षक के विचारों का विशेष प्रभाव पड़ा और उन्होंने इस विचारधारा को आगे बढ़ाने का कार्य किया और इस प्रकार वह निश्चयवाद की कट्टर समर्थक बन गईं। इनके द्वारा रचित प्रसिद्ध पुस्तक ' **भौगोलिक वातावरण का प्रभाव**' **(Influences of Geographic Environment)** का आरम्भ इन पंक्तियों से किया–**"मानव भूतल की उपज है।"** इसका अभिप्राय केवल इतना नहीं है कि वह पृथ्वी की सन्तान है, उसकी धूल का कण है, किन्तु यह भी है कि पृथ्वी ने उसे मातृत्व दिया है, उसका पालन पोषण किया है, उसके लिए कार्य निर्धारित किए हैं। यही प्रकृति एक माँ की भांति मानव को शिक्षा देती है, मानसिक स्तर को ऊँचा करती है, और उसके अन्दर की प्रवृत्तियों, जिज्ञासा, वाक्पटुता आदि को भरती है। उसका बौद्धिक विकास कर जटिल कार्यों को सरलता पूर्वक करने की प्रेरणा देती है।

इस वातावरण के नियतिवाद की संकल्पना को आगे बढ़ाने में सैम्पुल का योगदान है। यद्यपि सैम्पुल ने भूगोल का अध्ययन क्षेत्र, प्राकृतिक वातावरण का नियन्त्रण केवल मनुष्य के भोजन, वस्त्र, आवास एवं आर्थिक व्यवसाय पर ही नहीं अपितु उसके विचारों, भावनाओं, धार्मिक विश्वासों एवं सामाजिक संगठनों आदि पर है। सैम्पुल के कथन से स्पष्ट है कि "मनुष्य की हड्डी, मांस, मस्तिष्क तथा आत्मा में वातावरण व्याप्त है। जो पहाड़ी

क्षेत्रों में चढ़ने के लिए मजबूत टांगे प्रदान करती है, जबकि समुद्र तट पर बसने वाले लोगों को नाव खेने के लिए चौड़े सीने तथा दृढ़ भुजाएं प्रदान की हैं, जबकि विस्तृत चरागाहों एवं जल विहीन मरुभूमि में घूमने वालों में चिन्तन की मेधा, मैदोनों में बसने वाले कई देवताओं की पूजा करते हैं तो पहाड़ों पर कठिन जीवन गुजारने वालों को ईश्वर में विश्वास करने के लिए प्रेरित किया है। "

सैम्पुल ने मानव को मोम का पुतला माना है, जिसे वातावरण ही सांचे में ढालता है। मानव को उसके वातावरण से अलग नहीं किया जा सकता है, जहाँ वह कृषि करता है, आवास बनाता है या परिवहन व्यापार हेतु मार्गों का निर्माण करता है। इन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा कि, " प्रकृति का मानव पर निरन्तर तथा निश्चयात्मक प्रभाव पड़ता है किन्तु इस कार्य में प्रकृति मानव की भांति शोरगुल नहीं मचाती वरन् वह मूक रहती है। " अतः कु0 सैम्पुल ने भूगोल को प्रमुखतः मानव भूगोल तक सीमित करते हुए कहा कि ' मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी एवं क्रियाशील मानव के परिवर्तशील सम्बन्धों का अध्ययन है। सैम्पुल ने भौगोलिक वातवरण के प्रभाव को चार भागों में विभक्त किया है–

01– सीधा भौतिक प्रभाव– इस प्रभाव के अन्तर्गत मानव की शारीरिक संरचना पर प्रभाव को देखा जा सकता है। इसमें प्राकृतिक रचनाएं एवं जलवायु प्रमुख हैं।

02– मानसिक प्रभाव– इससे धर्म, साहित्य, संस्कृति, भाषा भावनाओं और विचारों में अन्तर आ जाता है। अर्थात् इसमें ऐसे प्रभाव सम्मिलित है जिनसे मनुष्य की सांस्कृतिक तत्वविशेष रूप से प्रभावित होते हैं।

03– सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव– प्राकृतिक वातावरण से परिपूर्ण वातावरण उन्नत समाज तथा आर्थिक उन्नति का सूचक होता है। यह वातावरण की सम्पन्नता और निर्धनता पर आधारित है।

04– मानव गतियां– ये ऐसे परिवर्तन होते हैं जो आर्थिक साधनों एवं जलवायु के परिवर्तन के कारण देखने में आते हैं। इन परिस्थितियों मानव एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवास कर जाता है। आवास एवं प्रवास इसके परिणाम हैं।

एल्सवर्थ हंटिंगटन :–

सैम्पुल का अनुसरण करने वाले प्रमुख अमेरिकी भूगोलवेत्ता **एल्सवर्थ हंटिंगटन** ने भी प्राकृतिक वातावरण का मानव पर सर्वव्यापी प्रभाव सिद्ध करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी पुस्तक ''**मानव भूगोल के सिद्धान्त**'' में स्पष्ट करने का प्रयास किया कि किस प्रकार वातावरणीय दशाएं प्राणि जगत के माध्यम से मानवीय क्रियाकलापों को प्रभावित करते हैं। इन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि पृथ्वी की भौतिक दशाओं के आधार पर वनस्पतियों का विकास होता है। इन्हीं वनस्पतियों के आधार पर जीव–जन्तुओं का विकास होता है तथा इन्हीं के आधार पर ही मानव समुदाय का पालन पोषण होता है। मानव अपनी आवश्यकतानुसार प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करता है और इस प्रकार वह उन तत्वों पर आश्रित है। मानव जिन माध्यमों से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, वे माध्यम किसी न किसी रूप में भौतिक तत्वों से प्रभावित होता है। स्पष्ट है कि हंटिंगटन नियतिवाद के प्रबल समर्थक थे, इन्होंने स्पष्ट रूप में कहा कि मनुष्य की जीवन शैली, कार्य–व्यवहार उसी प्रकार का होता है जैसा कि उसके निवास क्षेत्र का भौतिक पर्यावरण होता है।[04]

01– जलवायु में अनेकों परिवर्तन हुए हैं तथा इन परिवर्तनों का प्रभाव मानव सभ्यता एवं इतिहास पर पड़ा है।

02– विश्व की सभी सभ्यताएं अपने स्थानिक विशिष्ट जलवायुगत विशेषताओं से सम्बन्धित हैं।

03– जिन प्रदेशों में चक्रवातीय दशाएं पायी जाती हैं वहाँ के लोग स्फूर्ति पूर्ण होते हैं अर्थात् चक्रवात जन्य मौसम मनुष्य के लिए स्फूर्तिदायक होता है।

04– कृषि कार्य हेतु उपयुक्त जलवायु दशाएं मानसिक कार्य एवं विकास की प्रेरक होती हैं।

05– मानव के विकास के साथ ही सभ्यता के केन्द्र प्रसारित होते गये हैं।

इस विचारधारा को मानने वाले अन्य भूगोलवेत्ता जीन बोडिन, स्ट्रैबो और मांटेस्क्यू, आदि थे जिन्होंने इस विचारधारा को पुष्ट करने और तार्किक ढ़ग से विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया। इस प्रकार अनेक उदाहरणों द्वारा अनेकों विद्वानों नें यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि वातावरण ही मानव को नियन्त्रित, निर्धारित एवं संचालित करता है। वातवरण तथा मनुष्य के अन्तर्सम्बन्ध की इस धारणा को नियतिवाद के नाम से जाना जाता है। इस

प्रकार स्पष्ट होता है कि विद्वानों का एक बड़ा समूह वातावरणीय सत्ता की महत्ता को स्वीकार करता है।

नियतिवाद की आलोचना :–

यद्यपि प्राचीन विद्वानों ने प्रकृति की अनन्य शक्ति को ही सर्वोपरि माना, परन्तु आज मनुष्य ने वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के द्वारा मानव सभ्यता को एक नया आयाम देने की स्थिति में आ गया है। नई तकनीकों व उपकरणों की सहायता से मानव ने प्राकृतिक वातावरण में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। यही कारण है कि 20 वीं शताब्दी के आरम्भ से ही नियतिवादी विचार की कड़ी आलोचना की गई। नियतिवाद की आलोचना के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं–

01– पृथ्वी के अनेक भागों में देखा गया है कि समान वातावरण में रहने वाले विविध मानव समूहों में समान प्रतिक्रियाएं जागृत नहीं होती। टुण्ड्रा की समान भौतिक दशाओं में भी उत्तरी कनाडा तथा साइबेरिया में इनके निवासी एस्किमों, लैप्स तथा सेमोइड्स लोगों की आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं में भिन्नता पायी जाती है।

02– यद्यपि वातावरण निस्संदेह मानव पर प्रभाव डालता है लेकिन मानव भी वातावरण को परिवर्तित करने के लिए प्रतिक्रिया करता है। कई स्थलरूप जो हमें प्राकृतिक दिखाई पडते हैं, वे वास्तव में मानव की कृतियां हैं। आज भूमध्य सागरीय प्रदेश या विश्व के अनेक भागों में विभिन्न फसलों तथा फलों का उत्पादन किया जा रहा है जबकि वे उस प्रदेश विशेष के मूल पौधे नहीं हैं।

03– डिमोलिंस ने स्टैपी प्रदेश के समाज का अध्ययन करने के पश्चात् लिखा है कि ''जब मानव ने मिट्टी को परिवर्तित कर दिया है तो उसने स्थान विशेष के प्रभाव को भी अपने अनुकूल बनाया है।"

04– सभ्यता के विकास में जलवायु महत्वपूर्ण कारण नहीं है। यदि यही तथ्य उत्तरदायी होता तो प्राचीन काल में मिस्र के रेगिस्तानी वातावरण में सभ्यता का विकास असम्भव होता। एण्डीज के बीहड़ क्षेत्रों में **' इंका सभ्यता '** का विकास सम्भव न हो पाता। ये दोनों ही सभ्यताएं प्रतिकूल परिस्थितियों में मानव की बुद्धि एवं कौशल से प्रगति के पथ पर आगे बढ़ीं।

05– **किरचॉफ, सैम्पुल, डिमोलिंस** जैसे नियतिवादियों ने अन्तोगत्वा स्वयं यह स्वीकार किया है कि मानव स्वेच्छा से प्राकृतिक प्रभावों की अवहेलना कर सकता है। किरचॉफ के अनुसार प्रकृति अवसर प्रदान करती है और मनुष्य उस पर इच्छानुसार कार्य करता है। इन्होंने दोनों में सामंजस्य स्थापित करते हुए कहा है कि " Man is not Automation Without A Will of his Own." अर्थात् मनुष्य कोई स्वचालित मशीन नहीं है जो अपनी इच्छाओं से हीन है।

इस प्रकार निश्चयवादी विचारधारा की उपरोक्त आलोचनाओं के आधार पर मानवीय इच्छाशक्ति की स्वतन्त्रता, क्रियाशीलता को महत्व देना स्वभाविक है। मानव की इच्छाशक्ति प्रबल होते हुए भी वह प्राकृतिक सीमाओं से बंधित पायी गयी है।

4.5– सम्भववाद (Possibilism)

सम्भववाद की विचारधारा भूगोल के फ्रांसीसी विचारधारा (French School of Geography) की देन है। इस विचारधारा का उद्भव उस समय हुआ जब नियतिवादी विचारों की आलोचना होने लगी। इसके समर्थक वातावरण के नियन्त्रण को स्वीकार नहीं करते हैं। वे मानव की दक्षता तथा क्षमताओं को मानने वाले थे। इसमें मनुष्य को सर्वशक्तिमान कहा गया है। वह इस वातावरण में अपनी बुद्धि एवं विवेक से परिवर्तन करने में सक्षम हैं। सम्भववादी विचारधारा के अन्तर्गत मानव–पर्यावरण सम्बन्धों में मानव द्वारा प्रकृति पर नियन्त्रण, मानव द्वारा प्रकृति पर विजय, मानव को सर्वत्र चयन की सुविधा जैसे शब्दों का खुलकर प्रयोग किया जाने लगा। कट्टर सम्भववादियों ने मानव पर प्राकृतिक प्रभाव अथवा समायोजन तथा अनुकूलन आदि शब्दों का प्रचुर मात्रा में तिरस्कार किया गया। **'लूसियन फैब्रे'** ने ही इस विचारधारा को सम्भववाद का नाम प्रदान किया तथा अपनी पुस्तक में इसकी विशद् विवेचना की। इसके प्रमुख समर्थक विद्वान फ्रांस के **वाइडल–डी–ला–ब्लॉश, जीन ब्रून्श**आदि तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के **ईसा बोमैन** एवं **कार्ल सावर** के नाम उल्लेखनीय हैं।

4.5.1– मानव भूगोल की फ्रांसीसी विचारधारा : सम्भववाद :–

मानव भूगोल के अध्ययन में फ्रांसीसी भूगोलविद्ों का महत्वपूर्ण योगदान है। मनुष्य अपनी क्रियाओं द्वारा

पर्यावरणीय (प्रकृति प्रदत्त) भू–दृश्य में परिवर्तन कर सांस्कृतिक भू–दृश्य का निर्माण करता है। फ्रांसीसी विचारकों ने प्राकृतिक सीमाओं की अपेक्षा मानवीय क्रियाकलाप को अधिक महत्व दिया। इस विचारधारा के प्रमुख विद्वान **लूसियन फैब्रे, ब्लॉश, जीन ब्रून्श, डिमॉजिया, रेक्यूलस** आदि हैं।

लूसियन फैब्रे–

सम्भववादी विचारधारा का सर्वप्रथम प्रतिपादन फ्रांसीसी इतिहासकार '**लूसियन फैब्रे**' ने किया। उन्होंने अपनी पुस्तक "**इतिहास की भौगोलिक प्रस्तावना** "(Geographical Introduction to History 1925) में वे लिखते हैं कि ' मानव एक भौगोलिक दूत है, पशु नहीं। वह सर्वत्र पृथ्वी की रचना की विवेचना में उन परिवर्तनशील भौगोलिक अभिव्यक्तियों के समन्वय ढूंढ़ने में योग देता है जिनका अध्ययन करना मानव का एक महत्वपूर्ण कर्तव्य है। अपनी "Geographical Introduction to History" रचना के अन्तर्गत कहा है कि "There are no necessity, but every where possibility ; And man as a master of these possibilities is the judge of their use" अर्थात् कहीं कोई अनिवार्यता नहीं है, सर्वत्र सम्भावनाएं है, और मनुष्य इन सम्भावनाओं के स्वामी होने के नाते उनके उपयोग का निर्णयकर्ता है।

वाइडल–डी–ला–ब्लॉश (1848-1918 A D) :–

ब्लॉश सम्भववादी विचारधारा के प्रतिपादक माने जाते हैं। ये वातावरणीय नियतिवाद के कट्टर विरोधी और आलोचक थे। ब्लॉश ने अपनी पुस्तक '' Principles of Human Geography" में लिखा है कि "समस्त भौगोलिक प्रगति में प्रबल विचारधारा यदि है तो वह है पार्थिव एकता।" इन्होंने सार्वभौमिक एकता के नियम का स्पष्ट करते हुए संभववाद का भरपूर पोषण किया है। पार्थिव एकता के सिद्धान्त में ब्लॉश ने स्पष्ट किया कि प्राकृतिक वातावरण के तत्व एक दूसरे से घनिष्ठरूप से अन्तर्सम्बन्धित हैं। मानवीय क्रियाओं को पार्थिव एकता में सम्मिलित किया जाता है परन्तु मानवीय कार्य भाग्य द्वारा निर्धारित नहीं होते बल्कि मानव कौशल के द्वारा निर्धारित होते हैं। इस प्रकार मानव के कार्य एक भौगोलिक कारक के रूप में हैं जो कभी सक्रिय होते हैं तो कभी निष्क्रिय होते हैं। ब्लॉश के अनुसार–'' प्रकृति सीमाएं निर्धारित करती है तथा मानव अधिवास हेतु सम्भावनाएं प्रदान करती है।

परन्तु प्रदत्त परिस्थिति में मानव की क्या प्रतिक्रिया होगी अथवा वह कैसे समायोजन स्थापित करेगा, यह उसकी जीवन पद्धति पर निर्भर करता है। (Nature set limits and offered possibilities for human settlement, but the way man reacts of adjust these given conditions dipends on his own traditional way of living.)

क्रियाशील मानव अपनी क्रियाओं द्वारा जगत के जड़ एवं चेतन दोनों ही तत्वों को परिवर्तित कर प्रकृति के रहस्यमय खेल में सम्मिलित होता है। मानव ने अपनी वैज्ञानिक उपलब्धि के फलस्वरूप अनेक ऐसे पौधों की किस्मों का विकास किया है जो अपनी मूल जलवायु के अतिरिक्त नवीन जलवायु दशाओं में भी उगाए जा सकते हैं। उदाहरणार्थ–गेहूं भूमध्यसागरीय पौधा है लेकिन आज इसे यू0एस0ए0, रूस, चीन, कनाडा, तथा भारत में पूर्ण सफलता के साथ उगाया जा रहा है। इन्होंने मानवीय क्रियाओं के अध्ययन को आवश्यक मानते हुए कहा है कि "प्रकृति एक सलाहकार से अधिक कुछ नहीं" (Nature is never more than advisor)।

जीन ब्रून्श (Jean Brunches 1869-1930 ई0) ने मानव क्रिया–कलापों को महत्व देते हुए स्पष्ट किया है कि मानव अपने प्रयास द्वारा वातावरण में अनेक परिवर्तन कर सकता है अथवा कम से कम वातावरण के प्रभावों की अवहेलना तो कर ही सकता है। समय के परिवर्तन के साथ–साथ ही मानव की आवश्यकताएं सदैव बदलेती एवं जटिल होती जाती हैं। पुनः आगे ब्रून्श ने मानव की आदतों पर भी बल दिया है क्योंकि आदतों द्वारा मनुष्य वातावरण में परिवर्तन कर सकता है अथवा उसके प्रभाव को कम कर सकता है। For mankind on the earth surface …….everything is a matter of habit,of a sound understanding of physical facts and of skilful a daption to those facts.

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, विश्व की प्रत्येक वस्तु एवं दशाएं क्षण प्रति क्षण परिवर्तित हो रही हैं। ब्रून्श के शब्दों में **"हमारे चारों और की प्रत्येक वस्तु में परिवर्तन आ रहा है, प्रत्येक वस्तु घट या बढ़ रही है, कुछ भी वास्तव में निर्जीव अथवा अपरिवर्तनीय नहीं है।"** ब्रून्शनिश्चयवाद के आलोचक माने जाते हैं तथा उनकी मान्यता है कि मानव को अपने विशिष्ट वातावरण में रहकर कार्य करना पड़ता है, परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि

वह वातावरण का दास है। मानव एक क्रियाशील प्राणी है। ब्रून्श मानव को कभी भी एक निरीह प्राणी के रूप में स्वीकार नहीं करते, उसमें पर्यावरण में परिवर्तन लाने की महान शक्ति व्याप्त है। दूसरे शब्दों में, 'वह पूर्णतः अकर्मण्य तभी होता है जब भौतिक विश्व उसे निष्प्राणित कर देता है, वास्तव में जब तक वह जीवित रहता है क्रिया प्रतिक्रिया करता रहता है।

एलिस रेकलस (Elise Reclus 1830-1905) ने अपनी पुस्तक " EarthAnd its Inhabitants " में वातावरण में परिवर्तन हेतु मानव को उत्तरदायी बताया है। इनके अनुसार 'मानव परिवर्तन कर सकता है (अपने निवास स्थल में) अपने प्रयोजन के अनुरूप प्रकृति पर विजय प्राप्त कर सकता है और पृथ्वी की शक्तियों को घरेलू शक्तियों में बदल सकता है।' रेकलस ने स्पष्ट किया कि मानव उसके पर्यावरण की उपज नहीं है किन्तु वह उसका महत्वपूर्ण अंग है।

ईसा बोमैन (Isaiah Bowman 1878-1950 ई0) के अनुसार मनुष्य का विकास केवल भौतिक वातावरण द्वारा नहीं होता। भौतिक वातावरण तो केवल मनुष्य के समीप परिस्थितियाँ प्रस्तुत करता है जिसका उपयोग वह अपने बढते हुए ज्ञान के अनुसार करता है जैसे–यूरोप महाद्वीप में आलू और मक्का की पैदावार ने इस महाद्वीप का आर्थिक ढांचा ही परिवर्तित कर दिया है। मनुष्य अपने प्रदेश की भू–रचना, जलवायु, वनस्पति, मृदा आदि में परिवर्तन करता रहता है, जैसे–पहाड़ी क्षेत्रों में सीढ़ीदार खेत बनाना, रेफ्रीजरेटर एवं एयर कण्डीसनर द्वारा तापमान को सुविधानुकूल बनाना, उर्वरकों द्वारा मृदा की उर्वरता में वृद्धि करना आदि महत्वपूर्ण तथ्य हैं।

किन्हीं दो प्रदेशों में प्राकृतिक वातावरण की समानता होते हुए भी मानव के द्वारा कार्य का चयन अलग–अलग होने के कारण अलग–अलग प्रकार की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दशाएं उत्पन्न हो सकती हैं। उदाहरण स्वरूप– संयुक्त राज्य अमेरिका में हजारों वर्षों से वहाँ के मूल निवासी रेडइण्डियन निवास करते थे, वहाँ का प्राकृतिक वातावरण विगत तीन शताब्दियों से एक समान रहा है, परन्तु सत्रहवीं शताब्दी में यूरोप से अंग्रेजों के आगमन से यहाँ की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं में विशेष परिवर्तन देखने को मिला क्योंकि यूरोप से आये लोग उपनिवेशी थे। उन्होंने अपनी तकनीकीयों का प्रयोग करके सं0रा0अमेरिका के प्राकृतिक संसाधनों को विकसित करके अधिकतम लाभ प्राप्त करने का प्रयास किया। परिणाम स्वरूप यह देश उम्मीद से अधिक विकास को प्राप्त हो गया, और आज भी उन्नत अर्थव्यवस्था एवं शक्ति बनकर विश्व परिदृश्य पर शोभायमान है। इसका मूल कारण मानवीय छांट की भिन्नता है।

विज्ञान ने भौगोलिक वातावरण के प्रभाव को बहुत कुछ प्रभावहीन कर दिया है। बौमेन ने एक स्थान पर लिखा है कि 'मनुष्य दक्षिणी ध्रुव पर आरामदेह और प्रकाश से पूर्ण नगर बना सकता है और शिक्षा, रंगमंच, खेलकूद आदि की व्यवस्था कर सकता है अथवा कुछ पनामा जैसी नहरें खोदने में जो व्यय होता है उतना खर्च करके सहारा में ऐसे कृत्रिम पर्वतों का निर्माण कर सकता है जो वर्षा को विवश कर दें। इसी प्रकार अन्य अमेरिकी भूगोलवेत्ता कार्ल सॉवर (Carl Sauer 1889-1975 ई0) जो कि सांस्कृतिक भूगोल के जन्मदाता हैं, के अनुसार मानव के सांस्कृतिक समूह प्राकृतिक भू–दृश्यों में बदल देते हैं। इस प्रकार प्राकृतिक क्षेत्र माध्यम होता है और सांस्कृतिक भू–दृश्य अन्तिम परिणति होती है। सम्भववादियों ने इस विचारधारा को निम्नलिखित चार रूपों में रखा है–

अ. सम्भववाद में प्राकृतिक शक्तियों को महत्व दिया गया है परन्तु अधिकार नहीं। अर्थात् प्रकृति मानव के समक्ष योजनाएं प्रस्तुत करती है और मनुष्य अपने विवेक से उनका चयन करता है। सम्भववाद एक और मानवीय क्रियाओं को सीमांकित जरूर करता है, परन्तु उन सीमाओं के मध्य मानव को अपने अनुसार कार्य करने की पूर्ण स्वतन्त्रता भी होती है। सम्भववादियों का यह भी मानना है कि जैसे –जैसे मानव अपनी तकनीकों का विकास करता है वैसे ही प्राकृतिक सीमाओं में ह्रास होता जाता है।

ब. सम्भववादियों सार्वभौमिक एकता सिद्धान्त एवं परिवर्तनशीलता के सिद्धान्त को मानते थे। हालांकि निश्चयवादी भी इस सिद्धान्त के पोषक थे, परन्तु अन्तर यह था कि निश्चयवादी प्रकृति को महत्व देते थे और सम्भववादी मानवीय शक्ति को अर्थात् मानवीय क्रियाओं को महत्व देते हैं।

स. वर्तमान में मानव ने अत्यधिक तकनीकी एवं वैज्ञानिक विकास कर लिया है जिसके परिणाम स्वरूप मानव आज इस स्थिति में आ गया है कि वह प्राकृतिक वातावरण को संशोधित ही नहीं परिवर्तित भी कर सकता है। परमाणु शक्ति जैसी मानव संधारक शक्तियों के विकास से मानव निष्चित तौर पर प्रकृति पर नियन्त्रण करने की स्थिति में आ गया है।

द. मानव स्वभाव का वातावरण पर प्रभाव पड़ता है। मनुष्य अपने स्वभाव के अनुरूप वातावरण में परिवर्तन कर देता है या उसकी अवहेलना भी कर सकता है। **जार्ज टैथम** ने लिखा है– मनुष्य आदतों वाला प्राणी है, एक पशु है। मनुष्य के अन्दर पहले आदत बनती है और आदत बन जाने के पश्चात् इसका वातावरण पर प्रभाव पड़ने लगता है। वातावरण में परिवर्तन शुरू हो जाते हैं और मनुष्य का उत्तरोत्तर विकास होता रहता है।

सम्भववादी विचारधारा के पोषक विद्वानों एक प्रमुख नाम प्रसिद्ध विद्वान **गोल्डेन वीजर** के विचार उल्लेखनीय है। उन्होंने प्राकृतिक वातावरण एवं मानव संस्कृति को बहुत व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का कार्य किया। उन्होंने अपने विष्लेषण में स्पष्ट किया कि मानव के पास अदम्य शक्ति है। वह प्रकृति से परे भी विजय प्राप्त करने की क्षमता रखता है। गोल्डेन वीजर के अनुसार प्रकृति मानव संस्कृति के लिए साधन एकत्र करती है, वह अनेक वस्तुएं प्रदान करती है, इससे अधिक कुछ नहीं। वीजर ने लिखा है कि प्रकृति ने मानव सभ्यता के लिए और संस्कृति के भवन के निर्माण के लिए सिर्फ गारा और चूना प्रदान किया, योजना नहीं, योजना बनाने का कार्य मनुष्य की मस्तिष्क क्षमता का है। वातावरण को स्थल माना गया है, जो वस्तुओं को प्रस्तुत करता है जिसमें मनुष्य अपने मस्तिष्क कौशल के कारण चयन करता है। मानव संस्कृति ही उन वस्तुओं के सहारे सुन्दर स्वरूप निर्माण की कला प्रदान करती है, आगे इन्होंने लिखा है कि प्रकृति मनुष्य को नहीं बनाती बल्कि मनुष्य स्वयं अपना निर्माण करता है और इसके लिए वह अपनी इच्छानुसार प्रकृति का उपयोग करता है। प्रकृति मानव संस्कृति को जन्म नहीं दे सकती और न उसमें अधिक परिवर्तन ही ला सकती है।[01]

इसी प्रकार **रसेल, स्मिथ** सम्भववाद की विचारधारा को पुष्ट करते हुए लिखा है कि मनुष्य इस पृथ्वी का निवासी ही नहीं है वरन् वह एक निर्माता व भू–वृत्त का साधन है तथा इस प्रकार पृथ्वी का परिवर्तन करता है। इस प्रकार सम्भववाद के समर्थन में अनेक तथ्य मिलते हैं जिससे यह स्पष्ट है कि प्रकृति मनुष्य को बाध्य नहीं करती है बल्कि अनेक अवसर प्रदान करती है, जिसमें मनुष्य अपनी इच्छानुसार छॉट द्वारा चयन करता है।

सम्भववाद की आलोचना :–

जिस प्रकार निश्चयवादी प्राकृतिक वातावरण को सर्वोपरि मानते थे, ठीक उसी प्रकार सम्भववादी मानव की प्रकृति पर विजय का उद्घोष करते हैं। इसके बावजूद कुछ विद्वान सम्भववाद की विचारधारा की आलोचना करते हैं। इस विचारधारा के समर्थकों में अतिवादिता की झलक देखने को मिलेती है। इस विचारधारा की आलोचना निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से की जाती है–

01– सभी सम्भववादी प्राकृतिक वातावरण के सम्बन्ध में एक मत नहीं है। किसी की मान्यता है कि प्रकृति मनुष्य को सुअवसर देती है तो कोई कहता है कि योजना प्रस्तुत करती है अन्य सीमाएं निश्चित करती है। तो किसी में विरोधाभाष स्पष्ट होता है।

02– सम्भववादियों ने मानव को अतिशक्तिशाली माना है। इसके समर्थकों ने प्रकृति विजय का गुणगान किया है। वहीं प्रकृति–वादियों ने मनुष्य को प्रकृति का शिशु या दास के रूप में स्वीकार किया है। ये दोनों ही दृष्टिकोंण दोषपूर्ण हैं तथा विषमताओं से युक्त हैं।

03– सम्भववादी दृष्टिकोंण के समर्थकों की मान्यता है कि प्राकृतिक वातावरण में कुछ सम्भावनाएं निहित हैं जिनका चयन और विकास करना मानव इच्छा पर निर्भर करता है लेकिन सम्भववाद वातावरण के प्रभाव से विरक्त नहीं रह सकता तथा मानव को चुनाव की इच्छा एवं क्षमता प्रदान करता है तथा इस चुनाव में भी भिन्न दशाओं में अन्तर को स्वीकार करता है। आप ध्रुवों पर केले नहीं उगा सकते, न ग्रीनलैण्ड में अनन्नास।

4.6 नव–निश्चयवाद (Neo-determinism)

मानव एवं वातावरण के सह–सम्बन्धों की पूरी तरह समझाने में नियतिवाद और सम्भववाद दोनों ही असफल रहे। इसलिए वर्तमान शताब्दी में कुछ भूगोलवेत्ताओं ने एक नई विचारधारा को जन्म दिया, जिसे नव–नियतिवाद कहते हैं। इस विचारधारा के उत्थान के पीछे अनेकों कारण रहे। सम्भववादी विचारधारा की प्रबलता के कारण प्रकृति पर जनमानस का दबाव बढने से पारिस्थितिकी की गुणवत्ता नष्ट होने लगी जिससे मानव सहित पृथ्वी के अन्य जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया, इन विसंगतियों एवं भूलों का विधिवत निरीक्षण एवं विश्लेषण किया गया तथा इसके उपरान्त नवनिश्चयवादी विचारधारा का उदय हुआ। इस संकल्पना में सम्भववाद का समन्वय मिलता है। इस विचारधारा के अनुसार मनुष्य को प्रकृति के नियमों का अनुसरण करना ही पड़ता है, किन्तु मनुष्य वातावरण के तत्वों के उपयोग के लिए स्वतंत्र है। वह वातावरण के साथ समायोजन या

वातावरण में रूपान्तरण भी कर सकता है।

कार्ल ओ सावर नामक अमेरिकी भूगोलवेत्ता ने आधुनिक युग के निश्चयवाद को स्वीकार करते हुए प्रकृति और मानव के बीच सम्बन्धों को समय गति के अनुसार चार रूपों में रखा है–

01– मानव पर वातावरण का नियन्त्रण,

02– वातावरण का मानव पर प्रभाव,

03– वातावरण एवं मानव के बीच प्रत्युत्तर और

04– वातावरण एवं मानव के मध्य सामंजस्य

इस वर्तमान परिवेश में उपरोक्त प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अर्थात् वातावरण का नियन्त्रण, वातावरण का प्रभाव एवं वातावरण के प्रत्युत्तर को अधिक महत्व प्रदान नहीं किया जाता है। बल्कि सभी विचारक मानव के वातावरण के साथ सामंजस्य को अधिक महत्व देते हैं।

इस सामंजस्य की विचारधारा को ग्रिफिथ टेलर, (जो ब्रिटेन, कनाडा और आस्ट्रेलिया में भूगोलवेत्ता रहे थे) ने निश्चयवाद का संशोधन करके 'नवनिश्चयवाद' (Neo-determinism) या 'वैज्ञानिक निश्चयवाद' (Scientific-determinism) या 'रुको और जाओ निश्चयवाद' (Stop and go determinism) को प्रस्तुत किया जो पूर्व निश्चयवाद से पूर्णतः भिन्न है। इसमें मानवीय छॉट (Human choice) को भी महत्वपूर्ण माना गया है।

टेलर ने अपनी पुस्तक "Geography in the twenteenth century" (ज्योग्राफी इन द ट्वेन्टीन्थ सेन्चुरी–1951) में इस बात पर बल दिया है कि वातावरण द्वारा किए जा रहे नियन्त्रण की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उदाहरणार्थ–सहारा का विस्तृत मरुस्थल, आस्ट्रेलिया का निर्जन मरुस्थल, अण्टार्कटिका के हिमाच्छादित भू–भाग, कनाडा और एवं साइबेरियाा के विस्तृत टुण्ड्रा प्रदेश में मानव को प्रकृति की आज्ञा माननी ही पड़ती है। उपर्युक्त प्रदेश शताब्दियों तक पिछड़े ही रहेंगे। सं0रा0 अमेरिका या यूरोप की भॉति टुण्ड्रा या प्रकृति योजना बनाती है और उस योजना में मानव के द्वारा ही संस्कृति प्रगति करती है। मानव पर प्रकृति का पूर्ण नियन्त्रण नहीं है फिर भी प्रभाव आवश्यक है और मानव उस प्रकृति की सीमाओं के अन्दर तकनीकी ज्ञान द्वारा आर्थिक –सांस्कृतिक उन्नति करता है।

टेलर ने निश्चयवाद की विचारधारा को और स्पष्टतः समझाते हुए लिखा है कि, मैं इस बात को कभी भी अस्वीकार नहीं करता कि "मानव एक बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, परन्तु संसार के सभी क्षेत्रों में मानव ने अपने सामंजस्य में प्रकृति के द्वारा निर्धारित की गई सीमाओ को एक कदम और आगे बढ़ा दिया है। मानव एक स्वतंत्र कारक नहीं है।

''man plays a very important part,but.....man has advanced one more stage in his adjustment to the limits laid down by nature.''

इस विचारधारा के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि सारे मानव गतिविधियाँ न तो पर्यावरण द्वारा पूरी तरह से नियंत्रित है जैसा कि पर्यावरणीय नियतिवाद मानता है, और ना ही सारे मानव गतिविधियाँ पर्यावरण के नियमों से पूरी तरह से मुक्त हैं, जैसा कि सम्भववाद का विश्वास है। यह नियतिवाद और सम्भववाद अवधारणा के बीच (मध्य मार्ग) की अवधारणा है।

मनुष्य विभिन्न नवाचारों और गतिविधियों के माध्यम से पर्यावरण को बदल सकता है या विषम वातावरण में वे सारे काम कर सकता है जो वहाँ के वातावरण में प्राकृतिक रुप संभव नहीं है। उदाहरण– आज मानव सिंचाई और उर्वरक की सुविधा उपलब्ध करके बंजर भूमि और ग्रीष्म काल में भी खेती कर सकता है। लेकिन मानव द्वारा पर्यावरण को परिवर्तित करने की एक सीमा होती है या मानव पर्यावरण के हर चीज से खिलाफ नहीं जा सकता। मानव के क्रियाकलाप वातावरण के नियमों को मानते हुए होना चाहिए, नहीं तो पर्यावरण मनुष्य के क्रियाकलापों को रोकने और समायोजित करने के लिए मजबूर भी करता है। उदाहरण– जलवायु परिवर्तन सस्ते तरीके से उच्च विकास प्राप्त करने के लिए मनुष्य की गलत गतिविधियों से पर्यावरण को हानि पहुॅच रही है। लेकिन पर्यावरण प्रदूषण करने की भी एक सीमा होती है। जलवायु परिवर्तन के माध्यम से प्रकृति मनुष्य को पर्यावरण के प्रति अपने कार्यों को सही करने के लिए विवश कर रही है।

- भूजल के अधिक दोहन और जल संरक्षण न करने के कारण, दुनिया के कई शहरों में जल संकट पैदा करना, चेन्नई में जल संकट इसका ताजा उदाहरण है।
- भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन के कारण अब जकार्ता (इण्डोनेशिया की राजधानी) समुद्र में डूब रहा है।
- हाल ही में केरल के बाद पश्चिमी घाटों के अत्यधिक दोहन का परिणाम है।

किसी भी देश का विकास मार्ग क्या होगा ? यह बहुत हद तक वहाँ के भौतिक वातावरण तय करती है।

प्रकृति पूर्ण तानाशाह नहीं है, प्रकृति तटस्थ है। विवेकशील लोग प्रकृति योजना का पालन करते हैं और आगे बढ़ते हैं।

पर्यावरण, यातायात के एक नियंत्रक की तरह काम करता है। यह हमें रोकता है और सूचित करता हैं। मनुष्य पर्यावरण नियमों को पालन करते हुए, देश के विकास कार्यक्रम को गति दे सकता है या रोक सकता है लेकिन वह पर्यावरण की योजना के खिलाफ नहीं जा सकता। इसी को टेलर महोदय ने निम्न शब्दों में व्यक्त किया है।**"मानव एक चौराहे पर खड़े ट्रैफिक कन्ट्रोलर की भॉति है जो बड़े नगरों में आने वाले वाहनों की गति को कम या अधिक कर सकता है किन्तु मार्ग की दिशा को परिवर्तित नहीं कर सकता।**" यही रुको और जाओ निश्चयवाद है।

"टेलर" के अनुसार मानव क्षेत्र के विकास या प्रगति को तेज कर सकता है, उसे धीमा कर सकता है अथवा रोक सकता है। पुनः इसी बात को स्पष्ट करते हुए आगे कहते हैं कि, **"न तो प्रकृति का ही मनुष्य पर पूर्ण नियंत्रण है और न ही मनुष्य प्रकृति का विजेता ही है।"** दोनों का एक दूसरे से क्रियात्मक सम्बन्ध है। मानव उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रकृति का सहयोग करे।

स्पेट (O.H.K. Spate) एक ब्रिटिश भूगोलवेत्ता था। इसने भी इस विचारधारा का समर्थन किया है। इनके मतानुसार यह नियतिवाद और सम्भववाद के बीच का मार्ग है। स्पेट ने इसे "प्रसम्भववाद" (Probabilism) कहा है। बूलरिज ने इसे 'वैज्ञानिक नियतिवाद' कहा है क्योंकि मनुष्य अपनी बुद्धि क्षमता के अनुसार वैज्ञानिक ढंग से वातावरण के अनुकूल काम करना पड़ता है। ए0एफ0मार्टिन ने निश्चयवाद का एक ढंग से अध्ययन किया है। वे कहते हैं कि "मानव भूगोल में निश्चयवाद, सम्भववाद की अपेक्षा 'कारण तथा प्रभाव' की कसौटी पर ठीक तथा खरा सिद्ध होता है, अतएव वे निश्चयवाद को ही सैद्धान्तिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से मान्यता देने के पक्ष में है।

उपर्युक्त निश्चयवाद, सम्भववाद और नव निश्चयवाद की विचारधाराओं के अध्ययन के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुॅचते हैं कि प्राकृतिक वातावरण और मानव समूह के पारस्परिक सम्बन्धों में वातावरण प्रमुख है तथा मानव समूह अपने अनुकूलन तथा वातावरण के रुपान्तरण (Modification) द्वारा वातावरण समायोजन करता है।

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि मानव स्वयं पर्यावरण का अंग है जो अन्य प्राकृतिक दशाओं के साथ जड़रुप न होकर चैतन्य है किन्तु उस पर्यावरण का नियंत्रण निरंकुश नहीं है। 'रसेल स्मिथ' ने अपनी पुस्तक ''Industrial and Commercial Geography" में लिखा है कि, "मनुष्य पृथ्वी का मात्र निवासी ही नहीं है बल्कि वह एक सृजनकर्ता, भौगोलिक प्रतिनिधि तथा पृथ्वी को अपरिवर्तित करने वाला भी है।"

अन्त में टेलर की यह युक्ति महत्वपूर्ण प्रतीत होती है, "प्रकृति को जीतने या स्वयं उसका दास बनने की अपेक्षा मनुष्य को प्रकृति के साथ सहयोग करने की बात सोचनी चाहिए। यह स्पष्ट है कि मानव का कल्याण प्रकृति से युद्ध करने में नहीं, उसके साथ सहयोग व सामंजस्य बनाए रखने में है।"

4.7 सारांश

20वीं शताब्दी के आरम्भ में भूगोल मनुष्य और पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन के रुप में विकसित हुआ। इस भौगोलिक जगत के दो पक्ष है, प्रकृति और मानव। मानव भूगोल में इन्हीं पक्षों के पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या होती है। प्रारम्भिक काल में मानव प्रकृति को प्रधान स्वरूप प्रदान किया था। उस समय वह प्रकृति को ही सर्वशक्तिमान माना तथा मानव उसे तुच्छ प्राणी की तरह लगे। मानवीय क्रिया–कलाप को प्राकृतिक नियमों से नियन्त्रित माना गया। ऐसी विचारधारा को प्रकृतिवाद या निश्चयवाद या नियतिवाद के रूप में निरूपित किया गया। कुछ समय पष्चात मानव के तकनीकी विकास के फलस्वरूप उक्त विचारधारा में परिवर्तन आया।

इसकी आलोचनाओं के बाद फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं के अनुसार मनुष्य अपने पर्यावरण में परिवर्तन करने में समर्थ है तथा वह प्रकृतिप्रदत्त अनेक सम्भावनाओं को अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सकता है। इसे सम्भववाद नाम फैब्रे ने दिया। इसमें मनुष्य को प्रकृति का दास न मानकर बल्कि उसे स्वामी कहा गया। इस विचारधारा के समर्थक हैं– वाइडल–डी–ला ब्लाश, फैब्रे, जीनब्रून्स, ईसा बोमेन आदि। सम्भववाद को अधिक स्पष्ट करते हुए फैब्रे का कथन है, "कहीं अनिवार्यता नहीं है, सब जगह सम्भावनाएं हैं।" सम्भववाद में मानवीय क्रियाओं का गुणगान किया जाता है। यह तथ्य सही भी है कि यदि मानव स्वयं अपनी क्रियाओं का गुणगान न करे तो कौन करेगा। इसके बावजूद कुछ विद्वान इसकी आलोचना करते हैं। इस प्रकार न तो प्राकृतिक, शक्तियाँ सर्वशक्तिमान हैं और न मानव ही प्रकृति पर पूर्ण विजय प्राप्त कर सकने में समर्थ है। इसी कारण दोनों ही शक्तियों में सामंजस्य बैठाने के उद्देश्य से तीसरी विचारधारा का उदय होता है। इस सामंजस्य की विचारधारा को ग्रिफिथ टेलर ने निश्चयवाद का संशोधन करके नव निश्चयवाद या वैज्ञानिक निश्चयवाद या रुको और जाओ निश्चयवाद को प्रस्तुत किया। इसमें उन्होंने कहा कि **"न तो प्रकृति का ही मानव पर पूर्ण नियन्त्रण है और नहीं मनुष्य प्रकृति का विजेता है।"** ग्रिफिथ टेलर के अतिरिक्त अन्य भूगोलवेत्ताओं ने भी इस विचारधारा को मान्यता प्रदान की है। रसैल स्मिथ, मार्टिन, स्पेट, वुलरिज, राक्सवी, आदि प्रमुख हैं।

अन्वेषण काल के पूर्व मानव पूर्णतया प्रकृति पर आश्रित था, त्तपश्चात प्रकृति से तादात्म्यं स्थापित कर प्राकृतिक संसाधनों का शोषण कर औद्योगिक विकास किया। इस विकास से मानव का पृथ्वी पर प्रमुख स्थापित हो गया। वह प्रकृति को भलीभॉति समझ गया और प्रकृति प्रदत्त अवसरों का लाभ उठाकर उत्थान किया। मानव और प्रकृति के बीच सम्बन्धों को नियतिवादी, सम्भववादी तथा नव निश्चयवादी विचारको नें अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत किया। लेकिन सभीअध्ययनों का मूल मानव पर्यावरण अर्न्तसम्बन्ध ही था।

4.8बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 1– निश्चयवाद क्या है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2– सम्भववाद के सन्दर्भ में फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं के योगदान का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 3– ''मानव भूतल की उपज है'' सोउदाहरण व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्नः–

प्रश्न 1– प्रकृति एक सलाहकार के अतिरिक्त कुछ नहीं व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 2– नव–निश्चयवाद क्या है, उपयुक्त उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3– निश्चयवाद के सम्बन्ध में जर्मन विचारधारा को स्पष्ट कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

प्रश्न **1**–मानव भूगोल में सम्भववादी विचारधारा का प्रवर्तक निम्न में से हैं।

अ– विडाल–डी–ला–ब्लॉश ब– फैब्रे

स– डिफिन्सन द– ईसा बोमेन

प्रश्न **2– निम्न में से कौन सा विद्वान निश्चयवाद की विचारधारा का समर्थक नहीं है ?**

अ– हम्बोल्ट ब– विडाल–डी–ला–ब्लॉश

स– कार्ल रिटर द– फ्रेडरिक रैटजेल

प्रश्न **3– "मनुष्य कोई स्वचालित मशीन नहीं, है जो अपनी इच्छा से रहित हो।" किसका कथन है –**

अ– फ्रेडरिक रैटजेल ब– विडाल–डी–ला–ब्लॉश

स– किरचारक द– फैब्रे

प्रश्न **4– सम्भववाद नामक शब्द सर्वप्रथम किसने प्रयोग किया ?**

अ– फैब्रे ब– ब्लॉश

स– हम्बोल्ट द– डिमान्जिया

प्रश्न **5– 'रुको और विचार करो, फिर आगे बढ़ो' अवधारणा का प्रतिपादन निम्न में से किसने किया था ?**

अ– हम्बोल्ट ब– जार्ज टैथम

स– ग्रिफिथ टेलर द– डार्विन

प्रश्न **6– "मानव एक भौगोलिक दूत है, पशु नही।" किसका कथन है –**

अ– ब्लॉश ब– फैब्रे

स– रिटर द– जीनब्रून्स

प्रश्न **7–** नवनियतिवाद का जनक किसे माना जाता है –

अ– ग्रिफिथ टेलर ब– जार्ज टैथम

स– रसेल स्मिथ द– कुमारी सेम्पुल

प्रश्न **8–** 'प्रकृति एक सलाहकार से अधिक नहीं है' कथन में कौन सी विचारधारा की झलक दिखाई दे रही है

अ– निश्चयवाद ब– नव–नियतिवाद

स– सम्भववाद द– उपर्युक्त सभी

प्रश्न **9–** प्राकृतिक शक्तियों की महत्ता पर विशेष बल किस विचारधारा के अन्तर्गत दिया गया ?

अ–नियतिवाद ब– सम्भववाद

स–नव–निश्चयवाद द– कोई नही

प्रश्न **10–** निम्न में से कौन सम्भववाद की विचारधारा को मानने वाले हैं –

अ– अरस्तू ब– ग्रिफिथ टेलर

स– कार्ल रिटर द– जीन ब्रून्स

प्रश्न **11– "मानव छॉट द्वारा इच्छानुसार चयन किसकी विशेषता है –**

अ– नियतिवाद ब–सम्भववाद

स– रुको और जाओ निश्चयवाद द– उपर्युक्त सभी

प्रश्न **12– "मानव भूतल की उपज है" किसकी उक्ति है।**

अ– कुमारी सेम्पुल ब– रैटजेल

स– ब्रून्स द– ईसा बोमैन

उत्तरमाला–

01. ब 02. ब0 3. स 04. अ 05. स 06. ब

07. अ 08. स 09.अ 10.द 11. ब 12. अ

4.9–सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, प्रो0 बी एन सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रवालिका पब्लिकेशन, यूनिवर्सिटी रोड,प्रयागराज–211002। पृष्ठ सं 70,71,75 पैरा सं 03।

02— मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन, सत्यम अपार्टमेन्ट, सेक्टर न0 जवाहर नगर, जयपुर,302004।
03— मानव भूगोल, डॉ चतुर्भुज मामोरिया, डॉ0 दीपक माहेश्वरी, साहित्य भवन पब्लिकेशन, हास्पिटल रोड आगरा।
04— Huntington, E,"CivilçationAnd Climate" 1915And 'Principles of Human Geography.'

इकाई–5 मानव एवं विशिष्ट जीवन पद्धति का विकास

इकाई की रूपरेखा

5.1– प्रस्तावना

5.2– उद्देश्य

5.3– मानव एवं विशिष्ट जीवन पद्धति का विकास

5.4– मानव की उत्पत्ति सम्बन्धी विचारधाराएं

5.5– मानव का उद्भव एवं विकास

5.6– मानव विकास के चरण

5.6.1– पाषाण युग

5.6.2– कांस्य युग

5.6.3– लौह युग

5.7– सारांश

5.8– बोध प्रश्न

5.9– संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.1 प्रस्तावना

मानव अपने जन्मकाल से ही उत्कृष्ट प्रतिभा का धनी प्राणी रहा है। इस बात का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि धरातल पर मानव के आगमन से पूर्व अनेक जीवों का आगमन हो गया था और उन जीवों में संघर्ष भी होता रहा लेकिन फिर भी वे जीव अपने जीवन काल में इस पर्यावरण से संघर्ष ही करते रहे। लेकिन बृहत स्तर पर अपना विकास न कर सके। इसी क्रम में कहना आवश्यक है कि मानव अपने जन्मकाल से ही पर्यावरण से संघर्ष किया और निरन्तर आगे बढता रहा। उसने अपनी प्रतिभा एवं कौशल से अपने होने का एहसास भी प्रकृति को कराया।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. मानव भूगोल के विषय का केन्द्रीय तत्व मानव के विशिष्ट जीवन पद्धति के विकास पर प्रकाश डालना एवं मानव के इस धरातल पर आगमन एवं उसके विकास का मूल्यांकन करना।
2. मानव किस प्रकार प्रकृति के साथ समायोजन कर आगे बढ़ा एवं अपने आप को वर्तमान दशा में लाने के लिए लम्बे कालक्रम तक संघर्ष क्रिया का मूल्यांकन करना।
3. मानव के जन्म के सन्दर्भ में विभिन्न मतों (धार्मिक, वैज्ञानिक) को उजागर करना एवं विद्यार्थियों को इनसे अवगत कराना।
4. विद्यार्थियों को मानव की आदिकालीन (प्रारम्भिक) जीवन पद्धति से अवगत कराना।
5. आधुनिक मानव अर्थात् होमो सेपियन्स के विषय में (भौतिक बनावट–रूप, रंग,कद, मांशिक विकास, मस्तिष्क धारिता) आदि से विद्यार्थियों को विशेष रूप से अवगत कराना तथा इस सम्बन्ध में शोध के लिए

शिक्षार्थियों को प्रेरित करना।

5.3 मानव एवं विशिष्ट जीवन पद्धति का विकास

पृथ्वी की गहराई से लेकर मंगल एवं चन्द्रमा तथा सूर्य आदि के विषय में आधुनिक मानव (मनुष्य) ने विभिन्न साक्ष्य जुटा लिए हैं तथा इसकी उम्र एवं उत्पत्ति का पता लगा लिया है तथा इस धरातल पर पाये जाने वाले जीव–जन्तुओं एवं वनस्पतियों के उद्‌भव विकास के सम्बन्ध में समस्त जानकारी उपलब्ध है लेकिन इन सब की खोज करने वाले मानव की उत्पत्ति समय के विषय में मतभेद स्पष्टतः सबके सामने है। पृथ्वी की आयु का पता लगाने एवं इसकी गणना के लिए भू–वैज्ञानिक समय मापनी का निर्माण किया गया है लेकिन इस बात का कोई सीधा एवं स्पष्ट प्रमाण नहीं है। उसके आधार पर हम निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि प्रथम मानव का जन्म कब और कहां हुआ। विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुमान इस सन्दर्भ में प्रकट किए हैं। जैसे **टेलर ने** मानव उद्‌भव स्थल के लिए मध्य एशिया, **आस्बर्न** ने तिब्बत और मंगोलिया तथा **डार्ट कीथ एवं लीके** ने अफ्रीका को मानव का उत्पत्ति स्थल माना है। मानव उद्‌भव के सही तथ्यों की खोज हेतु आरम्भिक काल में अपनी कल्पना शक्ति का सहारा लिया। इस धरातल पर पाये जाने वाले विभिन्न जीव–जन्तुओं एवं मानव समूहों–संगठनों की दन्त कथाओं, पौराणिक कथाओं, धार्मिक ग्रन्थों, वैज्ञानिक शोधों एवं जीवाष्मों के आधार पर ब्रह्माण्ड के इस जटिल रहस्य को जानने के प्रयास प्राचीन काल से अब तक हो रहे हैं। प्रारम्भिक मानव के उद्‌विकास को जानने के लिए दो तरीकों की सहायता ली जा सकती है –

अ. मानव की शरीर रचना की अन्य प्राणियों की शरीर रचना से तुलना करकेः–

मानव की अन्य जीवित प्राणियों से तुलना कर यह ज्ञात हुआ कि मानव एक ऐसा प्राइमेंट (नर–वानर स्तनधारी प्राणियों की सर्वोत्तम नस्ल) है जिसमें निम्न लक्षण पाये जाते हैं जैसे– **बड़ा मस्तिष्क, मुट्‌ठी बन्द करने वाले हाथ, पंजों के स्थान पर नाखून, विकसित दृष्टि।** नर वानर में अनेक जीव सम्मिलित हैं जिसमें पेड़ पर रहने वाले मंजेक, लेम्यूर, और बन्दर आदि। इस समूह के मानव (मनुष्य) नर वानरों से समरूपता रखता है।

ब. जीवाष्मों के माध्यम से आयु एवं विकास की गणनाः–विभिन्न जीव–जन्तुओं के अवशेषों (जीवित स्वरूप के ढ़ाचे) की तुलना द्वारा जीवाष्मों की सभ्यता का आंकलन किया जा सकता है। यहाँ तक कि अनेक आंशिक अवशेषों एवं उपकरणों तथा मनुष्यों के जीवाश्मों के साथ मेल खाने वाले प्राणी अवशेषों के अध्ययन से उनके जीवन जीने की शैली एवं उस समय के वातावरण के विषय में पता लगाया जा सकता है जिसमें वे रहे हैं।

5.4 मानव की उत्पत्ति सम्बन्धी विचारधाराएं

इस भौतिक जगत में जगह–जगह विभिन्न प्रकार के असंख्य जीव–जन्तु पाये जाते हैं। मानव उनमें से एक प्राणी है जो सभी से अलग और बुद्धिमान समझा जाता है। जीवों का विकास कैसे हुआ और किन कालों में हुआ आज भी यह विवाद का प्रश्न है। मनुष्य जो कि सर्वाधिक विकसित प्राणी है भी अपने प्रारम्भिक प्राचीन जीवन के बारे में जानने के लिए जिज्ञासु बना हुआ है। इस सन्दर्भ में अनेक संकल्पनाएं एवं मान्यताएं तथा शोध आदि द्वारा निरन्तर प्रयास किया जा रहा है। जीवों की उत्पत्ति सम्बन्धी कुछ निम्नलिखित संकल्पनाएं एवं विचारधाराएं हैं–

5.4.1– धार्मिक विचारधारा (Religious theory)

5.4.2– अनादिवाद (Theory of eternity)

5.4.3– स्वतः जननवाद (Theory of spontaneous generation)

5.4.4– विनाश या प्रलयवाद Theory of Catastrophism

5.4.5– विकासवाद (Theory of Evolution)

इन विचारधाराओं का सूक्ष्मावलोकन निम्न रूप में किया जा सकता है–

5.4.1– धार्मिक विचारधारा –

इसे विशिष्ट सृष्टिवाद के नाम से भी जाना जाता है। सामान्यतः यदि देखा जाये तो सभी मानव समूहों–समुदायों एवं जन जातियों एवं समुदायों आदि को मानने वाले लोग अपने उत्पत्ति के सन्दर्भ में अलग–अलग धारणाएं रखते हैं परन्तु विश्व के प्रमुख धर्मों हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि धर्मों की पुस्तकों में मानव उत्पत्ति का विशद वर्णन किया गया है। इस विचारधारा के अनुसार पृथ्वी पर विद्यमान सभी जीवों की रचना स्वयं की है। इन जीवों में किसी प्रकार के परिवर्तन की सम्भावना नहीं है। भारत के पौराणिक ग्रन्थों, पुराणों, वेदों, रामायण, महाभारत आदि मानव जीवन एवं अन्य जीवों की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है। हिन्दू धर्म ग्रन्थ वेद के अनुसार ईष्वर ने समस्त संसार एवं सृष्टि की रचना की है जिसमें छः सृष्टि प्राकृत और तीन सृष्टि वैकृत के नाम से जानी जाती है।

प्राकृत सृष्टि में– अ–महत्व **ब**–अहंकार **स**–भूत सर्ग **द**–इन्द्रियां **य**–देवता **र**–अविद्या

की रचना की गई तथा–

वैकृत सृष्टि में– अ–जड़ या विभिन्न वनस्पतियां **ब**–पशुपक्षी **स**–प्रथम युगल, मनुष्य–सतरूपा

की रचना की।

पौराणिक हिन्दू ग्रन्थों के अनुसार "**सृष्टि की ब्रह्मा ने अपने ही शरीर के विभिन्न अंगों से की है। ब्रह्मा जी ने अपने सिर से देवता राक्षस एवं मनुष्य, छाती से पक्षी, मुख से बकरियां तथा बालों से जन्तु एवं वनस्पतियों की रचना की।**"[1]

ईसाई धर्म ग्रन्थ बाइबिल में भी ईष्वर द्वारा सृष्टि की रचना का वर्णन किया गया है, में लिखा है कि ईश्वर ने छः दिन में पृथ्वी तथा मानव की रचना की और सातवें दिन आराम किया। मानव की रचना करने के उपरान्त ईष्वर ने स्वयं अपनी जीवात्मा का कुछ अंश फूँक दिया और उसे उसकी अमर आत्मा प्रदान किया।[2] बाइबिल में वर्णित इस सृष्टि का कालक्रम निर्धारित करने का प्रयास किया। **आर्क विशप उशेर** के अनुसार सृष्टि की रचना 4004 ई0पू0 हुई थी। यह अवधि वैज्ञानिकों को स्वीकार नहीं है।

इस्लाम धर्म की धार्मिक पुस्तकों कुरान व हदीस में लिखा है कि खुदा ने सर्वप्रथम आदमी का पुतला बनाया और उस पुतले में रूह फूँक दिया।[3] 19 सदी में विज्ञान में तीव्र प्रगति के साथ–साथ प्राचीन धार्मिक विचारधारा का समर्थन धीरे–धीरे समाप्त हो गया क्योंकि उपरोक्त वक्तव्यों एवंउक्तियों के लिए प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध नहीं कर सके।

5.4.2– अनादिवाद (Theory of eternity) – जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि यह सृष्टि स्थाई, शाश्वत, अनन्त है। इस विचारधारा के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में ही समस्त जीव–जन्तुओं का विकास हो चुका था (उत्पन्न हो गये थे)। ये जीव–जन्तु आज भी विद्यमान हैं और अनादिकाल तक ऐसे ही गतिमान रहेंगे। इस विचारधारा को एक सिरे से नकार दिया गया है क्योंकि आज विश्व में अनेक जीव विलुप्त हो चुके हैं।

5.4.3– स्वतः जननवाद (Spontaneous generation)– प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने इस मत का समर्थन किया था। उन्होंने भी यह माना कि जीव की उत्पत्ति स्वतः ही हुई थी। इस विचारधारा के अनुसार सड़े मांस से मक्खियां तथा कूड़े–करकट के ढ़ेर से चूहों की उत्पत्ति हुई है। **अरस्तू** ने कहा है कि दीमक और चींटी यह संकेत करते हैं कि धरातल के नीचे पानी है। अर्थात किसी प्रदेश में इनकी उपस्थिति का अर्थ है कि वहाँ पर पानी है। **वॉन हेलमाण्ट (1578 से 1644)** ने भी इस विचारधारा का समर्थन किया है लेकिन अनेकों विद्वानों ने इस विचारधारा को अमान्य करार दिया है।

5.4.4. विनाशवाद (Theory of Catastrophism)– कहीं पर प्रलय का आना संक्रमण काल का प्रतीक होता है क्योंकि एक और सृष्टि का विनाश होता है तो दूसरी और नवीन सृष्टि के सृजन का संकेत भी होता है। इस विचारधारा के अनुसार पृथ्वी पर आरम्भ से लेकर आज तक अनेंकों बार प्रलय का आगमन हुआ है। फ्रांसीसी विद्वान **जार्ज कुविये के अनुसार (1769 से 1832)** ने कहा है कि पृथ्वी के हर एक कल्प के अन्त में प्रलय का आगमन होता है और जीव–जन्तुओं का विनाश हो जाता है तथा नए कल्प में नए जीवों की सृष्टि का सृजन होता है। वर्तमान में यह विचारधारा अमान्य हो गई है। लेखक के विचार से हो सकता है कि इसमें कुछ सत्यता हो क्योंकि विभिन्न विद्वानों ने प्लीस्टोसीन काल में आने वाले चार हिमयुगों की बात की है, क्योंकि हिमयुग के दौरान समस्त धरातल पर वर्फ का आवरण जमा हो जाता है तो हो सकता है कि जीव–जन्तुओं का लोप हो जाता हो। ये हिमयुग हैं–**गुंज, मिण्डेल, रिस तथा वुर्म।** हां यह असत्य है कि नये कल्प में पुनः नये जीवों की सृष्टि होती है।

5.4.5. विकासवाद (Theory of Evolution)– **विकासवादी सिद्धान्त के अनुसार जीव एवं जन्तुओं का क्रमिक विकास होता है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी विद्वान लैमार्क ने अपनी पुस्तक फिलॉसफी जूलोजी (PHILOSOPHY ZOOLOGY 1809)** में लिखा कि वातावरण के प्रभाव के कारण जीवों की रचना में बदलाव होते हैं। इस सिद्धान्त की आलोचना वाइजमैन ने की जिन्होने लैमार्क की त्रुटियों की और संकेत किया। उन्होंने कहा कि चाहे वातावरण अथवा अन्य कारणों से प्राणियों के शरीर में होने वाले परिवर्तन उसी तक सीमित रह जाते हैं। उसकी अगली पीढ़ी अर्थात सन्तानों में स्थानान्तरित नहीं होते।

प्रसिद्ध जर्मन विद्वान चार्ल्स डार्विन ने जीव–जन्तुओं एवं मानव के विकास के सन्दर्भ बहुत सराहनीय कार्य किये हैं। कई वर्षों के प्रेक्षणों एवं अध्ययन के पश्चात उन्होनें अपनी संकल्पना का प्रतिपादन किया। डार्विन की प्रसिद्ध कृति **'प्राकृतिक चयन द्वारा जीव की उत्पत्ति' (THE ORIGIN OF SPECIES OF NATURAL SELECTION)** में उनके विचारों का समावेश है। डार्विन के अनुसार जन्म लिए हुए जीवों में अपने अस्तित्व एवं विकास के लिए प्रतिस्पर्धा होती है। इस प्रतिस्पर्धा में जो जीव बचे रह जाते हैं अर्थात श्रेष्ठ होतें हैं वे अपना अस्तित्व कायम रख पाते हैं और आगे के लिए आधार प्रदान करते हैं, इसी को डार्विन ने **"उत्तम की उत्तरजीविता" (SURVIVAL OF THEFITTEST)** कहा। डार्विन ने यह भी स्पष्ट किया कि इस संघर्षके दौरान जीवों के शारीरिक गठन में परिवर्तन हो जाते हैं, वही लक्षण वंशानुगत हो जाते हैं आगे चलकर अन्तिम एवं प्रथम प्राणी की शारीरिक बनावट में अन्तर हो जाता है। डार्विन ने मानव उत्पत्ति के सन्दर्भ में जाति वर्ग के विकास को स्पष्ट करते हुए तीन सिद्धान्त–

1. रूपान्तरण का सिद्धान्तः– प्रत्येक तत्व का रूप वातावरण में परिवर्तन के अनुरूप बदलता रहता है।

2. अनुकूलन का सिद्धान्तः–जिन प्राणियों में अनुकूलन की क्षमता होती है वे जीवित रहते हैं शेष नष्ट हो जाते हैं।

3. प्राकृतिक चयन का सिद्धान्तः–

जिन जन्तुओं की जीवन शक्ति अधिक होती है वही जीवित रहते हैं। प्रतिपादित किया और बताया कि जीव का स्वरूप परिवर्तनशील है जिससे सदैव नए प्रकार के जीवों का विकास होता है। डार्विन की यह रचना एवं प्रतिपादित सिद्धान्त मानव एवं जीव जन्तुओं के विकास की विचारधारा में मील का पत्थर साबित हुआ। डार्विन का सिद्धान्त वैज्ञानिकता पर आधारित होने के कारण स्वीकार योग्य था क्योंकि इसमें समुचित तथ्य थे। उपरोक्त प्रतिपादित सिद्धान्तों के प्रवर्तकों को इस सिद्धान्त ने आश्चर्य में डाल दिया क्योंकि यह सिद्धान्त उन सभी के सिद्धान्तों से भिन्न था। डार्विन के सिद्धान्त का कुछ आधारों पर विरोध हुआ परन्तु थामस हेनरी हक्सले ने इस सिद्धान्त को पूर्ण समर्थन दिया और कहा कि यह सिद्धान्त घोर अन्धकार में आशा की एक किरण है तथा हक्सले द्वारा रचित पुस्तक **'प्रकृति में मानव और स्थान'** से इस सिद्धान्त को बल मिला। हक्सले ने दिए गये अपने भाषण में कहा था कि **"मैं बिना हिचक के स्वीकार करता हूँ कि हमारे पूर्वज वनमानुष थे"।**

सारणी सं–5.1

भूगर्भशास्त्रीय काल–खण्ड एवं जैविक स्वरूप का उद्‌भव

क्र0 सं0	युग/काल	अनुमानित अवधि	जीवीय विकास की गतिविधि
1.	प्री कैम्ब्रियन काल	1000 मिलियन वर्ष पूर्व से 680 से 580 मिलियन वर्ष	बहुकोशीय (मेटाजोआ) पादप एवं प्राणी दोनों के अवशेष अफ्रीका के जाम्बिया में पाए गये
2.	कैम्ब्रियन काल	600मिलियन वर्ष पूर्व से 500 मि0 वर्ष तक (कुल अवधि 100 मिलियन वर्ष)	कशेरुकी दण्डी (वर्टी ब्रेट) कई प्रकार के सूक्ष्मदर्शी जीव स्पंजी हाथों वाले शीप। ट्रीलोवाइट्स एवं ब्रैकियोपोड्स की अधिकता
3.	आर्डो–विसियन काल	500 मिलियन वर्ष पूर्व से 440 मि0 वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 60 मि0 वर्ष)	पहली बार रीढ़ वाले जन्तुओं का विकास, जबड़े विहीन मछली, स्याही सदृश जीवों का विकास
4.	सिल्यूरियन काल	440 मिलियन वर्ष पूर्व से 400 मि0 वर्ष तक	जबड़े वाली मछली,अनेक हाथों वाले मांसाहारी घोंघे, मूँगा, जूलीफिस, मांसाहारी सागरीय लिली, वृहदाकार बिच्छू का उदय
5.	डेवोनियन युग	400 मिलियन वर्ष पूर्व से 350 मिलियन वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 50 मिलियन वर्ष)	उभयचर, मछली, मकड़े, कुटकी आदि मछलियों की अतिशयता के कारण इसे मत्स्य युग के नाम से भी जाना जाता है।
6.	कार्बोनीफेरस काल	350 मिलियन वर्ष पूर्व से 270 मिलियन वर्ष तक (कुल अवधि 80 मिलियन वर्ष)	सरीसृप, उरग, रेप्टाइल, कीटभक्षी, पेट के बल रेंगने वाले जीवों का आविर्भाव, कोयला निर्माण
7.	पर्मियन युग	270 मि0 वर्ष पूर्व से 225 मि0 वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 45 मि0 वर्ष)	योनिज स्तन्य (यूथेरिया), जन्तुओं में दौड़ने और तैरने के गुण का विकास हुआ।
8.	ट्रियासिक काल	225 मि0 वर्ष पूर्व से 180 मि0 वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 45 मि0 वर्ष)	अण्डज स्तन्य (प्रोटोथेरिया) रीढ़ विहीन जन्तुओं में वृद्धि हुई। रेप्टाइल का आविर्भाव हुआ तथा इनमें उड़ने का गुण का विकास हुआ जिससे पक्षियों का प्रादुर्भाव हुआ।
9.	जुरैसिक काल	180 मि0 वर्ष पूर्व से 135 मि0 वर्ष पूर्व तक	अनुस्तन्य, शिशुधानिक (मेटाथोरिया), डायनासोरों का विकास हुआ, छिपकली और घड़ियाल का विकास हुआ। इस युग की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि सर्वप्रथम कुछ प्राणियों में जीवित सन्तानों को जन्म देने की

			विद्या विकसित हई।
10.	क्रीटैशियस काल	135 मिलियन वर्ष पूर्व से 70 मिलियन वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 65 मि0 वर्ष)	कीटाहारी (इन्सेक्टीवोरा), योनिज स्तन्य (यूथेरिया) डायनासोर का चरम विकास हुआ जो आगे चलकर विलुप्त हो गए। कीटाहारी जन्तुओं में आगे चलकर गर्भधारण की क्षमता वाले जीवों में रूपान्तरण हुआ। अग्नि सहन करने वाले पूँछ युक्त जहरीले रेंगने वाले जन्तु का आविर्भाव हुआ।
11.	इयोसीन काल	70 मिलियन वर्ष पूर्व से 40 मिलियन वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 30 मि0 वर्ष)	स्तनधारी जीवों का प्रमुख, खुर वाले जन्तु एवं तीक्ष्ण दन्ती जन्तुओं का विकास हुआ। जन्तुओं का प्रादेशीकरण हो गया।
12.	ओलियोसीन	40 मिलियन वर्ष पूर्व से 25 मि0 वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 15 मि0 वर्ष)	आधुनिक स्तनधारी जन्तुओं का विकास
13.	मायोसीन	25 मिलियन वर्ष पूर्व से 11 मिलियन वर्ष पूर्व तक (कुल अवधि 14 मि0 वर्ष)	स्तनधारी जन्तुओं की संख्या एवं प्रजाति में वृद्धि हुई।
14.	प्लायोसीन	11 मिलियन वर्ष पूर्व से 1 मि0 वर्ष पूर्व तक	प्रारम्भिक उच्च स्तन्य (प्राइमेट) वानर (एप) स्तनधारी नर पशु तथा अफ्रीकी वनमानुष की संख्या में अत्यधिक वृद्धि।
15.	चतुर्थ कल्प	1 मिलियन वर्ष पूर्व से वर्तमान तक	
15A	प्लीस्टोसीन	1 मि0 वर्ष पूर्व से 10000 वर्ष पूर्व तक	होमोसेपियन(नियण्डरथल)
15B	होलासीन	10000 वर्ष पूर्व से वर्तमान तक	होमोसेपियन से सेपियन्स

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0बी0एन0सिंह पृष्ठ सं–124

मानव वृक्ष

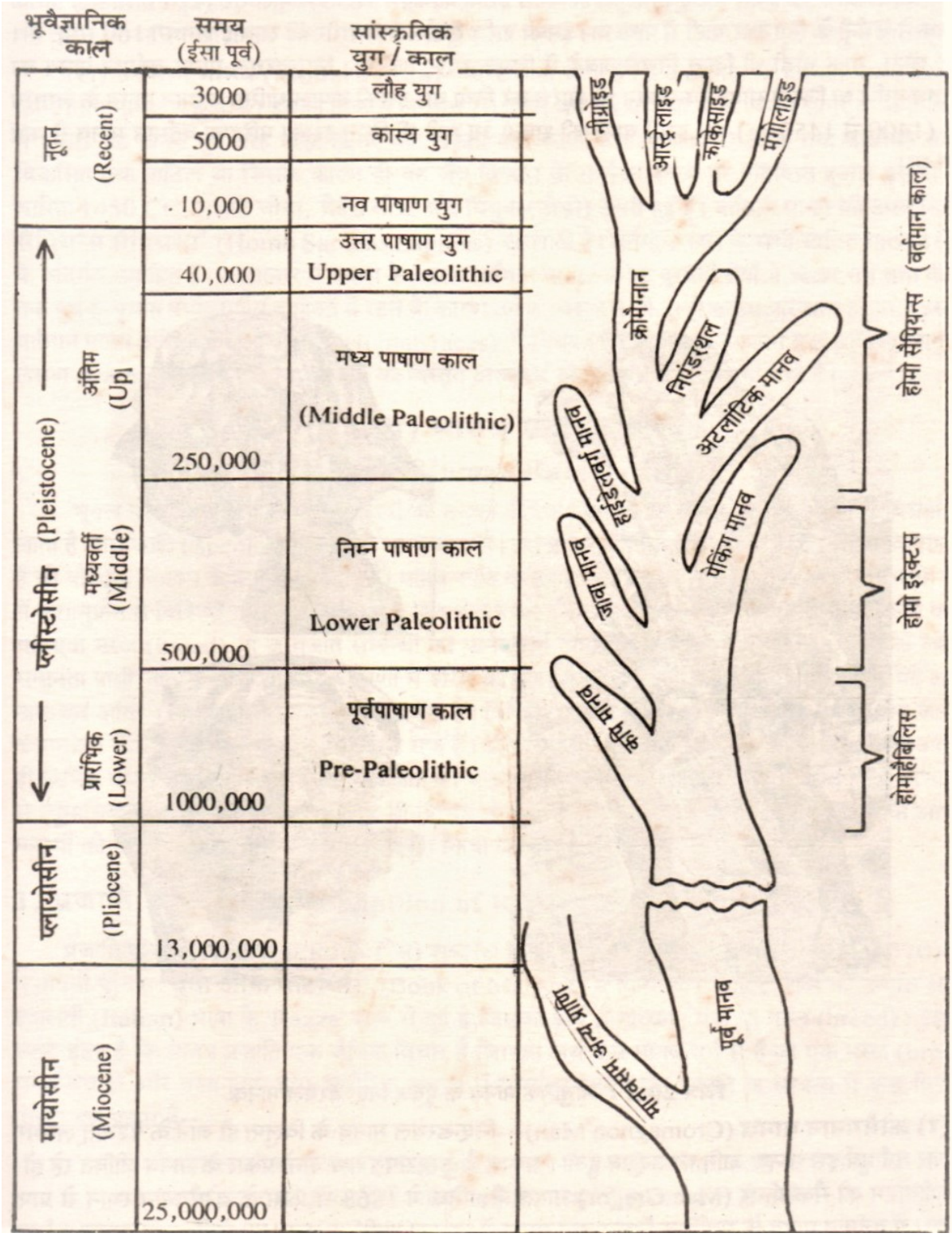

स्रोत– मानव भूगोल, एस0डी0 मौर्य

इस प्रकार अनेकों विद्वानों, डार्विन, हक्सले, हाल्टेन, ह्यूगोडी, ब्रीज आदि ने मानव के विकास एवं उसमें होने वाले परिवर्तनों पर अपने विचार रखें। मानव इस प्राणि समुदाय का सबसे अलग एवं महत्वपूर्ण है। यही वह

जीव है जो लाखों वर्षों से आज तक का सफर तय किया है। यही वह जीव है जिसने पृथ्वी की अनेको विपरीत परिस्थितियों का सामना किया है और अपने अस्तित्व को बचाये रखा है। विभिन्न वैज्ञानिकों ने विभिन्न जीवों के शरीरों से मानव शरीर की तुलना की और मानव को स्तनधारी प्राणी के अन्तर्गत रखा है। मानव को उच्च जीव माना जाता है। इसी वर्ग से मानव की शाखा का प्रस्फुटन हुआ। पर मानव जाति ने अपनी आवश्यकतानुसार पर्यावरण में परिवर्तन किया तथा अपने बुद्धि विवेक से सांस्कृतिक विकास किया तथा उसे प्रचारित एवं प्रसारित किया और स्वयं भी विश्व के अनेक भागों में जाकर बस गया।

स्पेन्सर ने कहा था कि–"मनुष्य की उत्पत्ति प्लीस्टोसीन काल में हुई। मनुष्य का उद्‌भव और विकास अन्य जीवों की भॉति मन्द गति से हुआ है। उसके शरीर व अंग मस्तिष्क व कार्य क्षमता विकास भी धीरे–धीरे हुआ है।"

मानव की उत्पत्ति जिन जीवों से हुई है, उन्हें उच्च स्तन्य (प्राइमेट) कहते हैं। इन प्राणियों में निम्नलिखित विशेषताएं पायी जाती हैं।

1. इन प्राणियों में पेट के ऊपर स्तन पाया जाता है क्योंकि इनमें दो स्तन ग्रन्थियां पायी जाती हैं।
2. सन्तान का जनन केवल मादा द्वारा होता है और मादा सामान्यतः एक समय में एक बच्चे को जन्म देती है परन्तु कभी–कभी एक से अधिक बच्चों को जन्म देती है।
3. इनमें वस्तुओं को पकड़ने की क्षमता इसलिए होती है क्योंकि इनकी हथेली पर अंगुलियां अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं तथा मजबूती के लिए अंगूठे का आकार अलग होता है।
4. इन प्राणियों में कंधे की हड्डी का अधिक मजबूत विकास होता है।
5. इन प्राणियों में हाथ और पैरों का कार्य विभाजन स्पष्ट होता है। इनके हाथ किसी वस्तु को मजबूती से पकड़ने के लिए एवं वस्तुओं को फेंकने एवं पकड़ने के लिए होता है। पैरों का कार्य चलन क्रिया के लिए होता है।
6. उनके शरीर का पूरा भार पैरों पर रहता है। पैर इनके शरीर का महत्वपूर्ण अंग होता है जिससे ये प्राणी गतिशील होते हैं, दौड़ते हैं। बचपन में ये हाथ एवं पैर दोनों से चलते हैं तथा जब शारीरिक विकास हो जाता है तो हाथ मुक्त हो जाते हैं।
7. अन्य निम्नतर स्तन्यों की भॉति इनके मुँह का जबड़ा आगे नहीं निकला होता है।
8. इन प्राणियों में आँखे खोपड़ी के अग्र भाग में पायी जाती है इसलिए इनमें समदर्शिता का विकास हुआ है। इनके आखों की एक विशेषता यह है कि आंख के गडढे के पीछे अस्थि–भित्ति (बोनीवाल) पायी जाती हैं। ऐसा प्रायः निम्न स्तर के प्राणियों में नहीं होता है।
9. इन प्राणियों में नाक और कान मध्य दूरी अधिक नहीं होती है जबकि अन्य निम्न प्राणियों में होती है।
10. इन प्राणियों में 32 से 36 दांत पाये जाते हैं।
11. इन उच्चस्तरीय प्राणियों का मस्तिष्क बड़ा होता है।
12. इन प्राणियों में मैथुन काल अथवा सन्तानोत्पत्ति काल निश्चित नहीं होता है जबकि अन्य प्राणियों में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वे निश्चित काल में ही सन्तान पैदा करते हैं।

5.5 मानव का उद्‌भव एवं विकास

मानव का उद्‌भव कब और कहां हुआ यह सदैव विवाद का विषय रहा है। विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुसार शारीरिक संरचना एवं जीवाश्मों के आधार पर इसके उद्‌भव को स्पष्ट करने का लगभग सफल प्रयास किया है। विभिन्न प्रकार के साक्ष्यों अर्थात विविधता के कारण एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच गए हैं ऐसा कहना शायद जल्दबाजी होगी लेकिन पूर्व वर्णित भू–वैज्ञानिक समय मापनी के अनुसार मायोसीन के अन्त एवं प्लायोसीन के प्रारम्भ तक मानव सदृश जीवों का उद्‌भव हो चुका था। इसी प्रकार मानव के उद्‌भव स्थान के विषय में भी मतभेद है पुनः इसका विवरण देना उचित है–

1. ग्रिफिथ टेलर–मध्य एशिया(1951)
2. ऑस बोर्न–तिब्बत तथा मंगोलिया(1915)
3. कीथ, डार्ट तथा लीके–अफ्रीका
4. पंचानन मित्रा–नीग्रोइड तथा आस्ट्रेलाइड का उद्‌भव भारत में हुआ।

प्राप्त हुए जीवाश्मों के आधार पर मध्य एशिया को आधुनिक मानव का उद्‌भव स्थल माना जाता है। प्रागैतिहासिक काल से प्राप्त जीवाश्मों में प्राचीन प्राइमेट वर्गीय प्राणियों के अनेक अवशेष मिले हैं। जिसमें लीमर, तारसिमर, अमेरिकी बन्दर, अफ्रीकी चिम्पैंजी, गोरिल्ला आदि इनके अवशेष विश्व के अनेको स्थानों से प्राप्त हुए हैं। उपरोक्त लिखित प्राणियों के अध्ययन से पता चलता है कि प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक इनमें परिवर्तन एवं परिमार्जन होते रहे हैं। डार्विन के जीवन काल में उनके सिद्धान्त का विरोध हुआ था लेकिन आज उस सिद्धान्त की सार्थकता स्पष्ट हो रही है जिसमें कहा गया था कि वातावरण में परिवर्तन जैविक समुदाय विशेष रूप से प्राणियों में परिवर्तन कर देता है। इसी के परिणाम स्वरूप हम एक से अधिक मानव तक का सफर तय कर सके हैं। आज भी विभिन्न जीवों के शारीरिक बनावट एवं लक्षणों रक्त आदि में समानता मिलेती है। मानव शरीर में अवशिष्ट रूप में विद्यमान है जैसे शरीर के बाल, वर्मी फार्म जिनकी आवश्यकता बड़े बन्दरों पाचन क्रिया के लिए आवश्यक है, बुद्धि दांत, बड़ी आंत और रीढ़ की निचली काकिम्स।[5]इन सब के अवलोकन के बाद वैलिस ने कहा कि "मानव पुरातन वस्तुओं का चलता–फिरता संग्रहालय है"। उन्होने आगे कहा कि "एक समय पूर्वजों का रक्त आज भी मानव उच्च बड़े वानरों तथा कुछ कम परिमाण में दोनों जगहों के बन्दरों की धमनियों में आज भी दौड़ रहा है।"

इस प्रकार आदि मानव से आधुनिक मानव के विकास तक मानव के विकास क्रम को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है।

1. पूर्व मानव
2. प्रागैतिहासिक मानव
3. वास्तविक मानव
4. आधुनिक मानव

5.5.1. पूर्व मानव–

आज से लगभग 2.5 मिलियन वर्ष पूर्व जबकि धरातल पर विभिन्न प्रकार के जीवों का आगमन हो चुका था। उस समय मानव भी अस्तित्व में आ गया था जिसे पूर्व मानव के नाम से जाना जाता है। आज से लगभग 1.2 मिलियन वर्ष पूर्व एशिया में भारत एवं दक्षिणी पूर्वी द्वीप समूहों तथा अफ्रीका में चिम्पैंजी, गोरिल्ला, वानर, लेंगूर आदि प्राणियों का प्रादुर्भाव पूर्ण रूप से हो चुका था। कहीं–कहीं इनकी उपस्थिति मानव के रूप में देखी जा सकती है। इस दौरान अफ्रीका एवं एशिया में इस प्रकार के जीवावशेष इस बात की पुष्टि करते हैं।

5.5.2. प्रागैतिहासिक मानव–

प्रागैतिहासिक मानव, मानव विकास का द्वितीय चरण है। यह वही समय था जब मानव सदृश प्राणी जो कि पेड़ों पर रहते थे, जमीन पर रहने लगे तथा लकड़ी के बने औजारों का प्रयोग करने लगा। साथ ही साथ वह गुफाओं में भी रहने के लिए अपने आप को तैयार कर लिया। इसके विभिन्न कारण हो सकते हैं जैसे वर्षा, षीत, तापमान, आदि। इस काल में पाये जाने वाले मानव को निम्ललिखित तीन भागों में बांटा जा सकता है।

5. मानव के आकार सदृश कपि
6. कपि मानव
7. विकसित मानव

5.5.2 अ– मानव के आकार सदृश कपि–

इनके नाम से ही स्पष्ट होता है कि ऐसे कपि या बन्दर जो लगभग मानव का आकार ले चुके थे ये पेड़ों के स्थान पर अब धरातल पर रहना सीख चुके थे। और गुफाओं में रहते थे। ये शिकार करना भी सीख गये थे। इनके पुरातात्विक जीवाष्मों के आधार पर माना जाता है कि ये आस्ट्रलोपिथेकस के प्रथम पूर्वज हैं। आस्ट्रेलोपिथेकस का शाब्दिक अर्थ होता है "दक्षिण मानव सम प्राणी"। इनकी प्राप्ति उत्तरी गोलार्द्ध में होने के कारण ही इनको आस्ट्रलोपिथेकस कहा गया। ये मानव धीरे–धीरे विकसित होकर स्थानान्तरित हुए और पूर्वी अफ्रीका तक जा बसे।

5.5.2 ब– कपि मानवः– इन्हें होमोइरेक्टस के नाम से जाना जाता है। इनकी प्राप्ति एशिया में चीन, जावा, अफ्रीका तथा यूरोप हैं। मानव विकास की श्रेणी में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। ये लोग लकड़ी एवं हड्डी के बने औजारों का प्रयोग करने लगे थे। आज के मानव के समान इनकी मस्तिष्क धारिता भी 1000 सीसी के आस पास थी। इनके अवशेषों के आधार पर निम्न रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

- **जावा मानव**–यह मानव प्लीस्टोसीन युग में जावा के जंगलों में निवास करता था।
- **पीकिंग मानव**–ये प्राचीन आदि वानर–मानव थे। इनका विकास जावा मानव से अधिक माना जाता है।
- **अफ्रीकन मानव**–ये पीकिंग मानव के समान थे इनकी प्राप्ति अफ्रीका अधिक थी।

5.5.2 स– विकसित मानवः–विकसित मानव का विकास जावा मानव के परिष्करण से हुआ ऐसा माना जाता है। प्राप्त जीवाष्मों (यूरोप, अफ्रीका, एशिया में प्राप्त) के अध्ययन से पता चलता है कि इनके मस्तिष्क का विकास पूर्ण हो चुका था। इनके अन्तर्गत निम्नलिखित शाखाओं को रखा जाता है।

1. **हीडेलबर्ग मानव** (HEIDELBERG MAN):- इसका विकास प्लीस्टोन काल में हुआ था। इनके अवशेष मायर नामक स्थान (जर्मनी) से प्राप्त हुए हैं।
2. **निएन्डरथल मानव** (NEANDERTHAL MAN):- इनकी प्राप्ति जर्मनी की निएण्डरथल नदी की एक घाटी में एक गुफा से हुई थी। ये काफी विकसित मानव माने जाते हैं। सर्वाधिक विकसित मानव पूर्वज होमोसेपियन्स इसी क्रम में हैं। इन्होनें आग का प्रयोग शुरू कर दिया था।
3. **सोलो मानव** (SOLO MAN):- इनके अवशेष जावा की सोलो नदी के तट पर प्राप्त हुए थे।
4. **रांडेसिमाई मानव (RANDESIMAI MAN):-** कुछ विद्वान इन्हें नवीन मानव के रूप में स्वीकार करते हैं।

5.5.3– वास्तविक मानवः–

इनका काल लगभग 50 हजार वर्ष पूर्व माना जाता है। इन्हें मेधावी मानव भी कहा जाता है। वास्तविक मानव जिन्हें होमोंसेपियन्स कहा जाता है। निएण्डरथल मानव से विकसित माने जाते हैं लेकिन कुछ विद्वान इस बात का विरोध करते हैं और कहते हैं कि होमोसेपियंस का विकास स्वतंत्र रूप से हुआ था। यूरोप और उत्तरी अफ्रीका में होमोसेपियन्स के जीवाश्म पाये गये हैं। इसी कारण कुछ मानवशास्त्री इनका विस्तार यूरोप और अफ्रीका में मानते हैं। कुछ मानवशास्त्री निएण्डरथल एवं होमोसेपियन्स दोनों को समकालीन मानते हैं तथा कुछ मानवशास्त्री इन दोनों के मिलने के परिणामस्वरूप क्रोमैग्नान मानव के निर्माण को स्वीकार करते हैं जो वर्तमान मानव के पूर्वज के रूप में जाने जाते हैं। इनका विस्तार यूरोप, एशिया और अफ्रीका के अनेकों भागों में पाया जाता है।

विभिन्न विद्वानों के विचार इस सन्दर्भ में प्रस्तुत किए गये हैं। कुछ का मानना है कि इंग्लैण्ड में होमोसेपियन्स का विस्तार पाया जाता है जबकि आदि मानवशास्त्री इस बात को स्वीकार नहीं करते हैं। एक विचारधारा के मानवशास्त्री यह मानते हैं कि वातावरण में परिवर्तन के कारण निएण्डरथल का परिमार्जन होकर वास्तविक मानव का विकास हुआ। एक वर्ग यह मानता है कि निएण्डरथल का पास स्थान यूरोप में था तथा होमोसेपियन्स की उत्पत्ति अफ्रीका एवं एशिया में हुई होगी। यहां के प्रसार के कारण होमोसेपियन्स यूरोप पहुंचकर निएण्डरथल पर विजय प्राप्त कर वहां बस गए होंगे। इसी सन्दर्भ में कुछ विद्वान मानते हैं कि यूरोप पहुंचकर होमोसेपियन्स निएण्डरथल मानव के साथ मिल गई और होमो सेपियन्स अर्थात वास्तविक मानव का विकास सम्भव हुआ होगा। इसकी दो शाखाएं पायी जाती हैं।

होमोसेपियन्स

ग्रिमाल्डी मानव (GRIMALDI MAN)	क्रोमैग्नन मानव (CROMAGNAN MAN)
इस मेधावी मानव के जीवाश्म यूरोप में (भूमध्य सागर के तटवर्ती भागों) में प्राप्त हुए हैं। इनका माथा लम्बा, ठोड़ी निकली हुई तथा दांत बड़े थे। कुछ विद्वानों के अनुसार इनका निवास एशिया था। इन्हीं की एक शाखा मलाया होते हुए आस्ट्रेलिया पहुँची। और दूसरी यूरोप पहुँची कतिपय मानवशास्त्री ग्रीमाल्डी मानव को क्रोमेग्नन मानव के पूर्वज मानते हैं।	इस मेंधावी मानव के जीवाश्म सन 1968 में फ्रांस के डोडोन प्रांत के क्रोमेग्नन चट्टानों से प्राप्त हुए थे। इस प्रकार के जीवाश्म दक्षिण एवं पूर्वी यूरोप के अन्य देशों से भी प्राप्त हुए हैं। इनकी खोज सबसे पहले लेस एजिस ने की थी। यह जाति आज से लगभग 50000 वर्ष पूर्व पृथ्वी पर उपस्थित थी। ये आधुनिक मानव के निकटतम पूर्वज माने जाते हैं। इनका कद लगभग 6 फिट, रंग गोरा, चेहरा चौड़ा नाक उभरी हुई तथा शारीरिक तथा मानसिक विकास मुखर हो गया था। ये निएण्डरथल मानव की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान थे तथा इनकी मस्तिष्क धारिता भी अधिक थी (1600 सीसी)। इनका विकास अधिक हो गया था। ये कृषि करना तथा पशुपालन करना प्रारम्भ कर चुके थे। अब इनका शारीरिक विकास कम बल्कि सामाजिक विकास अधिक हो रहा था। कुछ मानवषास्त्रियों का मानना है कि निरन्तर क्रोमेग्नन मानव एवं निएण्डरथल मानव में जनन क्रिया होने से निएण्डरथल मानव क्रोमेग्नन मानव में विलीन हो गये। इस प्रकार आधुनिक मानव क्रोमेग्नन मानव की ही सन्तान मानी जाती है। 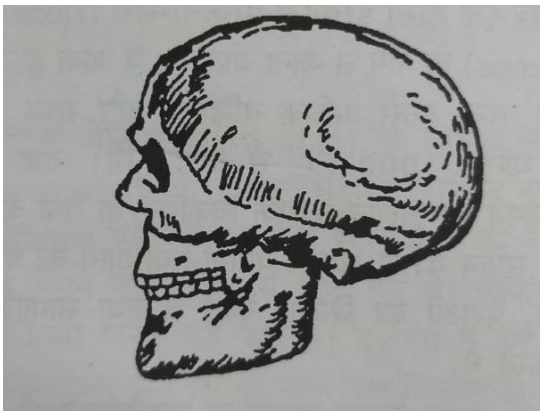 क्रोंमैगनन मानव चित्र.5.8

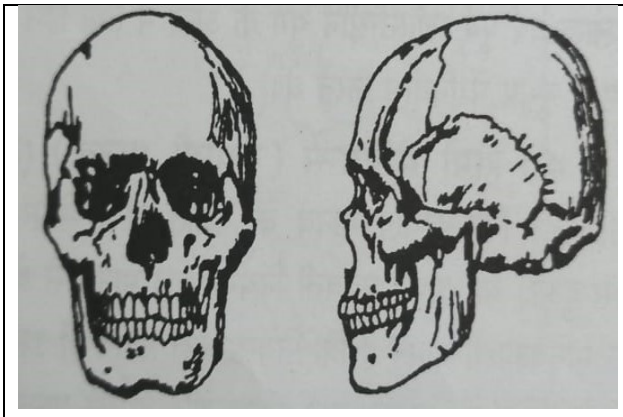

ग्रिमाल्डी मानव

चित्र.5.7

5.5.4– आधुनिक मानवः– आधुनिक मानव विकसित अवस्था को प्राप्त कर चुका था तथा सीधे (खड़े) होकर चलने लगे थे। इनका ललाट सीधा तना हुआ था। इनकी कापालिक क्षमता पूर्व के मानव से अधिक हो गई थी। इनकी निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

1. अपने पूर्वजों से शरीर एवं सामाजिक बनावट में परिष्कृत हो गए थे।
2. एक दूसरे से क्रिया प्रतिक्रिया द्वारा आदान–प्रदान सम्भव हो गया था।
3. औजारों का निर्माण करना इनकी प्रमुखविशेषता है।
4. ये समूह बनाने के साथ कई समूहों का समाज बनाया जाता था।
5. जीवित मानव के लिए फूलों एवं फलों का संग्रह करते थे और शिकार भी उत्कृष्ट तरीके से करने लगे थे।
6. समुद्री तटों से एवं जलाशयों से जलीय जीवों का शिकार भी करते थे।

एक बड़े मानवशास्त्री समूह के अनुसार आधुनिक मानव का उत्पत्ति स्थल मध्य एशिया के कैस्पियन सागर के आस–पास था। यही से इनकी प्रजातियां विश्व के अनेक भागों यूरोप में दो शाखाएं प्रथम भूमध्य सागरीय क्षेत्र की और दूसरी शाखा उत्तर पष्चिम में यूरोप दक्षिण पष्चिम में अफ्रीका तथा पूर्व में प्रसारित होकर भारत की और प्रसारित हुई। एक दूसरी विचारधारा के अनुसार होमोसेपियन्स मानव का उद्‌भव स्थल कैस्पियन सागर से लेकर भारत तक विस्तृत क्षेत्र है। लेखक के दृष्टिकोण से होमोसेपियन्स मानव के मध्य एशिया के कैस्पियन सागर से लेकर भारत तक विस्तृत क्षेत्र है। लेखक के दृष्टिकोण से होमोसैपियन्स मानव के मध्य एशिया के कैस्पियन सागर में उद्‌भव का प्रबल समर्थन किया जा सकता है क्योकि यह विश्व का ऐसा भूभाग है जहाँ पर मानव उद्‌भव हेतु अनुकूल दशाएं उपलब्ध थी।

5.6 मानव विकास के चरण

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मानवीय शरीर लगातार जलवायु परिवर्तन के कारण परिवर्तन को प्राप्त होता गया। मानवीय शरीर में परिवर्तन एवं सांस्कृतिक विकास के कारण मानव का विकास हुआ। मानव में समय के साथ मूलभूत परिवर्तन होते गए जिसका प्रमुख कारण मनुष्य शारीरिक परिवर्तन एवं विकास और मानव का प्राविधिक विकास। आस्ट्रलोपिथेकस का अपना अस्तित्व बचाये रखने के लिए अपने अवयवों विशेषकर दांतों का अधिक उपयोग करना पड़ा। जिससे उनके दांत और जबड़े बड़े होते थे। होमोइरेक्टस अपने दो पैरों पर अपना भार ढोने में समर्थ हो गए थे जिसके कारण उनके हाथ मुक्त हो गये और आगे के दो पैर हांथ के रूप में काम आने लगे। इनके हांथ छोटे हो गए लेकिन विभिन्न कार्यों के लिए औजारों का प्रयोग इसी से करने के कारण

अधिक क्रियाशील हो गये। इनके जीवन में औजारों का प्रयोग बढ़ता गया परिणाम यह हुआ कि जिन दांतों से काटने चीरने एवं फाड़ने का काम करते थे वह बन्द हो गया। इसलिए इनके जबड़े एवं दांत के आकार कम हो गये। आग का उपयोग मानव कई (शिकार, हिंसक पशुओं से सुरक्षा और शीत से बचाव) करने लगा। ये इतने समर्थ हो गये यूरोप में जर्मनी तक फैल गया। निएण्डरथल मानव को मानवों की श्रंखला में बुद्धिमान प्राणी के अन्तर्गत रखा जाता है। होमोसेपियन्स ने फसलोत्पादन तथा पशुपालन की शुरुआत कर दिया तथा भौतिक परिवेश के साथ अपने आप को समायोजित करने लगे थे या कर चुके थे। मानव के सांस्कृतिक विकास की अवस्थाओं को मुख्य रूप से तीन चरणों में विभक्त कर अध्ययन किया जाता है।

5.6.1 पाषाण काल (STONE AGE)

5.6.2 ताम्र कांस्य काल (COPPER-BRONZE AGE)

5.6.3 लौह काल (IRON AGE)

5.6.1– पाषाण कालः– पाषाण काल मानव सभ्यता का प्रमुख काल माना जाता है पुरातत्वशास्त्रियों ने पाषाण काल को भी निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया है–

क्रम सं0	युग	कालावधि	विशेषताएं
01	आदि पाषाण युग इयोलिथिक		पत्थर के थोड़े हथियारों का निर्माण– इस प्रकार की बस्तुएं स्वयं बनी या मानव ने बनाया इस बात में अभी मतभेद है।
02	पुरा पाषाण युग (पेलियोलिथिक)	1000000 से 10000 ई0पू0	इस काल में पत्थरों के अस्त्र शस्त्रों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। पूर्व के अधूरे हथियारों के स्थान पर अब नुकीले एवं सुडौल यन्त्रों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। आभूषणों का निर्माण प्रारम्भ, शवों को जलाया जाने लगा था।
03	नव पाषाण युग (नियोलिथिक)	10000 से 4000 ई0पू0	उच्चीकृत हथियारों का निर्माण होने लगा था। प्रारम्भिक कृषि का प्रारम्भ एवं विकास हुआ। संस्कृति का विकास हुआ।
04	ताम्र युग	4000 से 3000 ई0पू0	मिस्र अथवा मिस्र के समीप ताँबे को गलाने और ढालने का कार्य प्रारम्भ हुआ।
05	कांस्य युग	3000 से 2000 ई0पू0	पहले मिस्र तथा बाद में मेसोपोटामिया एवं उत्तर पश्चिम भारत में मनुष्य ने कांसे की वस्तु का निर्माण करना प्रारम्भ किया।
06	लौह युग	2000 ई0पू0 से वर्तमान तक	इस काल में शिल्पकला का अभूतपूर्व विकास हुआ।

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह पृष्ठ सं–139

5.6.1 अ– पुरापाषाण युगः–

इस संस्कृति का विकास आज से लगभग 20 लाख वर्ष (प्लीस्टोसीन काल के प्रारम्भिक समय से) पूर्व से माना जाता है। इस युग में मानव सदृश प्राणी होमीनाइड्स का उद्भव हुआ। काफी लम्बे समय यह प्राणी पशुवत जीवन व्यतीत करता रहा, केवल उनके शारीरिक लक्षण पशु से अलग थे। यह युग आज से लगभग 11 हजार वर्ष पूर्व तक चला। इस युग में आस्ट्रेलोपिथेसियन एवं होमोहैबिलिस मानव का वर्चस्व रहा। इस समय के मानव पत्थर से बने तिकोने एवं नुकीले हथियार का प्रयोग शिकार एवं अन्य कार्य हेतु करते थे। इस काल के उपकरण भारत के

उत्तरी–पश्चिमी और दक्षिणी प्रायद्वीप में मिलें हैं। होशंगाबाद (म0प्र0) में नर्मदा नदी घाटी में हथनोरा नामक स्थान पर मानव खोपड़ी का जीवाष्म प्राप्त हुआ है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग ने स्व0 प्रो0 जी0 आर शर्मा के निर्देशन में बेलन घाटी में पुरातात्विक अन्वेषण एवं सर्वेक्षण कार्य किये गये जिसमें पुरापाषाण काल, मध्यपाषाण काल एवं नव पाषाण काल से सम्बन्धित अनेक पुरास्थल की प्राप्ति के संकेत मिले। यह समय बहुत अधिक दिनों तक चला। इसे पुरापाषाण काल के नाम से जाना जाता है। आज से लगभग 5 लाख वर्ष पूर्व निम्न पुरापाषाण युग का प्रारम्भ हुआ। इस समय होमोइरेक्टस का उद्‌भव हुआ। इस काल में पत्थर के दोधारी और कुल्हाड़ी का आविष्कार हुआ तथा इसके साथ ही भालों का प्रयोग जानवरों का शिकार करने के लिए किया जाने लगा। इस समय औजार और तीक्ष्ण होने लगे थे। इसी समय शिकार को मारकर टुकड़े करने एवं उनके खाने योग्य (भोज्य) अंगों को चुनकर खाने की कला विकसित हुई। इसी युग में आग का आविष्कार हुआ जिसने इनके विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन को जन्म दिया। इस समय झाड़ियों में आग लगाकर पशुओं, जानवरों एवं शिकार को पकड़ने का कार्य होने लगा। आग का प्रयोग कई रूपों में होने लगा था यथा–

1. आग जलाकर प्रकाश एवं ताप के कारण हिंसक जानवरों से सुरक्षा होने लगी।
2. ठंडी जगहों को गर्म करना सम्भव हुआ।
3. आग के चारों और बैठकर शरीर सम्भव हुआ इसमें सामाजिक बंधन की भावना विकसित हुई
4. जानवरों का भुना मांस सुपाच्य हो गया।

इस प्रकार निम्न पुरापाषाण काल में होमोइरेक्टस को ठंडे क्षेत्रों में प्रसार एवं जनसंख्या वृद्धि में सहायता मिली और यह मानव पेकिंग तट तक फैल गया। ऐसे प्रमाण चाऊकातुटियेन की गुफाओं में प्राप्त होमोइरेक्टस के अवशेष के साथ राख और हड्डियों के रूप में प्राप्त हुए हैं। पुरापाषाण काल का अगला चरण **'मध्य पुरापाषाण युग'** आज से 110000 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ। इस काल में पत्थरों के औजारों का परिष्कृत (गढ़कर) प्रयोग में लाया जाने लगा जैसे काटने या कुतरने के लिए कुल्हाड़ी तथा छीलने के लिए चाकू का प्रयोग किया जाने लगा। उपरोक्त के साथ–साथ लकड़ी अथवा हड्डियों से नोंकदार भाला भी बनने लगा जिसे फेंककर जानवरों का शिकार किया जा सकता था। इन्होने मरे जानवरों की खालों का प्रयोग वस्त्र के रूप में किया जाने लगा इस युग में मानव अधिक विकसित हो गया था। अब वह खुले आसमान अथवा पेड़ों के नीचे निवास करने को मजबूर नहीं था। बल्कि गुफाओं में पूरी सुरक्षा के साथ रहना प्रारम्भ कर दिया था। यह विकसित मानव अपने भरण–पोषण के लिए नये क्षेत्रों की तलाश में पूरे विश्व में फैल गया। पुरापाषाण काल का अगला चरण '**उत्तर (उन्नत) पुरा पाषाण काल'** आज से लगभग 35000 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ। इसी समय (काल में) आज के मानव का वास्तविक शारीरिक स्वरूप (होमोसेपियन्स) का उद्‌भव हुआ।

इस युग के हथियारों में और भी तीक्ष्णता और विविधता आ गयी। इस काल में ब्लेड की भॉति पतले, सीधे एवं तीक्ष्ण धार वाले हथियार, औजार, सुई की भांति हाथी के दांत से बने चाकू, छेद युक्त सुई, धनुष–तीर तथा रेनडियर जैसे जानवरों का शिकार करने के औजार बनने लगे। इस काल की प्रमुख विशेषता विशेषीकृत औजार थे। इनके प्रभाव स्वरूप मानव कुशल शिकारी बन गया। इस काल में लोगों में धार्मिक आचार–विचार के भी संकेत मिलते हैं। बेलन घाटी के लोहंदा नाले के तृतीय ग्रेबल के अपरदित जमाव से हड्डी की बनी मातृदेवी की एक मूर्ति प्राप्त हुई जिससे उत्तर पुरापाषाण काल की धार्मिक एवं कलात्मकता के संकेत मिलते हैं। इस प्रकार यह 35000 वर्ष पूर्व के काल से 1000 ईसा पूर्व तक के काल को सम्मिलित किया जाता है। इसलिए पुरापाषाण काल मानव इतिहास में वृहद परिवर्तन लाने वाला कालखण्ड है। इस समय के उपलब्धियों के फलस्वरूप मानव में निम्नलिखित सांस्कृतिक सुधार हुए–

01– अवशेषीकृत प्राकृतिक खाद्य पदार्थों पर आश्रित्ताः– इस युग में होमोहेबिलिस (HOMOHEBILIS-17 लाख से 5 लाख वर्ष पूर्व) मानव की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

अ. पूर्णतया प्राकृतिक संसाधनों पर आश्रित थे।

ब. निश्चित सीमित प्रदेश में स्थानान्तरणशीलता।

स. पत्थरों के प्राकृतिक और मुड़े हुए औजार

द. शिकार का त्वरित उपयोग

य. किसी भी अपनत्व की भावना का सर्वथा अभाव

02– अवशेषीकृत खाद्य पदार्थ (प्राकृतिक) प्राप्ति की अवस्थाः– (5 लाख से एक लाख वर्ष पूर्व):– यह अवस्था होमोइरेक्टस के काल में थी जिसकी विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

A- भोजन हेतु चुने हुए जानवरों का शिकार तथा भोजन के रूप में मछली का प्रयोग।

B- खाद्य सामग्री के संग्रहण के लिए सीमित क्षेत्र तक ही जा पाते थे।

C- पत्थर, लकड़ी हांथी दांत एवं हड्डियों से निर्मित औजारों का प्रयोग करते थे।

D- उपयोग के उपरान्त बचे हुए भोज्य पदार्थों को संग्रहित करना।

E- अस्थाई एवं ऋतुवत स्थानान्तरण शुरू हो गया था।

F- सामाजिक एवं अपनत्व की भावना का विकास।

03– विशेषीकृत खाद्य पदार्थ प्राप्ति की अवस्था (1 लाख से 50 हजार वर्ष पूर्व):–यह अवस्था होमोसैपियन्स और निएण्डरथल मानव का है जो कि यूरोप में पायी गयी। इनकी विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

A- बड़े शाकाहारी जन्तुओं का शिकार करने की दक्षता का विकास हुआ।

B- अभी भी सीमित क्षेत्रों से वनोत्पाद अर्थात खाद्य संग्रह करना तथा शिकार किए हुए मांस का त्तकाल उपयोग।

C- प्रारम्भिक हथियारों का ज्ञान एवं उपयोग।

D- अस्थाई मानव निवास।

5.6.1 ब– मध्य पाषाण युग (Mesolithic Age):-

यह युग आज से लगभग 1100 वर्ष पूर्व माना जाता है इस काल में मानव जीवन पर्याप्त व्यवस्थित हो गया था। मानव गुफाओं में रहते थे जहां पर चित्रकारी के भी संकेत मिलते हैं। यह विकसित होमोसेपियन्स का काल था। मानव शिकार में धनुष–बाण का प्रयोग करने लगा था। कहा जा सकता है कि मानव कृषि में निपुण हो गया था तथा जंगलों का जलाकर भूमि प्राप्त कर कृषि कार्य किया जाता था। **स्पेंसर ने इनके गुणों एवं विशेषताओं को स्पष्ट किया है–**

A पत्थरों के हथियारों में विविधता एवं आकार छोटा इसकी प्रमुख विशेषता हैं।

B मछली पकड़ने के लिए मत्स्य भाल (HARPOON) का प्रयोग होने लगा था।

C नावों का प्रयोग होने लगा था।

D अनेक प्रकार के हथियारों का प्रयोग होने लगा तथा हत्थेदार हथियार बनने से कार्यकुशलता में वृद्धि हो गयी।

E कुत्ते को पालतू बनाया गया।

F मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग।

G पीसने की चक्की का प्रयोग होने लगा था।

इस प्रकार इनका जीवन विशिष्ट हो गया था ऐसी विशेषताएं आज जनजातियों में पायी जाती हैं। इन उपलब्धियों से इनमें निम्नलिखित सांस्कृतिक विकास हुए–

A व्यापक स्तर पर जंगली जंतुओं का शिकार, मत्स्य आखेट एवं पेड़ पौधों के बीजों का संग्रह।

B मछली को सुखाकर रखना।

C क्षेत्रीय अपनत्व की भावना का विकास हुआ तथा स्थाई अधिवास बनने लगे।

D पेड़ पौधों के उत्पादों (पत्तियों, छालों, गोंद) का संग्रह प्रारम्भ हुआ।

E खाद्य पदार्थों के संरक्षण की प्रविधि का विकास हुआ जैसे खाद्य–पदार्थों को सुखाकर, उबालकर एवं नमक लगाकर रखना आदि तथा इनको रखने के लिए टोकरी एवं बांस की नली का प्रयोग इस काल की प्रमुख विशेषताओं में है।

5.6.1 स– नव पाषाण युगः– (Neolithic Age):-

आज से लगभग 9000 वर्ष पूर्व जबकि मध्य पाषाण युग का अन्त हुआ। मानव अनेक पेड़ पौधों जीव–जन्तुओं आदि के गुणों एवं विशेषताओं के विषय में जानकारी प्राप्त कर चुका था तथा उनका विभिन्न रूपों में उपयोग भी करने लगा था। जल के प्रकारों की भी जानकारी मानव को हो चुकी थी। इस समय विभिन्न पदार्थों एवं खाद्य पदार्थों के संग्रह की विकसित प्रविधि ज्ञात हो चुकी थी। मानव का पशुओं एवं वनस्पतियों में जानकारी प्राप्त करना इसके लिए वरदान सिद्ध हुआ क्योंकि इन्हीं विशेषताओं के आधार पर उनका उपयोग करने लगा। जानवरों को पालतू बनाने लगा पौंधों का पालन करने लगा तथा उन्हें उगाने लगा। इसका सकारात्मक एवं चमत्कारिक लाभ यह हुआ कि मिश्रित कृषि (कृषि एवं पशुपालन दोनों) का विकास हुआ।

मनुष्य ने विभिन्न भागों में प्राकृतिक रूप से उगने वाले पेड़ पौधों को उगाना शुरू कर दिया। अब तक मानव विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में फैल चुका था। मानव पाषाण युग तक वह पौधों से प्राप्त पदार्थों का विविध रूपों (भोजन, वस्त्र, रेशा, रस्सी, गोंद, विष, कन्दमूल आदि) में प्रयोग करना जान गया था। इस प्रकार अनुकूल आर्द्र उपोष्ण एवं शीतोष्ण क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इस दृष्टि से पश्चिमी एशिया के पठारी क्षेत्र, दक्षिण पूर्व एशिया की नदी घाटियों के डेल्टा और सागर तट, ह्वांगहो बेसिन, पूर्वी द्वीप समूह, विशेषकर जावा, दक्षिण एशिया के जलोढ़ मैदान एवं समुद्र तट, भूमध्य सागर तट, पूर्वी अफ्रीकी पठार, गिनी तट, मध्य अमेरिका, एण्डीज पठार एवं ब्राजील पठार उपयुक्त सिद्ध हुआ। क्षेत्र विशेष उत्पन्न होने वाले पौधों एवं वनस्पतियों, खाद्य पदार्थों में भी विशेषीकरण उत्पन्न हुआ। जैसे पश्चिमी एशिया एवं भूमध्य सागर तटीय क्षेत्रों में गेहूँ जबकि दक्षिण पूर्वी एवं पूर्वी एशिया में चावल मुख्य भोज्य पदार्थ बना। इन्होनें ऐसे उपकरणों को विकसित किया (लकड़ी, हड्डी और पत्थर के बने) जो विभिन्न प्रकार की फसलों के बोने, उगाने, काटने एवं संग्रह करने हेतु उपयोग में लाये जाते थे। जहां मुख्य फसलों का उत्पादन सम्भव नहीं था वहां वैकल्पिक उपजें पैदा की जाती थी जैसे केला, सेम, सब्जी, शकरकंद आदि।

पौध पालन एवं कृषि कार्य के साथ विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले उपयोगी जानवरों को पालतू बनाया जा रहा था जो मानवीय क्रियाकलापो सहायक होते थे जैसे– कुत्ता, घोड़ा, गाय, खच्चर, भैंस, बैल, बकरी, भेंड़, हाथी, ऊँट, माक सूअर आदि। इससे एक वैकल्पिक साधन उन क्षेत्रों में मिले जहां पर कृषि कार्य करना कठिन था। मध्य एशिया, पश्चिम एशिया, मानसून एशिया, तथा मध्य अमेरिका आदि क्षेत्र पशुपालन के लिए उपयोगी सिद्ध हुए। इस प्रकार नव पाषाण कालीन मानव ने कृषि कार्य, पशुपालन आदि से प्राकृतिक जैविक वातावरण से अधिग्रहण तन्त्र के स्थान पर उत्पादन तंत्र अपना लिया।

5.6.2– कांस्य युग (Chalcolithic or Copper Age):-

ताम्र युग का आरम्भ आज से लगभग 6000 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ। इस युग को तांबा गलाने एवं उससे धातु बनाने से सम्बन्धित माना जाता है परन्तु वस्तुतः यह प्रक्रिया सभी धातुओं से जुड़ी हुई थी। मानव अब खनिजों से औजार बनाने लगा अर्थात लकड़ी पत्थर एवं हड्डियों के उपयोग पर आश्रिता समाप्त हो गयी। सिंधु घाटी के मिश्रित धातु बनाने की कला सीख ली। धातु की बनी मूर्तियां एवं मोहरें इसके प्रमाण हैं। मोहनजोदड़ो एवं आस–पास से कांस्य की मूर्तियां मिली हैं। ईसा से लगभग 3000 वर्ष पूर्व मिश्र के धातु विशेषज्ञों ने टिन एवं तांबे का मिश्रित करके कांस्य का निर्माण किया। इसके प्रयोग का विस्तार भारत एवं मेसोपोटामिया तक पाया जाता है।

5.6.3– लौह धातुः– (Iron Age):-

मानव के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना लौह की खोज की थी। लोहे का आविष्कार आज भी विवादास्पद है। मिश्र में इसके संकेत मिलते हैं एवं सम्भवतः तुर्की तथा काकेशस क्षेत्र में लोहे को खान से निकालने तथा धातु

शोधन प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ। भारत, ब्रिटेन एवं उत्तरी चीन में भी लोहे की धातु का निर्माण होने लगा था। लौह युग ने मानव सभ्यता को आगे ले जाने में सर्वप्रथम भूमिका अदा की। इसके साथ–साथ मानव ने इसी युग में रेशम,ऊन आदि से वस्त्र बनाना एवं चमड़ो का उपयोग सीख लिया था।

5.7 सारांश

मानव इस धरातल, प्रकृति की सर्वोत्तम भेंट है। प्रकृति ने मानव को विभिन्न चरणों से आगे बढाकर मजबूत बनाया। मानव के उद्‌भव से लेकर आज तक विभिन्न कालों एवं विभिन्न प्राकृतिक अवरोधों से होकर गुजरा है। मानव का उद्‌भव विवादित रहा तथा इसका जन्म काल भी, लेकिन विभिन्न वैज्ञानिक शोंधों एवं भूवैज्ञानिक समय मापनी के द्वारा इसके जन्म एवं विकास क्रम को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया। प्रिय विद्यार्थियों अपने इस इकाई में मानव एवं उसकी विशिष्ट जीवन पद्यति का विशेष अध्ययन इस इकाई में कर चुके होंगे। इस प्रकार यह इकाई आपके मानव सम्बन्धी धारणाओं एवं जिज्ञासाओं को नया रूप देने में सक्षम होगी ऐसी अपेक्षा की जाती है।

5.8–बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः–

1. मानव की उत्पत्ति पर एक निबन्ध लिखिए।

2. मानव के उद्‌भव एवं विकास की विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर समीक्षा कीजिए।

3. पाषाण युग का वर्णन विभिन्न साक्ष्यों के साथ प्रस्तुत कीजिए।

4. मानव के विकास क्रम को स्पष्ट कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्नः–

1. आस्ट्रेलोपिथेकस मानव की प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।

2. होमोसेपियन्स मानव की प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।

3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

क. क्रोमैग्नन

ख. होमो इरेक्टस

ग. ताम्र एवं कांस्य युग

वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर :–

प्रश्न 01– किसने कहा था कि **दीमक और चींटी धरातल के नीचे पानी के संकेतक हैं।**

अ– अरस्त **ब–** प्लेटो

स– होमर **द–** हिप्पार्कस

प्रश्न 02– प्लीस्टोसीन काल में हिमयुग का प्रकार है–

अ– गुंज **ब–** कार्बोनीफेरस

स– आर्कियन **द–** कैम्ब्रियन

प्रश्न 03– पुस्तक **मैन्स एन्ड प्लेस इन नेचर** किसकी कृति है..?

अ– डार्विन **ब–** हक्सले

स– हिप्पार्कस **द–** उपरोक्त में से कोई नहीं।

प्रश्न 04– मत्स्य युग के नाम से जाना जाता है

अ– प्लीस्टोसीनकाल ब– कार्बोनीफेरस काल

स– डेवोनियन काल द– जुरैसिक

प्रश्न 05– आज से कितने वर्ष पहले आधुनिक मानव का अस्तित्व सामने आया।

अ– 20000 वर्ष ब– 15000 वर्ष

स– 1000 वर्ष द– 10000 वर्ष

प्रश्न 06– किसने कहा कि मानव की उत्पत्ति मध्य एशिया में हुई?

अ– ऑसबर्न ब– ग्रिफिथ टेलर

स– पंचानन मिश्रा द– क्रोबर

प्रश्न 07–किसकी कृति है '' प्राकृतिक चयन द्वारा जीव की उत्पत्ति'' (The origin of Species bymeans of Natural selection)ः–

अ– पंचानन मिश्रा ब– चार्ल्स डार्विन

स– हम्बोल्ट स– रिटर

उत्तरमाला–

01–अ 02–अ 03–ब 04–स 05–द 06–ब 07–ब

5.9–संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज। पृष्ठ सं 122 से 146,।
2. मानव भूगोल, डॉ0 मो0 हारुन, विजडम पब्लिकेशन मैदागिन वाराणसी तृतीय संस्करण पृष्ठ 33।
3. मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण,।
4. भूगोल मुख्य परीक्षा के लिए, डी0आर खुल्लर, मैग्राहिल प्रकाशन, 12वां पुनः संस्करण।
5. तिवारी आर0सी0, एवं सिंह बी0एन0, कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज 2000, पृष्ठ सं 42।
6. दूबे श्यामचरण, मानव और संस्कृति, 1998, पृष्ठ सं 49।
7. Spencer, J.E.And Thomas, W.L. Cultural Geography. Ist Edition 1969 P.64.

इकाई–6 मानव उद्विकास :– उद्भव, आस्ट्रेलोपिथेकस, होमोहैबिलिस, पिथेकान्थ्रोपस, होमोइरेक्टस, होमोसेपियन, नियेन्डरथालिस, होमोसेपियन्स, सेपियन

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मानव का उद्विकास

6.4 विश्व की प्रमुख मानव प्रजातियां

6.4.1 ऑस्ट्रेलोपिथेकस

6.4.2 होमो हैबिलिस

6.4.3 होमो इरेक्टस

6.4.4 होमो सैपियन्स

6.5 सारांश

6.6 बोध प्रश्न

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.1 प्रस्तावना (Preface)

मानव भूगोल में मानव केन्द्रित अध्ययन को प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। मानव भूगोल अपने विकास काल से ही मानव एवं उसके विकास से सम्बन्धित अध्ययन पर जोर देता आया है और यह एक ऐसा विषय है जो मानव के विकास के विभिन्न चरणों का विधिवत अध्ययन प्रस्तुत करता है। मानव भूगोल को परिभाषित करते हुए प्रसिद्व भूगोलवेत्ता **कुमारी सैम्पुल ने अपनी कृति 'भौगोलिक वातावरण का प्रभाव'** में मानव को प्रकृति के दास के रूप में स्वीकार किया। इसके साथ सैम्पुल ने मानव एवं पर्यावरण के साथ सम्बन्ध को स्पष्ट करने का प्रयास किया। कुमारी सैम्पुल ने मानव भूगोल को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''**मानव भूगोल अस्थिर पृथ्वी एवं चंचल मानव के परिवर्तनशील सम्बन्धों का अध्ययन है।**'' इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मानव ने अपने जन्मकाल से ही प्रकृति के साथ सहयात्री बनकर बहुत दूर तक चला एवं एक समय के बाद अपनी स्थिति को सबल बनाते हुए प्रकृति को प्रभावित करने का प्रयास भी किया। धरातल पर मानव के आगमन से वर्तमान तक के सफर को विभिन्न कालखण्डों के अनुरूप होने वाले परिवर्तनों को विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुसार व्याख्यायित करने का प्रयास किया तथा मानव के विकास चरण को विभिन्न प्रजातियों में वर्गीकृत कर अध्ययन प्रस्तुत किया। प्रस्तुत इकाई में मानव की विभिन्न प्रजातियों का विधिवत स्पष्टीकरण करने का सार्थक प्रयास किया गया है। इस इकाई विश्व में विस्तृत विभिन्न मानव प्रजातियों का उनकी विशेषतागत अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

6.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. यह इकाई मानव के उद्विकास का व्यवस्थित अध्ययन पर जोर देकर मानव के उद्भव सम्बन्धी ज्ञान में वृद्धि कर सकती है।
2. विश्व की विभिन्न मानव समुदायों का व्यवस्थित अध्ययन प्रस्तुत करना।
3. विश्व में पायी जाने वाली समुदायों की विशेषताओं से छात्र/छात्राओं को भली भांति अवगत कराना।
4. विश्व की प्रमुख मानव की स्थानगत विशेषताओं को स्पष्ट करना एवं उनके विभिन्न प्रदेशों की और प्रव्रजन का विश्लेषण प्रस्तुत करना।
5. छात्र/छात्राओं को मानव से सम्बन्धित जानकारी में सकारात्मक परिवर्तन लाना एवं मानव समुदायोंसम्बन्धी

ज्ञान में वृद्धि करना।

6.3 मानव का उद्‌विकास (Evolutionary Origin of Man)

आदिकाल से मानव सृष्टि के रहस्य के सम्बन्ध में विचार करता आया है। सही तथ्यों की खोज हेतु मानव ने आरम्भिक काल से अपनी कल्पना शक्ति का सहारा लिया है। **डार्विन एवं हक्सले** के अनुसार शरीर रचना तथा मस्तिष्क की दृष्टि से मानव प्राणि जगत का जीव है। लाखों वर्षों पूर्व यह जाति '**नर–वानरों**' (वन मानुष) के रूप में उत्पन्न हुई। वैज्ञानिकों ने मानव शरीर की रचना की तुलना अन्य जीव वर्गों से की और मानव को ''स्तनधारी जीवों'' (Memals) के अन्तर्गत रखा है। प्राणियों के विकास के साथ ही जीवों की कई शाखाएं हो गयी। मानव को प्राथमिक वर्ग अथवा उच्च स्तन्य मानव अथवा प्राइमेट (Primate) कहा गया। इसी उच्च स्तन्य वर्ग से मानव की शाखा प्रस्फुटित हुई। धरातल पर जिस काल में मानव के पूर्वज हुए उसे भूवैज्ञानिक इतिहास में 'प्रतिनूतन युग' (Pleistocine Age) माना जाता है। स्पेंसर के अनुसार– ''मनुष्य की उत्पत्ति प्लीस्टोसीन काल में हुई। मनुष्य का उद्‌भव एवं विकास अन्य जीवों की भांति मन्द गति से हुआ है। उसके शरीर व अंग, मस्तिष्क व कार्य क्षमता का विकास भी धीरे–धीरे हुआ है।''

प्राइमेट वर्ग के प्राणियों में निम्न विशेषताएं पायी जाती हैं–

1. इनका मस्तिष्क अपेक्षाकृत दीर्घ होता है, और उसमें कई घुमावदार चिह्नांकित स्थल होते हैं।
2. हाथों और पैरों में पंजों के स्थान पर चपटे नाखूनों का इनमें विकास हुआ है।
3. वस्तुओं की पकड़ के लिए अंगूठों का अन्य उँगलियों से भिन्न होना और उसका अपनी और से उँगलियों की और मुड़ सकना इस वर्ग के प्राणियों की मुख्य विशेषता है।
4. मादा एक बार में एक या कभी–कभी एक से अधिक संतानों को जन्म देती है।
5. इस वर्ग के प्राणियों में जबड़े का भाग आगे की और अधिक उभरा हुआ नहीं पाया जाता है, जैसे कि निम्नतर स्तन्यों में पाया जाता है।
6. इन प्राणियों में घ्राणशक्ति के ह्रास के साथ–साथ नासिका क्षेत्र भी छोटा होता गया। इन प्राणियों में नाक–कान की दूरी अधिक नहीं होती है, जबकि निम्नेत्तर प्राणियों में अधिक दूरी पायी जाती है।
7. इनमें दांतों की संख्या 32 से 36 तक पायी जाती है।
8. यौन क्रिया के लिए निम्नेत्तर स्तन्यों की भांति इनमें कोई मिथुन काल अथवा जनन–काल निश्चित नहीं होता है। वर्ष के किसी भी महीने में ये क्रियाएं की जा सकती हैं।
9. शरीर का सम्पूर्ण भार पैरों पर रहता है। इन्हीं पैरों से चलने–दौड़ने का कार्य सम्पन्न होता है।
10. इनमें दो ही स्तन ग्रन्थियां पायी जाती हैं।
11. इनका मस्तिष्क अपेक्षाकृत 1100 से 1500CC तक दीर्घ होता है।

मानव सदैव प्राकृतिक पर्यावरण में क्रियाशील रहकर सांस्कृतिक वातावरण का सृजन करता आया है। वैज्ञानिकों का मत है कि पृथ्वी पर मानव का विकास टर्शियरी युग में प्रारंभ हुआ तथा इसका विकास क्रमिक रूप से हुआ। जीवाश्म विज्ञान के साक्ष्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि मानव के प्रथम पूर्वज आज से 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व अफ्रीका महाद्वीप में निवास करते थे क्योंकि प्रथम स्तनपायी के अवशेष यहीं से प्राप्त हुआ है। इसी क्षेत्र में मानव सम–कपियों अर्थात् नरवानरों जैसे गोरिल्ला, चिम्पैंजी, ओरंग उटान आदि का भी उद्‌भव हुआ। मानव के समान बिना पूंछ वाले इन कपियों को प्राइमेट कहा जाता है जिनके कारण इनको मानव का निकट सम्बन्धी माना जाता है। पिथेकैन्थ्रोपस इरेक्टस वाले जावा मानव को विश्व का सबसे प्राचीन द्विपद अवशेष स्वीकार किया जाता है। यह आज से लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी पर विचरण करता था। वर्तमान मेधावी मानव या होमोसेपियन्स की उत्पत्ति एवं विकास के लिए निएन्डरथल मानव को उत्तरदायी माना जाता है।

अभी तक के जैव उद्‌विकास की सबसे अच्छी कृति–मानव–मस्तिष्क जैव–उद्‌विकास की उच्चतम उपलब्धि है। मानव वंश में 6 श्रेणियां सम्मिलित की जाती है। यथा– रामापिथेकस, कीनियापिथेकस, आस्ट्रेलोपिथेकस, पैरेन्थ्रोपस, जिन्जैन्थ्रोप तथा होमो।

ड्रायोपिथेकस, मानव वंशानुक्रम के सबसे पहले पूर्वज थे। आस्ट्रेलोपिथेकस का सर्वाधिक जीवाश्म अफ्रीकाा से प्राप्त हुआ। मानव का यह पूर्वज सर्वप्रथम सीधा होकर गमन किया। आस्ट्रेलोपिथेकस से आधुनिक जाति के वंशानुक्रम में मानव की, एक के बाद दूसरी, कई जातियां विकसित हुयी परन्तु वे कुछ समय तक विद्यमान रहकर विलुप्त होती रही। इसीलिए इन्हे प्रागैतिहासिक मानव (Pre Historic Man) जातियाँ कहते है। इनमें प्रमुख मानव अधोलिखित थी–

1– होमो हैबिलिस

2– हीडलवर्ग मानव

3– जावा कपि मानव

4– पेकिंग मानव

5– निएन्डरथल मानव

6– क्रोन्मैगनॉन

हथियारों के प्रथम निर्माण का श्रेय होमोहैबिलस मानव था। हीडलबर्ग यूरोप में विकसित मानव की एक प्रजाति थी, जो कुछ समय बाद विलुप्त हो गया। अग्नि का उपयोग करने वाला प्रथम मानव जावा कपि मानव था। पेकिंग मानव चीन में विकसित हुए जो जावा मानव के समान किन्तु नरभक्षी थे। निएन्डरथल मानव अफ्रीका में विकसित होकर यूरोप तथा एशिया में फैले और 35000 वर्ष पूर्व विलुप्त हो गए। इनको अक्षर भाषा का ज्ञान, श्रम विभाजन करके सामाजिक जीवन धर्म और संस्कृति की स्थापना का श्रेय दिया गया है। आज से 35 से 50 हजार वर्ष पूर्व को मैगनान मानव का विकास हुआ था। वैज्ञानिक इसे होमो सैम्पियन्स का अन्तिम सीधा पूर्वज और आधुनिक मानव की एक उपजाति मानते हैं। इसके जीवाश्म यूरोप, अफ्रीका एवं इजरायल से मिले है। क्रो–मैगनॉन के बाद मानव जाति के उद्विकास में सांस्कृतिक विकास का प्रमुख हो गया। जिसका प्रतिनिधि होमोसेम्पियन्स–सैम्पियन्स है। यह मानव आज से 10–11 हजार वर्ष पूर्व एशिया में कैस्पियन सागर के निकट विकसित हुए। फिर इनका तीन प्रमुख दिशाओं में देशान्तरण हुआ।

1– पश्चिमी दिशा में भूमध्य सागर के किनारे–किनारे फैलकर ये यूरोप दक्षिणी–पश्चिमी तथा उत्तरी अफ्रीका की वर्तमान गोरी प्रजाति (White Race or Coucasoid) के रूप में विकसित हुए।

2– दक्षिणी दिशा में जाने वाले सदस्य भारतीय सागर के दोनों और फैलकर अफ्रीका एवं मिलैनेशिया की काली नीग्रो प्रजाति (Black or Negroid Race) में विकसित हुए।

3– उत्तर और पूरब दिशाओं की और जाने वाले सदस्य साइबेरियाा एवं चीन में बसकर मोंगोलाइड(Mongoloid Race) विकसित हुए। धीरे–धीरे इस उपजाति ने पाषाण काल से कांस्य काल (BronzeAge) में पर्दापण किया और अब लौह काल (IronAge) चल रहा है।

6.4 विश्व के प्रमुख मानव उद्विकास

उन्नीसवीं शताब्दी में चार्ल्स डार्विन की प्रसिद्ध पुस्तक प्राणी विकास का सिद्धान्त (1860), मानव जाति की उत्पत्ति और विकास के सम्बन्ध में पाश्चात्य जगत में प्रथम पुस्तक थी। डार्विन ने मानव की उत्पत्ति से सम्बन्ध में जाति वर्ग के विकास को स्पष्ट करते हुए तीन सिद्धान्त प्रतिपादित किये–

1. रूपान्तरण का सिद्धान्तः– प्रत्येक तत्व का रूप अनेक दिशाओं में परिवर्तित होता रहता है। रूपान्तरण की दिशाएं होने के कारण परिवर्तित रूप भी विभिन्न प्रकार के होते हैं।

2. अनुकूलन का सिद्धान्तः– इस प्रक्रिया में कुछ रूपों में अपने पर्यावरण में जीवित रह सकने की क्षमता अन्य जीवों की अपेक्षा अधिक होती है।

3. प्राकृतिक चुनावः– जिन जीवों में अनुकूलन की क्षमता होती है। वे जीवित रहते हैं, शेष नष्ट हो जाते हैं।

6.4.1 आस्ट्रेलोपिथेकस (Australopithecus- The First ManApe)–

दक्षिण अफ्रीका में टांग (Taung) नामक स्थान से 1924 में रेयमाण्ड डार्ट ने एक बालक की खोपड़ी के ऊपरी भाग की खोज की। उसके पश्चात अनेक खोपड़ी, जबड़े, शरीर के अंग की वहां अस्थियां प्राप्त की गयी। इसी प्रकार के मिलते–जुलते आकृति वाले प्राणियों को 'आस्ट्रेलोपिथेसिन (Australopithecine) के उप–परिवार में सम्मिलित किया गया।

'आस्ट्रेलोपिथेसिन' प्राथमिक वर्ग के प्राणी की निम्नलिखित विशेषताएं–

1– छोटी मस्तिष्क धारिता जो आज बड़े आकार के कपि (App) में पायी जाती है उसी आकार की थी।

2– बाहर की और निकले हुए जबड़े

3– बड़े आकार के चवर्णक (Molar), अग्र चवर्णक(Pre molar), दांत तथा छोटे कृन्तक तथा रदनक।

4– कूल्हे की हड्डी तथा हाथ–पैरों की हड्डियां की बनावट मानव के समान

यह 'आस्ट्रेलोपिथेसिन' छोटे शरीर के लगभग 4 फीट ऊँचाई वाले प्राणी थे। सीधे होकर चलते थे परन्तु कमर पर हड्डी मुड़ी हुई थी। इनके दांत और जबड़े आधुनिक मानव की अपेक्षा अधिक बड़े थे। ठोड़ी नहीं थी। मस्तिष्क धारिता (Brain Capacity) 450 से 460 से कुछ अधिक थी। इस प्रकार 'आस्ट्रेलोपिथेसिन' मानव वनमानुष मस्तिष्क का प्रतिनिधित्व करता था।

सन 1925 में डार्ट ने दक्षिण अफ्रीका में पाये जाने वाले प्रस्तरीय अवशेषों के आधार पर 'आस्ट्रेलोपिथेसिन' को निम्नांकित दो वर्गों में विभक्त किया।

6.4.1 अ– आस्टेलोपिथेकस अफ्रीकन्स (Australopithecus Africans) –

इस मानव की मस्तिष्क धारिता 500CC, शारीरिक कद छोटा, ऊँचाई चार फिट तथा भार 47 से 50 पौण्ड होता था। इस प्रजाति के लोगों की मुखाकृति पर्याप्त बड़ी होती थी। इन प्रजातियों की भुजाओं एवं कमर का अध्ययन करने से पता चलता है कि चलने के लिए ये प्राणी पिछले पैरों का प्रयोग करते थे। इनके दातों की बनावट विशेष मानव के पूर्वजों से अधिक समीप थी।

6.4.1 ब– आस्ट्रेलोपिथेकस रोबस्टस (Australopithecus Robustus) :–

डार्ट की प्रजातियों के अन्वेषण के कुछ वर्षों के बाद प्रसिद्ध विद्वान **राबर्ट ब्रूस** अफ्रीका के दक्षिणी भाग के अनेको स्थानों पर खोज के आधार पर तथा जीवाशेषों के आधार पर यह सिद्ध किया कि उस समय उस क्षेत्र में **होमीनीड्स (Hominids)** थे जिनका जिक्र डार्ट कीथ ने अपनी परिभाषा में नहीं किया था। इन्हें 'आस्ट्रेलोपिथेकस रोबस्टस' कहा गया है। इन प्रजातियों की लम्बाई या कद पाँच फीट से अधिक और इनका भार 100 पौण्ड से अधिक होता था। मस्तिष्क धारिता पूर्व के समान 500CC होती थी। इनका शरीर भारी होता था, माथा ऊँचा, जबड़ा भारी तथा उसके अनुसार दांतों का आकार छोटा होता था। कुछ विद्वानों ने इनका समय प्रथम की तुलना में अधिक माना था (चित्र सं–6.2)।

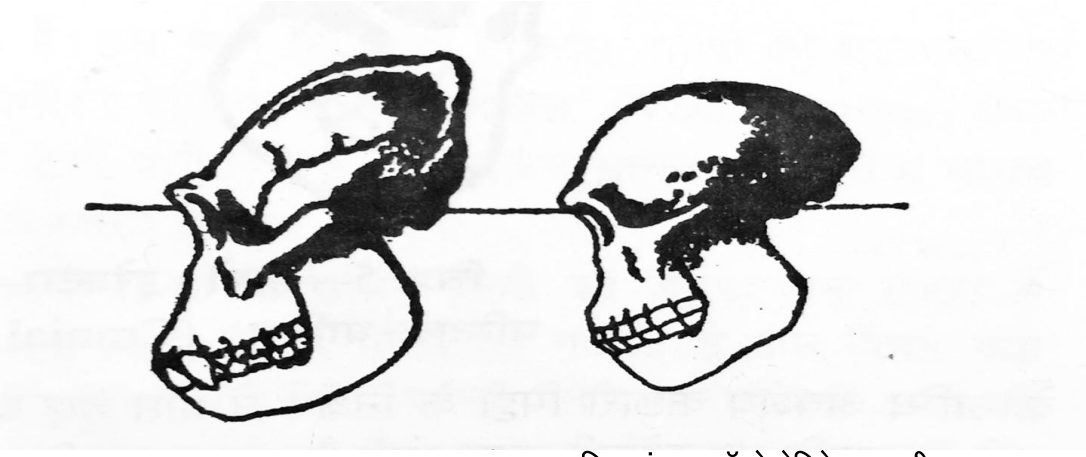

चित्र सं–6.1 ऑस्ट्रेलोपिथेकस अफ्रीकान्स

स्रोत– मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

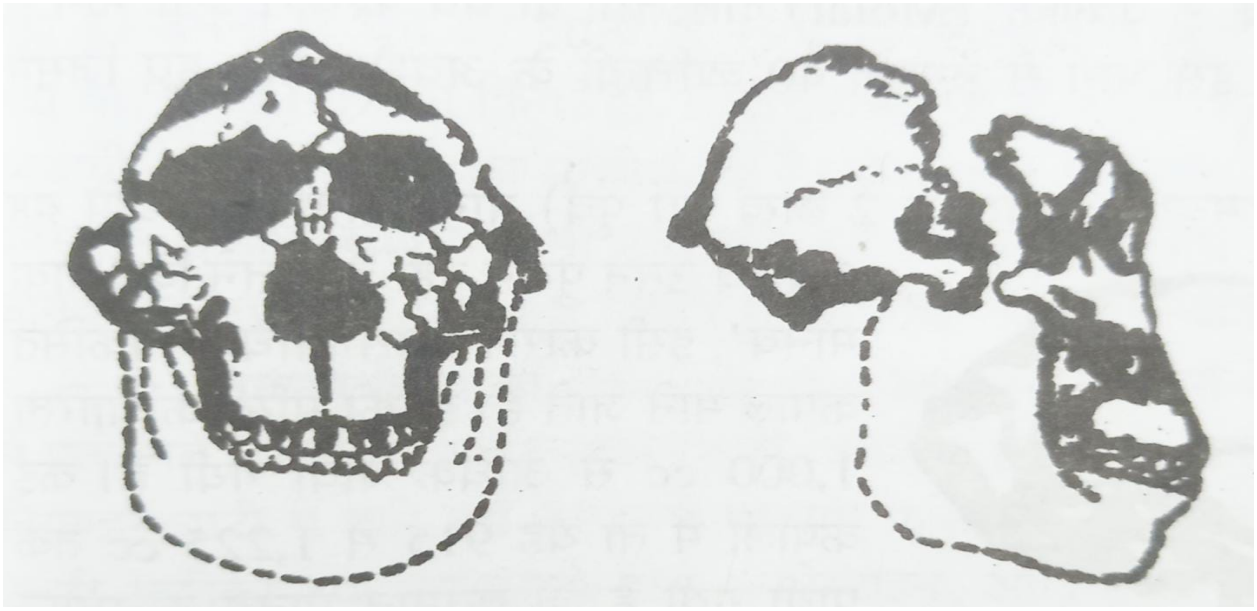

चित्र सं–6.2 तंजानिया–पूर्वी अफ्रीकाा से प्राप्त 'ऑस्ट्रेलोपिथेकस'

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

6.4.2– होमोहैबिलस (Homo Habilis) :–

यह मानव (Homo) वंश की सर्वप्रथम जाति मानी जाती है जो आज से लगभग 8 लाख वर्ष पूर्व अफ्रीका में पायी जाती थी। मानव सदृश यह प्राणी एक लम्बी अवधि तक जानवरों की भांति अपना जीवन व्यतीत करता रहा। यह ऐसा मानवीय प्राणी था जिसके शारीरिक लक्षण मानव से भिन्न थे। यह मानव पृथ्वी पर आज से लगभग 11 हजार वर्ष पूर्व तक रहा। इस युग में ऑस्ट्रेलोपिथेसियन एवं होमोहैबिलिस मानव का वर्चस्व रहा। मानव इतिहास में ये ऐसे पहले मानव माने जाते हैं जिन्होंने 'हथियारों का निर्माण' (Tool-kit) किया। प्रारम्भ ये भोंडे औजार का निर्माण (इन औजारों का आकार त्रिकोण या तीक्ष्ण) करता था, किन्तु समयोपरान्त ये अधिक सुडौल एवं तीक्ष्ण शस्त्रों का निर्माण इनके द्वारा किया जाने लगा। ये लोग अपने आहार के लिए प्रकृति प्रदत्त खाद्य–पदार्थों पर आश्रित होते थे। होमो हैबिलिस मानव की निम्नलिखित विशेषताएं थीं–

1. इनका जीवन स्थानान्तरणशील था। अर्थात् ये स्थानान्तरणशील जीवन पद्धति को अपनाये हुए थे।
2. ये लोग किए गये शिकार का यथाशीघ्र उपयोग कर लेते थे। प्रायः ये भोजन का संग्रह नहीं किया करते थे।

3. इस प्रजाति के लोग पत्थर के भोंडे हथियारों का प्रयोग करते थे।

4. इस प्रजाति के लोगों का जीवन पूर्णतया प्राकृतिक संसाधनों पर आश्रित था। ये प्रकृति प्रदत्त विभिन्न जीवनोपयोगी साधनों का उपयोग करते थे।

ये दोनों पैरों पर सीधा चलते थे और शिकार के लिए पत्थर के नुकीले औजार का प्रयोग करते थे। लीके (Leeky) के अनुसार इसका कद 120 से 150 सेमी तथा भार 50 किग्रा था।

पूर्व और दक्षिण अफ्रीकाा के प्रारम्भिक प्लीस्टोसीन से लगभग 2031 मिलियन वर्ष पूर्व से पुरातन मानव की विलुप्त प्रजाति ही 1964 में प्रजातियों के विवरण पर एच हैबिलस का अत्यधिक विरोध किया गया था। कई शोधकर्ताओं ने सिफारिश की थी कि इसे आस्ट्रेलोपिथेकस अफ्रीकन्स के साथ समानार्थित किया जाए, जो उस समय ज्ञात एक मात्र अन्य प्रारम्भिक होमोनिन था, लेकिन होमोहैबिलिस को समय बीतने के साथ और अधिक मान्यता मिली।

1980 के दशक तक Homo Habilis को एक मानव पूर्वज होने का प्रस्ताव दिया गया था जो सीधे होमो इरेक्टस में विकसित हो रहा था।

6.4.3– होमोइरेक्टस (मानव पूर्वज):–

इस वर्ग के प्राणियों को पूर्व में कई नामों से सम्बोधित किया जाता रहा है। यथा– पिथेकेन्थ्रोपस (Pithecanthropus in Java) अथवा जावा मानव चीन में सिएन्थ्रोपस (Sinanthropus) अथवा पीकिंग मानव अथवा उत्तरी अफ्रीका का एटलान्थ्रोपस (Atlanthropus) मध्य प्रतिनूतन काल के इन मानवों में आपस में समानता पायी गयी है और इन्हें होमोइरेक्टस (Homo erectus) की संज्ञा दी गयी है।

इस वंश के मानव के अवशेष अनेक महाद्वीपों से प्राप्त हुए हैं जिनमें एशिया में चीन एवं जावा, अफ्रीका तथा यूरोप में इनके अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनके अवशेष मानव–जाति के विकास की महत्वपूर्ण कड़ी मानी जाती है। इस प्रकार के मानव सम प्राणी वर्तमान से 5 से 10 लाख वर्ष पूर्व विश्व के विभिन्न महाद्वीपों में पाये जाते थे, ये वास्तव में वर्तमान मानव के पूर्वज माने जाते हैं। यद्यपि यह अभी भी विवाद का प्रश्न है कि 'होमो इरेक्टस (Home Erectus) से किस–किस प्रकार होमोसेपियन्स (Home Sapiens) में विकसित हुआ। यद्यपि होमो इरेक्टस जीव संसार से लुप्त हो चुका है परन्तु उसके जो अवशेष प्राप्त हुए हैं और उनसे जो सामग्री प्राप्त हुयी वह मानव उद्विकास की महत्वपूर्ण कड़ी है।

6.4.3 अ– पिथैकेन्थ्रोपस (जावा मानव):–

पिथेकैन्थ्रोपस या जावा मानव एक वानर मानव था। यह पहला प्रागैतिहासिक मानव था जिसके द्वारा अग्नि उपयोग के साक्ष्य मिले हैं। अर्नस्ट हैकल ने माना कि यह प्राणी को मानव एवं बन्दर के बीच कड़ी के रूप में देखा जाता है। ये ऐसे बानर थे जो बोल नहीं सकते थे, इसीलिए इन्हें वाणी रहित वानर कहा जाता है। इस प्रकार के प्रारम्भिक मानव के जीवाष्म सर्वप्रथम (1981) में यूजीन डुबाइस ने जावा में सोलो नदी के निकट खोज निकाला था। प्लीस्टोसीन युग में विकसित अनेक आदि मानवों के जीवाश्म पाये गये हैं। प्लीस्टोसीन युग में लगभग 6 लाख वर्ष पूर्व पाये जाने वाले दो पैरों पर सीधे चलने वाले ऐसे कपि मानव (Ape Man) के लिए डुबाइस ने पिथैकैन्थ्रोपस इरैक्टस नाम दिया है। जावा मानव लगभग 150 सेमी लम्बे थे जिनका औसत भार 70 किग्रा था। इनका चेहरा आगे निकला हुआ, नाक चपटी और चिबुक (Chin) अविकसित थी। इनके जबड़े सामने उभरे हुए तथा दांत बड़े किन्तु मानव के समान थे। ये दूर–दूर तक बिखरे हुए थे और जावा, चीन तथा अफ्रीका में भी पाये जाते थे।

6.4.3 ब– पीकिंग मानव (Sinanthropus) :–

वर्ष 1927 में पीकिंग के चाऊ–को–टिन की निचली गुफाओं में ऐसे जीवावशेष पाये गये जिनके नीचे से चवर्णक दांत पाये गये। इसी स्थान पर दो वर्षों के बाद इसी स्थान पर आदिम प्रकार के कपाल के अवशेष पाये गये। चीन के इस भाग में 40 ऐसे व्यक्तियों के अवशेष पाये गये जिनमें मुखाकृति के भाग भी पाये गये हैं। पीकिंग मानव के अवशेषों से पता चलता है कि इनकी आयु लगभग 2 से 4 लाख वर्ष पूर्व मानी जाती है जो कि द्वितीय हिमयुग का काल था। ये मानव जावा मानव से अधिक विकसित थे, क्योंकि ये जावा मानव के बाद की संतति माने जाते हैं। इनकी मस्तिष्क धारिता 1000CC पायी जाती है। अनेकों कपालों में मस्तिष्क धारिता 915 ये 1225CC

तक पायी जाती थी। चीन में पाये जाने वाले इन मानवों की निम्न विशेषताएं पायी जाती हैं यथा– इनकी खोपड़ी चपटी, भौंह के ऊपर हड्डी का उभार अधिक, मस्तिष्क की दीवारें कठोर हड्डियों से निर्मित होती थी। इनके जबड़े और दांत बड़े पाये जाते थे। इनमें ठोड़ी के हड्डी का अभाव पाया जाता था और इन प्रजातियों के दांत मुख्यतः वर्तमान मानव के समान पाये जाते हैं। जीवावशेषों से प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार ये प्रजातियां पत्थरों एवं हड्डियों के औजारों का प्रयोग करते थे।

चित्र सं–6.3 पीकिंग मानव

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

होमो इरेक्टस–अफ्रीका और यूरोप में :–

द्वितीय विश्व–युद्ध के पश्चात् ऐसा माना जाने लगा था कि इस प्रकार की मानव समूह मात्र एशियामहाद्वीप में ही पायी जाती हैं परन्तु पचास के दशक के मध्य में अल्जीरिया में टेरनीफाइन नामक स्थान पर प्राप्त जीवावशेषों से यह ज्ञात होता है कि वे पीकिंग मानव के अवशेष हैं। सन् 1954 में मोरक्को में होमो इरेक्टस प्राणी के समान जबड़े और दांत पाये गये। परन्तु ये अवशेष कुछ अधिक विकसित अवस्था में थे। सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवशेष तंजानिया में 1961 में प्राप्त हुए, जो होमो इरेक्टस में प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। यूरोप में बुडापेस्ट के समीप वरटेस्जोलस में प्राप्त जीवावशेषों में बालक के दूध के दांत पाये गये हैं जिनकी समानता पीकिंग एवं जावा मानव के समीप थी।

6.4.3 स–हिडलवर्ग मानव :–

जर्मनी के हिडलवर्ग के समीप मायर नामक स्थान पर होमो इरेक्टस के समकालीन मानव सम प्राणी के अवशेष (इस स्थान पर 24 मीटर की गहराई पर मानव जबड़े के अवशेष) प्राप्त हुए हैं। इस प्राप्त जबड़े का आकार या बनावट कुछ वानर के समान था परन्तु अनेक मानवशास्त्री दांतों की बनावट के आधार पर इन्हें मानव समान माने जाते हैं। इन्हीं आधारों पर हिडलवर्ग के प्राप्त मानव अवशेषों को नियण्डरथल मानव का पूर्वज माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि ये मानव गुफाओं में रहते थे।

नियण्डरथल मानव (Neanderthal Man) :–

कुछ प्रमुख मानव शास्त्री नियण्डरथल मानव को होमो सैपियन्स अर्थात् मेधावी मानव के पूर्व का प्राणी माना है। इस वर्ग के मानव के अवशेष यूरोप एवं अफ्रीका में विशेष रूप में पाये गये हैं। नियण्डरथल मानव के अवशेष सर्वप्रथम यूरोप में 1956 में जर्मनी के **डुसेलडोर्फ (Dusseldorf)** के निकट नियण्डर घाटी में पाये गये थे। त्तपश्चात् फ्रांस, इटली, बेल्जियम, ग्रीस, चेकास्लोवकिया, सोवियत रूस, उत्तरी अफ्रीका तथा मध्यपूर्व के देशों यथा पेलेस्टीन आदि में प्राप्त हुए हैं। इनके अवशेषिक विशेषताओं के अनुसार इन्हें मानव की विशेष प्रजाति के रूप में

ही देखा जाने लगा परन्तु वर्तमान वैज्ञानिक वर्गीकरण में इन्हे होमो सैपियन्स के अन्तर्गत ही रखा जाता है इसीलिए कुछ विद्वान इनको **होमो सैपियन्स नियण्डरटालिस (**Homo sapiens Neadertalis**)** के नाम से अभिहीत करते हैं।

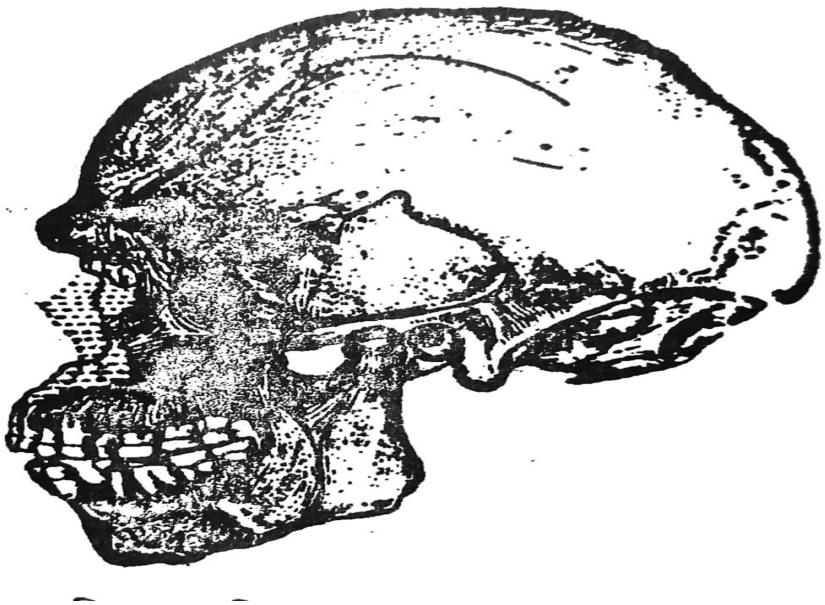

चित्र सं–6.4 निएण्डरथल मानव की खोपड़ी

स्रोत– मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

इन मानवों की शारीरिक विशेषताएं इस प्रकार हैं– यूरोप में पाये गये अवशेषों के अनुसार इनके हाथों एवं पैरों की हड्डियां लम्बी होती हैं। इनकी लम्बाई पुरुषों की 1.55 मीटर तथा स्त्रियों की 4 फीट नौ इंच के लगभग पायी जाती थी, मस्तिष्क धारिता 1280CC, चेहरा आधुनिक मानव की तुलना में अधिक लम्बा, नाक चौड़ी एवं उठी हुई पायी गयी हैं।

चित्र सं–6.5 फ्रांस से प्राप्त निएण्डरथल मानव की खोपड़ी।

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

चित्र सं–6.6 रोडेशिया से प्राप्त निएण्डरथल मानव की खोपड़ी।

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

इस प्रजाति के मानव की गाल की हड्डियां आधुनिक मानव की तरह पायी जाती हैं। रीढ़ की हड्डी का पूर्ण विकास न होने के कारण ये प्राणी झुककर चलने वाले प्राणी माने जाते हैं जबकि कुछ मानव शास्त्री इन्हें पूर्ण रूप से सीधा चलने वाला प्राणी मानते हैं। इन मानव प्राणियों के शरीर पर बाल अधिक पाये जाते थे तथा इनके गुफाओं में रहने के संकेत मिलते हैं। इन प्राणियों के निवास का समय ई0पू0 7,50,000 से 40,000 वर्षों तक माना जाता है।

6.4.4–होमो सेपियन्स (मेधावी मानव)–

नियण्डरथल मानव के पश्चात मेधावी मानव का विकास हुआ। समस्त यूरोप महाद्वीप हिम की चादर से आच्छादित हो गया, यह प्रतिनूतन युग का अन्तिम हिम अन्तराल वुर्म (Wurm) या अनेक भू–वैज्ञानिकों ने इस युग का समय 35 से 50 हजार वर्ष पूर्व माना है। धीरे–धीरे यूरोपीय भाग में उपोष्ण अवस्था विकसित हुयी। इसी काल में होमोसैपियन्स या आधुनिक मानव का विकास हुआ होगा, ऐसा अनेक मानवशास्त्री मानते हैं। यह मानव अपने पूर्ववर्ती नियण्डरथल मानव से श्रेष्ठ था, अनेक मानव शास्त्री मानते हैं कि नियण्डरथल मानव ही होमोसैपियन्स के पूर्वज थे जबकि कुछ यह मानते हैं कि यह स्वतंत्र रूप से विकसित मानव जाति है।

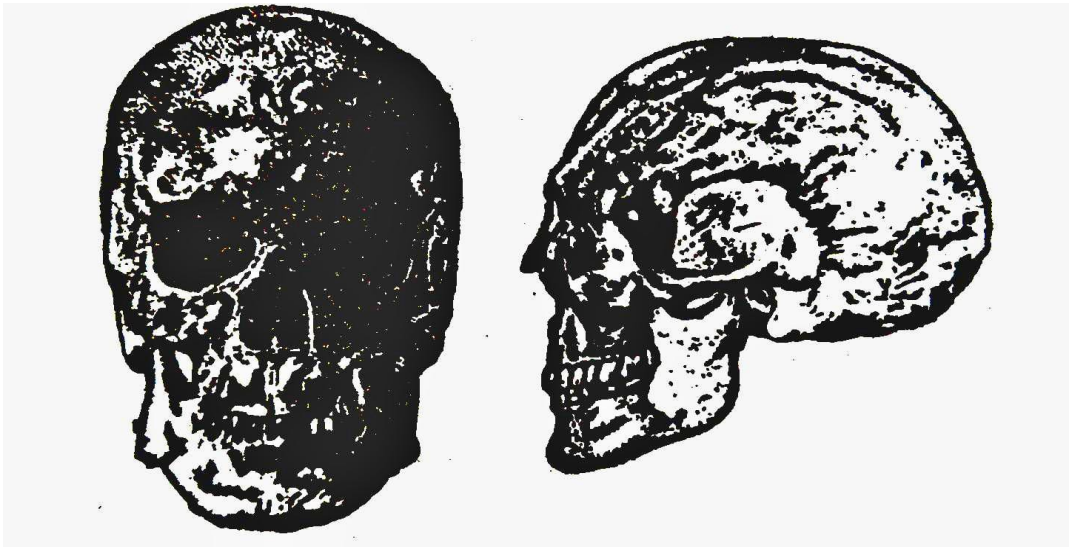

चित्र सं–6.7 होमोसैपियन्स (आधुनिक मानव)

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

होमो सैपियन्स के सम्बन्ध में मुख्यतः तीन विचारधाराएं हैः–

1. कुछ अंग्रेज मानवशास्त्री सन् 1911 में प्राप्त अवशेषों को जो 'पिल्टडाउन' नामक स्थान से प्राप्त हुए दांत, जबड़ों और मानव खोपड़ियों के आधार पर यह कहा जाता है कि होमोसैपियन्स मानव का विकास इंग्लैण्ड में हुआ परन्तु पिल्टडाउन स्वयं ही संदेह कोटि का मानव है। यहां प्राप्त जबड़ा बन्दर का सा है और खोपड़ी मानव के समान है। इस आधार पर सन्देह उत्पन्न होता है क्योंकि यह जबड़ा और दांत मानव के दांतों से न मिलकर वानर (Ape) से अधिक मिलते हैं।

2. एक अन्य विचारधारा यह है कि होमो सैपियन्स पूर्वज नियण्डरथल मानव है। इन मानवशास्त्रियों की यह मान्यता है कि जैसे–जैसे भौगोलिक वातावरण में परिवर्तन होता गया वैसे–वैसे ही मानव में भी परिवर्तन होते गये और नियण्डरथल मानव ही होमोसैपियन्सस में परिवर्तित हो गये हैं।

3. तीसरी और अन्तिम विचारधारा के अनुसार 'होमोसेपियन्स' मानव की उत्पत्ति अफ्रीका और एशिया में हुई होगी। इन्हीं महाद्वीपों से विकसित मानव के रूप में यूरोप पहुंचा और नियण्डरथल मानव पर विजय प्राप्त की अथवा दोनों ही जातियां साथ–साथ रहकर आपस में मिल गयी और होमोसैपियन्स (मेधावी मानव आधुनिक मानव) का विकास सम्भव हो सका। यूरोप महाद्वीप में होमोसैपियन्स की तीन शाखाएं पायी जाती हैं। इसी प्रकार के प्रस्तरी अवशेष रोडेशिया में सन् 1921 में प्राप्त हुए। इस होमोसैपियन्स की तीन शाखाओं की मूल शाखा माना गया है।

6.4.4 अ– ग्रीमाल्डी मानव :–

यूरोप में इटली में प्राप्त जीवावशेषों के माध्यम से पता चलता है कि ग्रीमाल्डी मानव का विस्तार भूमध्य सागर के तटवर्ती भागों में या भूमध्य सागरीय देशों में पाया जाता है। ग्रीमाल्डी कन्दराओं से प्राप्त अवशेषों से प्रतिनूतन काल के मानव के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त होती है। इनकी शारीरिकविशेषताएं इस प्रकार हैं यथा– माथा चौड़ा, दांत बड़े, ठुड्डी आगे की और निकली हुई, हाथ और पैर लम्बे, पाये जाते हैं। कुछ विद्वान ऐसा मानते हैं कि ग्रीमाल्डी मानव एशिया से प्रकीर्णित होकर दो शाखाओं एक मलय के मार्ग से आस्ट्रेलिया तथा दूसरी शाखा यूरोप तक पहुँच गयी।

6.4.4 ब– क्रोमैगनन मानव :–

क्रोमैग्नन मानव के अवशेष फ्रांस के **डोडोन प्रांत** के क्रोमैग्नन प्रान्त की चट्टानों से प्राप्त हुए। कुछ विद्वानों के द्वारा यह अनुमान लगाया जाता है कि इस प्रकार के अवशेष यूरोप के दक्षिण एवं पूर्वी भागों से भी प्राप्त हुए हैं। इस तथ्य से यह अनुमान लगाया जाता है कि क्रोमैग्नन मानव के अवशेष जो कि होमो सैपियन्स के अन्तिम भाग माने जाते हैं, के अवशेष यूरोप, एशिया एवं अफ्रीका में विस्तृत भू–भाग पर पाये जाते हैं। ये लगभग 30000 वर्ष पुराने मानव माने जाते हैं। इनके पूर्वज नियण्डरथल मानव माने जाते हैं इसीलिए इनको नियण्डरटालिस मानव कहा जाता है।

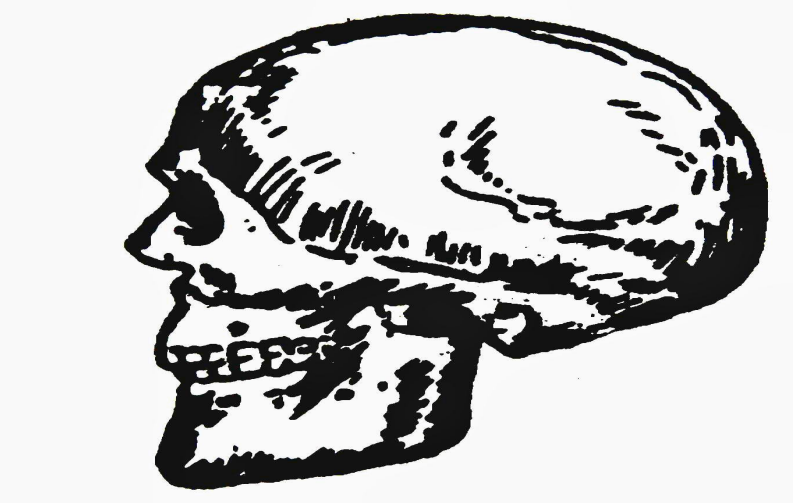

चित्र सं–6.8 क्रोमैग्नन मानव की खोपड़ी

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन।

नियन्डरटालिस मानवः–

आज से लगभग 1.5 लाख वर्ष पूर्व यह मानव यूरोप में रहता था जो लगभग 34 हजार वर्ष पूर्व विलुप्त हो गया। इसके जीवाश्म 1856 में फूलशट (C.Fuhlsalt) नामक वैज्ञानिक ने जर्मनी के निएंडर घाटी में पाया था। इनका शरीर सुडौल तथा शरीर की लम्बाई लगभग 160 सेमी थी। ललाट छोटा, नाक चौड़ी थी किन्तु निचले जबड़े में चिपुक स्पष्ट नहीं थी। नियन्डरथल मानव वर्तमान मानव का निकटतम पूर्वज था जिसने सामाजिक जीवन भी आरम्भ कर दिया था। इसका कपाल धारिता वर्तमान मानव के लगभग समान (1400 से 1450) इसमें वाणी की क्षमता आ गयी थी किन्तु इनका मस्तिष्क वर्तमान मानव से कम जटिल था।

6.4.4स– रोडेशियाई मानवः–

वर्ष 1921 में रोडेशिया होमोसैपियन्स वर्ग के जो मानव पाये गये वे रोडेशियाई मानव के नाम से जाने जाते हैं। यहां के अवशेष में एक कपाल एवं पैरों की कुछ हड्डियां पायी गयी हैं। इस प्रकार के मानव के कपाल का आकार या बनावट नियण्डरथल मानव से भिन्न थी। इसी कारण सर आर्थर स्मिथ ने इनको '**होमो रोडेशियन**' मानव नाम दिया है। अनेक नृजातिशास्त्री इन्हें नवीन मानव की श्रेणी में रखते हैं जबकि अन्य को पुरातन मानव की श्रेणी में।

6.5 सारांश

मानव के उद्विकास के क्रमबद्ध इतिहास को अभिव्यक्त करना यदि असम्भव नहीं तों कठिन अवश्य है। मानव की उत्पत्ति कब और कहां एवं कैसे हुई ? त्तसम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों में गहरा मतभेद है। सांस्कृतिक दृष्टिकोंण से विश्व के सभी धर्मों एवं मानव समूहों ने भी इसके सम्बन्ध में अपनी मान्यताएं बना रखी हैं। विश्व के सभी जीवित प्राणियों में मानव उद्विकास की कहानी अनोखी है। यद्यपि विद्वानों का यह मानना है कि मानव का क्रमिक विकास जैविक रूप से धीरे–धीरे हुआ है। मानव की उत्पत्ति की वैज्ञानिक व्याख्या **चार्ल्स डार्विन** ने सर्वप्रथम प्रस्तुत की। **टामस हेनरी हक्सले** ने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में दिए गये वक्तव्य में कहा था कि '**मैं बिना हिचक के स्वीकार करता हूँ कि हमारे पूर्वज वनमानुष थे।**' आधुनिक मानव होमोसैपियन्स (Homo Sapiens) स्तनधारियों के उच्चतम वर्ग **प्राइमेट्स (Primates)** का उच्चतम सदस्य है, जिसमें लीमर, बन्दर, टारसियर्स, लंगूर, गिब्बन, गोरिल्ला तथा चिम्पैंजी आदि जीव भी आते हैं। इन सभी जीवों में मानव के समान बहुत से लक्षण पाये जाते हैं।

इसी प्रकार के कुछ पूर्वजों **एन्थ्रोपाइड्स (Anthropoids)** से बन्दर के विकास के लगभग 25 लाख वर्ष पश्चात् **ओलिगोसीन** युग के अन्त तथा **मायोसीन** युग के प्रारम्भ में कपि एवं मानव का विकास साथ–साथ प्रारम्भ हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि इन दोनों के पूर्वज या तो समान रहे होंगे और यदि समान नहीं थे तो अवश्य ही ये दो अलग–अलग दिशाओं में विकसित होने लगे होंगे। **मानव और वानर की भिन्न शाखाओं के सर्व पूर्वज रूप में ड्रायोपिथेकस को प्रतिष्ठित किया जा चुका है।** ड्रायोपिथेकस और नव मानव के मध्य एन्थ्रोपॉयड वर्ग की लगभग 80 लाख पीढ़ियों ने पृथ्वी पर जन्म लिया, जीवन व्यतीत किया और समाप्त हो गयी। उपर्युक्त वर्ग के पष्चात आस्ट्रेलोपिथेकस शाखा विकसित हुई इसकी स्थिति मानव एवं वानरों के बीच है। ये मानव आकार के बन्दर थे जो चारों पैरों के बजाय दो पैरों पर खड़े होना सीख गये थे। वृक्षों के बजाय धरातल पर रहता था। इन्हें मानवाकार कपि (ManApe) की शाखा का जन्म हुआ। **होमो हैबिलिस** मानव का पहला पूर्वज था जिसने हथियारों का निर्माण किया। **हीडलवर्ग मानव** यूरोप जर्मनी में विकसित होने वाली मानव की एक प्रजाति थी जो कुछ समय के पश्चात विलुप्त हो गयी। जावा कपि मानव पहला ऐसा मानव था जिसके द्वारा अग्नि के उपयोग के प्रमाण मिलते हैं। **नियण्डरथल मानव** को अक्षर भाषा का ज्ञान विभाजन करके सामाजिक परम्परा के अनुसार मानते थे। आज से 35 से 50 हजार वर्ष पूर्व **क्रोमैग्नन मानव** मानव का विकास हुआ था। वैज्ञानिक इसे वर्तमान **होमो सैपियन्स** का अन्तिम सीधा पूर्वज और आधुनिक मानव की एक उत्पत्ति मानते हैं। इसके जीवाश्म यूरोप, अफ्रीका एवं इजराइल से मिले हैं। क्रो–मैग्नन मानव के बाद मानव जाति के उद्विकास में सांस्कृतिक विकास का प्रमुख हो गया, जिसका प्रतिनिधि **होमो सैपियन्स–सैपियन्स** है। यह मानव आज से 10से 11 हजार वर्ष पूर्व एशिया से

कैस्पियन सागर के निकट विकसित हुए फिर इनका तीन प्रमुख दिशाओं यथा भूमध्य सागर होते हुए यूरोप, दक्षिण में हिन्द महासागर के दोनों और अफ्रीका एवं मिलैनेशिया तथा उत्तर और पूरब की और मंगोलायड के रूप में विकसित हुए।

6.6 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– मानव की उत्पत्ति पर एक निबन्ध लिखिए।

प्रश्न–02– "नियण्डरथल मानव होमो सैपियन्स के पूर्वज हैं।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

प्रश्न–03– होमोइरेक्टस मानव प्रजाति का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– आस्ट्रेलोपिथेकस मानव की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–02– होमो सैपियन्स मानव का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–03– निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए–

अ– क्रोमैग्नन मानव **ब–** पीकिंग मानव

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नोत्तर–

प्रश्न–01– सबसे प्राचीन मानव के अवशेष किस देश से प्राप्त हुए हैं–

अ– मिश्र **ब–** ईराक

स– भारत **द–** इटली

प्रश्न–02– चीन में होमो–इरेक्टस को किस नाम से पुकारा गया है ?

अ– पिथेकेन्थ्रोपस **ब–** सिनएन्थ्रोपस

स– एटलान्थ्रोपस **द–** ऑस्ट्रैलोपिथेकस रोबस्टस

प्रश्न–03– होमो सैपियन्स (मेधावी मानव) का विकास हुआ –

अ– 35 से 50 हजार वर्ष पूर्व **ब–** 5 से0 10 लाख वर्ष पूर्व

स– 3 से 4 लाख वर्ष पूर्व **द–** इनमें से कोई नहीं

प्रश्न–04– निम्नलिखित में से होमो सैपियन्स मानव प्रजाति के प्रकार नहीं है–

अ– ग्रीमाल्डी मानव **ब–** क्रो मैग्नन मानव

स– रोडेशियायी मानव **द–** पिथेकान्थ्रोपस मानव

प्रश्न–05– पीकिंग मानव के प्रमुख प्राप्ति स्थल हैं–

अ– उ0 अमेरिका **ब–** दक्षिणी अमेरिका

स– पीकिंग **द–** आस्ट्रेलिया

उत्तर– 01–अ **02**–ब **03**–अ **04**–द **05**–स

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज। पृष्ठ सं 122 से 146,।

2. मानव भूगोल, डॉ0 मो0 हारुन, विजडम पब्लिकेशन मैदागिन वाराणसी तृतीय संस्करण पृष्ठ 33।
3. मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण,।
4. भूगोल मुख्य परीक्षा के लिए, डी0आर खुल्लर, मैग्राहिल प्रकाशन, 12वां पुनः संस्करण।
5. तिवारी आर0सी0, एवं सिंह बी0एन0, कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज 2000, पृष्ठ सं 42।
6. दूबे श्यामचरण, मानव और संस्कृति, 1998, पृष्ठ सं 49।
7. भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, डॉ रतन जोशी साहित्य भवन पब्लिकेशन हॉस्पिटल रोड आगरा, 282003। पृष्ठ सं–214से 220।
8. Spencer, J.E.And Thomas, W.L. Cultural Geography.Ist Edition 1969 P.64.

इकाई–7 प्रजाति संकल्पना, प्रजातियों का वर्गीकरण, कद, नासिका आकृति, त्वचावर्ण, कापालिक परिमिति, विश्व की प्रमुख प्रजातियां

इकाई की रूपरेखा

7.1– प्रस्तावना

7.2– उद्देश्य

7.3– प्रजाति संकल्पना

7.4– प्रजाति का अर्थ एवं परिभाषा

7.5– प्रजातियों की विशेषताएं

7.6– मानव प्रजातियों के वर्गीकरण के अभिलक्षण

7.7– विश्व की मानव प्रजातियों का वर्गीकरण

7.8– सारांश

7.9– बोध प्रश्न

7.10– सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

7.1 प्रस्तावना (Preface)

धरातल पर पाये जाने वाले समस्त जीवों में मानव अपने विशिष्टशारीरिक लक्षणों एवं जैविक विशेषताओं (जैसे चेहरा, कद, वालों का आकार रंग, बनावट, मष्तिष्क धारिता आदि) के कारण अन्य से भिन्न स्थान रखता है। अन्य जीवों की तुलना में मानव के शारीरिक लक्षण अधिक मिलते हैं, तथापि विभिन्न क्षेत्रों के निवासियों में भिन्न रक्त वर्ग तथा शारीरिक लक्षणों के सम्मिलित स्वरूप में भिन्नता भी दृष्टिगोचर होती है। इन लक्षणों का मानव के भौगोलिक अध्ययन में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इससे मानव का एक सशक्त कारक के रूप में पृथ्वी पर आविर्भाव, प्रागैतिहासिक काल में मानव प्रव्रजन, सम्मिश्रण तथा विभिन्न प्रकार के वातावरण में उसके दीर्घकालिक जैविक–शारीरिक सामाजिक प्रक्रिया पर प्रकाश पड़ता है।[01] आज के परिष्कृत मानव के रूप, रंग, शारीरिक बनावट आदि के आकर्षक स्वरूप के पीछे एक दीर्घकालिक परिशोधन प्रक्रिया कार्यशील रही है। हालॉकि वर्तमान में मानव के स्वरूप में एक संक्रमण की स्थिति पैदा हो गयी है क्योंकि मानव अपने क्रियाशील स्वभाव के कारण सम्पूर्ण विश्व में भ्रमणशील रहा है। परिणाम स्वरूप मानव संकरण के कारण नृजातिशास्त्रियों का कार्य और भी कठिन हो गया है। प्रजाति शब्द स्वयं में एक अलग विशेषता रखे हुए है। इसी कारण विभिन्न विद्वान इस शब्द का प्रयोग अपने अनुसार करते रहे हैं। प्रस्तुत इकाई मानव प्रजातियों की संकल्पनाओं में स्पष्टीकरण करने का सार्थक प्रयास किया जा रहा है जो कि प्रजातियों से सम्बन्धित अनेकों भ्रान्तियों के निस्तारण में सहायक सिद्ध होगी।

7.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. इस इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों को प्रजातियों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
2. इस इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों का विश्व की विभिन्न प्रजातियों के प्रजातीय लक्षणों को समझने में मदद मिलेगी।
3. यह इकाई प्रजातियों के वर्गीकरण के आधारी तत्वों के माध्यम से प्रजातियों के विशेषवर्गीकरण के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित करने में सहायक सिद्ध होगी।
4. प्रस्तुत इकाई विश्व की प्रजातियों के शारीरिक लक्षणोंके अनुसार विश्व वितरण को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होगी।

7.3 मानव प्रजाति संकल्पना

मानव भूगोल, भूगोल की ऐसी शाखा है जिसमें मानव एवं मानव समूहों को सांस्कृतिक स्वरूप (भोजन, वस्त्र, आवास, परिवहन–संचार, अधिवास आदि) का विशद अध्ययन किया जाता है। लेकिन विचारणीय बिन्दु यह है कि आज के मानव का परिष्कृत स्वरूप का निर्माण कैसे हुआ? अर्थात क्या इसी प्रकार के रूप में प्राचीन काल से रहा है तो इस प्रश्न का उत्तर यह मिलता है कि नहीं? आज का आधुनिक मनुष्य (मानव समाज) पूर्व के कालों के शोधन की प्रक्रिया का परिणाम रहा है मानव के उद्‌भव एवं विकास की बृहद चर्चा पूर्व की इकाइयों में हम कर चुके हैं। मानव का उद्‌भव किसी एक जगह या स्थान पर हुआ होगा, यह निष्चित रूप में नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि मानव का उद्‌भव किसी एक स्थान से हुआ होता तों इसकी शारीरिक संरचना (लम्बाई,रंग,ऊँचाई आदि) भी एक समान होती, लेकिन ऐसा नहीं है। यह प्रत्यक्ष रूप में सिद्ध हो चुका है क्योंकि अफ्रीका में रहने वाले लोगों एवं यूरोप तथा एशिया के लोगों में विषमता पायी जाती है। यहाँ पर उल्लेख करना समीचीन होगा कि हो सकता है मानव स्वरूप एक समान रहा हो और समय के साथ जलवायु एवं भूस्वरूप में परिवर्तन के कारण मानव की विशेषताओं में भी परिवर्तन हुए हों। इस प्रकार यह विषय अभी शोध का है।

मानव भूगोल में मानव के प्रजातियों के अध्ययन का अधिक महत्व है क्योंकि धरातल पर सांस्कृतिक भूदृश्यों में असमानता की प्राप्ति इन्हीं के क्रियाकलापों का परिणाम है। **प्रो. रॉक्सवी** के कथन से स्पष्ट होगा– "प्रजातीय पक्ष अनेक पक्षों में अनेक पक्ष है किन्तु नृतत्वीय सामग्री आधार पर प्रजातियों के वितरण का अध्ययन ठीक उसी प्रकार का महत्व रखता है जैसे कि भौतिक भूगोल के अध्ययन से भौगोलिक एवं भूगर्भिक सामग्री का। भूगोल में मानव प्रजातियों का अध्ययन का महत्व भूआकृतियों के समान है अर्थात जिस प्रकार भूगोल का अध्ययन भू आकृतिक तत्वों के बगैर अधूरा है। उसी प्रकार भूगोल में मानव प्रजातियों का भी महत्व है। इस प्रकार प्रजातियां भूगोल विशेषरूप से मानव भूगोल की प्रमुख विषय–वस्तु है। 'प्रजाति' शब्द का प्रयोग दो रूपों में हुआ है एक तो सकारात्मक एवं दूसरा नकारात्मक। इसके सकारात्मक अर्थ नें मानव समाज को एक सूत्र में बांधने का कार्य किया है एवं अपनत्व की भावना का प्रसार सम्पूर्ण विश्व में फैलाया है। इसका एक सकारात्मक पक्ष यह भी है कि विश्व में अनेक मानव उद्‌भव–स्थलों पर रहने वाले एक रंग आकार (शारीरिक संरचना) एवं स्थान पर रहकर सामंजस्यपूर्वक जीवन व्यतीत कर सके एवं विश्व भर में एक साथ प्रसारित हुए। जबकि दूसरा पक्ष नकारात्मक है। इस शब्द के भ्रामक अर्थ ने विश्व स्तर पर सामाजिक एवं सांस्कृतिक संघर्षों, अन्धविश्वासों एवं राजनीतिक विवादों को जन्म दिया है। कुछ लोलुप लोगों ने एवं राजनीति करने वालों ने अपने–अपने अनुसार इस शब्द को परिभाषित कर उपयोग किया। इसी कारण अनेकों संघर्षों एवं युद्ध की स्थितियों का सूत्रपात हुआ तथा एक वर्ग दूसरे वर्ग को अपना शत्रु समझकर उनपर आक्रमण किया एवं अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास किया एवं विस्तारवादी विचारधारा को बलवती किया।

हिटलर एवं नाजियों द्वारा प्रजातीय श्रेष्ठता के आधार पर किए गए अत्याचारों और जापानियों द्वारा पूर्वी देशों में भड़काए गये युद्ध की रक्तरंजित यादें आज भी ताजा हैं। अफ्रीका और अमेरिका में काले और गोरे लोगों का भेदभाव चरम पर रहा है जो कि मानवीय सभ्यता एवं वैकासिक परम्परा को बहुत दिनों तक प्रभावित किया। विश्व स्तर पर अनेकों उदाहरण इस हेतु देखे जा सकते हैं जैसे कनाडा एवं अमेरिका के श्वेत एवं अश्वेतलोगों के मध्य का विवाद। यदि अश्वेत लोगों के द्वारा श्वेत लोगों के साथ कोई छोटा सा भी दुर्व्यवहार हो जाता था तो उन्हें छोटे अपराध के लिए बड़ा दण्ड दिया जाता था। 20वीं सदी में 1951 में एक श्वेत स्त्री के साथ बलात्कार करने के अपराध में 7 नीग्रो लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया जो कि प्रजातीय विभिन्नता एवं श्रेष्ठता से प्रेरित था। प्रजाति शब्द के अतार्किक एवं गलत प्रयोग से अनेक सामाजिक सांस्कृतिक एवं राजनीतिक तथा आर्थिक मतभेद पैदा हुए तथा इसके प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव देखे गये। **अफ्रीका में महात्मा गांधी को अश्वेत समझकर ट्रेन के प्रथम श्रेणी के कोच से बाहर धकेल देना। इसी प्रजातीय श्रेष्ठता का उदाहरण है[1]।** इसी प्रकार के अनेकों उदाहरण आपको समाज में देखने को मिलेगें तथा प्रजाति शब्द को अनेकानेक अर्थों में समझकर मानव समाज संघर्षशील रहा है। आज के इस वैज्ञानिक विकास के युग में इस समस्या का पूर्ण निदान नहीं हो पाया है। इस समस्या का आरम्भ मानव के प्रारम्भ काल से चला आ रहा है। जब मानव अपने पशु जीवन से आगे बढ़कर लगभग 25000 वर्ष पूर्व मेधावी मानव के रूप में जाना जाने लगा तथा अपनी बुद्धि एवं कौशल का प्रयोग करने लगा था। मानव निरन्तर प्रगतिशील रहा और इसी के चलते वह विभिन्न समूहों में विभाजित हो गया तथा प्रत्येक समूह को कुछ लोग प्रजाति का रूप देने में लग गये तथा अपने को अलग प्रजाति समूह का प्राणी समझने लगे।

आज प्रजाति शब्द के विषय में नृजातिशास्त्रियों, वैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों, भूगोलवेत्ताओं आदिके मत एक

समान नहीं है। यह वर्ग मानव प्रजाति को धर्म, जाति, भाषा, संस्कृति के आधार पर मानव प्रजाति को स्पष्ट करता है। इसको निम्नलिखित बिन्दुओं के रूप में देखा जा सकता है–

- कुछ विद्वान एक ही स्थान पर कई पीढ़ियों से निवास करने वाले लोगों को प्रजाति की संज्ञा दी जों समान गुण धारित करते हैं तथा एक ही भाषा को बोलते हैं अर्थात स्थिति, भाषा एवं एकरूपता के आधार पर वर्गीकृत है।
- कुछ विद्वान एक धर्म को प्रजाति के रूप में देखते हैं जैसे–हिन्दू धर्म को लोग हिन्दू प्रजाति, मुस्लिम धर्म के लोग मुस्लिम प्रजाति तथा बौद्ध, जैन, ईसाई अनेक धर्म के लोग अलग–अलग प्रजाति के हैं।
- कुछ विद्वान प्रजाति को एक राष्ट्र के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार राष्ट्रीयता की भावना के लिए देश प्रेम, एकता, चेतना आदि आवश्यक एवं अपरिहार्य है। यही मिलकर प्रजाति की रचना करते हैं। इस प्रकार राष्ट्रीयता एवं प्रजाति को एक रूप समझा जाता है। इस सन्दर्भ में आर्थर कीथ के विचार उल्लेखनीय हैं–**"राष्ट्र और प्रजाति का निर्माण करने वाले तत्व समान होने के कारण इनके मध्य भेद करने का प्रश्न ही नहीं उठता।"** यही कारण है कि आज विभिन्न राष्ट्रों एवं प्रदेशों के आधार पर इनके नामकरण किये जाते हैं जैसे अंग्रेजी प्रजाति, अफ्रीका प्रजाति, अमेरिकी प्रजाति अथवा रूसी प्रजाति आदि।
- इसी प्रकार भाषा के आधार पर भी प्रजाति के लिए निम्नलिखित शब्दों जैसे **जर्मन प्रजाति, लैटिन, फ्रेन्च प्रजाति** आदि का प्रयोग करते हैं।

वस्तुतः राज्य और राष्ट्र एक प्रादेशिक संकल्पना है जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रजातियां रह सकती हैं, दूसरी और समान शारीरिक लक्षणों से युक्त एक जैविक समूह के सदस्य पृथ्वी के विभिन्न भागों में बिखरे होने के बावजूद एक ही प्रजाति के हो सकतें हैं। **"प्रजाति में जैविक एकसूत्रता तथा आनुवांशिकता (HEREDITY) की प्रधानता होती है, न कि प्रादेशिक अथवा भावनात्मक एकसूत्रता की।**

क्रोबर ने मानव प्रजाति के सन्दर्भ में कहा है–

A race is valid biological concept it is a group united by deredity a breed or genetic strain or sub-species. It is not a valid socio-cultural concept. अर्थात एक प्रजाति प्रमाणित प्राणिशास्त्रीय अवधारणा नहीं है, **क्रोबर**।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि प्रजाति किसी भाषा, धर्म, लिंग, समुदाय, राष्ट्र आदि से निर्धारित होने वाली अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक जैविकीय या प्राणिशास्त्रीय अवधारणा है। एक प्रकार के शारीरिक लक्षणों से युक्त मानव समूह को हम प्रजाति कहेंगे। कह सकते हैं कि यदि एक प्रकार के लोगों को शारीरिक लक्षणों से पहचाना जा सके तो वे एक प्रजाति का निर्माण करते हैं। यदि लक्षण पीढ़ी दर पीढ़ी अपने आने वाले लोगों में हस्तान्तरित होते रहते हैं तथा इनमें सामान्यतः परिवर्तन नहीं होता है। पर्यावरणीय तत्वों का प्रभाव भी इन पर न के बराबर होता है। इन शारीरिक लक्षणों में शरीर का कद, त्वचा का वर्ण, बाल की बनावट, सिर की आकृति, नाक एवं आँख की बनावट, मुखाकृति आदि प्रमुख हैं। ये लक्षण लगभग एक से होते है किन्तु शारीरिक संरचना के दृष्टिकोण से एक प्रजाति के सभी लोग पूर्णतः एक समान नहीं होते बल्कि व्यक्तिगत रूप से कुछ असमानताएं पायी जाती हैं लेकिन असमानताओं के साथ प्रत्येक प्रजाति का अपना एक माडल (आदर्श) रूप होता है जिससे उस प्रजाति के लोगों में असमानता पायी जाती है जिसके आधार पर उनकी पहचान की जा सकती है।

7.4 प्रजाति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning And Definition of Race)

प्रजाति शब्द आंग्ल भाषा के Race शब्द का हिन्दी रूपांन्तर है। प्रसिद्ध विद्वान फॉक्स ने अपनी पुस्तक "Book of Mortyrs"(1750) में सर्वप्रथम इस शब्द का प्रयोग किया। बाइबिल की मूल प्रतिलिपि में रेस (Race) के स्थान पर बीज अथवा पीढ़ी (Breed or Strain) या वंश परम्परा का प्रयोग किया गया है।[1] रेस (Race) शब्द की उत्पत्ति इटैलियन भाषा के 'राज्जा' (Rajja) शब्द से मानी जाती है जिसका शाब्दिक अर्थ परिवार वंशानुक्रम अथवा नस्ल है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि रेस का वास्तविक अर्थ एक ही रक्त के पूर्वजों के वंशजों के लिए हुआ है। बोआस ने भी इसी मत की पुष्टि करते हुए लिखा है कि– "In the strict sense a race must be defined as a group of common origin and of stable type." अर्थात साधारण रूप से जब हम प्रजाति के विषय में बात करते हैं तों हमारा तात्पर्य व्यक्तियों के इसी समूह से होता हैं जिसमें कुछ शारीरिक तथा मानसिक लक्षण सामान्य रूप

से पाये जाते हैं।[1]

प्रजाति की परिभाषा :– Difinition of race अनेक विद्वानों ने प्रजाति को परिभाषित करने का प्रयास किया है। कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं–

हाबेल (Hobel) :- प्रजाति विशिष्ट जननिक रचना के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले शारीरिक लक्षणों का एक विशिष्ट संयोग करने वाले अर्न्तसम्बन्धित मनुष्यों काएक बृहद समूह है।[2]

"A Race is a major groupingof inter related people possessing a distinictive combination of physical trains that are the distinictive genetic combination"

हैडन (Haddon):-

''प्रजाति शब्द एक वर्ग विशेष को प्रदर्शित करता है जिसकी सामान्य विशेषताएं आपस में समरूपता प्रदर्शित करती हैं। यह एक जैविक नस्ल है जिसके प्राकृतिक लक्षणों का योग दूसरी प्रजाति के प्राकृतिक लक्षणों के योग से भिन्न होता है।''

''The term race usual connotes a group of people who have certain well worked characteristics in commen whose physical traits are different from thease of other combinations"

ग्रिफिथ टेलर (GRIFFITH TAILOR):-

"मानव प्रजाति नस्ल को प्रकट करती है न कि सभ्यता को।" "Race denotes breed not culture"

टेलर ने प्रजाति को किसी समान भाषा या धर्म के समुदाय का पर्याय मानने से इन्कार किया है। सामान्यतया हिन्दू, मुस्लिम, यहूदी, ईसाई को प्रजाति की संज्ञा दे दी जाती है तथा कुछ विद्वान भाषा (जर्मन, फ्रांसीसी, अंग्रेजी) को भी प्रजाति के रूप में परिभाषित करते हैं। टेलर ने इससे साफ इन्कार किया है। टेलर ने इन्हें सांस्कृतिक समुदाय माना है जबकि प्रजाति का अर्थ उस मानव समुदाय से माना जाता है जो समान शारीरिक, आकृति एवं जैविक गुणों से युक्त हों।

गोल्डेन बीजर (GOLDEN WEISER):-

"प्रजाति मनुष्यों का उपविभाग है, जिसमें कुछ भौतिक लक्षणों की पैतृक देन होती है।" "Race is a sub-division of mankind having certain in born physical traits in common."[1]

वाइडल डी ला ब्लाश– (VIDAL-DE-LA-BLACHE):-

''मानव शरीर की आकृति व शारीरिक लक्षणों पर किया गया वर्गीकरण मानव प्रजाति कहलाता है।

मेरिल (MERIL):-

"प्रजाति एक जैविकीय शब्द है जो वृहद मानव समूह की उन शारीरिक समानताओं की और संकेत करता है जो आनुवांशिकता के द्वारा संचालित होती रहती है"

''Race is the biological term reffering to certain physical similiarities among large group of person that are transmitted through the machenism her identity''.

डॉ0 डी0एन0मजूमदार

"यदि व्यक्तियों के एक समूह के समान शारीरिक लक्षणों के आधार पर अन्य समूहों से पृथक पहचाना जा सके और उस जैविकीय समूह के सदस्य कितने ही बिखरे क्यों न हों, वे एक प्रजाति हैं।''

''If a group of people who by their possessions of a number of common physical trains can be distinguished from others, even if the members of the biological group are widly scatterd. They from are Race.''

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि एक मानव प्रजाति में पर्याप्त समान आनुवांशिक लक्षणों का पाया जाना अनिवार्य है क्योंकि इसी आधार पर अलग मानव प्रजाति के रूप की पहचान की जाती है। कुछ लोग प्रजाति (Race) शब्द का प्रयोग अन्य अर्थो में तथा सन्दर्भो में करते रहते हैं किन्तु वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण से

न तो सत्य है और न ही उचित।

7.5 प्रजाति की विशेषताएं (Characteristic of Races):-

मानव प्रजातियों में अनेक विशेषताएं पायी जाती हैं। कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. प्रजाति एक मानवीय अवधारणा है। इसका धर्म, राष्ट्र, जाति, भाषा आदि से कोई सम्बन्ध नहीं है।
2. प्रत्येक प्रजाति की अपनी विशेषताएं, शारीरिक लक्षण होते हैं जिनके आधार पर उन्हें एक दूसरी प्रजाति से पृथक किया जाता है जैसे श्वेत प्रजाति का रंग गोरा बाल सीधे लहरदार, होंठ पतले होते हैं जबकि नीग्रों प्रजाति का रंग काला बाल घुंघराले होठ मोटे होते हैं।
3. प्रजाति के शारीरिक लक्षण एक पीढ़ी से जीन्स द्वारा स्थानान्तरित होते हैं। मानव के जैविक लक्षणों पर प्रकृति का प्रभाव लगभग नगण्य होता है।
4. जिन लक्षणों के आधार पर प्रजाति का निर्धारण किया जाता है, वे कुछ गिने चुने लोगों में न होकर एक बड़े मानव समूह में होने चाहिए। अर्थात किसी लघु संख्या द्वारा इनका स्पष्ट निर्धारण नहीं किया जा सकता है।
5. विश्व की प्रत्येक जनजाति में केवल जैविक शारीरिक लक्षणों में (बाल, नाक, कपाल, बाल, त्वचा) में ही विविधता पायी जाती है, जबकि सभी प्रजातियां मूलतः लगभग एक ही आंतरिक लक्षण की हैं। अतः ये प्रजातियां संकरण द्वारा एक दूसरे से मिल सकती हैं। अंतर्जातीय विवाह के द्वारा वंशवृद्धि कर सकती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मानव प्रजातियों की विभिन्न रूपों में विशेषताएं होती हैं।

7.6 प्रजातियों का वर्गीकरण (Classification of Races):-

प्रजाति के लक्षण एवं विशेषताओं से स्पष्ट है कि इनके वर्गीकरण का कार्य अत्यन्त दुष्कर है क्योंकि वर्गीकरण के कुछ आधार होने चाहिए जिनकी सहायता से प्रजाति वर्गीकरण किया जा सके। प्रजातियो के वर्गीकरण में कुछ अभिलक्षणों की पहचान द्वारा वर्गीकरण किया जाता है। अभिलक्षण निम्नलिखित है–

7.6.1 मानव प्रजातियों के वर्गीकरण के अभिलक्षणः Criteria and Physical Traits for classification of Race:-

मानवशास्त्रियों ने प्रजातियों का वर्गीकरण के लिए शारीरिक नाप, जीवभित्ति, शारीरिक भित्ति तथा कपाल भित्ति आदि का आधार बनाया जाता है। इन्हीं के आधार पर शारीरिक लक्षणेां का निर्धारण होता है। विभिन्न विद्वानों ने वर्गीकरण के लिए अलग–अलग लक्षणों को स्वीकार किया है जैसे आर्थर कीथ ने त्वचा के रंग, डकवर्थ ने कपाल भित्ति, जबडों के आधार पर, कापालिक घनत्व के आधार पर प्रजातियों का वर्गीकरण किया गया है। क्रोबर महोदय ने मानव प्रजाति के वर्गीकरण के लिए किसी एक शारीरिक लक्षण को न मानकर अनेक लक्षणों पर वर्गीकरण करने की सलाह दी है जैसे एक में ही अनेकों रंग मिल जाते हैं। बील्स एवं हाइजर ने प्रजाति के निर्धारण में निम्नलिखित बातों पर जोर देने की बात कही है–

01– शारीरिक रचना की विशेषताएं अथवा रक्त समूह।

02– प्रजाति वर्गीकरण की आधारी शारीरिक भिन्नताएं वंशानुगत एवं अनुकूलनीय होनी चाहिए।

03– प्रजाति वर्गीकरण के लिए एक से अधिक लक्षणों का प्रयोग करना चाहिए।

04– प्रजाति का विशेष लक्षण व्यक्ति में न होकर समूह में होने चाहिए।

सामान्यतया प्रजाति वर्गीकरण में दो प्रकार के आधारभूत तत्वों का उपयोग किया जाता है–

A- वाह्य शारीरिक लक्षणः– इन्हें ऊपरी निष्चित शारीरिक लक्षण कहते हैं।

B- आन्तरिक लक्षणः– कंकाल, संरचनात्मक **अथवा अनिश्चित लक्षण।**

7.6.1– <u>वाह्य शारीरिक लक्षण (EXTERNAL TRAITS)</u>

इसके अन्तर्गत कुछ ऐसे शारीरिक लक्षणों को सम्मिलित किया जाता है जिसमें व्यक्तिगत समानता अधिक पायी जाती है। इनमें त्वचा का रंग, बालों की बनावट, शरीर का कद, आंखों का रंग, होंठ का आकार के आधार

पर मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया जाता है–

7.6.1A त्वचा का रंगः– SKIN COLOUR :- विश्व की मानव प्रजातियों में त्वचा के रंग में विभिन्नता पायी जाती है। मनुष्य की त्वचा के रंग में अन्तर का प्रमुख कारण मैलेनिया (Melenia), कैरोटिन (Carotin) अथवा हीमोग्लोबिन (Hemoglobin) की मात्रा में कमी या अधिकता है। इसी के कारण त्वचा का रंग, श्वेत, काला, पीला, एवं लाल हो जाता है। कूवियर ने त्वचा के रंग के आधार पर मानव प्रजातियों को तीन वर्गों में विभाजित किया है–

सारणी क्र.–7.1

त्वचा के रंग के आधार पर प्रजाति वर्गीकरण

क्रम	त्वचा का रंग	प्रजाति	निवास स्थल
1.	श्वेत त्वचा और श्वेत वर्ण (Leucodermi)	काकेशियन	पश्चिमी यूरोप, एशिया, अफ्रीका (अधिकांश पश्चिमी रूस, एशियावासी, भूमध्य सागरीय)
2.	पीत त्वचा या पीत वर्ण (Xanthodermi)	मंगोलाइड	एशिया, उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका (मंगोल एशियाई, बुशमैन हाटेन्टांट)
3.	ष्याम त्वचा या काला वर्ण	नीग्रोइड्स	मध्य अफ्रीका, पूर्वी द्वीप समूह, मलेशिया, और पोलीनेशिया द्वीप समूह (विषुवत रेखीय, नीग्रो, पापुआन, मेलेनेशियन, पुरा द्रविण, आस्ट्रेलियाई)

जलवायु परिवर्तन का मानवीय त्वचाा पर प्रभाव माना जाता है। विषुवत रेखा से उच्च अक्षांशों की और बढ़ने पर त्वचा का रंग श्याम से श्वेत होता जाता है। क्रोवर का मानना है कि त्वचा का प्रजातियों के वर्गीकरण में एक प्रमुख एवं आकर्षक लक्षण है किन्तु यह श्रेष्ठता का आधार नहीं है। इस सन्दर्भ में जैकब्स एवंस्टर्न लिखते हैं कि– "व्यक्तियों अथवा प्रजातियों की त्वचा के रंग और मानसिक क्षमता में कोई सम्बन्ध नहीं है।"

7.6.1B - बालों की बनावट (Texture of hair)-

मानव शरीर में बालों का विशेष महत्व है। विश्व की प्रजातियों के वर्गीकरण में बालों को आधार बनाया जाता है। वर्तमान समय में बालों के द्वारा अनेक लक्षणों की पहचान की जाती है। बालों की बनावट पर वातावरण, लिंग, आयु एवं जलवायु का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। यह वंशानुक्रम द्वारा निर्धारित होता है। कुछ ऐसे लोग होते हैं जिनके शरीर पर कम और कुछ ऐसे लोग होते हैं जिनके शरीर पर अधिक बाल होते हैं। एक मान्यता है कि जिनके शरीर पर बाल अधिक होते हैं, उनके सिर पर अधिक बाल होते हैं। और दूसरी तरफ कम बाल वाले के सिर पर और उनके शरीर पर कम बाल होते हैं। हैडन ने इसके आधार पर प्रजातियों को तीन वर्गों में विभाजित किया है। हक्सले ने भी इसी मानक का प्रयोग किया है–

(अ) छल्लेदार बाल (Ulotrichi):- इस प्रजाति के बाल छल्लेदार (Wodly of frizzly) होते है नीग्रों एवं नीग्रिटों प्रजातियों को इस वर्ग में रखा जाता है। इस प्रकार की प्रजातियां वुशमैन, पापुआ, एवं मैलेनेशिया में पाये जाते हैं।

(ब) चिकने तरंगमय एवं घुंघराले बाल (Cymotrichi):-

इस प्रजाति के बाल लहरदार,तरंग माप एवं घुंघराले भी होते हैं जैसा काकेसाइड प्रजाति में पाये जातेहैं। यूरोप पश्चिमीएशिया, उत्तरी अफ्रीका भारत में भी ऐसे बाल वाली प्रजातियां पायी जाती हैं।

(स) सीधे बाल (Liotrichi):-

इस प्रजाति के बाल सीधे होते हैं इस प्रकार की प्रजातियों को मंगोलायड कहते हैं। इस प्रकार की प्रजाति चीन, मंगोलिया, अमेजन बेसिन के अमेरिकी भारतीय (एग्लो अमेरिका) पूर्वी द्वीप समूह में पायी जाती हैं।

विश्व में बालों के अनुसार प्रजातियों का वितरण

चित्र सं –7.1

7.6.1C-- शरीर का कदः–

शरीर का कद मानव प्रजाति के वर्गीकरण का प्रमुख एवं सरलतम साधन है। भिन्न–भिन्न वाद के लोगों को विभिन्न प्रजाति का वंशज माना जाता है। छोटे एवं ठिगने कद के लोग प्रारम्भिक प्रजातियों में एवं लम्बे कद के लोग उनसे नवीन विकसित प्रजातियों में पाये जाते हैं। इस लक्षण का प्रयोग 'टापीनार्ड' नामक मानवशास्त्री ने किया था। तथा उन्होने मानव जातियों को कद के आधार पर चार वर्गों में विभाजित किया था–

अ. नाटा कद– 160 सेमी0 से कम।

ब. मझला कद– 160 से 165 सेमी0 तक।

स. लम्वा कद– 165 से 170 सेमी0।

द. अधिक लम्बा कद– 170 सेमी0 से अधिक।

इनके अतिरिक्त बील्स और हाइजर ने मानव को निम्न 5 श्रेणियों में वर्गीकृत किया है–

सारणी क्र0–7.2

ऊँचाई के आधार पर प्रजाति वर्गीकरण

क्रम	कद	औसत ऊँचाई	निवास क्षेत्र
1.	बहुत छोटा/नाटा	4'10''	अफ्रीका के पिग्मी, आसीनियाई, पूर्वी अफ्रीकी समुदाय
2.	छोटा या नाटा कद	4'10''से 5'2 1/2	पूर्वी एशियाई, चीनी, जापानी, वेद्दा, सकाई, लैम्स, पेरू के निवासी एवं दक्षिण भारतीय
			मलेशिया, न्यूगिनी के रहने वाले– रूसी, खिरगीज,

3.	मध्यम कद	5′1/2 से 5′6′′	पूर्वी सुमात्रियन
4.	लम्बा कद	5′6′′ से 5′7.7′′	पापुआन, मेलेनेशियन, हॉटेन्टाट, आस्ट्रेलियाई, द्रविण, भूमध्य सागरीय।
5.	बहुत लम्बा कद	5′7.7′′ से ऊपर	पूर्वी सूडान, नीग्रोइड्स, अफगान, स्काटलैण्ड, इंग्लैण्ड, एवं आस्ट्रेलियन

भारत में उत्तरी राज्यों पंजाब, राजस्थान, जम्मू कश्मीर राज्यों में लम्बे कद के लोग पाये जाते हैं जबकि पूर्वी एवं दक्षिण की दिशा में बढ़ने पर कद छोटा होता चला जाता है।

7.6.1.D- मुखाकृति (Shape of the face):- साधारणतया मुख एवं सिर की बनावट में समानता होती है जिससे एक संकरा मुख संकरे सिर के साथ योग देता है। मानव मुख तथा निचला जबड़ा आवश्यक विभिन्नताएं प्रदर्शित करते हैं। यह विषमता मुख की लम्बाई एवं चौडाई गालों की हड्डियों के आकार और मुह के अग्रभाग का निचला होना (निकास) आदि पर आधारित है। लम्बे सिर वालों के चेहरे लम्बे तथा गोल सिर वाले लोगों के चेहरे चौड़े होते हैं। मुख की चौडाई स्पष्टतः गालों की हड्डियों विपरीत अंगों के मध्य अधिकतम होती है जबकि उसकी लम्बाई ऊपरी जबड़े पर इसकी केन्द्र रेखा में निचले अंश तक मानी जाती है। ये नाप एक दूसरे से सम्बन्धों की दृष्टि से व्यक्त किये जाते हैं तथा इन्हें मुख सम्बन्धी चिन्ह कहा जाता है इस आधार पर मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया गया है –

अ. चौड़े मुख वाले (Europrosopic). 85 से कम।

ब. मध्यम मुख वाले (Mesoprosopic). 85 से 98 तक।

स. लम्बे मुख वाले (Leptoprosopic). लगभग 98।

पार्श्व भाग और ललाट के अग्रिम भाग में निकली हुयी गालों की हड्डियां क्रमशः मध्य एवं पूर्वी एशिया के निवासियों, यूरोप, रूस, दक्षिणी प्रशान्त सागरीय क्षेत्र एवं रेड इंडियन्स में पायी जाती है। नीग्रो प्रजाति के लोगों में मानव मुख का निचला भाग अर्थात जबड़ा विशेष रूप से उभरा होता है जिसे निम्न आकृति कहते हैं। मध्यम जबड़े वाली प्रजातियां मंगोलियन हैं एवं बिना निकास वाले जबड़े वाले लोग orthogenthous कहते हैं।

7.6.1E- आंखों का रंग और बनावट (Eye colourAnd folds):- सामान्यतः लगभग सभी प्रजातियों की आंखों का रंग काला होता है किन्तु आंख की पुतली के रंग के आधार पर यदि निरीक्षण किया जाये तों एक दूसरे में अन्तर पाया जाता है जैसे भारतीयों की आंखे सामान्यतः काली होती हैं। यूरोपीय एवं उत्तरी अमेरिकी काकेशियन प्रजाति के लोगों की आखों की पुतलियों का रंग नीला, हरा या भूरा होता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त आखों की बनावट में भी अन्तर पाया जाता है जैसे कुछ आखों की बनावट बादल की तरह होती है और उनकी फटान (Opening) बिल्कुल क्षैतिज रूप में होती है। इस प्रकार की आखों वाले लोग यूरोप, उत्तरी अफ्रीका, दक्षिण पष्चिम एशिया एवं भारत के लोगों में पायी जाती है जबकि चीनी–जापानी मंगोल आदि लोगों की आखों की फटान तिरछी होती है तथा ऊपरी भाग में खाल का मोड़ पड़ा होता है जो आंख के आन्तरिक कोण को छिपा लेता है तथा जो गालों तक फैला होता है। इसी प्रकार की आंख को मंगोलीय प्रकार की अधखुली आंख कहलाते हैं।

7.6.1F- होंठ का आकार (Lip forms):- होठों की बनावट में भिन्नता पायी जाती है। अतः प्रजातीय निर्धारण में होठों के आकार को भी आधार बनाया जाता है। होठों के स्वरूप में इसकी मोटाई को ध्यान में रखा जाता है। पश्चिम अफ्रीकी एवं नीग्रोइडस में होठों का आकार मोटा होता है तथा फूला हुआ एवं बाहर की और निकला हुआ होता है जिसमें होंठ का किनारा स्पष्ट दिखाई देता है। इनके अतिरिक्त अन्य प्रजातियों में यह आकार पतला (अर्थात कम फूला हुआ) होता है तथा यें पतले और अन्दर की और झुके हुए होते हैं।

7.6.2– आन्तरिक लक्षण (Internal traits):- इन्हें निश्चित शारीरिक लक्षण भी कहा जाता है क्योंकि इनपर वातावरण का प्रभाव नहीं पड़ता है। कभी–कभी न्यून परिवर्तन देखे जाते हैं। आन्तरिक लक्षणों में कपाल सूचकांक अथवा सिर की बनावट, कपाल धारिता, नासा सूचकांक, रक्त समूह को सम्मिलित किया जाता है इन लक्षणों का संक्षिप्त विवरण अग्रलिखित है–

7.6.2A- कपाल सूचकांक अथवा सिर की बनावट (Crenil shape or Cephethic index) :- मानव प्रजातियों के निर्धारण में सिर की बनावट अर्थात कपाल सूचकांक का अधिक महत्व है क्योंकि इस पर वातावरण का प्रभाव नगण्य होता है। अब इसके महत्व में कुछ कमी आयी है क्योंकि एक ही प्रजाति के लोगों के सिर की बनावट में अन्तर पाया जाता है जैसे श्वेत प्रजाति में ही लम्बे, चौड़े और मध्यम सिर पाये जाते हैं। कपाल की लम्बाई और चौड़ाई का अनुपात पुरुषों एवं स्त्रियों तथा बच्चों में लगभग एक समान पाया जाता है। अतः प्रजाति वर्गीकरण इस मानक का काफी प्रयोग किया जाता है। **ग्रिफिथ टेलर** ने भी प्रजाति वर्गीकरण में इस लक्षण को स्वीकार किया है एवं प्रधान लक्षण बताया है। यह सूचकांक सदैव इकाई (Units) में प्रदर्शित किया जाता है। इसे ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

सिरस्थ सूचकांक = सिर की लम्बाई/सिर की चौडाई 100 :– सिर के आकार को देखकर यह स्पष्ट होता है कि कुछ सिर लम्बे दिखाई देते हैं तो कुछ छोटे। सामान्य तौर पर लम्बे सिर संकरे होते हैं एवं छोटे सिर चौड़े होतें हैं। कपाल सूचकांक के आधार पर मानव सिर को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है–

सारणी क्र0–7.3

सिर की बनावट के आधार पर प्रजाति वर्गीकरण

क्रम सं0	सिर की बनावट	कपाल सूचकांक	प्रजाति	निवास
1	दीर्घकपाली (Policopholic)	76 से कम	काकेसाइड	पपुआन, मैलेनेशियन, एस्किमो, इडो–अमेरिकन, उ0एवंद0यूरोपीय, पुराद्रविण, द्रविण, पंजाबी, राजस्थान, कष्मीर, उ0प्र0
2	मध्य कपाली mesocophalic	76 से 81	मंगोलाइड	वुशमैन, हाण्टेन्टान्ट, भूमध्यसागरीय, नार्डिक, एनू, उ0 एमरिएड, राजस्थान
3	पृथु कपाली Brachycephalic	81 से अधिक	नीग्रोइड्स	यूरास्टिक, आल्पस–कार्पेसियन, तुर्क, मंगोल, उ0 प0 तटवर्ती एमरिण्डयन, मध्य प्रदेश, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश

हैडन के अनुसार भारत में चौडे सिर वाले लोग यूरेशिया से पामीर की गांठ होते हुए पश्चिमोत्तर भारत एवं फिर मैदानी भारत में पहुॅचे। इस सूचकांक के आधार पर मानव प्रजातियों को निम्न तीन वर्गो में विभाजित किया जाता है।–

1. **प्लैटी सेफालिक Platy cephalic –** 58 से कम (खोपड़ी का ऊपरी भाग चौरस)
2. **ऑरथो सेफालिक Ortho cephalic –** 58 से 63 (खोपड़ी का ऊपरी भाग खड़ा व्यास)
3. **हिप्ली सेफालिक Hyply cephalic –** 63 से अधिक (खोपड़ी का ऊपरी भाग आड़ा व्यास)

2. कपाल धारिता (Cranial capacity):- प्रंजातियों की कपालीय धारिता में अन्तर पाया जाता है। मानव का यह लक्षण मानव प्रजाति के वर्गीकरण में सहायक होता हैं। यूरोप में पुरुषों एवं स्त्रियों की कपालधारिता 1450CC vkSj 1300cc मापी गयी है। विभिन्न प्रजातियों के लोगों की कपालधारिता 1100 से 1500CC तक होती है। यूरोप एवं पोलीनेशिया के लोगों में लगभग समान कपालधारिता पायी जाती है। आस्ट्रेलाइड प्रजाति की कपालधारिता 1300CC है जबकि नीग्रो प्रजाति के लोगों की कपालधारिता कम होती है। बुशमैन, बेद्दा एवं नीग्रिटो लोगों की कपालधारिता प्रायः कम होती है।

7.6.2C-- नासा सूचकांक (Nasal index):- नाक की लम्बाई और चौड़ाई के प्रतिशत अनुपात को नासा सूचकांक कहते हैं। नाक का आकार भिन्न–भिन्न प्रजातियों में अलग–अलग होता है। नाक मूल रूप से चौड़ी या पिचकी हो सकती है तथा नाक का ऊपरी छोर उच्च मध्य या निम्न हो सकता है। नाक की आकृति लम्बी, मध्यम, छोटी,

सीधी–सपाट, नतोदर, उन्नतोदर, लहरदार एवं मुड़ी हुई हो सकती है– यथा गोलाकार, मुड़ी हुई एवं चपटी। नासा सूचकांक के आधार पर भी प्रजातियों का निर्धारण किया जाता है नासा सूचकांक को ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

नासा सूचकांक = नाक की चौड़ाई / नाक की लम्बाई 100 :-

इस सूचकांक के आधार पर नाक पतली चौड़ी, मझली हो सकती है। इस आधार पर नाक को निम्नलिखित आकारों में विभाजित किया जा सकता है–

सारणी क्र0–7.4

नाक की आकृति के आधार पर प्रजाति वर्गीकरण

क्रम सं0	नाक की आकृति	नासा सूचकांक	प्रजाति	निवास स्थल एवं निवासी
1	तनुनासा	70 से कम	काकेसाइड	उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में निवास करने वाले लोग जैसे भारत गौर वर्ण वाली प्रजातियां
2	मध्यनासा	70 से 85	मंगोलाइड	पोलीनेशिया, साइबेरियान, इण्डो अमेरिकन, पीले वर्ण वाली प्रजातियां।
3	चिपिटनासा	85 से अधिक	नीग्रोइड्स	अर्द्धशुष्क मरुस्थलीय प्रदेशों के निवासी, प्रशान्त महासागरीय एवं आस्ट्रेलिया के निवासी।

सामान्यतः कहा जा सकता है कि कॉकेशश निवासी संकरी नाक (तनुनासा), नीग्रो चौड़ी नाक एवं मंगोलियावासी मध्यम नाक वाले होते हैं। भारत में मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल से लेकर पूर्वांचल तक मध्य नाक वाले, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश से तमिलनाडु तक पतली नाक वाले लोग गंगा यमुना दोआब से लेकर राजस्थान तक फैले हैं। छोटा नागपुर पठार में चौड़ी नाक वाले लोग निवास करते हैं।

7.6.2D-- रक्त समूह (Blood group):- प्रत्येक प्रजाति में एक विशेष प्रकार का रक्त समूह पाया जाता है जो कि अन्य प्रजातियों से भिन्न होता है। यह एक ऐसा लक्षण है जिस पर वातावरण का प्रभाव नगण्य होता है। इसीलिए रक्त समूह को प्रमुख लक्षण माना जाता है। इसी के आधार पर बड़ी सरलता से विश्व के मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया जा सकता है। मानव रक्त के चार वर्गों में विभक्त किया जाता है यथा– A, B, AB, O। इनके अलावा M, N तथा धनात्मक व ऋणात्मक व RH फैक्टर को भी खोजा गया है। RH फैक्टर का प्रजातियों के वर्गीकरण में सर्वाधिक महत्व है। इन रक्त वर्गो का अनुपात अलग–अलग प्रदेशों अलग–अलग पाया जाता है। जिस प्रदेश में जिस रक्त वर्ग की अधिकता होती है, उसी आधार पर प्रजातियों को वर्गीकृत किया जाता है। वर्तमान में रक्त वर्ग विशेषता से अनुवांशिक समूहों का प्रजातिगत विभेदीकरण सरल हो गया है।

हालॉकि प्रत्येक प्रजाति में चारों रक्त समूहों वाले व्यक्ति पाये जाते हैं परन्तु तुलनात्मक दृष्टि से एक रक्त वर्ग के लोग अधिकाधिक मात्रा में पाये जाते हैं जैसे सामान्य रूप में यूरोपीय निवासियों में (काकेसाइड) में। रक्त वर्ग, मंगोलाइड में B रक्त समूह एवं नीग्रिटो लोगों में O रक्त समूह पाया जाता है।

निम्नलिखित तालिका में कुछ प्रजातियों में रक्त समूह का प्रतिशत इस प्रकार मिलता है –

सारणी क्र0–7.5

रक्त समूह के आधार पर प्रजाति वर्गीकरण

मानव प्रजातियां		रक्त समूह			
		A	1	AB	O
अमेरिकी इण्यिन	उ0 अमेरिकी इण्डियन	7.0	1.5	00	91.5
	द0 अमेरिकी इण्डियन	1.5	00	00	98.5
आस्ट्रेलिया के मूल निवासी	पश्चिमी	51.9	00	00	41.1
	पूर्वी	37.8	3.6	00	58.6
यूरोपीय	आंग्ल	42.4	8.0	1.4	48.0
	स्वीडिस	46.0	9.5	6.5	38.0
	ग्रीक	39.9	14.0	3.7	42.0
अफ्रीकी	पिग्मी	30.0	29.0	10.4	30.6
एशियाई	जापानी	38.4	22.0	10.0	30.6
	चीनी	30.8	27.7	7.3	34.2

स्रोत–मानव भूगोल डॉ चतुर्भुज मामोरिया, साहित्य भवन पब्लिकेशन।

इस प्रकार उपरोक्त तालिका सं–7.5 से स्पष्ट है कि अमेरिकी इंडियन में O रक्त वर्ग की प्रधानता तथा A, B तथा AB रक्त वर्ग की कमी पायी जाती है। आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों में। तथा O की अधिकता पायी जाती है जबकि B AB की मात्रा कम पायी जाती है। इसी प्रकार जापानी प्रजाति में A,B तथा O की अधिकता पायी जाती है। रक्त समूह के आधार पर प्रजातियों में वर्गीकरण करना वर्तमान में कठिन होता जा रहा है क्योंकि एक ही प्रजाति के लोगों में कई प्रकार के रक्त समूह हो सकते हैं।

7.7 विश्व की मानव प्रजातियों का वर्गीकरण

आज मानव समाज की पहुंच सम्पूर्ण संसार के प्रत्येक भाग तक हो गई है। इसलिए विश्व में आज जितनी भी प्रजातियां पायी जाती है समय–समय पर विभिन्न विद्वानों ने उनको वर्गीकृत करने का प्रयास किया है। प्रजातियेां का पृथक अस्तित्व अन्तयोनि सम्बन्ध, भौगोलिक पृथकता आदि बातों पर निर्भर करता है। शारीरिक लक्षणों के विकास पर वातावरण, भोजन आदि का प्रभाव पड़ता है यदि समस्त प्रजातियां एक ही जलवायु, वातावरण प्रदेश (अथवा सम्पूर्ण विश्व की जलवायु यदि एक जैसी होती) में पायी जाती तो उनका वर्गीकरण बड़ी सुगमता से किया जा सकता था परन्तु वास्तविकता इससे भिन्न है। आज विश्व की प्रजातियों में इतना मिश्रित हो गया है कि शारीरिक लक्षणों, के आधार पर उनका वर्गीकरण करना एक जटिल कार्य हो गया है इतनी कठिनाइयों के बाद भी विभिन्न मानवशास्त्रियों ने मानव प्रजातियों का वर्गीकरण कुछ विद्वानों ने शारीरिक लक्षणों कुछ ने आनुवांशिक लक्षणों, कुछ ने निवास स्थान) करने का प्रयास किया है। कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण निम्नलिखित है–

7.7.1– वर्नियर का वर्गीकरण :– सर्वप्रथम सन् 1684 में प्रसिद्ध फ्रांसीसी यात्री बर्नियर ने मानव प्रजातियों का वर्गीकरण किया। इन्होनें मानव प्रजातियों को 5 भागों में वर्गीकरण किया है–

7.7.1A-. यूरोपीय प्रजाति :– इसमें यूरोप (जिसमें मिश्र) को भी सम्मिलित किया गया है तथा भारत सहित एशिया का अधिक भाग सम्मिलित है। भारत को तथा मिश्र को एक मानते हुए उनकी मान्यता थी कि यद्यपि इन देशों के

लोग काले एवं भूरे रंग के पाये जाते हैं। फिर भी वे और यूरोप के निवासी एक ही नस्ल के हैं क्योंकि इनका काला एवं भूरा रंग जलवायु के कारण हो गया है।

7.7.1B-. अफ्रीकी प्रजातिः– यहां पर पायी जाने वाली प्रजातियों का काला या भूरा रंग नस्ल के कारण है न कि जलवायु के कारण

7.7.1C- एशिया के अन्य भागः– इसमें एशिया का वह भाग शामिल है जो पूर्व के एशिया के वर्गीकरण में नहीं आया था। इस भाग के लोगों का रंग गोरा, कंधे चौड़े, चेहरा चपटा, बैठी हुई छोटी सी नाक, लम्बी गहरी सुअर जैसी आंखे और दाढ़ी के मात्र तीन बाल थे।

7.7.1D- लैप्स लोगः–ये लोग कद में छोटे होते हैं जिनकी टांगे मोटी, कंधे छोटे, गर्दन छोटी और चेहरा बहुत लम्बा होता है।

7.7.1E- अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका के निवासीः– ये नीग्रो कोटि के नहीं हैं जिन्हें हान्टे–टाट या बुशमैन कहा जाता है

वर्नियर का वर्गीकरण मुख्य रूप से त्वचा के रंग पर आधारित था।

7.7.2– ब्लूमैन बैक का वर्गीकरण (Blumenbech's Classification) :- ब्लूमैन बैक ने सन् 1806 में प्रजातियों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया। इन्होने अन्तर होने का कारण भौतिक वातावरण को बताया। इन्होने बताया कि पर्यावरण की भिन्नता के कारण प्रजातियां एक दूसरे से भिन्न है। इन्होनें त्वचा के रंग बाल तथा चेहरे और खोपड़ी के आकार के आधार पर वर्गीकृत किया। इनके वर्गीकरण में मानव की पांच प्रजातियां मानी गयी हैं।

1. काकेशियन (Caucassion)- इनका रंग श्वेत, लाल, भूरा, नाक संकरी, चेहरा अंडाकार एवं एवं खोपड़ी गोल होती है।

2. मंगोलियन (Mangolian):- इनकी चमड़ी पीली, सीधे काले बाल, छोटी नाक, संकरी आंखे, जबड़ा निकला हुआ और चौकोर सिर वाले होते हैं।

3. इथियोपियाई (Ethiopian)- ये काली चमड़ी गहरे ऊनी लहरदार बाल, चौड़ी नाक, मोटे होंठ, आगे निकला हुआ जबड़ा तथा लम्बी खोपड़ी वाले होते हैं।

4. अमेरिकन इंडियन (American Indians):- इनका रंग तांबे जैसा, सीधे काले बाल, चौड़ा चेहरा होता है।

5. मलय (Malayas):- ये भूरे रंग, मोटे घुंघराले बाल, मोटे होंठ तथा चौड़ी नाक वाले होते हैं।

7.7.3– कूवियर का वर्गीकरणः–कूवियर ने 1817 में अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया। कूवियर के अनुसार नूह के जल के विप्लव के बाद मानव का अस्तित्व समाप्त हो गया। जल विप्लव के बाद नूह से संसार का संचालन हुआ। नूह की तीन संतानें थी–**जैफट (Japhet), शैम (Shem) तथा हैम (Ham)।** जैफट से काकेशियन, शैम से मंगोलियन एवं हैम से अफ्रीकी नस्लें पैदा हुईं।

7.7.4– हक्सले का वर्गीकरणः–हक्सले ने केशों के आकृति के आधार पर प्रजातियों को पांच वर्गों में विभाजित किया।

1– आस्ट्रेलाइड (Australaid):- विशेषतः दक्षिण भारत एवं आस्ट्रेलिया के आदिवासी (बाल काले और लहरदार)

2– नीग्रोइड (Negroid)- मुख्यतः कालाहारी के मरुस्थल, मेडागास्कर, दक्षिण पूर्वी अफ्रीका में नीग्रो को सूचित करते हैं।

3. मंगोलाइड (Mangoloid):.- मुख्यतः चीनी, तिब्बती, मगोलियाई और जापानी हैं। इनके बाल कम होते हैं।

4– सैन्थ्रोकायड (Xanthochroid):- मुख्यतः उत्तरी यूरोप, उत्तरी अफ्रीका और उत्तर भारत में मिलते हैं (बाल भूरे और सुनहरे)।

5– मैलेनक्रायड **(Melenchroid):-** विशेषतः दक्षिणी यूरोप, अरब, स्पेन, यूनान (बाल गहरे काले रंग के होते हैं) में पाये जाते हैं।

7.7.5– टोपीनार्ड का वर्गीकरण (Topinord,1879):- इन्होने केशों के रूप, रंग तथा आकार के आधार पर

प्रजातियों को वर्गीकृत करने का कार्य किया। इस आधार पर इन्होंने प्रजातियों को 3 वर्गो में विभाजित किया है।–

1– सीधे बालों वाली प्रजातियां (Leiotrichy):- इसमें एस्किमों, अमेरिकी तथा मंगोल को सम्मिलित किया।

2– लहरदार बालों वाली प्रजातियां (Cymotrichy):- इसमें यूरोपीय, आस्ट्रेलियाई तथा उत्तरी अफ्रीकियों को सम्मिलित किया।

3– घूंघराले बालों वाली प्रजातियां (Frigyulotrichy):- इसमें नीग्रो, नीग्रिटो तथा पापुआन को सम्मिलित किया।

इसके अतिरिक्त टोपीनार्ड ने त्वचा के रंग और नासा आकृति के आधार पर प्रजातियों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया है।

श्वेत रंग और पतली नाक वाली प्रजातियां (अधिकांश यूरोपीय लोग)।

पीत वर्ण एवं मध्यमनाक वाली प्रजातियां (एस्किमों, पोलिनेशियाई और मंगोलियाई लोग)।

श्याम वर्ण एवं चौड़ी नाक वाली प्रजातियां (आस्ट्रेलियाई और नीग्रो)।

7.7.6– क्रोबर का वर्गीकरण (Crobers Classification):- क्रोबर ने त्वचा के वर्ण के आधार पर सम्पूर्ण मानव प्रजाति को तीन वर्गों में विभाजित किया है।–

सारणी क्र0–7.6

क्रोबर के द्वारा मानव प्रजातियों का वर्गीकरण

प्रमुख मानव प्रजातियां		सिर के बालों की बनवट	शरीर एवं मुंह के बालों की मात्रा	सिर	नाक	जबड़ों का आगे को झुकाव	त्वचा का रंग	कद	विवरण
काकेशियन या श्वेत प्रजाति	नार्डिक	लहरियादार	अधिक	कम चौड़ा (NaRk Row)	कम चौड़ी	हल्का	अत्यधिक साफ	ऊँचा	बराबर तामियां, हल्की आंखे (Light Eyes)
	अल्पाइन	लहरियादार	"	चौड़ा	"	"	साफ	औसत से अधिक	बाल कत्थई, आंखे कत्थई
	भूमध्य सागरीय	लहरियादार	"	कम चौड़ा	"	"	गेहुंआ	मध्यम	सामान्य शारीरिक गुण, सुन्दर (Regular Features, Graceful)
	हिन्दू	लहरियादार	"	"	परिवर्त नशील	साधार ण	भूरा कत्थई	औसत से अधिक	कालेपन का मिश्रण विशेषतः दक्षिण में (DarkAdmixture specially in South)
मंगोलॉइड या पीली प्रजाति	मंगोलियन	सीधे (Straight)	कम (Slight	चौड़ा	मध्यम	मध्यम	हल्का कत्थई	औसत से कम	चौड़ा चेहरा, मंगोलियन आंखें
	मलयेशियन	सीधे (Straight)	"	"	"	"	कत्थई	"	
	अमेरिकन इण्डियन	सीधे (Straight)	"	परिवर्त नशील	"	"	"	मध्यम से लेकर ऊँचे तक	चौड़ा चेहरा

निग्रोइड या काली प्रजाति	नीग्रो	ऊन की तरह उलझे तथा घुंघराले (Woolly)	कम	कम चौड़ा	चौड़ी	अधिक (Strong)	गहरा कत्थई	लम्बा	मोटे, चौड़े बाहर भीतर झुके होंठ (Aveste Lips)
	मलेनेशियन	"	"	"	"	"	"	मध्यम	गिद्ध की तरह झुकी हुई नाक
	काले पिग्मी	"	"	चौड़ा–सा (Broa dish)	"	"	"	बहुत छोटा	
	बुशमैन	पेपर कार्न	"	कम चौड़ा	"	हल्का	पीलापन	"	शरीर पर झुर्रियां, पतले होंठ, मंगोलियन आंखें, उठे तथा भरे हुए नितम्ब
विवादपूर्ण प्रजातियां	आस्ट्रेलॉइड	लहरियादार	अधिक	"	चौड़ी	अधिक	गहरा कत्थई	मध्यम	नीग्रो जातियों के गुण अधिक मात्रा में कुछ काकेशियन की भांति
	इण्डो–आस्ट्रेलियन	"	साधारण(Moderate)	"	"	मध्यम	कत्थई	छौटा	साधारणतः काकेशियन की भांति, कुछ गुण ऑस्ट्रेलियन की तरह
	पोलीनेशियन	"	"	परिवर्तनशील (Variable)	मध्यम	"	"	ऊँचा	मंगोलाइड तथा काकेशियन गुणों के साथ नीग्रोइड गुणों का मिश्रण
	ऐनू	"	अधिक		"	"	हल्का कत्थई	मध्यम	शायद व्यापक दृष्टि से काकेशाइड की भांति

स्रोत –मानव भूगोल :डॉ मा0 हारून, विजडम पब्लिकेशन, मैदागिन वाराणसी।

1– काकेशियन प्रजातिः– इनका वर्ण श्वेत (गोरा) होता है। यूरोपीय प्रजातियां इस वर्ण की प्रतिनिधि हैं जिनमें नार्डिक, अल्पाइन, भूमध्य सागरीय और हिन्दू सम्मिलित हैं।

2– मंगोलाइड प्रजातिः– इस प्रकार की प्रजाति का रंग पीला होता है। इसमें मंगोलियन, मलेशियन, तथा अमेरिकी इंडियन को इनमे सम्मिलित किया जाता है।

3– नीग्रोइड प्रजातिः– इस प्रजाति का रंग काला या श्याम होता है। इनकी प्रमुख प्रजातियां नीग्रो, मैलेशियन, तथा काले ड्वार्फ हैं

क्रोबर के अनुसार इन्हीं तीन प्रधान वर्गों के अन्तर्गत विश्व की अधिकांश जनसंख्या तथा प्रजातीय वर्ग समाहित हैं। इन्होने एक चौथे वर्ग की बात की है ऐसी सभी संदिग्ध प्रजातियों को रखा है जिनके लक्षण स्पष्ट नहीं हैं। चौथे वर्ग के अन्तर्गत निम्न को रखा गया है–

अ. आस्ट्रेलियन

ब. श्रीलंका की बेद्दा, इरूला, कोलरियन, मोई, सनाई आदि

स. पोलीनेशियन

द. जापान का आइनू

7.7.7– टेलर का वर्गीकरण (Tailor's Classification):-

सन 1919 में टेलर ने जलवायु चक्र तथा प्रजातियों के विकास का प्रवास कटिबन्ध सिद्धान्त (Migration Zone theory of race evolution) के आधार पर विश्व की मानव प्रजातियों को वर्गीकृत किया। इन्होनें स्पष्टीकरण में कहा कि आरम्भ की पांच मानव प्रजातियों (नीग्रो, नीग्रिटो, आस्ट्रेलाइड, भूमध्य सागरीय, एवं अल्पाइन मंगोलियन) की उत्पत्ति मध्य एशिया में महान हिमयुग के पूर्व हुई थी और वहीं से ये अन्य महाद्वीपों में प्रवासित हुई। इन्होनें मानव प्रजातियों के भौतिक लक्षणों के पीछे जलवायु परिवर्तनों को जिम्मेदार माना। उन्होने कहा कि जैसे–जैसे जलवायु में परिवर्तन हुआ उसी के साथ–साथ मानव प्रजातियों के भौतिक लक्षणों में भी परिवर्तन होते गए और ये एक दूसरे से भिन्न हो गये। टेलर ने मानव उत्पत्ति स्थल मध्य एशिया को बताया जहां से इनका प्रसार हुआ जो प्रजाति सबसे पहले विकसित हुई व उद्‌गम स्थल से दूर महाद्वीपों के बाह्य पेटियो में पायी जाती हैं और जो प्रजाति सबसे बाद में विकसित हुई वह मध्य एशिया के पास ही पायी जाती हैं।

ग्रिफिथ टेलर ने कपाल सूचकांक (Cephalic Index) और बालों की बनावट को प्रमुख आधार मानते हुए समस्त मानव प्रजातियों को सात श्रेणियों में विभाजित किया–

1– नीग्रिटो (Negrito):-

यह विश्व की सबसे प्राचीन मानव प्रजाति मानी जाती हैं। अपने उद्‌गम स्थल से सबसे पूर्व यही प्रजाति स्थानान्तरित हुई और अन्य प्रजातियों के द्वारा बाहर की और हटाए जाने से यह महाद्वीपो के छोरों तक पहुंच गयी। इनका कद छोटा (नाटा) रंग काला एवं चाकलेटी नाक चौड़ी और अधिक चपटी, आगे की और निकला हुआ जबड़ा छल्लेदार घूमें हुए बाल अधिक पतला और लम्बा सिर (कपाल सूचकांक लगभग 70 से कम) इन प्रजातियों की प्रमुख पहचान है। नीग्रीटो की मूल प्रजाति शायद अब विश्व में नहीं पायी जाती क्योकि इनका प्रजातीय मिश्रण अधिक हुआ है। इनके बड़े समूह युगांडा, फ्रांसीसी विषुवत रेखा कांगो बेसिन, कैमरून एवं अण्डमान द्वीप समूह में हैं। इनके कुछ लोग पश्चिमी अफ्रीका और दक्षिण अफ्रीका में भी मिलते हैं। तस्मानिया और जावा में भी इनके मकान थे।

2– नीग्रो Negro:-

इस प्रजाति की उत्पत्ति नीग्रिटो के बाद मानी जाती है। इस प्रजाति का सिर अत्यन्त लम्बा होता है और अनुपात 70 से 72 तक मिलता है। इनके शारीरिक लक्षणों में शरीर का रंग काला घुंघराले बाल जबडा बाहर की और निकला हुआ, नाक चौड़ी छोटी एवं चिपटी होती है। शरीर की ऊँचाई कम होती है। यह प्रजाति दो स्थानों पर मिलेती हैं। पुरानी दुनिया के दोनों किनारों पर। इसमें पहली पश्चिमी अफ्रीका में सूडान और गिनी तट पर और दूसरी न्यूगिनी में मिलेती हैं। पूर्व ऐतिहासिक युग में नीग्रो की प्राप्ति दक्षिण यूरोप एवं एशिया में भी थी। भारत में कोल एवं श्रीलंका में वेद्‌दा इसी प्रजाति के प्रतीक हैं।

3– आस्ट्रेलायड (Australoid):-

इस प्रजाति का सिर लम्बा (72 से 74 तक) होता है। इसका उत्पत्ति क्रम तीसरा है। इनका रंग काला और चमकदार ऊन के समान घुंघराले बाल, जबड़ा आगे की और कुछ निकला हुआ नाक, मध्यम चौड़ी तथा शरीर कद औसत (160 से 167 सेमी0)पाया जाता है। ब्रिटिश उपनिवेशों के पूर्व ये सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया में फैले हुए थे। दक्षिण भारत के वनों में भी इन लोगों के समूह पाये जाते हैं। ब्राजील के **डोंस और बूटो कूटो**इसी प्रजाति के प्रतीक हैं। वर्तमान में इस प्रजाति का विस्तार भारत के दक्षिणी पूर्वी भाग, आस्ट्रेलिया ब्राजील, अफ्रीका के कुछ मध्यवर्तीभाग और एशिया के पूर्वी द्वीप समूह के कुछ क्षेत्रों में मिलते हैं।

4– भूमध्यसागरीय (Mediterranean):-

भूमध्य सागरीय प्रजाति के लोगों के सिर लम्बे (कपाल सूचकांक 74.77) होते है। इनके बाल अल्प घुघराले होते हैं। नाक पतली जबड़ा कुछ भागों की और निकला हुआ और त्वचा का रंग जैतूनी, शरीर सुगठित तथा औसत कद (160 से 170 सेमी0) पाया जाता है। इनका सर्वाधिक विस्तार भूमध्य सागर के निकटवर्ती क्षेत्रों में पाया जाता है। इसी के नाम पर इनका नामकरण किया गया है। दक्षिणी यूरोप एवं उत्तरी अफ्रीका इनका प्रमुख निवास है। उत्तरी अमेरिका के इरोक्वाइड दक्षिणी अफ्रीका के तूपी में भी पाये जाते हैं।

5– नार्डिक (Nordic):-.

यह प्रजाति उपरोक्त के उपरांत आयी इसलिए इनका परिस्करण हो गया था। इनका सिर सामान्य आकार वाला (कपाल सूचकांक 78 से 82) लहरदार बाल, लम्बी और नुकीली नाक चपटा चेहरा, गोरा तथा भूरा रंग, लम्बा कद (168 से 172 सेमी0) तथा सुगठित शरीर होता है। इस प्रजाति का प्रमुख निवास क्षेत्र उ0प0 यूरोप है जहां से इनका प्रवास के द्वारा ये उ0 एवं द0 अमेरिका तक फैल गए। यह प्रजाति न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया, महासागरीय पोलिनेशियन क्षेत्र में भी निवास करती हैं।

6– अल्पाइन (Alpin) :-

यह नवीन प्रजाति है जिसका सिर चौड़ा (कपाल सूचकांक 82 से 85), बाल सीधे तथा नाक पतली लम्बी होती है, चेहरा सपाट, रंग भूरे से लेक श्वेत। इस प्रजाति का निवास क्षेत्र मध्य और दक्षिणी पूर्वी यूरोप है इसकी दो शाखाएं हैं –

पश्चिमी शाखा–इस शाखा के लोग अधिक गोरे होते हैं जिनमें स्विस, स्लाब, आरमेनियन आदि हैं	**पूर्वी शाखा**–इस शाखा के लोग पीत वर्ण के होते हैं इनमें फिन्स, मगपार आदि जाति के लोग आते हैं।

7–मंगोलिक (Mangolic):- यह प्रजाति अल्पाइन समूह की सबसे विकसित नवीनतम प्रजाति मानी जाती है। इसे टेलर ने उत्तर अल्पाइन प्रजाति भी कहा है। इनका सिर गोल (कपाल सूचकांका 85 से 90) बाल सीधे, नाक पतली, चेहरा चपटा, रंग गोरा और कद औसत पाया जाता है। पूर्व के काल में इस प्रजाति का केन्द्रीकरण मध्य एशिया में था किन्तु अव यह पश्चिम एवं पूर्व की और फैल गई है। बाद में पूर्ववर्ती अल्पाइन, भूमध्य रेखीय तथा नार्डिक प्रजातियों के साथ इनका मिश्रण हो गया। पूर्वी एशिया जिसमें चीन, जापान, कोरिया आदि तथा दक्षिण–पूर्व एशिया में इस प्रजाति का बाहुल्य पाया जाता है।

7.7.8–संसार की प्रमुख मानव प्रजातियां (Principal human races of the world):-

विश्व के विभिन भागों में अनेकों प्रकार की विभिन्नताएं (वातावरण, प्रजाति, उच्चावच आदि) पायी जाती हैं। इसी के क्रम में विश्व में पायी जाने वाली समस्त मानव प्रजातियों को उनकी उत्पत्ति एवं विकास, स्थानान्तरण तथा प्रजातीय सम्मिश्रण आदि के आधार पर वृहद समूहों में विभाजित किया जाता है इनका

विवरण निम्नलिखित रूप में दिया जा रहा है।–

अ.काकेसाइड (Caucasoid)

ब.मंगोलाइड (Mangoloid)

स. आस्ट्रेलाइड (Australoid)

द. नीग्रोइड (Negroid)

अ– काकेसायड (Caucasoid) :–

यह विश्व की सबसे महत्वपूर्ण प्रजाति है। यह प्रजाति अन्य की तुलना में सबसे सभ्य, सुसंस्कृत तथा विकसित प्रजाति है। इस प्रजाति के लोगों का रंग श्वेत होने के कारण इन्हें श्वेत प्रजाति भी कहते हैं। लेकिन वास्तविक रूप में इनका रंग श्वेत न होकर हल्का लाल होता है। शरीर के रोम प्रचुर तथा चेहरे के बाल अधिक विकसित होते हैं। सिर के बाल लहरदार, मुलायम तथा सीधे होते हैं। जिनका रंग हल्के से गहरा (काला) तक पाया जाता है। आंखों का रंग हल्का, पुतलियां भूरी, तथा हल्की होती हैं। सिर समान लम्बा तथा कद साधारण तथा ऊँचा होता है। इन प्रजातियों को निम्न उपशाखाओं में विभाजित किया जाता है–

क्र0 सं	प्रजाति	कपाल सूचकांक	बालों की आकृति	ऊर्ध्व काट	नासा सूचकांक	शरीर काकद	त्वचा का रंग	आवास क्षेत्र
01	निग्रीटो	68 से 70 तक	सपाट और छल्लेदार	40	बहुत चौड़ी और चपटी सूचकाक 100	140 सेमी से 158 सेमी	प्रायः काला	श्रीलंका, मलेशिया, फिलीपीन्स, न्यूगिनी, युगाण्डा, कांगो प्रदेश, केमरून, अण्डमान, पश्चिमी और दक्षिणी अफ्रीका, और फ्रेंच विषुवतरेखीय अफ्रीकाा आदि।
02	नीग्रो	70 से 72 तक	लम्बे और ऊन जैसे	50	चौड़ी और चपटी सूचकांक 100	72 सेमी से अधिक लम्बे	काले से चॉकलेटी तक	सूडान और पश्चिमीअफ्रीकाा के गिनी तट नाइजीरिया, घाना, न्यूगिनीके पापुआ प्रदेश आदि में।
03	ऑस्ट्रेलॉयड	72 से 74 तक	ऊन के समान तथा घुंघराले	60	मझली चौड़ी सूचकाक 82	59 से 167 सेमी	गहरे भूरे से जैतूनी तक	ऑस्ट्रेलिया दक्षिणी भारत, ब्राजील पूर्वी तथा मध्य अफ्रीकाा।
04	मेडिटेरियन	74 से 77 तक	घुंघराले	70	मझली तथा लम्बीसूचकांक 69	156 से 165 सेमी	हल्के भूरे से श्वेत रंग तक	भूमध्यसागर के चारों और अरब, ईराक, ईरान, उत्तरी भारत, पुर्तगाल, मिश्र, तथा महाद्वीपों के बाहरी भागों में।
05	नार्डिक	78 से 82 तक	लहरदार	छोटा अण्डाकार 75	लम्बा तथा अग्र भाग में चोंच के समान मुड़ी हुई सूचकांक 66–55	156 से 168 सेमी	हल्के भूरे श्वेत रंग तक	उत्तरी यूरोप, सोवियत रूस, तथा भूमध्यसागर के आस–पास
06	अल्पाइन	80 से 85 तक	सीधे	80	पतली सूचकांक 50	156 से 165 सेमी	हल्के भूरे श्वेत रंग के	उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका के केन्द्रीय भाग की ओर, मध्य एशिया के कुछ भागों में तथा मध्य यूरोप में।
07	मंगोलिक	85 से 90 तक	सीधे और चपटे	80	पतली सूचकांक 50	155 से 165 सेमी	हल्के भूरे श्वेत और पीले रंग के	एशिया के पश्चिमी भाग के तुर्किस्तान, पूर्व में मंगोलिया, चीन, जापान, वियतनाम और महाद्वीपीय तट की ओर

1. मेडिटेरेनियन

इस प्रजाति का विस्तार भूमध्य सागर के क्षेत्रों में पाया जाता है। इनकी त्वचा का रंग जैतूनी, बाल घुंघराले लहरदार तथा रंग गहरा भूरा या काला होता है, आंखे गहरी भूरी एवं हल्की ललाट सीधा सीधी और पतली नाक, होठ पतले तथा औसत कद 160 सेमी0 पाया जाता है। इनका विस्तार स्पेन, पुर्तगाल, टर्की, मिश्र तथा उत्तरी अफ्रीका अन्य देशों तथा अरब एवं भारत में पाये जाते हैं।

2. नार्डिक (Nordic): -

इनको बाल्टिक प्रजाति के नाम से भी जाना जाता है। इनका कपाल मध्यम, त्वचा का रंग श्वेत गुलाबी, आंखो का रंग नीले भूरे एवं पीले रंग का मिश्रण पाया जाता है, नाक पतली ललाट सीधा भौहें छोटी तथा होंठ पतले होते हैं। इनका विस्तार स्कैण्डोनेविया, बाल्टिक प्रदेश, स्काटलैण्ड तथा संयुक्त राज्य अमेंरिका तथा उत्तरी जर्मनी में पायी जाती हैं। **बी0एस0 गुहा** ने इस प्रजाति के प्रतिनिधियों की उपस्थिति भारत में मानी जाती है जिससे आर्य सभ्यता का विकास हुआ।

3. अल्पाइन (Alpine):-

इस प्रजाति के लोग लघु कपालिक होते हैं। इनके बाल सीधे, नाक पतली, चमड़ी का रंग भूरा एवं श्वेत, औसत ऊँचाई 165 सेमी0 तथा शरीर पर बाल होते हैं। यह अत्यंत नवीन प्रजाति हैं जिनका परिष्कृत रूप का गठन निकट समय में हुआ है। इनका विस्तार आल्पस के समीपी देशों में पाया जाता है। ये विशेष रूप से मध्य फ्रांस से यूराल तक विस्तृत हैं।

4. डिनारिक (Dinaric):-

यह लघु कपालिक प्रजाति है जिसमें गोल सिर की प्रधानता पायी जाती है इनकी त्वचा का रंग जैतूनी, आंखें भूरे (हल्का) रंग, माथा ढ़लवा, नाक तथा ठोड़ी उभरी हुई बाल घुंघराले, होठ पतले तथा कद 170 सेमी0 होता है। इनका विस्तार आल्पस पर्वत केसमीप पाया जाता है तथा केन्द्रीय यूरोप में फ्रांस के मैसोडोनिया तक ये प्रजातियां विस्तृत हैं।

5. पूर्वी बाल्टिक :–

ये लघु कपालिक होते हैं परन्तु इनका ललाट चौड़ा तथा ऊंचा होता है। त्वचा का रंग श्वेत, आंखे नीली, बालों का रंग हल्का, चेहरा वर्गाकार तथा नाक लम्बी होती है। इनका विस्तार बाल्टिक सागर के पास फिनलैण्ड, उत्तरी रूस, बाल्टिक राज्य तथा उत्तरी जर्मनी में पाया जाता है। यह प्रजाति मंगोल, अल्पाइन एवं नार्डिक प्रजातियोंका मिश्रित रूप है।

6. लैप्स (Laps):-

ये लघु कपालिक होते हैं। इनकी त्वचा का रंग पीला भूरा, बाल व आंखे काली, चेहरा छोटा जबड़ा छोटा, दांत छोटे, व दोनों आंखों के बीच की दूरी अधिक होती है। इनका विस्तार स्कैडिनेविया में टुण्ड्रा प्रदेश में पाया जाता हैं।

7. पोलिनेशियन (Polynesian Race):-

ये लघु कापालिक होते हैं। इनकी त्वचा का रंग हल्का भूरा, चेहरा चौड़ा व लम्बा, बाल साधारण लहरदार काले और भूरे रंग, नाक चपटी और होंठ मोटे होते हैं। इनका विस्तार पोलिनेशिया, माइक्रोनेशिया आदि में पाया जाता है। वर्तमान में इनका विस्तार अमेरिका, अफ्रीका एवं आस्ट्रेलिया के विभिन्न भागों में पाया जाता है।

8. स्पू :–

ये मध्य कपालिक होते हैं। इनके त्वचा का रंग श्वेत भूरा, बाल लहरदार काले अथवा भूरे रंग के होते हैं। भौंहे लम्बी, ललाट झुका हुआ, नाक चौड़ी तथा उभरी हुयी, होंठ मोटे एवं कद 155 सेमी0 होता है। शरीर एवं चेहरे पर अधिक बाल पाये जाते हैं। जिनमें काकेसायड एवं मंगोलायड तत्वों का मिश्रण होता है। अब ये होकैंडो एवं सखालिक द्वीप में ही पाये जाते हैं।

B- आस्ट्रेलायड :–

इन्हें ओशीनियाई प्रजाति के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रजाति के प्रतिनिधि प्रायः ओसेनिया एवं न्यूजीलैण्ड में पाये जाते हैं। आस्ट्रेलिया के मूल निवासी एशिया से दूर (अर्थात मुख्य भूमि से दूर) एक लघु तथा विपन्न महाद्वीप पर लम्बी भौगोलिक पृथकता की आवश्यकताओं में विकसित हुए हैं। आस्ट्रेलियन प्रजाति के लक्षणों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ये निकटतम रूप से नीग्रो प्रजाति से सम्बन्धित अनेक विद्वान इन्हें प्राचीन काकेशियन प्रजाति के अन्तर्गत सम्मिलित हैं। इस शुद्ध आस्ट्रेलियाई जनजातियों की संख्या लगभग 4000 है। आस्ट्रेलिया के उपनिवेशन के साथ यह संख्या 3 लाख थी। अधिकांश आस्ट्रेलियाई आदिवासियों के शारीरिक लक्षण हैं– त्वचा का रंग भूरा श्वेत होता है, बाल लहरदार काले अथवा भूरे रंग के होते हैं, ललाट नीचा तथा ढला हुआ होता है, आंखे काली, भौहें चौड़ी तथा चेहरा मध्यम आकार का होता है, नाक चौड़ी उभरी हुई तथा होंठ मोटे होते हैं। इनका औसत कद 165 सेमी0 होता है तथा चेहरे पर बाल पाये जाते हैं। इसके साथ–साथ शरीर पर भी सघन बाल पाये जाते हैं।

आस्ट्रेलियाई प्रजाति के समान किन्तु उससे पूर्व विकसित होने वाले मानव समूहों को अर्थ आस्ट्रेलायड (Proto-Austroloid) कहा जाता हैं। दक्षिण भारत की द्रविण, श्रीलंका की वेद्दा एवं जापान की आइनू अथवा कुरील प्रजाति भी प्रोटो आस्ट्रेलायड के अन्तर्गत आते हैं। वेद्दा प्रजाति दीर्घ कापालिक होती है। इनकी त्वचा का रंग चॉकलेटी बाल काले घुंघराले एवं लहरदार होते हैं। इनकी शरीर पर बाल नहीं होते हैं। इनकी नाक चौड़ी, होंठ मोटे एवं औसत कद 150 सेमी0 होता है। श्रीलंका इनका प्रमुख निवास स्थान है।

C- मंगोलायड :–

मंगोलायड प्रजाति को एशियाई अमेरिकी के नाम से भी जाना जाता है। टेलर ने बताया कि यह सबसे नवीन और बाद की अल्पाइन प्रजाति है जो इतिहास के आरम्भिक काल में एशिया के केन्द्रीय भाग में रहती थी। समयोपरान्त यह प्रजाति पश्चिम में तुर्कमेनिस्तान एवं पूर्वी भाग में द्वीपों एवं सागरीय तटों पर फैल गयी। यह प्रजाति विश्वजनसंख्या का एक तिहाई से अधिक भाग धारित करती है। इस प्रजाति का विस्तार एशिया के सभी भागों (उ0द0, पू0प0, एवं दक्षिण पूर्व) हैं, एवं उत्तर अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में भी इनके प्रतिनिधि मिलते हैं। **शारीरिक लक्षणों में देखें तो** इनकी त्वचा का रंग पीला हल्का भूरा तथा कत्थई होता है। बालों का रंग काला सीधा एवं मोटा तथा भारी होता है। मुख एवं शरीर पर बाल कम पाये जाते हैं। आंखे भूरी तथा बादाम के आकार की होती हैं। इनका कद साधारणतः 166 सेमी0 होता है। इस प्रजाति को निम्नलिखित उपवर्गों में बांटा गया है–

1. पुरातन मंगोलाइड :–

ये लघुकपालिक होते हैं। इनकी त्वचा का रंग पीला हल्का भूरा, बाल सीधे काले मोटे, आखें भूरी, चेहरा सपाट, नाक चौड़ी तथा चपटी तथा होंठ मोटे होते हैं। इनका विस्तार तिब्बत, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा साइबेरियाा में है। प्राकृतिक पर्यावरण एवं अन्य प्रजातीय मिश्रण के कारण इनमें कुछ भिन्नता पायी जाती है। इन्हें 4 उपवर्गों में बांटा जाता है।

अ. बुरियात ब. कोरयात स. गिलयात द. गोन्डी

2. आर्कटिक मंगोलाइड :–

ये मध्य कपालिक होते हैं। इनका कद छोटा, नाक पतली तथा सिर का ऊपरी भाग उठा हुआ होता है। इनमें 'A' प्रकार के रक्तवर्ग की अधिकता होती है। इनका विस्तार उच्च अक्षांशों में अधिक है। जैसे पूर्वी एशिया, ग्रीनलैण्ड, उत्तरी अमेरिका के ध्रुवीय क्षेत्र तथा साइबेरिया में हैं। इन प्रजातियों में आधुनिकता एवं उपनिवेशीकरण के कारण संसाधनों के दोहन के लालच में संकरण एवं मिश्रण के कारण इनमें मिश्रित लक्षण उत्पन्न होने लगे हैं।

प्रादेशिक भिन्नता के कारण इनको अनेक उपजातियों में विभक्त किया गया है यथा– **एस्किमों, रेनडियर, एल्यूश, बचूकी, चकची, याकूत, सेमोइड्स, तुंगस आदि।**

3. अमेरिकन–इंडियन मंगोलाइड–

उत्तरी अमेरिका में इन प्रजातियों को रेड इण्डियन के नाम से जाना जाता हैं। यह प्रजाति उत्तरी मंगोलाइड समूह की एक उप प्रजाति है। इनमें मंगोलाइड प्रजाति के सभी लक्षण पाये जाते हैं लेकिन कपालिक परिमिति में भिन्नता पायी जाती है। इनकी आखों का रंग भूरे रंग का होता है तथा इनकी आखें तिरछी नहीं होती हैं। इनका विस्तार उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका में पाया जाता हैं। इनकी तीन उप प्रजातियां हैं।

अ. वेद्दा ब. सिमसिमन स. लिंगित

प्लीस्टोसीन काल विद्वानों के एक मत के अनुसार ये प्रजातियां उ0 एशिया की मंगोलाइड के भाग हैं जो कि महान हिमयुग में अलास्का में हिम के कारण उत्तरी पूर्वी एशिया से अलास्का के रास्ते उ0 अमेरिका जा पहुॅची तथा हिमावरण के गलन के कारण इनका आना बन्द हो गया और जो पहुॅच गए थे, उनका पूरे अमेरिका (उ0 एवं दक्षिणी) में विस्तार हो गया। इसके पूर्व सम्पूर्ण अमेरिका महाद्वीप निर्जन था।

4. इन्डो मलय मंगोलाइड–

इस प्रजाति की उत्पत्ति मंगोलाइड तथा काकेशियन या नीग्रो प्रजातियों के मिश्रण से हुई। इनके शारीरिक लक्षणों में अपेक्षाकृत छोटा कद, त्वचा गहरे रंग के, चेहरा संकरा एवं नीचा, चौड़ी नासिका, लहरीले सीधे, बाल कम, विकसित दाढ़ी आदि प्रमुख है। इस प्रजाति के लोग मुख्य रूप से इण्डोनेशिया, मलाया, हिन्द चीन, म्यांमार, उत्तरी पूर्वी भारत, तिब्बत तथा दक्षिणी चीन के कुछ भागेां में पाये जाते हैं। इसीलिए इन्हें इण्डोमलय प्रजाति के नाम से जााना जाता हैं।

D- नीग्रोइड्स (Negroids)

नीग्रों प्रजाति सभी प्रजातियों में महत्वपूर्ण प्रजाति मानी जाती है। नीग्रो शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'नीगर' शब्द से जुड़ी हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ 'काला' होता है। इस प्रजाति का मुख्य आवास अफ्रीका महाद्वीप है और इसलिए नीग्रोइड बहुल अफ्रीका क्षेत्र–मध्य एवं दक्षिण अफ्रीका को काल महाद्वीप कहा जाता हैं। इस प्रजाति समूह के लोगों की त्वचा बाल और आखों का रंग काला होता है। सिर के बाल घुंघराले, छल्लेदार एवं लहरदार, नाक चौड़ी, जबड़ा आगे निकला हुआ, होंठ मोटे तथा ऊपरी होंठ आगे लटके होते हैं, नथुने फैले होते है, शारीरिक लक्षणों में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। शारीरिक लक्षणों के आधार पर नीग्रो प्रजाति को निम्नलिखित उपसमूहों में वर्गीकृत किया जाता हैं।

1. मूल नीग्रो :–

नीग्रो की इस शाखा के लोगों का ललाट सीधा होता है तथा ये दीर्घ कपालिक होते हैं। इनमें नीग्रो प्रजाति के पूरे लक्षण पाये जाते हैं। इनकी ऊॅचाई 173 सेमी0 होती है। इनका विस्तार पश्चिमी अफ्रीका में सेनेगल नदी के मुहोने से नाइजीरिया की पूर्वी सीमा तक फैले हैं। ये कैमरून एवं कांगो में भी पाये जाते हैं।

2. वनीय नीग्रो :–

यह प्रजाति दीर्घ कपालिक होते हैं। इनकी त्वचा का रंग भूरा या काला, मोटे होंठ जो बाहर की और मुड़े हुए, ठोढ़ी छोटी, बाल काले एवं घुंघराले, औसत कद 165 सेमी0 व इनके पैर छोटे एवं बाहें लम्बी होती हैं नाक का आकार छोटा एवं चिपटा होता हैं। इनका विस्तार पश्चिम में सेनेगल नदी से पूरब में उत्तरी रोडेशिया तथा एवं दक्षिणी अंगोला तक फैला हुआ हैं।

3. नियोलिटिक नीग्रो :–

ये दीर्घ कपालिक होते हैं। ललाट कम ढ़लुआ होता हैं। अन्य नीग्रो प्रजातियों की तुलना में इनका चेहरा कम निकला होता है। इनकी त्वचा का रंग काला, नाक अपेक्षाकृत ऊंची और पतली तथा औसत कद 168 सेमी0 पाया जाता है। यह प्रजाति मूल नीग्रो एवं हैमिटी प्रजातियों की मिश्रण मानी जाती है। इनका विस्तार सूडान में नील नदी की ऊपरी घाटी में है।

4. अर्द्ध हैमिटी :–

यह प्रजाति दीर्घ कपालिक होती है। ये भी मूल नीग्रो एवं हैमिटी प्रजातियों की वर्ण शंकर प्रजाति है। इनकी त्वचा का रंग गहरा भूरा एवं काला होता है। नाक चौड़ी चपटी अथवापतली, बाल काले, होंठ मोटे जबड़ा बाहर की और निकला हुआ एवं औसत कद 170 सेमी0 होता है। इनका विस्तार कीनिया, तंजानिया एवं युगांडा में मिलता है।

5. बांटू नीग्रोः– यह प्रजाति अफ्रीका में सर्वाधिक मात्रा में पायी जाती है। प्रायः अधिकतम रूप में ये भूमध्य रेखा के दक्षिण में पाये जाते हैं। वितरण की दृष्टि से इन्हें निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जाता है।

अ.) पूर्वी बांटूः–ये विक्टोरिया झील के निम्न भूमि के क्षेत्र में बसे हैं। ये पूर्वी एशिया के सर्वाधिक विकसित लोगों में से हैं। इनकी तीन उपजातियां हैं–**1.हैमिटो नीग्रोइड 2.बहेरा नीग्रोइड 3.बंगड़ा नीग्रोइड**

ब.) कीकूमू बांटूः– यह एक कृषक जनजाति है जो कीनिया में पायी जाती है।

स.) साहिली बांटूः– अफ्रीका के पूर्वी तट पर बसे हुए बांटू प्रजाति को साहिली बांटू की संज्ञा दी जाती है। इनकी एक विशेष भाषा है जो पूर्वी अफ्रीका के अधिकांश भागो में बोली जाती है।

6. बुशमैन हाटेन्टोट्स :–

अफ्रीका की ये प्रमुख प्रजातियां हैं। बुशमैन कालाहारी मरुस्थल तथा हाटेन्टोट्स द0प0 अफ्रीका में पायी जाती हैं। ये मध्यम कपालिक होते हैं। इनका ललाट पतला एवं खड़ा, त्वचा का रंग काला, बाल अधिक घुंघराले एवं काले, आंखे काली, नाक चौड़ी तथा होंठ मोटे होते हैं। इनका औसत कद 152 सेमी0 होता है।

7. पिग्मीः–

पिग्मी अधिकतर लघु कपालिक होते हैं। त्वचा का रंग पीला भूरा या काला, बाल घुंघराले ऊन के समान आंखेकाली भूरी तथा भौंहे उभरी हुयी होती हैं। नाक चौड़ी चपटी, होंठ मोटे एवंउभरे हुए होते हैं तथा औसत कद 140 सेमी0 होता है। इनका विस्तार कांगो बेसिन हिन्द एवं प्रशान्त महासागर के द्वीपों में अण्डमान, न्यूगिनी, फिलीपीन्स तथा मैलेनेशिया द्वीपों में पाया जाता है। इस प्रकार विश्व में अनेकों एवं अगणित प्रकार की प्रजातियां पायी जाती हैं।

7.8 सारांश

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि विश्व में अनेकों अनगिनत प्रकार की जनजातियां पायी जाती हैं जिनके वितरण में विभिन्नताएं अधिक हैं। आज मानव प्रजातियों का वर्गीकरण नृजातिशास्त्रियों के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य है और इस चुनौती को पूर्णतः स्वीकार करते हुए नृजातिशास्त्रियों ने मानव प्रजातियों का वर्गीकरण करने का प्रयास किया है। जिसका विवरण इस इकाई में सारगर्भित रूप से किया गया है। अपेक्षा है यह इकाई विद्यार्थियों के प्रजाति सम्बन्धी ज्ञान में वृद्धि करने में सहायक सिद्ध होगी तथा विद्यार्थियों को प्रजातियों के अध्ययन हेतु प्रेरित करते हुए प्रजाति वर्गीकरण में सहायक सिद्ध होगी।

7.9बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :–

प्रश्न–01– प्रजाति से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न–02– प्रजातियों को परिभाषाओं सहित स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न–03– प्रजाति वर्गीकरण के आधारी तत्वों का उल्लेख कीजिए।

प्रश्न–04– ग्रिफिथ टेलर के प्रजाति वर्गीकरण का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–05– विश्व की प्रजातियों के सामान्य वर्गीकरण का प्रस्तुत कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– प्रजातियों के वर्गीकरण में त्वचा के रंग के महत्व का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–02– विश्व में मंगोलायड प्रजातियों के वितरण को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न–03– मानव की प्रमुख प्रजातियों के नाम लिखिए।

प्रश्न–04– क्रोबर के अनुसार प्रजातियों को वर्गीकृत कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

प्रश्न–01–निम्न में से कौन सी प्रजाति सबसे शुद्ध मानी जाती है?

अ– नीग्रो ब– कॉकेसाइड

स– मंगोलायड द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न–02– निम्न में से किस प्रजाति के बाल ऊन जैसे होते हैं ?

अ– कॉकेसायड ब– नीग्रोइड्स

स– मंगोलायड द– आस्ट्रेलायड

प्रश्न–03– किसने कहा था कि ''मानव प्रजाति नस्ल को प्रकट करती है न कि सभ्यता को''–

अ– ग्रिफिथ ट्रेलर ब– हैडन

स– क्रोबर द– ब्लॉश

प्रश्न–04– निम्न में से किसे मानव प्रजातियों के प्रथम वर्गीकरण का श्रेय दिया जाता है ?

अ– ग्रिफिथ ट्रेलर ब– ब्रून्श

स– वर्नियर द– हक्सले

प्रश्न–05– मानव प्रजातियों के वर्गीकरण का आधार है–

अ– मानव शरीर के बाह्य लक्षण ब– मानव शरीर के आन्तरिक लक्षण

स– उपरोक्त दोनों द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न–06– विषुवत रेखा से ध्रुवों की ओर जाने पर मनुष्य की त्वचा का रंग हो जाता है–

अ– काले से श्वेत ब– श्वेत से काला

स– श्वेत से पीला　　द– पीले से श्वेत

प्रश्न–07– निम्न में से कौन मानव उद्भव स्थान मध्य एशिया को माना है–

अ– ब्लॉश　　ब– हक्सल

स– ग्रिफिथ ट्रेलर　　द– वर्नियर

उत्तर माला–

01–अ 02–ब 03–अ 04–स 05–स 06–अ 07–स

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज। पृष्ठ सं–147 पैरा 2,3,4, पृष्ठ सं 148

02– मानव भूगोल, डॉ0 मो0 हारुन, विजडम पब्लिकेशन मैदागिन वाराणसी तृतीय संस्करण। पृष्ठ सं 55, 57

03– मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण,।

04– भूगोल मुख्य परीक्षा के लिए, डी0आर खुल्लर, मैग्राहिल प्रकाशन, 12वां पुनः संस्करण।

05– मानव भूगोल डॉ काशीनाथ सिंह एवं डॉ जगदीश सिंह, ज्ञानोदय प्रकाशन 234 गोरखपुर, पृष्ठ सं 82, 81 पैरा सं 01,

06– **Hoebel E.A. Man in the Primitive World. P-116**

इकाई–8 विश्व की प्रमुख जनजातियां– सेमांग, एस्किमो, बद्दू, बुशमैन, मसाई, किरगीज

इकाई की रूपरेखा

8.1– प्रस्तावना

8.2– उद्देश्य

8.3– जनजातियां

8.4– विश्व के प्रमुख जनजातीय प्रदेश

8.5– विश्व की प्रमुख जनजातियां

8.6– सारांश

8.7– बोध प्रश्न

8.8– सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.1 प्रस्तावना Preface

मानव का जब इस धरातल पर उद्भव हुआ तो उसे एक अपरिवर्तित शुद्ध वातावरण उपहार स्वरूप प्राप्त हुआ। हालॉकि मानव का उद्भव इसी पर्यावरण से हुआ। पर उसे यह अवसर प्राप्त हुआ कि वह इस वातावरण में परिवर्तन एवं परिमार्जन कर सके। और भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन कर अपने अनुकूल सांस्कृतिक पर्यावरण का निर्माण कर सके। इसी क्रम में मानव अपने उद्भव काल से ही पर्यावरण के साथ क्रिया करता रहा है तथा मानव पर्यावरण की उपज होने के साथ–साथ मानव एक भौगोलिक कारक भी बनकर उभरा जो एक समय में एक साथ दो कार्य– एक तो भौतिक पर्यावरण के साथ तथा दूसरी और सांस्कृतिक पर्यावरण के साथ क्रिया करता रहा। इसी कारण मानव पर्यावरण के सम्बन्धों में परिवर्तन होता रहा। मानव अपनी सृजन क्षमता, बुद्धि एवं कौशल में निरन्तर पैनापन लाता गया और वर्तमान में वही अपरिष्कृत मानव इस धरातल का सबसे उत्कृष्ट प्राणी बन कर उभरा है। मानव सदैव विकास पथ पर अग्रसर होता रहा परन्तु विकास की इस धारा में विभिन्नता बहुत रही, कहीं पर मनुष्य आदिमानव से परिष्कृत आर्थिक एवं औद्योगिक मानव बन गया, पर कहीं वह अपने मूल रूप में ही रह गया। इसके दो मूल कारण रहे एक तो पर्यावरण की दुरूहता (उच्चावचीय विविधता, जलवायु की कठोरता, मृदा की उर्वरता आदि), दूसरा अपनी पुरातन संस्कृति के प्रति अटूट प्रेम। इसी कारण मानव विकसित एवं अविकसित दो समूहों में बंट गया। इन्हीं अविकसित एवं अल्प विकसित अथवा विकास की धारा से दूर रहने वाले लोगों को जनजातियों के रूप में जाना जाता है। हालॉकि आज इनमें भी तेजी से परिमार्जन हो रहा है। प्रस्तुत इकाई में मानव विश्व की मानव प्रजातियों का विशेष वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

8.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

01– विश्व के अल्पविकसित समाज के विषय में विद्यार्थियों को अवगत कराना।

02– विश्व में पायी जाने वालीजनजातियों का विवरण प्रस्तुत करना।

03– विश्व में पायी जाने वाली जनजातियों के सामाजिक व्यवस्था, आर्थिकी की और विद्यार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना।

04– विश्व में पायी जाने वाली जनजातियों के वितरण एवं उनकी वास्तविक स्थिति से अवगत होना तथा, पिछड़ी जनजातियों की अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक संरचना में सुधार हेतु योजना तैयार करने के लिए विद्यार्थियों में प्रेरणा उत्पन्न करना।

05– जनजातीय विकास कार्यक्रम को पुष्ट करना आदि।

8.3 जनजातियाँ (Tribes)

मानव सभ्यता के विकास के क्रम में मानव समाज भौतिक पर्यावरण का उपयोग करके अपने लिए सांस्कृतिक (भोजन, वस्त्र, आवास, परिवहन, एवं अन्य अवस्थापनात्मक सुविधाएं) भूदृश्य का निर्माण किया है जो मानव के विकसित होने का प्रतिनिधित्व करता है तथा मानव की जीवन शैली का परिचायक है। यही प्रगतिशील मानव समाज सभ्य समाज या सभ्य मानव के नाम से जाना जाता है। इस सभ्य मानव ने अनेक सामाजिक आर्थिक राजनीतिक आदि क्षेत्रों के साथ ही विज्ञान और तकनीकी में अधिक प्रगति किया है। आज के मनुष्य ने संचार माध्यमों, प्रौद्योगिकी विकास, परिवहनीय विकास आदि के साथ विज्ञान और तकनीकी क्षेत्रों में इतना विकास किया है कि विश्व की भौतिक दूरी को कम करने में सफलता प्राप्त कर ली है। इसी के परिणाम सम्पूर्ण विश्व एक सूत्र से बंध गया है जिसे वैश्वीकरण की संज्ञा दी जाती है। इसका एक नकारात्मक पक्ष यह भी है कि मानव के कृत्रिम साधन इस कदर मानव मष्तिष्क में बस गये हैं कि वह इन्हीं कृत्रिम मशीनों को अपनी दुनिया समझने लगा है और प्रकृति से मानव की दूरी को निरन्तर बढ़ाता जा रहा है।

मानव प्रजातियों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि समस्त मानव जाति का उद्‌भव एक ही प्रक्रिया एवं एक ही वंश परम्परा से हुई है। पूर्व के वर्षों में पर्यावरणीय प्रभाव, जातिगत गुण, प्रगति के प्रति त्तपरता एवं कर्मठता के कारण अनेक मानव समुदाय विकास के मार्ग पर आगे बढ़ते चले गये किन्तु बहुत से मानव वर्ग जो इनसे अलग विचारधारा रखते थे विकास की इस धारा में पीछे रह गये और आज भी वही प्राचीन परम्परा के अधीन अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मानव के विकास के आधार पर सम्पूर्ण मानव समाज प्रमुख रूप से निम्नलिखित तीन वर्गों में विभक्त हो गया–

1. विकसित समाज
2. विकासशील समाज
3. अल्पविकसित या आदिम अथवा जनजातीय समाज।

आदिम अथवा जनजातीय समुदाय विश्व के विभिन्न भागों में पाये जाते हैं जो आज की आधुनिक व्यवस्था से दूर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अपने प्राचीन परम्परा, व्यवसाय, जीवन शैली, सामाजिक व्यवस्था को बचाए रखने के लिए सदैव प्रयासरत रहते हैं। इसीलिए आधुनिक समाज से दूर छोटे–छोटे समूहों में रहकर प्राथमिक व्यवसायों में अपने आप को संलग्न किए हुए हैं जैसे आखेट, प्राकृतिक वस्तुओं का संग्रह, पशुपालन, मत्स्याखेट, चलवासी जीवन व्यतीत कर रहे हैं और अपनी निजी व्यवस्था को संजोने में व्यस्त हैं। लेकिन आज इनकी स्थिति को विभिन्न सरकारें संज्ञान में लेकर इनके विकास के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाएं चला रहीं हैं।

8.4.1– विश्व के प्रमुख जनजातीय प्रदेशः–

मानव ने अपने विकास के प्रारम्भिक चरण में ऐसे स्थान का चयन किया जो उसके लिए विशेष अनुकूल था तथा जहां पर उसके लिए पानी और भोजन उपलब्ध हो सके। विश्व की अधिकांश जनजातियां विषम भौगोलिक दशाओं वाले प्रदेशों में पायी जाती हैं तथा इनकी प्राप्ति कुछ विलग प्रदेशों में भी पायी जाती है। हालांकि आज जनजातियां विश्व के लगभग सभी प्रदेशों में पायी जाती हैं पर कुछ ऐसे प्रदेश हैं जहां विशेष प्रकार की जनजातियां पायी जाती हैं जैसे–सघन वन प्रदेश, मरूस्थलीय प्रदेश, घास के मैदान, ऊँचे–नीचे पर्वतीय एवं पठारी भाग आदि। जनजातियों का एक गुण यह भी होता है कि वे सभ्य समाज से थोड़ी दूरी बनाकर रहना पसन्द करते हैं। इसीलिए ये ऐसे ही विलग प्रदेशों में अपने निवास बनाते हैं। विभिन्न आदिवासी समुदाय मनुष्य अपने को अन्य समुदायों से अलग रखते हुए अपनी विशेष पहचान रखते हैं। विश्व के विभिन्न भौगोलिक प्रदेश और वहाँ की निवासित जनजातियों को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

तालिका क्र–8.1

क्षेत्रवार विश्व की प्रमुख जनजातियां

क्रम सं0	विश्व के भौगोलिक प्रदेश	निवास क्षेत्र	प्रमुख जनजातियां
01	विषुवत रेखीय वन प्रदेश	1.कांगो बेसिन (अफ्रीका) 2.अमेजन बेसिन (द0अमेरिका) 3.मलय प्रदेश (द0पू0 एशिया)	पिग्मी बोरो सेमांग, सकाई
02	उष्ण मरूस्थलीय प्रदेश	1.अरब प्रदेश (एशिया) 2.कालाहारी मरूस्थल(अफ्रीका)	बद्दू बुशमैन
03	मानसूनी वन व पर्वतीय प्रदेश	1.भारत 2.उ0 अमेरिका	नगा, गोंड, संथाल भील, टोडा, भोटिया, थारू, रेड इण्डियन
04	घास के मैदान	1.स्टेपी 2.सवाना	खिरगीज मसाई
05	टुण्ड्रा एवं शीत मरुस्थल	1.ग्रीनलैण्ड एवं उत्तरी कनाडा 2.उ0 यूरोप 3.उ0 साइबेरियाा	एस्किमो लैप्स याकूत, युकाधिर, चुकची सेमोइड्स

8.5 विश्व की प्रमुख जनजातियां

8.5.1– सेमांगः– (Semang)

8.5.1 अ– निवास क्षेत्रः–

सेमांग जनजाति के लोग भूमध्यरेखीय प्रदेश में स्थित मलाया तथा दक्षिणी थाईलैण्ड के पर्वतीय भागों में निवास करते हैं। ये विशेष रूप से संग्रही जनजाति हैं परन्तु शिकार भी करते हैं। यह पिछड़ी एवं घुमक्कड़ जनजाति मानी जाती है। अधिक वर्षा और ऊंचे तापमान के कारण मलाया में भूमध्य रेखीय वन और दक्षिणी थाईलैण्ड में मानसूनी प्रकार के वन मिलते हैं। उष्णार्द्र भूमध्यरेखीय जलवायु, सघन सदाबहार वन, बीहड़ क्षेत्र, नदी नाले, अनेक जंगली जीव, आवागमन की दुरूहता के कारण भौगोलिक दशाएं अत्यधिक जटिल हैं। ये जंगली प्रदेश ही सेमांग लोगों का निवास क्षेत्र है। यहां तापमान वर्ष भर उच्च (20^0 से 27^0) और वार्षिक वर्षा 200 सेमी0 से अधिक पायी जाती है। वनों में अनेक प्रकार के जीव जन्तु पाये जाते हैं।

8.5.1 ब– शारीरिक लक्षण (Physical Traits) :–

सेमांग जनजातीय लोग नीग्रिटो प्रजाति से सम्बन्धित माने जाते हैं जो कद में नाटे (छोटे) होते हैं। ये आकृति तथा डील–डौल में अण्डमान फिलीपीन्स और मध्य अफ्रीका की निग्रीटो जातियों के लोगों से मिलते जुलते हैं। पुरुष और स्त्रियों की औसत लम्बाई क्रमशः लगभग 150 सेमी0 और 145 सेमी0 पायी जाती है। इनकी त्वचा का रंग गहरा भूरा तथा बाल छल्लेदार तथा काले होते हैं। इनकी नाक चौड़ी, चपटी तथा होठ मोटे होते हैं और चेहरा आगे निकला हुआ होता है। इनमें स्पष्टतः अफ्रीका एवं पश्चिमी प्रशान्त महासागरीय द्वीपों के कृष्ण–वर्ण हब्सी लोगों की सी मान्यताएं मिलती हैं। इस हेतु इन्हें निग्रीटो जनजाति से सम्बन्धित माना जाता है। कुछ

विद्वानों का यह मानना है कि सेमांग लोग दक्षिण एशिया से आकर अफ्रीका में आकर बसे हैं। ये लोग किसी स्थान पर तीन या चार दिनों से अधिक नहीं ठहरते।

8.5.1 स– व्यवसाय (Occupation) :–

सेमांग लोग वनों में प्राप्त होने वाली वस्तुओं को एकत्रित करते हैं और उसी पर जीवन निर्वाह करते हैं। ये लोग जंगल से कंद, मूल, फल एकत्रित करते हैं और भोजन के लिए उन्हीं पर निर्भर करते है। इस प्रकार साधारणतया ये लोग कृषि अथवा पशुपालन नहीं करते और प्रकृति प्रदत्त जंगली पदार्थों पर निर्भर रहते हैं। उष्णार्द्र जलवायु तथा उपजाऊ मिट्टी होने के कारण विविध प्रकार के वृक्ष तथा वनस्पतियाँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं। इनका कोई निजी व्यवसाय नहीं होता है। ये लोग 20 से 25 लोगों के दल के साथ चलते है तथा सदैव गतिशील रहते हैं और किसी स्थान पर ज्यादा दिनों तक नहीं रुक सकते क्योंकि जंगल में पाये जाने वनोत्पादों को एकत्र करने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान की और भ्रमणशील रहते हैं। ये लोग जंगलों से वनोत्पाद के अलावा इनमें पाये जाने वाले पशुओं जन्तुओं का जैसे जलाशय से मछली का पकड़ना, सुअर, बन्दर, चूहा, गिलहरियों का शिकार करते हैं।

8.5.1 द– भोजन (Food) :–

सेमांग जाति के लोग अधिकतर शाकाहारी होते हैं और कंदमूल तथा वन से प्राप्त फलों से प्राप्त फलों, फूलों, कोपलों आदि का भोजन करते हैं। किन्तु ऐसे शाकाहारी पदार्थों के पर्याप्त मात्रा में न मिलने के कारण ये लोग जलाशयों से मछलियां भी पकड़ते हैं। ये रसदार गोल फल, ढिबरी, पिथ पत्तियाँ और कोपलों, जड़ों और कन्दों को ही एकत्रित करते हैं जिनमें जंगली रतालू प्रमुख हैं जिसकी पहचान उसकी पत्तियों से की जाती है। रतालू को खोदकर निकाला जाता है तथा इनकी नोकों को गर्म कर कड़ा कर लिया जाता है। प्रायः यह कार्य स्त्रियां करती हैं लेकिन पुरूष भी इस कार्य में सहयोग करते हैं। जंगली रतालू इनका प्रमुख भोज्य पदार्थ है। इनका प्रमुख भोजन प्रायः शाम को तैयार किया जाता है, प्रातः काल के समय ये लोग नास्ता कर लेते हैं तथा जलपान भी करते हैं। जंगली रतालू इनके भोजन का प्रमुख अंग है। जंगलों से प्राप्त होने वाले फलों में कुछ विषैले फल भी होते हैं जिनका उपयोग ये बड़ी चतुराई से करते है। जैस रतालू को नदी या दलदल में भिगो दिया जाता है और फिर नुकीले रत्तन की पत्तियों में इनको रगड़ा जाता है फिर थैलों में उसे निचोड़ते हैं तथा आग पर इसे शुष्क किया जाता है। ये लोग भोजन को बचाकर नहीं रखते क्योंकि उष्णार्द्र जलवायु के कारण उसके जल्दी सड़ जाने की सम्भावना रहती है। कुछ ऋतुओं **डूरियन Durian** और **मैंगोस्टीन Mangosteen** जैसे फल पर्याप्त मात्रा में यहां उपलब्ध हो जाते हैं।

चित्र–8.1 मलेशिया के सेमांग

8.5.1 य–वस्त्र (Clothing) :–

उष्णार्द्र जलवायु के कारण सेमांग लोग वस्त्र कम पहनते हैं। वस्त्र के रूप में वृक्षों की छालों, पत्तियों तथा बेंत आदि की पतली–पतली पत्तियों से बनाये गये परिधानों का प्रयोग किया जाता है। स्त्रियां पेड़ की छालों को कूटकर उससे वस्त्र का निर्माण कर जिसका स्वरूप घाघरा या स्कर्ट के आकार का होता है, को पहनती हैं। स्त्रियां बांस के लम्बे दांतेदार कंघे को अपने साथ रखती हैं। जिस पर चित्रकारी भी रहती है। इनका मानना है कि बांस के बने ऐसे कंघे को धारण करने से बीमारी, जादू आदि से छुटकारा मिल जाता है। किसी विशेष उत्सव के अवसर पर स्त्रियां, पुरुष एवं बच्चे पहनने के लिए फूल–पत्तियों का प्रयोग करते हैं।

8.5.1 य– उपकरण (Tools) :–

सेमांग लोग भोजन को पकाने के लिए कच्चे बांस की नली का प्रयोग करते हैं। स्त्रियां बांस तथा रटन से बनाई टोकरियों में जंगली वस्तुओं को एकत्रित करती हैं। नदियों या अन्य जलाशयों को ये लोग बांस का बेड़ा (Raft) बनाकर पार करते हैं। बांस का प्रयोग धनुष और बाण बनाने के काम में भी होता है। इस प्रकार सेमांग के अधिकांश महत्वपूर्ण औजार बांस से बनाये जाते हैं। शिकार के लिए प्रयुक्त होने वाले बाण के अग्रभाग को नुकीला करके उसमें जंगली वृक्षों तथा लताओं से प्राप्त होने वाले विष को लगा दिया जाता है। शिकार के लिए ये लोग लकड़ी के लाठी, डण्डे तथा नुकीली बर्छियों का भी उपयोग करते हैं। ये लोग नदियों को पार करने के लिए नाव का प्रयोग करते हुए नहीं देखे जाते हैं। सेमांग लोग नदी को पार करने के लिए बांस के बने बेड़े तैयार कर लेते है। पंछी पकड़ने के लिए अंजीर के चिपकने वाले लस (जिसे स्थानीय भाषा में कहीं–कहीं **गुध** कहा जाता है)।

स्मरणीय– सेमांग जनजाति के धनुष के तीर को पतला कर के उसे नुकीला बनाते हैं तथा इस नुकीले भाग को **इपोह** नामक विष से बुझाया जाता है। यह विष **उपास** वृक्ष की गोंद से निकाला जाता है।

8.5.1 र– निवास गृह (झोपड़ियां) :–

सेमांग विचरणशील होते हैं जिसके कारण ये स्थायी निवास नहीं बनाते हैं। ये लोग लकड़ी, बांस और घास पत्तों से झोपड़ियां बनाकर रहते हैं। जंगल के बीच में अपेक्षाकृत ऊंची भूमि पर वृक्षों को साफ करके, अथवा झुकी हुई चट्टानों के नीचे सेमांग लोग अस्थायी बस्तियां बना लेते हैं। जिसमें कुछ दिनों या महीनों तक रहते हैं। झोपड़ियों के लिए स्थान का चुनाव परिवार के वयोवृद्ध लोग करते हैं। झोपड़ियां प्रायः बांस और लकड़ी के खम्भों और ढांचों पर खजूर के पत्तों को मढ़कर बनायी जाती हैं। गृह निर्माण में स्त्रियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

8.5.1 ल– सामाजिक संगठन (Social Organzation) :–

सेमांग का अपना कोई जनजातीय संगठन नहीं होता है। इनका मौलिक सामाजिक संगठन इनका संयुक्त परिवार होता है। सेमांग लोग कई छोटे–छोटे या समूहों में बंटे होते हैं। इनके परिवार में माता–पिता और बच्चे रहते हैं तथा कभी–कभी विवाहित लड़के लड़कियां रहते हैं। परिवार में भोजन पर सबका बराबर का अधिकार होता है। एक व्यक्ति लगभग 18 वर्ष की उम्र में विवाह करता है किन्तु वह अपनी पत्नी का चयन अपने पड़ोस के समाज से ही करता है। विवाहोपरान्त वह एक या दो वर्षों के लिए अपनी पत्नी के सम्बन्धियों के यहां रहता है और इसके बाद अपने परिवार के विकास के लिए अपने माता–पिता के पास पुनः वापस आ जाता है। इनके समाज में जब उत्सव होते हैं उस दौरान आस–पास के कई दल इकट्ठा होते हैं और खाने पीने के साथ नाच गाना भी करते हैं। सेमांग लोग ढोल, बांसुरी का प्रयोग करते हैं। इनके समाज में जब किसी की मृत्यु हो जाती है तो शव के साथ विभिन्न प्रकार की सामग्री रखकर उसे दफना देते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनमें सहयोग की भावना होती है। इनका जीवन डुरियन फल एवं बांस के इधर–उधर घूमता रहता है। इन लोगों को पौष्टिक भोजन प्राप्त न हो पाने के कारण इनकी संख्या दिनों–दिन कम होती जा रही है। इनमें धार्मिक भावनाएं होती हैं, उपवास व्रत आदि रखते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इन पर बाह्य संस्कृतियों का प्रभाव भी पड़ा है।

8.5.2– एस्किमो (Eskimo):–

अशरणदायी आर्कटिक और अंटार्कटिक टुण्ड्रा प्रदेशों में मानव व्यवहार अधिकांशतः वातावरण द्वारा निर्धारित होता है। आर्कटिक प्रदेश, निर्धारणवाद का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है, जिसमें आधारभूत आवश्यकताएं (भोजन, वस्त्र, आवास, उपकरण आदि) सामाजिक–आर्थिक संरचना और सांस्कृतिक लोकाचार को

पर्यावरणीय कारकों द्वारा अधिक प्रभावित किया है।[01] प्रदेश अत्यधिक शीतल और हिमाच्छादित रहने के कारण लगभग जन विहीन प्रदेश है। यह प्रदेश आर्कटिक महासागर के चारों और विस्तृत है जिसके अंतर्गत उत्तरी कनाडा, ग्रीनलैण्ड तथा यूरेशिया के उत्तरी भाग सम्मिलित हैं। इस विस्तृत टुण्ड्रा प्रदेश के कुछ जनजातियों का निवास है। जिन्हें कनाडा और ग्रीनलैण्ड के निवासी एस्किमो कहलाते हैं। डॉ0 रिन्क के अनुसार इन जनजातियों को एस्किमो नाम अमेरिकी इण्डियनों द्वारा दिया गया। इण्डियनों की भाषा में एस्किमों शब्द का अर्थ होता है **कच्चा मांस खाने वाला।** अपने लिए ये लोग इन्यूत शब्द का प्रयोग करते हैं जिसका शाब्दिक अर्थ '**सच्चे लोग**' होता है। इन्हें यूरोप में स्कैंडनेविया के उत्तरी भाग में लैप्स (Laps) या सामी (Sami) कहा जाता है। साइबेरियाा के उत्तरी भाग में समोयद (Samoyeds), याकूत (Yakuts), यूकाघीर (Yukaghirs), चुकची (Chukchis) जनजातियों के लोग रहते हैं।

8.5.2 अ– एस्किमो का निवास क्षेत्र :–

एस्किमो जनजाति सामान्यतः आर्कटिक एवं टुण्ड्रा प्रदेश तक सीमित हैं। एस्किमो उत्तरी अमेरिका में कनाडा और अलास्का के उत्तरी तटों पर, समीपवर्ती बेफिन आदि द्वीपों तथा ग्रीनलैण्ड के तटीय भागों में निवास करते हैं। इसकी सभ्यता का विकसित रूप बेफिन द्वीप और हडसन खाड़ी के उत्तरी भागों में पाया जाता है जिसका विस्तार 60^0 से 70^0 उत्तरी अक्षांशों के मध्य है। ग्रीनलैण्ड के पश्चिमी तट पर 65^0 से 80^0 उत्तरी अक्षांशों के मध्य एस्किमों पाये जाते हैं। संख्यात्मक दृष्टिकोंण से देखें तो 12000 इन्यूतों में अधिकांश आर्कटिक घेरे के दक्षिण में, लगभग 50000 ग्रीनलैण्ड, 42000 एल्यूसियन द्वीपों में, 25000 कनाडा में और 1500 साइबेरियाा (रूस) के उत्तरी पूर्वी भाग में रहते हैं।

8.5.2 ब– प्राकृतिक पर्यावरणः–

ध्रुव प्रदेश के निकट टुण्ड्रा प्रदेश के अन्तर्गत स्थित एस्किमो के निवास क्षेत्र में कठोर सर्दी पड़ती है। वर्ष के 9 महीने कठोर शीतल जलवायु के कारण धरातल तथा समुद्र हिमाच्छादित रहता है। साइबेरियाा का टुण्ड्रा प्रदेश, विश्व में निम्नतम तापमान प्रकट करता है। **येना नदी** के मुहोने पर जनवरी मास का तापमान -51^0 सेग्रे0 तापमान पाया जाता है जबकि **बर्खोयांस्क** में यह -60^0 सेग्रे0 तापमान पाया जाता है। बर्खोयांस्क के दक्षिण भाग में -70^0 सेग्रे0 तापमान दर्ज किया जा चुका है। वर्ष के केवल 3 से 4 महीने नदियां बर्फ से मुक्त हो पाती हैं। इन्हीं महीनों में ही बसंत, गर्मी और पतझड़ सभी ऋतुओं का चक्र पूरा हो जाता है। यहां का शीत तापमान और लम्बी काली रातें काफी निराशाजनक होती हैं। इस को विभिन्न विद्वानों (जिन्होंने एस्किमो जनजातियों पर शोध कार्य किया है) ने सिद्ध किया है। यहां की वातावरणीय दशाएं यहां पर अनुकूलन कर चुके लोगों के भी मनोबल को गिरा देती हैं। यह अंधेरापन तथा मिश्रित एकांकीपन उत्पन्न करता है जो मष्तिष्क विकार, तंत्रिका संबन्धी विकार तथा पागलपन को जन्म देता है। कभी–कभी यह वातावरण यहां के लोगों को आत्महत्या के लिए भी प्रेरित करता है। जाड़े की ऋतु लम्बी होती है और दिन बहुत छोटे होते है। इस समय उत्तर दिशा से तेज बर्फीले आंधियां चलती हैं जिन्हें ब्लीजार्ड (Blizzard) कहते हैं। शीतल कठोर जलवायु तथा मिट्टी के अभाव में यहां वृक्ष नहीं उग पाते। केवल ग्रीष्मकाल में शैवाल, काई, लिचेन, कुछ रंग–बिरंगे फूल आदि धरातल पर दिखाई पड़ते हैं। टुण्ड्रा के शीत प्रदेश में वनस्पति की भांति जीव–जन्तु भी कम मिलते हैं। स्थल पर रेंडियर, कस्तूरी मृग, ध्रुवीय भालू, खरगोश, लोमड़ी, गिलहरियां आदि जीव पाये जाते हैं।

8.5.2 स– शारीरिक लक्षण (Physical Traits) :–

एस्किमो सहित ध्रुव प्रदेश की निवासी सभी जनजातियां याकूत, चुकची, युकाघीर आदि मंगोलाइड प्रजाति से सम्बन्धित हैं। इनका शारीरिक कद छोटा (165–163 सेमी0) होता है। इनके शरीर हिष्ट–पुष्ट एवं पुटठे मांसल होते हैं। इनके बाल काले पूर्णतः काले होते हैं तथा कड़े और सीधे होते हैं। ये लोग बाल कभी नहीं कटवाते। कभी–कभी इनके बच्चों के बालों को कुतर दिया जाता है। स्त्रियां अपने सिर पर बालों का एक विशेष प्रकार का जूड़ा बनाती हैं तथा उनकी सजावट के लिए विभिन्न प्रकार के रंगीन फीते काम में लाती हैं। इनकी त्वचा का रंग पीला या पीला–भूरा, नेत्र काले या भूरे होते हैं। आंखों की पलकें पतली और झुकी हुयी होती हैं जो मंगोलियाई मोड़ (Mongolian Fold) को प्रकट करती है। इनका चेहरा लम्बा और नाक चपटी, गाल गोल और मांशल, मुंह चौड़ा, जबड़े भारी एव विस्तीर्ण एवं दांत सफेद व मजबूत होते है।

8.5.2 द–व्यवसाय (Occupation) :–

एस्किमो का मुख्य कार्य आखेट करना है। उनके और उनके परिवार का जीवन जीवों के आखेट पर ही निर्भर है। इनके समस्त भोज्य पदार्थ, ध्रुवीय प्रदेश में पाये जाने वाले जीवों से ही प्राप्त होते हैं। इनकी भोजन सामग्री, वस्त्र, गृह निर्माण सामग्री, परिवहन के लिए स्लेज गाड़ी अथवा नाव बनाने की सामग्री आदि सभी जीवनोपयोगी वस्तुएं शिकार किये गये जीवों से ही प्राप्त होती है। समुद्री तथा हिमाच्छादित क्षेत्रों में सील, बालरस और ह्वेल आदि विशाल जीवों के अतिरिक्त ध्रुवीय भालू का भी आखेट किया जाता है। ये लोग स्थल पर कैरीबो (Carybou), लोमड़ी, खरगोश, जंगली रेंडियर तथा पक्षियों का शिकार करते हैं। एस्किमो बर्फ को खोदकर उसके छिद्र बना देते हैं। इस छिद्र से सील मछली सांस लेती है। मछली की उपस्थिति का आहट पाकर ये लोग अपने हारपून नामक भाले से उसके मुंह को नाथ देते हैं और उसे बर्फ हटाकर पकड़ लेते हैं।

8.5.2 य– भोजन (Food) :–

एस्किमो जनजाति के अब तक के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ये जिन प्रदेशों में रहते हैं वहां पर कृषि कार्य तो बिल्कुल भी सम्भव नहीं है। इसलिए यहां के निवासियों का मुख्य भोजन पशुओं और मछलियों का मांस है जो कि विभिन्न रूपों में प्राप्त होता है, जिसे आखेट करके प्राप्त करते हैं। यहां की जलवायु ऐसी है कि शिकार किए गये मांस को काफी दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। एस्किमो लोग जब अधिक शिकार कर लेते हैं तो उसे संचित करने के साथ–साथ पास–पड़ोस के लोगों में बांट देते है। अधिक मांस संचय न करने के कारण शीत ऋतु में अधिक हिमावरण के कारण शिकार न कर पाने की स्थिति में भुखमरी के शिकार हो जाते हैं। एस्किमो मांस को अधिकांशतः कच्चा ही खाते हैं किन्तु कभी–कभी मांस को पकाकर भी खाया जाता है।

8.5.2 र– वस्त्र (Clothing) :–

एस्किमो जनजाति शीत प्रधान वातावरण में रहते हैं इसलिए इन्हें गर्म कपड़ों की आवश्यकता पड़ती है। एस्किमो लोग आखेट से प्राप्त वस्तुओं, पशुओं के चमड़े को ही वस्त्र के रूप में प्रयोग करते हैं। अधिकांशतः कैरीबो और सील मछली के चमड़े को पहना जाता है। चमड़े को वस्त्र के रूप में सिलने के लिए पशुओं की हड्डी से बनी सुई का प्रयोग किया जाता है तथा धागे के रूप में पशुओं की नशों का प्रयोग किया जाता है। इनके समाज में चमड़े का प्रयोग बहुतायत किया जाता है जिसे तैयार करने एवं छिलने के लिए दातों का प्रयोग किया जाता है। यही कारण है कि एस्किमों के दांत अल्प अवस्था में ही घिसकर मसूड़ों तक चले जाते हैं। ये लोग वस्त्र का प्रयोग ठंड से बचने के लिए करते हैं न कि फैशन के लिए। इसीलिए इनके वस्त्र लगभग एक समान होते हैं। इनके वस्त्र सुन्दर एवं कलात्मक ढंग से सिले होते हैं। चमड़े के रोंये को अन्दर की ओर रखते हैं तथा दूसरा भाग जो कि बाहर की ओर होता है उसे कलात्मक ढंग से रंगते हैं एवं सजाते हैं। आज के बदलते परिवेश में अब इनकी जीवनशैली में सुधार आ जाने से तथा बाहरी लोगों के हस्तक्षेप के कारण इन्हें कपड़े की उपलब्धता हो जाती है जो कि इनके जीवन को आधुनिकीकृत बनाने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं।

8.5.2 ल– गृह (House) :–

एस्किमो एक घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत करते हैं। इसी कारण इनमें क्षेत्रीय भावना कम देखी जाती है। ये स्थायी गृह का निर्माण प्रायः नहीं करते हैं और न ही किसी विशेष क्षेत्र से जुड़े होते हैं। लेकिन प्रत्येक एस्किमो का यह सपना होता है कि मुत्यु के समय अपने जन्मस्थान तक पहुॅच जाय। ये प्रायः झुण्ड के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं। जब कोई बाहरी व्यक्ति इनके झुण्ड में आता है तो उसकी शक्ति आजमाने लिए संघर्ष होता है। ग्रीष्मकाल में इनका काम खाल से बने तम्बू से चल जाता है। इनके पास सील की खाल का एक तम्बू होता है जिसे एक या दो खम्भों की सहायता से खड़ा कर दिया जाता है तथा किनारों पर पत्थर से दबा दिया जाता है। शीत ऋतु में इन्हें अधिक सुरक्षित आवास की आवश्यकता पड़ती है जिसके लिए एस्किमो का एक निर्माण कार्य विश्वभर में जाना जाता है। इनके द्वारा बनाए गये आवास को **इग्लू** के नाम से जानते हैं।

इग्लू Igloos :–

अस्थाई जीवन व्यतीत करने वाले एस्किमों बर्फ से बने एक घर का निर्माण करते हैं जिन्हें इग्लू के नाम से जाना जाता है जो कि पत्थर से बने मकानों से काफी समानता रखते हैं। इसकी निर्माण प्रक्रिया कुछ विशेष होती है। सर्वप्रथम हाथी दांत से बने चाकू से पतले दाने वाले हिमखण्डों को काटकर विना किसी ढांचे के एक गुम्बद का निर्माण करते हैं। प्रत्येक हिम पिण्ड को तेजी और कुशलता से काटकर सही ढाल के अनुरूप जमा

किया जाता है जो आगे के निर्माण के लिए कठोर आधार बन सके। गुम्बद के बाहर हिमशिला खण्डों को जमा कर दिया जाता है तथा दरारों को बर्फ से भर दिया जाता है। मुख्य गुम्बद की छत पर खाल का स्तर लगाया जाता है इस स्तर और छत के मध्य कुछ सेमी का खाली स्थान छोड़ा जाता है जिससे छत को अन्दर के गर्म तापमान से बचाया जा सके। एक एस्किमों द्वारा यात्रा करते समय अथवा रात्रि में रुकने की स्थिति में अस्थाई छोटा इग्लू आधे घंटे में तैयार कर लिया जाता है। जब एक से अधिक परिवार एक साथ रुकते है तो प्रायः एक बड़ा कमरा सभास्थल के रूप में तैयार किया जाता है जिसका उपयोग ओझा के प्रदर्शन के लिए, गाने और सभा के लिए किया जाता है और विश्राम के लिए चारो ओर कमरे बने होते हैं जो दालानों की सहायता से मुख्य कमरे से जोड़ दिया जाता है।

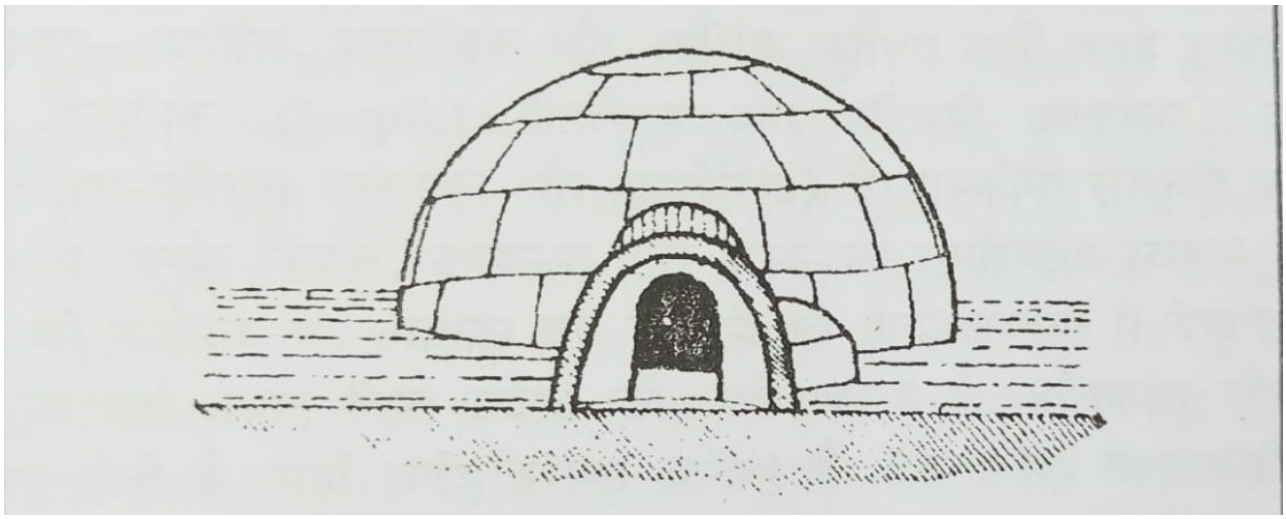

चित्र–8.2 एस्किमो के इग्लू

आवास को गर्म करने एवं अन्य कार्यों के लिए पशुओं की चर्बी का प्रयोग किया जाता है जो कि इन क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में यहां उपलब्ध हो जाती है। कोमल घीया पत्थर में गड्डा बनाकर उसमें चर्बी रखकर जलाया जाता है। जो मांस ये लोग कच्चा नहीं खा सकते उसे गहरी आयताकार डेकची में उबाल लिया जाता है।

8.5.2व–यातायात के साधन (Mean of Transportation) :–

एस्किमो स्थल पर यातायात के साधन के रूप में बिना पहिये की स्लेज (Sledge) नामक गाड़ी का प्रयोग करते हैं। स्लेज गाड़ी मुख्यतः ह्वेल की हड्डी से बनी होती है। कहीं–कहीं लकड़ी की उपलब्धता होने पर लकड़ी से भी बनाई जाती है। इन गाड़ियों को कुत्ते अथवा कुत्तों के समूह द्वारा खींचा जाता है। इस गाड़ी का आकार परिस्थितिजन्य होता है अर्थात् कहीं बड़ी तो कहीं छोटी होती हैं। किन्तु एक उपयोगी स्लेज 5 मीटर की होती है। इसे खींचने वाले कुत्तों की टोली को सम्भालने के लिए बड़ी कुशलता की आवश्यकता होती है। कुत्तों के दल में सबसे उत्साही कुत्ते को सबसे आगे, अगुआ के रूप में शेष अन्य कुत्तों से कुछ फीट की दूरी पर रखा जाता है तथा कमजोर और उच्श्रंखल कुत्ते को स्लेज के निकट रखा जाता है। इसी प्रकार समुद्र में आखेट करने के लिए वे चमड़े की नाव **"कायाक"** का प्रयोग करते हैं। इसकी बनावट इस प्रकार की होती है कि इसमें पानी प्रवेश नही कर पाता। नाव खेने के लिए दो धार युक्त पतवार को प्रयोग में लाया जाता है जिसमें लगे पैडिल की सहायता से नाव को मनमानी दिशा में ले जाया जा सकता है।

चित्र–8.3

एस्किमो जनजाति के आवास एवं स्लेज और भोजन

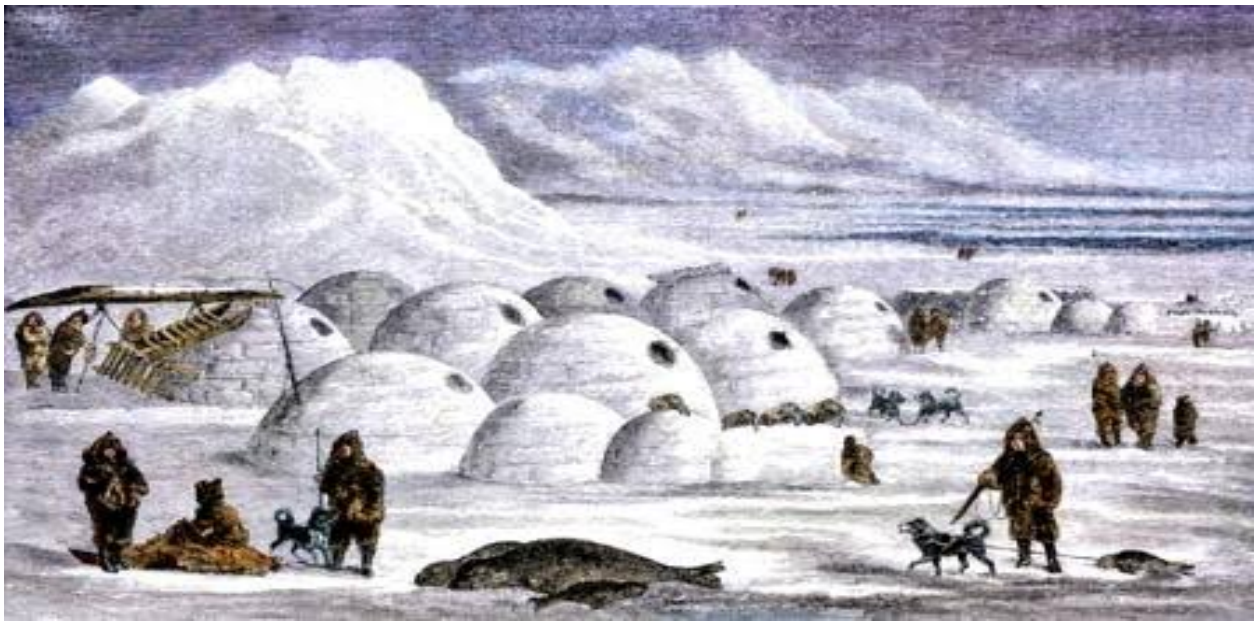

स्रोत–आनलाईन बेवपेज से डाउनलोडेड

8.5.2. श– अस्त्र और उपकरण (WeaponsAnd Tools)

'हारपून (Harpoon) एस्किमो का प्रमुख और परम्परागत हथियार है। जो लगभग 1.5 मीटर मीटर लम्बा भाले के आकृति का होता है। हारपून ह्वेल या वालरस की हड्डी से बनाये जाते हैं। शीत ऋतु में सील ही इनके भोजन का प्रमुख आधार होता है। सील जमे हुए जल की जमी हुई सतह के नीचे पड़ी रहती है और बर्फ के नीचे से ही बर्फ के छिद्रों से ही सांस लेती है। इन्हीं छिद्रों में लकड़ी डालकर उसके हिलने की प्रतीक्षा करते हैं जब सील मछली लकड़ी के पास आती है तो लकड़ी हिल जाती है उसी समय ये अपने प्रमुख हथियार हारपून से अचूक वार करते हैं। शिकार की इस पद्धति को माऊपोक कहते हैं। शीतकाल में शिकार करना कठिन होता है क्योंकि अंधेरा रहने तथा बर्फ एवं बर्फीले तूफान के कारण शिकार करने नहीं निकल पाते जबकि ग्रीष्मकाल में मौसम अच्छा होता है तथा हिमगलन के कारण भूमि के बर्फ विहीन हो जाने पर विभिन्न प्रकार शैवाल तथा लाइकेन के उग जाने के कारण विभिन्न प्रकार के जानवर जैसे कैरीबू, रेनडियर आदि चरने के लिए आने लगते हैं। साथ ही कई प्रकार के पक्षी, ध्रुवीय खरगोश, मस्क, लोमड़ी आदि प्रकट हो जाते हैं जिनका ये लोग आसानी से शिकार कर लेते हैं। धनुष, बांण, मछली मारने का भाला, कावाक, हिम–जूते, चर्बी–तापन–दीपक, पृष्ठ दण्ड इनके अन्य जीवन निर्वाहक सामान हैं।

8.5.2 ष– सामाजिक संगठन (Social Organization) :–

एस्किमो एक पितृवंशीय जाति हैं जिसमें प्रत्येक समूह के वरिष्ठतम व्यक्ति को मुखिया माना जाता है। वही शिकार और मछली पकड़ने के स्थान का चुनाव करता है और समुचित निर्देश देता है। एस्किमों आखेटकों द्वारा किया गया शिकार और मछलियां अपने पास नहीं रखता। शिकार से प्राप्त सामग्री समूह के मुखिया को सौंप दी जाती है तथा उसकी पत्नी उसका बंटवारा करती है। शिकार में प्रयोग आने वाले सामान जैसे जाल, नाव आदि सामूहिक सम्पत्ति होती है। हॉलाकि इनके समाज में मुखिया होता है परन्तु यह जरूरी नहीं है कि सब लोग उसकी मानने की बाध्यता होती है। जब ये लोग शिकार करते हैं तो इन्हें समूह की आवश्यकता होती है और सामूहिक प्रयास से ही शिकार करने में सफलता मिलती है। कुछ एस्किमों शिकार करने में अत्यन्त प्रवीण होते हैं इसलिए इस समाज में प्रवीण शिकारी का बड़ा सम्मान होता है। एस्किमो लोग कभी–कभी अपनी वीरता सिद्ध करने के लिए दूसरे एस्किमो की पत्नी का हरण कर लेता है, यह कार्य वीरता का माना जाता है। इस स्थिति में पहले उस स्त्री के पति की हत्या कर उसे विधवा बनाता है, त्तपश्चात उसकी विधवा से विवाह करता है।

इनके समाज में एक से अधिक पत्नी को रखने की स्वतन्त्रता होती है। साथ ही यह भी है कि एक स्त्री एक से अधिक पुरुषों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकती है। जब कोई अतिथि बिना पत्नी के किसी के यहाँ आता है तो उसके सत्कार के लिए अपनी पत्नी को उसके हवाले करना सत्कार की एक प्रथा मानी जाती है। ऐसा न करने पर इसे असामाजिक कृत्य माना जाता है। कभी–कभी किसी स्त्री पर भूत–प्रेत की छाया होने पर उसे शान्त करने के लिए उस स्त्री को किसी दूसरे पुरुष के साथ एक दिन और रात के लिए यौन सम्बन्ध बनाना पड़ता है। इनकी सामाजिक व्यवस्था काफी शिथिल होती है। इनके समाज में किसी भी अपराध के लिए प्रतिशोध के लिए छूट होती है। यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति की हत्या कर देता है और इसके विपरीत यदि बदला न लिया जाये और फिर वही व्यक्ति उसी परिवार के किसी अन्य व्यक्ति की हत्या कर देता है तो इसका प्रतिशोध समाज का कोई भी व्यक्ति ले सकता है, ऐसा व्यक्ति समाज में सम्मान का पात्र माना जाता है।

वर्तमान आधुनिकता के प्रभाव से शायद ही विश्व का कोई भी भू–भाग अछूता रहा है। कहना उचित होगा कि आधुनिकता का प्रभाव एस्किमो जनजाति पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। ये लोग भी अब अपनी परम्परागत जीवनशैली से निजात पाना चाहते हैं। इसी के परिणाम स्वरूप अब ये अपना कदम व्यापार की और बढा रहे हैं, और समूर का व्यपार करने लगे हैं। शिकार के लिए अब परम्परागत औजारों के स्थान पर आधुनिकतम यन्त्रों का प्रयोग करने लगे हैं। विभिन्न उपनिवेशियों द्वारा इन्हें हथियार उपलब्ध कराए जा रहे हैं। यद्यपि इनका जीवन परिवर्तित हो गया है फिर भी आर्कटिक प्रदेश में भौतिक पर्यावरण ही इनके जीवन का प्रमुख जीवन निर्धारक तत्व है।

8.5.3– बद्दू (Badawins):-

बद्दू आदिवासी और चलवासी (घुमक्कड़) पशुपालक हैं जो दक्षिण–पश्चिम एशिया में अरब प्रायद्वीप के उत्तरी भाग में पाये जाते हैं। बद्दू अरबी भाषा के **बदाविन शब्द** से लिया गया है जिसका सामान्य अर्थ होता है "रेगिस्तानी निवासी"। ये आदिवासी अरब, ईराक, ईरान, सीरिया, जार्डन और यमन से लेकर दक्षिण में अरब मरुस्थल के उत्तरी भाग तक बिखरे हुए हैं। बद्दू का अर्थ होता है– भ्रमणशील या खानाबदोश। दक्षिणी–पश्चिमी एशिया के इन पशुपालक जनजातियों को सामूहिक रूप से ''अनाजा'' कहा जाता है जिसमें अनेक उपवर्ग हैं। इनमें रूवाला (Ruwala) नामक बद्दुओं का समूह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं जिनका प्रमुख व्यवसाय ऊंट पालना हैं। ऐसा माना जाता है कि बद्दू एशिया में मध्य–पूर्व की कुल जनसंख्या का लगभग 10 वॉ हिस्सा धारित करते हैं। ये मुख्य रूप से ऊँटों के पालन से जुड़े माने जाते हैं, कहना अतिशयोक्ति न होगा कि इनकी पूरी संस्कृति ऊँटों पर आश्रित होती है।

इस जनजाति के लोग विशुद्ध कद्दावर, साहसी, निडर व स्वच्छन्द रूप से प्रकृति के मस्ताने लोग हैं। ये भले मित्र, उदार, मिलनसार, अतिथियों के लिए खातिरदार और वफादार होते हैं, लेकिन शत्रुओं के लिए ये लोग नृशंस, क्रूर, धूर्त औरबर्बर होते हैं। ये मुख्य रूप से इस्लाम धर्म को मानने वाले लोग होते हैं। इस जनजाति के लोग बहुत मेहनती होते हैं। निवास की दृष्टि से इन्हें दो भागों में वर्गीकृत किए जाते हैं।

01– हादर :–इसमें उस वर्ग के लोग आते हैं जो नगरों अथवा कस्बों में रहते हैं।

02– बादिया :–इसमें ऐसे लोग आते है जो चमड़े वाले तम्बुओं में रहते हैं।

उत्तरी अफ्रीका में रहने वाले बर्बर जाति के बद्दू लोग अरब में पाये जाने वाले रेगिस्तानी बद्दुओं से कई रूपों में भिन्न होते है।

8.5.3 अ– निवास क्षेत्र :–

अरब के बद्दुओं का परम्परागत निवास क्षेत्र मध्य–उत्तरी अरब क्षेत्र का वह विशाल प्रदेश है जो मध्य उत्तरी सउदी अरब से लेकर पश्चिमी ईराक, दक्षिणी सीरिया, जार्डन तथा इजाराइल के नागेव वन क्षेत्र तक फैला हुआ है। अरब प्रायद्वीप के उत्तरी भाग में हमद (Hamad) और नेफद (Nefud) के मरुस्थल स्थित है। प्रायद्वीप के इसी उत्तरी भाग में लगभग दस लाख बद्दुओं का निवास है जिनमें से अधिकांश छोटी घासों वाले मैदानी भाग हमद में पाये जाते हैं जहां अपेक्षाकृत स्थायी वनस्पति और गर्तों में जल की उपलब्धता पायी जाती है। हमद क्षेत्र मुख्यतः चट्टानी मरुस्थल (Stony Desert) है जिसके दक्षिण में नेफद (Nefud) का रेतीला मरुस्थल (Sandy Desert) स्थित है। नेफद के दक्षिण में अरब का विशाल मरुस्थल है जिसे रब–अल–खाली कहते हैं।

8.5.3 ब– शारीरिक लक्षणः–

बद्दू लोग दक्षिण पश्चिम एशिया के 'आर्मीनाइड' और भूमध्यसागरीय (काकेसाइड) प्रजातियों के मिश्रण से सम्बन्धित है। बद्दू सामान्य लम्बे (160–162) सेमी होते हैं। जिनका चेहरा लम्बा और छोटा होता है। इनके नेत्र और बाल काले होते हैं किन्तु त्वचा का रंग पीला या पीताभ होता है।

8.5.3 स– पशुपालनः–

बद्दू लोगों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन है। इनके पालतू पशुओं में ऊंट, भेड़, बकरियां, आदि हैं जिसमें ऊंट सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। ऊंट पालने वाले बद्दू रूवाला कहलाते हैं, जिनका सामाजिक–आर्थिक स्तर ऊंचा समझा जाता है। कहीं–कहीं घोड़े, खच्चर भी पाले जाते हैं। भेड़–बकरियों को पालने वाले बद्दू निम्न स्तर के माने जाते हैं। ऊंट और घोड़े सवारी के लिए पाले जाते हैं जबकि भेड़ बकरियों से दूध, मांस, ऊन और चमड़े प्राप्त होते हैं। इनके समाज में दो वर्ग पाये जाते हैं। पशुओं के चारण के सम्बन्ध में संघर्ष होता रहता है। जो अच्छे किस्म के चारण क्षेत्र होते हैं उन पर केवल उच्च वर्ग का अधिकार होता है। इनका सामाजिक स्तर प्रमुख रूप से पशुओं की संख्या द्वारा निर्धारित होता है, जिनके पास जितने अधिक ऊँट होते है वह उतना ही अधिक समृद्ध माना जाता है। चराई क्षेत्र पर अतिक्रमण के लिए भी युद्ध होते रहते हैं।

8.5.3 द– अर्थव्यवस्था (Economy) :–

बद्दुओं की अर्थव्यवस्था पूर्णतया पशुपालन पर आधारित है। ये लोग पशुओं से प्राप्त उत्पादों के बदले में अन्य लोगों से अपनी आवश्यकता की वस्तुएं प्राप्त करते हैं। ऊंट इनकी अर्थव्यवस्था का मूलाधार है। ऊँट रेगिस्तानी क्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण जानवर होता है क्योंकि इसकी सहनशक्ति क्षमता बहुत अधिक होती है। यह एक बार पानी पीकर सात दिनों तक रह सकता है। यह झाल–झंखाड़ को भी खाकर पचा लेते है। इसके पैर की गद्दी बालू क्षेत्र में इन्हें चलाने में सहायक होती है। इसी कारण ये काफी दूर तक आसानी से जा सकते हैं। इनके इसी गुण के कारण इन्हें रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है। इतना ही नहीं ऊँटों से अनेक प्रकार के उत्पाद भी प्राप्त किए जाते हैं जैसे इनसे प्राप्त होने वाले बालों से दरी, वस्त्र एवं कम्बल बुने जाते हैं, चमड़े से जूते, थैले तथा तम्बू का निर्माण किया जाता है। नसों से रस्सियां बनायी जाती हैं, तथा दूध से अनेक प्रकार के उत्पाद बनाए जाते हैं। ऊँट के अतिरिक्त भेंड़, बकरियों का पालन किया जाता हैं जो कि कम चारे में भी अपना निर्वाह कर लेती हैं। इनसे भी दूध, दही, मक्खन, पनीर आदि प्राप्त किया जाता है। इनके आधार पर कई प्रकार के व्यवसाय इन जनजातियों के द्वारा किए जाते हैं। इन पालतू जानवरों के मल को सुखाकर ईंधन तथा मूत्र को कीटनाशक शैम्पू के रूप में प्रयोग किया जाता है। बद्दू लोग कृषि को नीचा समझते हैं। उसमें रुचि नहीं लेते हैं। केवल सीमित लोग ही मरुद्यानों के निकट अथवा जहां कहीं भी सिंचाई के लिए जल उपलब्ध हो जाता है। कुछ फसल लगा उगा लेते हैं। खजूर, जौ, मक्का, कुछ फलियां, खरबूजे, सब्जियां आदि थोडी मात्रा में।

8.5.3 य– भोजन (Food) :–

ऊंटनी का दूध बद्दुओं का प्रधान भोज्य पदार्थ है। पीने के अतिरिक्त दूध से दही, पनीर, मक्खन आदि दुग्ध पदार्थ भी बनाते हैं। वे अपना दैनिक भोजन ऊंटनी के खट्टे दूध में पकाते हैं। दूध के साथ जो मक्का आदि की रोटी तथा मांस भी इनके भोजन में सम्मिलित होती है। बद्दू लोग कहवा (Cofee) प्रेमी होते हैं। ये लोग व्यापार से प्राप्त अन्न जैसे गेहूँ, जौ, चावल, खजूर, गुड़, चीनी और सूखे मेवे का प्रयोग मुख्य रूप से करते हैं। दूध के अलावा कह्वा इनका प्रमुख पेय पदार्थ है जो कि इनकी मित्रता एवं उदारता का प्रदर्शन करता है। जब इनके यहाँ कोई मेहमान आता है तो उन्हें स्वागत के लिए कह्वा पिलाया जाता है।

8.5.3 र– वस्त्र और आभूषण (Clothing And Garments) :–

उष्ण मरुस्थली जलवायु वाले प्रदेश के निवासी होने के कारण बद्दू लोग प्रायः ढीले–ढाले और सूती वस्त्र पहनते हैं। पुरुष अधिकांशतः कुर्ता पायजामा या चोंगा पहनते हैं और भेड़ के चमड़े से निर्मित जैकेट भी धारण करते हैं। धूप से बचने लिए ये लोग सिर पर टोपी या पगड़ी बांधते हैं। इनके वस्त्र मरुस्थलीय परिवर्तनशील मौसम के अनुकूल होते हैं जो इन्हें दिन की तेज धूप रात की ठंड और धूल भरी आंधियों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। इनके समाज में पुरुष जो कि चोंगा पहनते हैं। इसके साथ एक चौड़ी चादर का भी उपयोग करते हैं जिसमें अस्त्र–शस्त्र रखने के स्थान बने होते हैं। इसके साथ यह चद्दर और वस्त्र धूल भरी आंधियों, धूल आदि से इनकी रक्षा करते हैं।

8.5.3 ल– आवास एवं बस्तियां :–

बद्दू लोग अपने रहने के लिए एक तम्बू का प्रयोग करते हैं जो कि बकरों के बालों से बुना हुआ होता है। यह तम्बू लकड़ी के तिरछे खड़े दण्डे पर ऊँट के चमड़े से बनी रस्सी द्वारा कसे हुए होते हैं। तम्बू में पुरुष एवं स्त्रियों के लिए अलग–अलग स्थान बने होते हैं। बद्दू जनजाति के मुखिया का तम्बू काफी बड़ा होता है। यह कपड़े द्वारा दो असमान भागों में बंटा होता है। छोटा एक तिहाई भाग मालिक और उसके अतिथियों के लिए निर्धारित होता है जबकि दो तिहाई वाला बड़ा भाग बच्चों, स्त्रियों, दासों एवं भण्डार के लिए सुरक्षित होता है। स्त्रियों के ही कमरे में भोजन की सामग्री भी रखी जाती है।

8.5.3 व– सामाजिक संगठन (Social Organization) :–

बद्दू समाज पितृ प्रधान होता है, वही घर का मुखिया होता है तथा सम्पूर्ण परिवार पर उसका नियन्त्रण होता है। इस समाज के व्यक्ति अपने पिता के परिवार से ही सम्बद्ध होते है। इनके समाज में एक साथ कई पीढियों के सदस्य निवास करते हैं। इनमें एक ही रक्त समूह के लोगों को समुल्लाह कहते हैं जो कि एक बड़ी पारिवारिक इकाई होती है। अनेक समुल्लाह के मिलने से कबीले का निर्माण होता है। कई कबीलों के सम्मिलन से **अनेजिया** नामक संघ का निर्माण होता है जो कि बद्दूओं का सबसे बड़ा संगठन होता है। इनके समूह का वृद्ध व्यक्ति समाज का मुखिया होता है। समूह का प्रत्येक सदस्य मुखिया की आज्ञा का पालन करते हैं। यह उनकी नैतिक जिम्मेदारी होती है। अनेक बड़े परिवारों का मुखिया शेख कहलाता है जिसका चुनाव किया जाता है तथा उसको धन, साहस, बुद्धिमानी, कुलीनता, संगठन शक्ति, सैनिक प्रभुत्व तथा सहृदयता के आधार पर चुना जाता है। शेख की सन्तानों उपरोक्त गुणों के होने पर उन्हें भविष्य में उत्तराधिकारी बना दिया जाता है।

बद्दू जनजाति के लोग इस्लाम धर्म के अनुयायी होते हैं। इसलिए इनके सामाजिक नियम एवं सिद्धान्त इस्लाम धर्म से प्रभावित होते हैं। इनके समाज में बहुपत्नी परिवार देखे जाते हैं। बद्दू एक साथ चार विवाह कर सकते हैं अर्थात् एक साथ चार पत्नियां रख सकते हैं। सगी बहनों को छोड़कर ये किसी से निकाह करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। इनके समाज में मामा, ताऊ, चाचा, बुआ, और निकट सम्बन्धियों के यहां निकाह को उत्तम माना जाता है, इसलिए इनके कबीले अन्तर्विवाही होते हैं। इनके समाज में **दास** प्रथा विद्यमान हैं जो कि इनकी सेवा करते हैं। इनके अनेक उपवर्ग हैं जैसे लुहार, तम्बू बनाने वाले आदि। इस प्रजाति के लोग युद्धप्रिय होते हैं। चारागाहों पर अधिकार बदलता रहता है। अतः उनकी सुरक्षा के लिए सैनिक संगठन अनिवार्य होता है। प्रायः इनमें संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। अरब देशों में ये युद्ध के लिए बिख्यात हैं। इनमें प्रतिहिंसा की भावना प्रबल होती है। ये अपने दुश्मन से बदला लेने में पीढी दर पीढी विश्वास करते हैं। इसके साथ इनमें शरण में आने वाले की रक्षा, मित्रता, उदारता, वफादारी, खातिरदारी आदि की भावना देखने को मिलेती है।

8.5.3 श– बद्दुओं का सामाजिक परिवर्तन :–

विभिन्न प्रकार के सरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप इनके जीवन में परिवर्तन स्पष्टतः देखा जा सकता है। दिनोंदिन इनकी संख्या में ह्रास देखा जा रहा है क्योंकि–

अ– सउदी अरब, जार्डन, ईरान सीरिया आदि की सरकारों ने इन्हें गांवों एवं कस्बों में बसाने की सुविधा प्रदान कर रही हैं, इसीलिए ये अपने कबीलों को छोड़कर शहरों एवं नगरों की और पलायन कर रहे हैं।

ब– इनकी जलापूर्ति की समस्याओं का सरकारी प्रयासों द्वारा निदान किया जा रहा है जिसके लिए गहरे कुएं खोदे जा रहे हैं।

स– इन्हें अब समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है तथा इन्हें आरक्षण के माध्यम से सरकारी नौकरियों में सेवा का अवसर दिया जा रहा है।

इस प्रकार सरकारों के जनजातीय विकास सोंच एवं प्रयासों द्वारा बद्दुओं के जीवन स्तर को उच्च बनाने का सार्थक प्रयास किया जा रहा है। इसलिए बद्दुओं की प्रकृति, स्वभाव, व्यवहार तथा जीवन पद्धति में परिवर्तन हो रहे हैं। नवीन वेश–भूषा, रहन–सहन, खान–पान की सामग्री आदि बद्दुओं के जीवन में सम्मिलित हो रही है।

8.5.4– बुशमैन (Bushman)

बुशमैन दक्षिणी अफ्रीका के कालाहारी मरुस्थल में घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करने वाले आदिवासी हैं। इन्हें 'सान' के नाम से भी जाना जाता है। सत्रहवीं शताब्दी में **डच** अप्रवासियों ने दक्षिण अफ्रीका के आखेटक लोगों को

'बुशमैन' कहा था। ये घुमक्कड़ी आखेटक जनजाति है जो सामान्यतः 20 या इससे छोटे समूहों में भ्रमण करते रहते हैं तथा शिकार करते हैं। ये एक से कुछ सप्ताह तक एक स्थान पर रहते हैं। उसके बाद अपने स्थान के बदल देते हैं। यें जहां रहते हैं वहां अपने शिविर के चतुर्दिक काफी दूर तक के क्षेत्र से विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का संग्रह करते हैं और शिकार करते हैं। कुछ शताब्दियों पहले ये विस्तृत भू–भाग पर निवास करते थे। यह जनजाति वास्तुतोलैण्ड, नेटाल, दक्षिणी रोडेसिया, पूर्वी टंगानिका तथा पूर्वी अफ्रीका की उच्च भूमि पर फैले हुए थे। समयोपरान्त नीग्रो कृषक जनजातियों का अतिक्रमण इनके क्षेत्रों पर होता गया और बुशमैन प्रजाति का संकुचन होता गया। इस जनजाति का प्रमुख संकेन्द्रण कालाहारी मरुस्थल तक रह गया है। इस समय इनकी कुल अनुमानित संख्या 10000 के आस–पास है। जो कई जातियों में बंटे हैं। वर्तमान में बुशमैन कालाहारी मरुस्थल और दक्षिण–पश्चिम अफ्रीका के उपोष्ण घास के क्षेत्रों तक सीमित हैं।

8.5.4 अ– निवास क्षेत्र (Habitat) :–

बुशमैन का निवास क्षेत्र अफ्रीका का कालाहारी मरुस्थल है। यह प्रदेश बोत्सवाना और दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका में लगभग 350 हजार वर्ग किमी0 क्षेत्रफल में विस्तृत है। यह एक प्रकार की भ्रमणशील जनजाति है जो ओकाबांगो नदी और **गामी झील** से लेकर **लिम्पोपो** तथा **नोसोव** नदियों तक भ्रमण करते रहते हैं। यह एक विशाल पठारी भाग है जिसकी ऊँचाई समुद्र तल से 2000 मी0 है। इस क्षेत्र का उच्चावच विषम है। कालाहारी मरुस्थल में जलवायु उपोष्ण या शुष्क रेगिस्तानी है। जहाँ तापमान में अधिक विषमता पायी जाती है। यहाँ पर मुख्यतः दो ऋतुएँ होती है।

1– लम्बी ग्रीष्म ऋतु 2– लघु शीत ऋतु

ग्रीष्म ऋतु में तापमान में 30^0 से 40^0 सेल्सियस के मध्य रहता है। मरुस्थली भाग होने के कारण दिन और रात में अधिक तापान्तर मिलता है। अधिक गर्मी पड़ने पर दिन का तापमान 45^0 सेग्रे0 या इससे अधिक हो जाता है किन्तु रात्रि के समय तापमान गिरकर 10^0 सेग्रे0 तक आ जाता है। बुशमैन के निवास क्षेत्र में छोटे वृक्ष, घास के मैदान एवं झाड़ियां पायी जाती है जहां अनेक प्रकार के शाकाहारी एवं मांसाहारी पशु पाये जाते हैं। इनमें हिरण, जिराफ, शुतुरमुर्ग, जेब्रा, चीता, जंगली बिल्ली आदि जीव जन्तु पाये जाते हैं। इस जनजाति के लोग इन जन्तुओं का शिकार कर अपना पेट पालते हैं।

8.5.4 ब– शारीरिक लक्षण (Physical Traits) :–

बुशमैन नीग्रीटो प्रजाति के वंशज हैं। शारीरिक कद, रंग, चेहरे की बनावट आदि कुछ विशेषताएं नीग्रोइड (नीग्रिटो तथा नीग्रो) प्रजाति से मिलती–जुलती है। बुशमैन नाटे कद के (150–160 सेमी0) होते हैं। जिनके बाल घुंघराले होते हैं किन्तु नीग्रोइड प्रजाति के कुछ लक्षण जैसे आगे की और उभरा हुआ चेहरा और होंठ खुली हुई चौड़ी आंखे आदि नहीं पायी जाती। बुशमैन के पेट अधिक बड़े तथा बाहर की और निकले हुए होते हैं। स्त्रियों के नितम्ब अधिक मोटे तथा नितम्ब अधिक विकसित होते हैं।

8.5.4 स–आखेट (Hunting) :–

कालाहारी मरुस्थल एक आखेट प्रधान प्रदेश है। बुशमैन वहाँ के प्रमुख आखेटक हैं। बुशमैन का जीवन पूर्णतया शिकार तथा कन्द–मूल पर आधारित है। विषम परिस्थितियों के कारण कृषि कार्य करने की कोई सम्भावना नहीं होती है। इस जनजाति के लोग चतुर शिकारी होते हैं तथा प्रवीण शिकारी का इनके समाज में बड़ा ही सम्मान होता है। ये अपने शिकार को बड़ी चतुराई से पकड़ते हैं। ये बड़े जानवरों को बड़ी चतुराई से घेर कर मारते हैं। भेड़िए का शिकार करने के लिए ये लोग जमीन में खम्भे गाड़कर दुहरा गोलाकार घेरा बनाते हैं। बाहरी घेरे में एक ऐसा दरवाजा होता है जो केवल अन्दर की और खुलता है, इस घेरे के मध्य में शिकार को आकर्षित करने के लिए मांस का टुकड़ा या किसी छोटे जीव को टांग देते हैं जब शिकार छोटे किवाड़ से अन्दर प्रवेश करता है तो वह दरवाजे से बाहर नहीं निकल पाता है और पकड़ा जाता है। बुशमैन शुतुरमुर्ग की खाल को पहन लेता है तथा गर्दन के चारों और लचीली कमानियों का घेरा लगा लेता है ताकि उसकी गर्दन शुतुरमुर्ग की तरह दिखे। यह उसी की तरह चलने की नकल करता है। कला करते हुए तब तक चलता है जब तक शिकार तक न पहुंच जाये तथा नजदीक पहुंचकर अचूक निशाना लगाकर शिकार कर लेता है। ये लोग बड़े जानवरों का शिकार झुण्ड में करते हैं। जिराफ जैसे बड़े जानवर का शिकार ये लोग एक साथ मिलकर करते हैं।

बुशमैन अपनी सामान्य छड़ी से बड़े गड्डे खोदते हैं और उसे पत्तियों से ढक देते हैं उसके पश्चात

जानवरों को हांकते हुए उस गड्डे के समीप आने के लिए बाध्य करते हैं और जब वह जानवर गड्डे में गिर जाता है तो अपने भाले से उसका वध करते हैं। कभी–कभी विष बुझे तीरों को पेड़ से लटका देते हैं जब कोई जानवर पानी पीने के लिए आते हैं और अपने शरीर को पेड़ से रगड़ते हैं तो वे तीर गिरकर उनके शरीर में चुभ जाते हैं और शिकार बनते हैं। ये लोग शहद के बड़े शौकीन होते हैं जिसकी तलाश में ये दूर–दूर तक चले जाते हैं। जब इन्हें कोई मधुमक्खी दिख जाती है तो ये उसका पीछा करते हुए उसके छत्ते तक पहुँच जाते हैं। चाहे वह किसी पेड़ की कितनी भी ऊँचाई पर क्यों न हो या किसी चट्टान की दरार में हो। ये मछलियों का शिकार तीर या हड्डी की नोंक वाले हानपून से करते हैं अथवा मछलियों को चारों और से घेरकर सींक के बने घरौदों में पहुंचाकर पकड़ते हैं। इस प्रकार बुशमैन प्रवीण शिकारी होते हैं और इनका जीवन आखेट से प्राप्त वस्तुओं पर आश्रित होता है। वर्षा के पश्चात गार्मी क्षेत्र और ओकाबांगो के दलदल में जल एकत्रित होने से अनेक प्रकार के पौधे उगते हैं जो विभिन्न प्रकार के शाकाहारी पशुओं के आहार होते हैं। बुशमैन विभिन्न प्रकार के जीवों का शिकार करते हैं किन्तु हिंसक पशुओं से बचाव भी करते हैं।

8.5.4 द– भोजन (Food) :–

बुशमैन सर्वाहारी होते हैं जो सभी प्रकार के जीव–जन्तुओं को खाते हैं। ये अपना भोजन आखेट से प्राप्त जन्तुओं और पक्षियों, मछलियों तथा जंगली वस्तुओं यथा कन्दमूल, फल, शहद आदि के रूप में प्राप्त करते हैं। बुशमैन छोटी चींटियां, दीमक एवं उनके अण्डों को बड़े चाव से खाते हैं। ये अपने शरीर के जुओं तक को भी पकड़कर खा जाते हैं। ये शिकार बहुल ऋतु में अधिक भोजन करते हैं। कभी–कभी एक व्यक्ति एक भेड़ के आधे भाग तक खा जाता है। इस प्रकार एक बार भोजन करने के पश्चात कई दिनों तक सुस्त पड़े रहते हैं। जब ऐसी ऋतु आ जाती है जिसमें शिकार मिलना मुश्किल हो जाता है तो इस ऋतु में ये लोग भोजन के लिए संघर्ष करते हैं। इस समय ये सूखी चमड़े की खाल को चबाते हैं। मरुस्थल में वनस्पतियों से भोज्य पदार्थ बहुत कम मिल पाते हैं। जिसके कारण बुशमैन भोजन के लिए जंगली पशुओं पर अधिक निर्भर है। लेकिन एक बात और है कि गर्मी अधिक होने के कारण मांस जल्दी खराब हो जाता है इसलिए ये भोजन संग्रह पर अधिक ध्यान नहीं देते हैं।

8.5.4 य– वस्त्र (Clothing) :–

गर्म प्रदेश में निवास करने के कारण बुशमैन बहुत कम वस्त्र पहनते हैं। इनके वस्त्र प्रदर्शन के लिए ना होकर शरीर की सुरक्षा के लिए होते हैं। इनके वस्त्र चमड़े से निर्मित होते हैं। दिन में जब गर्मी अत्यधिक पड़ती है। तब चमड़े या खाल के बने वस्त्र पहने जाते हैं। पुरुष सामान्य तथा चमड़े की लंगोट पहनते हैं। ये शरीर पर कमर के नीचे खाल का आवरण धारण करते हैं। शेष शरीर नग्न रहता है। स्त्रियां भी चमड़े का वस्त्र पहनती हैं। रात्रि के समय जब ठण्डी होती है तो ये जानवरों की खाल को ओढ लेते हैं। नग्न शरीर की अधिक धूप या ठंडक से बचने के लिए पशुओं की चर्बी एवं मिट्टी के मिश्रण से बने लेप को लगाते हैं।

8.5.4 र– गृह या आश्रय (House or Shelter) :–

बुशमैन भ्रमणशील शिकारी है। एक स्थान पर कुछ दिन या सप्ताह से अधिक नहीं ठहरते थे। लोग किसी स्थायी संपत्ति को न तो संचित करते हैं और न कभी स्थायी निवास ही बनाते हैं। दिन की तेज धूप और रात की भीषण ठंडक से बचने के लिए ये लोग गुफाओं और कंदराओं का आश्रय लेते हैं। इनके पास अधिक साज–सामान न होने के कारण स्थान परिवर्तन में कठिनाई नहीं होती है। इनको आवास की सुविधा न मिलने पर लम्बी झाड़ियों की टहनियों को गाड़कर उसके ऊपर चमड़े या घास का छाजन बना लेते हैं अथवा घास–फूस का एक अर्द्धवृत्ताकार घेरा मात्र ही बनाते हैं। ये रात में अपने आश्रय के बाहर आग जला देते हैं जिससे सर्दी से राहत मिलती है और जानवरों से सुरक्षा भी प्राप्त होती है। ये लोग अपनी गुफा में छोटे गड्डे बनाते हैं और उसमें अपने शरीर को मोड़कर कुत्तों की तरह सोते हैं। एन्गामी क्षेत्र के दलदली क्षेत्रों में ये सरपत को काटकर उसकी चटाई बनाकर उसका उपयोग करते हैं। इस प्रकार आवास की दृष्टि से इनका जीवन काफी दुरूह होता है।

8.5.4 ल– उपकरण और शस्त्र (Tools And Weapons) :–

अस्त्र शस्त्रों में धनुष बाण फेंक कर मारने वाली घड़िया, भूमि खोदने के लिए लकड़ियां आदि मुख्य है। इनकी धनुष लगभग एक मीटर लम्बी कठोर लकड़ी से बनी होती है। ये अपने साथ सदैव एक नुकीली छड़ी रखते हैं जिससे ये कई प्रकार के कार्य कर लेते हैं जैसे– शिकार करना, गड्डा खोदना आदि। जिस पर 50 से 60 सेमी0 लम्बी डोर या प्रत्यंचा लगाई जाती है जो चमड़े की तांत से बनी होती है। बाण प्रायः सरकंडे की तीर

से बनाये जाते हैं। घरेलू बर्तन के रूप में ये शुतुरमुर्ग के अण्डे की खोल का प्रयोग करते हैं। इनकी कौशल क्षमता का आंकलन करना एक कठिन कार्य है। ये जमीन में भूमिगत जल की सतह तक एक छेद करते हैं। उसमें एक टोंटी डालकर जल को चूसते हैं जब मुंह में पानी भर जाता है तो उसे शुतुरमुर्ग के अण्डे में उगलकर बाद में पीते हैं।

8.5.4 व– सामाजिक संगठन (Social Organization) :–

बुशमैन आखेटक तथा स्थानान्तरणशील जनजाति है फिर भी इनका अपने क्षेत्र से विशेष लगाव देखा जाता है। बुशमैन का सामाजिक संगठन सीमित होता है। इनके एक दल में सामान्यतः 20 से 100 मनुष्य तक पाये जाते हैं। प्रत्येक कुल का एक अलग क्षेत्र होता है जिसकी अपनी प्राकृतिक सीमाएं होती हैं। एक कुल के लोगों का दूसरे कुल में प्रवेश प्रायः वर्जित होता है। एक कुल में कुछ परिवार होते हैं। यदि किसी क्षेत्र का शिकारी शिकार करते हुए किसी दूसरे के क्षेत्र में चला जाता है तो उसे किए हुए शिकार का आधा भाग देना पडता है। इनके समाज में प्रवीण आखेटक का महत्वपूर्ण स्थान होता है तथा उसे सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। इनके समाज में पुरूष बुशमैन शिकार का कार्य करते है तथा स्त्रियां कन्दमूल, फल एवं छोटे–बड़े कीड़े–मकोड़े, दीमक एवं अण्डे एकत्र करती हैं।

बुशमैन के समाज में विवाह का कार्य भी कुछ विशेष होता है। इनके समाज में भी शौर्य का प्रदर्शन करना होता है। इस समय पूरे समाज के लोग एकत्र होते हैं तथा एक भोज का आयोजन किया जाता है। भोज के दौरान ही दूल्हा उठकर दूल्हन का हाथ पकड़ लेता है तो समाज के सभी लोग अपनी छड़ी लेकर उस पर टूट पड़ते हैं और एक युद्ध प्रारम्भ हो जाता है (**इस युद्ध को तुमुल युद्ध कहा जाता है**)। यदि दूल्हा इस प्रहार को झेलते हुए दूल्हन का हाथ नहीं छोड़ता है तो उसे योग्य समझते हुए उसका विवाह समाज के लोग सम्पन्न कराते हैं तथा असफल होने पर विवाह स्थगित कर दिया जाता है। बुशमैन समाज में अपराधी को जान से न मार कर उसे अधमरा कर के छोड़ दिया जाता है। इनके समाज अपराधी का पता लगाने के लिए एक स्थान पर आग जलाकर धुंआ किया जाता है, यदि धुंआ फैल जाता है तो यह मान लिया जाता है कि अपराध में कई लोग शामिल हैं। यदि धुंआ सीधे ऊपर जाता है तो व्यक्ति को निर्दोष मान लिया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि इनमें कुछ सामाजिक बाध्यताएं पायी जाती हैं। कालाहारी मरुस्थलों में संसाधनों के अभाव तथा प्रतिकूल भौतिक दशाओं के कारण जनसंख्या बहुत कम है।

बुशमैन का मरुस्थल से अनुकूलनः–

बुशमैन गर्म मरुस्थल के निवासी है जिनके ऊपर भौतिक पर्यावरण की अमिट छाप दिखाई पड़ती है। अभावों वाले इस प्रदेश में शिकार मिल जाने पर ये लोग भरपेट भोजन करते हैं। किन्तु अनेक बार विशेषरूप से शुष्क ऋतु में ये लोग कई दिनों तक बिना भोजन और जल के ही रह जाते हैं।

8.5.5– मसाई (Massai)

पूर्वी अफ्रीका के उष्ण कटिबन्धीय घास प्रदेश (सवाना) में मसाई नामक पशुपालक जनजाति के लोग रहते हैं जो घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत करते हुए कृषि कार्य करते हैं। मसाई जनजाति के लोग बड़े शूर–वीर एवं युद्धप्रिय तथा गर्वीले स्वभाव के होते हैं। ये लोग गाय, भैंस, भेंड़, बकरियाँ आदि जानवर पालते हैं। जिनसे इन्हें दूध, मांस, चमड़े आदि उपयोगी पदार्थ प्राप्त होते हैं। पशु इनके जीवन का आधार है और पशुपालन इनकी प्रधान आर्थिक क्रिया व व्यवसाय है।

8.5.5 अ– निवास क्षेत्र (Habitat) :–

मसाई जाति के लोग पूर्वी अफ्रीका के कीनिया, उत्तरी तंजानिया और पूर्वी युगांडा के उच्च पठारी भागों में निवास करते हैं। यह क्षेत्र 1^0 से 5^0 दक्षिणी अक्षांश तक विस्तृत है। विशेष रूप से विक्टोरिया झील प्रदेश के पूर्व में मसाई लोगों का परम्परागत निवास है जिसके मध्य से होकर अफ्रीका की महान दरार घाटी उत्तर–दक्षिण को स्थित है। इसकी स्थिति के कारण यह प्रदेश कई भागों में विभक्त है। इस प्रदेश में अनेक छोटी–छोटी झीलें और ज्वालामुखी पर्वत पाये जाते हैं। परन्तु अब इन्हें 38000 वर्ग किमी क्षेत्र में आबद्ध करके रखा गया है। वर्तमान में इनकी संख्या सवा लाख के आस–पास है। इनकी विभिन्न प्रकार की उपजातियां पायी जाती हैं।

मसाई जनजाति के निवास क्षेत्र

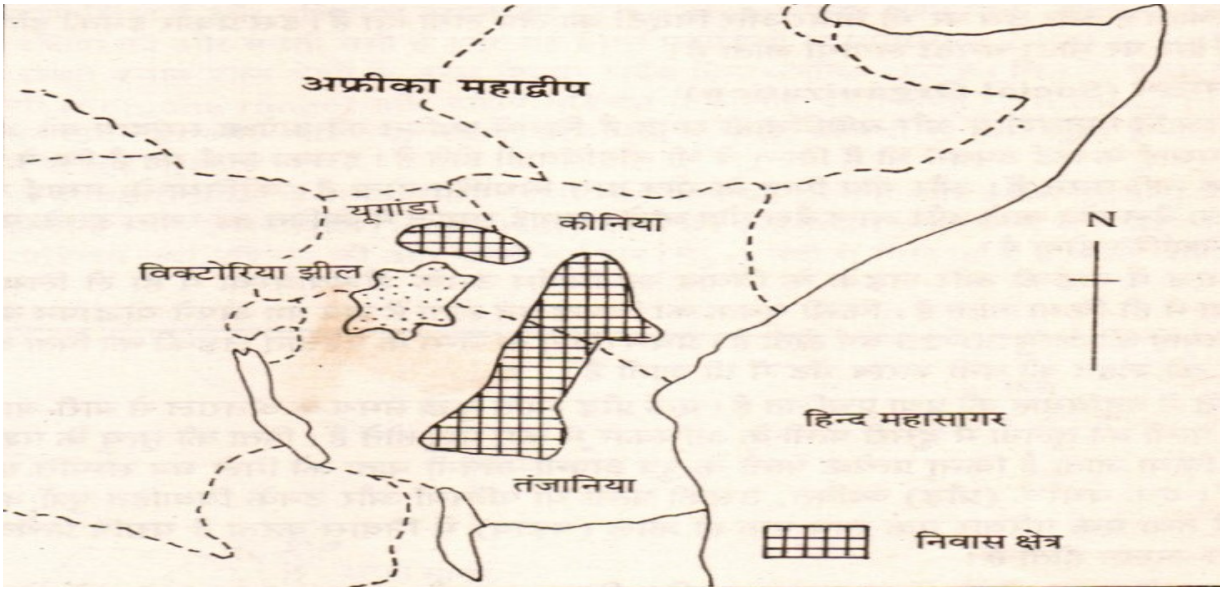

चित्र सं–8.4

विभिन्न क्षेत्रों में इनकी जनसंख्या इस प्रकार है–

कीनिया के शाम्बुक– 22000

तंजानिया के अर्द्ध–पशुपालक, अरुण– 58000

जरागुयु अथवा क्वाफी– 2000

पूर्व के काल में ये ऊँचे पठारों के पास वाले और स्वास्थ्यकर शीतोष्ण क्षेत्रों में पशुचारण करते थे। परन्तु यूरोपवासियों एवं अफ्रीका के लोगों द्वारा इन जनजातियों को भगा दिया गया। परिणाम स्वरूप ये लोग निचली, गर्म और सूखी घाटियों में रहने के लिए बाध्य हो गये जहां वर्षा कम होने के कारण घासें भी कम उगती हैं। इस प्रकार मसाई लोगों का परम्परागत क्षेत्र आधुनिक कृषि के प्रसार एवं सरकारी दबाव के कारण संकुचित हो गया है। इस प्रकार इनकी संख्या भी लगातार कम होती जा रही है।

8.5.5 ब– शारीरिक लक्षण (Physical Traits) :–

शारीरिक लक्षणों के अनुसार मसाई लोग भूमध्य सागरीय और नीग्रोइड प्रजातियों के मिश्रण प्रतीत होते हैं। मसाई लम्बे कद वाले (167–177 सेमी0) होते हैं। इनके हाथ, पैर लम्बे तथा अंगुलियां लम्बी होती है। इनकी त्वचा हल्की भूरी से गहरी भूरी होती है। ऊंचा और पतला सिर, पतला सपाट चेहरा, लम्बी एवं पतली नासिका इनकी सामान्य शारीरिकविशेषता है। इनके होंठ नीग्रो से कम मोटे और बाल भी कम घुंघराले होते हैं।

8.5.5 स– व्यवसाय (Occupation) :–

मसाई पशुपालक जाति हैं और पशु ही उसके वास्तविक सम्पत्ति है। पशुचारण लोगों का परम्परागत सांस्कृतिक व्यवसाय है। प्रत्येक मसाई परिवार का अलग–अलग पशुओं का झुण्ड होता है। पशुओं को चारागाहों पर चराने का काम पुरुष करते हैं। ये लोग पशुओं की देखभाल के लिए कुत्ते भी पालते हैं। मसाई भेंड पालते है और उनकी मांस, रक्त, दूध और ऊन का प्रयोग करते हैं किन्तु इनके सामाजिक जीवन में भेंड़ों का बहुत कम महत्व है। दूध और मांस के लिए बकरिया भी पाली जाती हैं। पशुओं में कुछ गधे और खच्चर भी होते हैं जिनका उपयोग बोझा ढोने के लिए किया जाता है।

8.5.5 द– भोजन (Food) :–

मसाई के भोजन में मांस और दूध, दही, मक्खन का महत्वपूर्ण स्थान है। मांस भेड़ों और बकरों से प्राप्त होती है और दूध गायों से प्राप्त करते हैं। थोड़ा दूध बकरियों से भी मिल जाता है। खाद्यान्नों में ज्वार, बाजरा, मक्का प्रमुख है किन्तु इसका प्रयोग योद्धागण नहीं करते। कंदमूल, फल और केला केवल स्त्रियां और बच्चे ही

खाते हैं। खाद्यान्नों और फलों को ये लोग समीपी नीग्रो तथा वॉगेरोबो कृषकों से पशुओं के बदले प्राप्त करते हैं। ये लोग जंगल से प्राप्त शहद का भी प्रयोग करते हैं और इससे शराब बनाकर पीते हैं। इनके पशुओं के रक्त पान की भी परम्परा पायी जाती है। ये गाय अथवा बैलों के गले में रस्सी बांधकर नसों को फुला देते है और नसों में पाइप धंसाकर पशुओं का रक्त निकालकर वैसे ही अथवा दूध के साथ मिलाकर दही बनाकर प्रयोग करते हैं। ये मृत गाय–बैलों का मांस भी खाते हैं परन्तु उनका वध नहीं करते। इनके द्वारा वन्य पक्षी तथा पशुओं का शिकार भी किया जाता है। इससे व्यापर के लिए सींग, पंख, चमड़ा आदि प्राप्त किया जाता है। पशुओं की खाल, सींग, पंख, तथा हड्डी को एकत्र कर किकुयू तथा अन्य जाति वाले किसानों के साथ विनिमय करते हैं।

8.5.5 य– वस्त्र (Clothing) :–

मसाई स्त्री पुरुष सामान्यतः चमड़े से निर्मित हल्के वस्त्र पहनते हैं। चमड़े पर मक्खन और चर्बी रगड़ने से वह चिकना हो जाता है। स्त्रियां बकरे के चमड़े की बनाई गई ओढ़नी और योद्धा युवक वाघ आदि जंगली पशुओं के चमड़े से निर्मित ऊंची नोकदार टोपी का प्रयोग करते हैं।

8.5.5 र– उपकरण (Instuments) :–

इनके जीवन का आधार पशुपालन होने के कारण इनके पास कोई विशेष प्रकार के उपकरण नहीं पाये जाते हैं। दूध, दही, मक्खन और रक्त रखने के लिए लकड़ी के बर्तन और लौकी के खोखले भाग का प्रयोग किया जाता है। इनके पास कुछ लोहे के उपकरण भी पाये जाते हैं जिनमें भाले, बर्छे, तलवार, ढाल आदि होते हैं। इनके अतिरिक्त रस्सी, चमड़े, सींग, हड्डी आदि के उपकरण प्रयोग में लाए जाते हैं।

8.5.5 ल– बस्ती या पड़ाव (Settlement or Camp) :–

स्थानान्तरणशील पशुचारक होने के कारण मसाई स्थाई बस्ती नहीं बसाते हैं, बल्कि चारागाह की खोज में अपना स्थान बदलते रहते हैं। ये एक स्थान पर कुछ सप्ताह तक ही निवास करते हैं। इनके आवास पत्थर, लकड़ी, बांस, गीली मिट्टी के सहयोग से निर्मित होते हैं। इनके झोपड़ों की अन्दर की छतों एवं दीवारों पर मिट्टी अथवा गोबर का लेप लगाया जाता है। इनके झोपड़े हवादार होते हैं, इनमें हवा के प्रवेश के लिए छोटे–छोट छेद बना दिये जाते हैं। ये लोग अपने झोपड़े में घास–फूस विछाकर चमड़े की खाल विछाते हैं और उस पर सोते हैं। इनके झोपड़े के दरवाजे पर चमड़े का पर्दा लगा होता है। प्रत्येक मसाई परिवार अलग झोपड़ी में रहता है। प्रत्येक परिवार का अलग–अलग पड़ाव होता है जिसे **क्रॉल (Kraul)** कहा जाता है। इस अण्डाकार बस्ती में 10 से 50 झोपड़े होते हैं।

8.5.5 व– सामाजिक संगठन (Social Organization) :–

मसाई जनजाति पितृवंशीय और वहिर्विवाही समूह है जिसमें व्यक्ति की अपेक्षा समुदाय को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। मसाई के कई उपवर्ग है किन्तु वे भी वहिर्विवाही होते हैं। इसका अर्थ यह है कि लोग समान गोत्र (वंश) में विवाह नहीं करते हैं। गोत्र पिता के गोत्र द्वारा निर्धारित होता है। कीनिया के मसाई दो मुख्य वर्गों में विभक्त हैं। काला बैल वाले गोत्र और लाल बैल वाले गोत्र। इनके जीवन की तीन अवस्थाएं होती हैं– **बालपन, योद्धापन, एवं वृद्धावस्था। दूसरी** अवस्था अर्थात् योद्धापन की कई कोटियां होती हैं– **कनिष्ठ योद्धा, वरिष्ठ योद्धा,** तथा **वरिष्ठ नेता। वरिष्ठ नेता** इनके समाज की समस्याओं का समाधानकर्ता होता है। योद्धा वर्ग के ऊपर समाज की सुरक्षा की जिम्मेदारी होती है। मसाई समाज में व्यक्ति का स्थान उसके पशुओं की संख्या के आधार पर निर्धारित होता है। मसाई समाज में लड़की और लड़के के विवाह का निर्णय उसके शैशवावस्था में ही ले लिया जाता है। किन्तु विवाह युवावस्था में ही किया जाता है। युवक का विवाह तब होता है जब वह अपना योद्धापन सिद्ध कर देता है। विवाह के समय कन्या पक्ष को दहेज के रूप में पशुदान करना पड़ता है। इनमें बहुविवाह की प्रथा प्रचलित है। एक मसाई पुरुष कुछ समयान्तराल पर कई विवाह कर सकता है।

सामाजिक परिवर्तन (Social Reform) :–

मसाई जनजाति के लोग परम्परावादी विचारधारा के पोषक हैं। इसीलिए सामान्यतः ये बाह्य सुधारों को स्वीकार नहीं करते। कीनिया तथा तंजानिया सरकारों ने इन्हें सुरक्षित क्षेत्रों में रखा है। ये सरकारें इन जनजातियों के लिए चरागाहों का विकास कर रही हैं। साथ ही साथ पशुओं की नस्ल सुधार दवा–दारू रोग निवारण व्यवस्थाओं पर जोर दे रही हैं। इसके सकारात्मक परिणाम भी मिल रहे हैं जैसे– कुछ मसाई अब कृषि कार्य को अपना रहे हैं तथा कुछ विभिन्न घरेलू उद्योगों को अपना रहे हैं।

8.5.6– खिरगीज (Khirgiz):–

पुरातन काल से ही मध्य एशिया चलवासी पशुचारकों का प्रमुख क्षेत्र माना जाता है। इन घुमक्कड़ (भ्रमणशील) पशुचारकों में खिरगीज नामक जनजाति विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। खिरगीज मौसमी परिवर्तन के अनुसार अपने परिवार तथा पशुओं के साथ मौसमी स्थानान्तरण (प्रवास) करते हैं। ये लोग पशुओं के लिए चारागाहों की खोज में वर्ष भर भ्रमण करते रहते हैं। ये तम्बुओं और शिविर में निवास करते हैं।

8.5.6 अ– निवास क्षेत्र (Habitat) :–

खिरगीज मध्य एशिया के ऊंचे पठारी प्रदेश में रहते हैं। इनका मुख्य निवास क्षेत्र 'किरिगिजस्तान' है जो पहले सोवियत संघ का एक प्रांत था और अब एक स्वतंत्र देश है। यहां लगभग 10 लाख खिरगीज निवास करते हैं। खिरगीज पशुचारकों का निवास क्षेत्र लगभग 2 लाख वर्ग किमी क्षेत्रफल में फैला हुआ है।

8.5.6 ब–शारीरिक लक्षण (Physical Traits) :–

खिरगीज मंगोलाइड प्रजाति के हैं। जिनका शारीरिक कद छोटा (150–160 सेमी0) होता है। इनका शरीर सुगठित, त्वचा का रंग पीला और बाल काले तथा सीधे होते है। इनका चेहरा लम्बा, नासिका लम्बी और पतली, नेत्र तिरछे होते हैं। कुछ लोगों के बाल भूरे भी होते हैं। नेत्रों की बनावट और चेहरे पर बाल की उपस्थिति मंगोलियाई लक्षणों से भिन्न है।

8.5.6 स– व्यवसाय (Occupation) :–

प्राचीन काल से ही पशुपालन खिरगीज लोगों का परम्परागत आर्थिक उद्यम रहा है। पिछली शताब्दी में सोवियत संघ के समाजवादी शासनकाल में अन्य क्षेत्रों की भांति इस क्षेत्र में भी आर्थिक प्रगति हुयी और कृषि तथा उद्योगों का विकास हुआ। किन्तु यहाँ आज भी चलवासी पशुचारण **(Nomadic Herding)** का महत्व कम नहीं हुआ।

8.5.6 द– भोजन (Food) :–

खिरगीज मुख्य रूप से शाकाहारी होते हैं और पशुओं से प्राप्त होने वाले दूध एवं दुग्ध पदार्थ (मक्खन, पनीर) आदि और शाक सब्जी इनका प्रमुख भोजन है। ये लोग गेहूं, ज्वार, जौ, चावल आदि कुछ खाद्यान्नों तथा भेड़, बकरियों का मांस भी खाते हैं। दूध मुख्यतः गाय और बकरियों से प्राप्त होता है। किन्तु थोडी मात्रा में याक का दूध भी प्रयोग में लिया जाता है। बाह्य प्रभाव से अब ये लोग चाय और तम्बाकू का भी उपयोग करने लगे हैं।

8.5.6 य– वस्त्र (Clothing) :–

खिरगीज खाल तथा ऊन के बनाये कपड़े पहनते हैं। पुरुष लम्बी कोट और पैजामे पहनते हैं और सिर पर खाल की गोल टोपी लगाते हैं। स्त्रियां खाल के कोट पैजामे अथवा ऊनी कपड़े को साड़ी की तरह लपेट लेती हैं तथा सूती अथवा ऊनी स्कार्फ भी बांधती है। सूती वस्त्र ये लोग निकटवर्ती स्थायी निवासियों से खरीदते हैं। स्त्री पुरुष दोनों ही पैर में चमड़े के बने जूते पहनते हैं। खिरगीज स्त्रियां ऊन कातकर स्वयं कपड़े बुन लेती हैं और अच्छे किस्म के कालीन, गलीचे, नमदे आदि भी बनाती हैं। ये लोग वर्ष भर सामान्यतः एक ही प्रकार के कपड़े पहनते हैं और ऊनी कम्बल का प्रयोग अधिक करते है। स्त्रियां नाक, कान, गले में चांदी या सोने के आभूषण पहनती हैं।

8.5.6 र– बर्तन और उपकरण (Pots And Tools) :–

भ्रमणशील जीवन होने के कारण अधिकतर ऐसे बर्तनों का प्रयोग करते हैं जो हल्के हो और टूटने–फूटने का डर भी कम रहे। ये लोग भेंड के सिले हुए चमड़े से बनाये गये पात्र में दूध, पनीर, मक्खन आदि रखते हैं। एक परिवार का प्रत्येक व्यक्ति एक थाली में अपने हाथों से भोजन करता है और चम्मच आदि का प्रयोग नहीं करता। ये लोग घरेलू वस्तुओं को चमड़े के बने मात्रों या टोकरियों में रखते हैं। हिंसक पशुओं तथा शत्रुओं से रक्षा के लिए ये लोग लोहे का भाला डंडा आदि भी साथ रखते हैं।

8.5.6 ल– गृह तथा तम्बू (House or Tent) :–

खिरगीज अपने परिवार तथा पशुओं के साथ लम्बी–लम्बी यात्राएं करते हैं। इस प्रकार वे वर्ष में अनेक

बार अपने स्थान बदलते रहते हैं। इसलिए ये लोग तम्बू का घर बनाते हैं। तम्बू ऊन नमदे या चमड़े के बनाये जाते हैं।

8.5.6 व– व्यापार (Trade) :–

खिरगीज अपने निकटवर्ती मैदानी भागों में रहने वाली स्थायी कृषकों से वस्तु विनिमय करते हैं। ये लोग अपने पशुओं तथा पशु उत्पादों को बेंचते हैं और अपनी आवश्यकतानुसार कुछ वस्तुओं का क्रय करते हैं। खिरगीज लोग पशु, घोड़े, ऊन तथा ऊनी कपड़े, कालीन, गलीचे, कम्बल, ऊन के नमदे पशुओं की खाले आदि को बेंचकर बदले में गेंहू और जौ का आटा, सूती कपड़े, चाय, नमक, माचिस, बन्दूके आदि लेते हैं।

8.5.6 श– सामाजिक संगठन (Social Organization) :–

खिरगीज सामान्यतः इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं। इसमें परिवार का एक मुखिया होता है। पशुओं के झुंड के अधिकांश भाग पर उसी का अधिकार होता है। परिवार का स्थानान्तरण का निर्णय वहीं लेता है। एक कुल के अन्तर्गत कई परिवार सम्मिलित होते हैं। एक पिता के वंशज अपने वंश या गोत्र से बाहर की लड़की से विवाह करते हैं। एक परिवार में पिता उसके पुत्र उनकी पत्नियां तथा बच्चे सम्मिलित होते हैं।

आधुनिक विकास एवं उच्च आवश्यकताएंः–

पशुपालन खिरगीज का पैतृक व्यवसाय है और वे पशुओं की देखरेख में अधिक प्रवीण होते हैं। खिरगीज मनोरंजन के लिए कुछ रोमांचक खेल खेलते हैं जिनमें अश्वारोहण अधिक लोकप्रिय है। रूसी सरकार की सहायता से इनमें शिक्षा का प्रसार हुआ। इनकी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि हुई। चारागाहों पर सिंचाई की व्यवस्था, सहकारी पशुशालाओं के निर्माण तथा दुग्ध उद्योग और चमड़ा उद्योग के विकास से खिरगीज लोगों के जीवन स्तर में उल्लेखनीय उत्थान हुआ।

8.6–सारांश (Conclusion)

मानव अपने उद्भव काल से ही पर्यावरण के साथ परस्पर क्रिया करता रहा है। पर्यावरण की उपज होने के साथ–साथ मानव एक भौगोलिक कारक भी है, जो एक समय में एक साथ भौतिक पर्यावरण और सांस्कृतिक पर्यावरण के साथ परस्पर क्रिया करता है। मानव की इसी विशेषता के कारण मानव पर्यावरण सम्बन्धों में परिवर्तन होता रहता है। लेकिन सम्पूर्ण विश्व में यह प्रक्रिया समान रूप से लागू न होकर भिन्न–भिन्न स्वरूप एवं गति में सक्रिय रही। इसी कारण इस धरातल के मानव समुदाय में स्थानिक रूप से विभिन्नता देखी जा सकती है। जहां एक और समाज अपने विकास के चरम पर है, वहीं धरातल का एक समुदाय विकास की इस धारा से दूर अपना जीवन यापन कर रहा है। जिसे आज भी मानव जनजाति के रूप में देखा जाता है। इनके पिछड़े एवं अलग होने का एक कारण यह भी है कि ये लोग विकास की इस चकाचौंध में आना भी नहीं चाहते क्योंकि इन्हें ऐसा लगता है कि इनकी मौलिक एवं परम्परागत जीवनशैली में परिवर्तन न हो जाय। इस इकाई में मानव जनजातियों की वास्तविक जीवनशैली का स्पष्ट चित्रण किया गया जो कि जनजातियों के नृजातीय गुण, प्राप्ति स्थल, शारीरिक गठन, आखेट, अर्थव्यवस्था, समाज का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत कर रही है। स्पष्ट है कि यह इकाई विद्यार्थियों को जनजातियों के जीवनशैली को समझने में सहायक सिद्ध होगी। इस इकाई के अध्ययन से जनजातियों के विषय में समझकर इनके सुधार के लिए नीति निर्धारण किया जा सकेगा।

8.7 बोध प्रश्न

8.7.1– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– विश्व की प्रमुख जनजाति एस्किमों की सामाजिक, आर्थिक एवं जैविक विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–02– खिरगीज अथवा बुशमैन की जीवन पद्धति का वर्णन उनके प्राकृतिक वातावरण के सम्बन्ध में कीजिए।

प्रश्न–03– अरब के बद्दू पर एक लेख लिखिए।

प्रश्न–04– अफ्रीका महाद्वीप की प्रमुख जनजातियों का नाम बताते हुए मसाई जनजाति का वर्णन कीजिए।

8.7.2– लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– खिरगीज कौन हैं, समझाइए।

प्रश्न–02– एस्किमों की शिकार पद्धति का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–03– बुशमैन के निवास–क्षेत्रों को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न–04– बद्दुओं के सामाजिक जीवन को स्पष्ट कीजिए।

8.7.3– वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर :–

प्रश्न–01– निम्नलिखित में से किस आदिम जनजाति का सम्बन्ध विषुवतरेखीय प्रदेश से नहीं है?

अ– खिरगीज **ब–** सेमांग

स– सकाई **द–** पिग्मी

प्रश्न–02– बुशमैन निम्नलिखित में से किस मरुस्थल में रहते हैं?

अ– कालाहारी ब– सहारा

स– अटाकामा द– थार

प्रश्न–03– निम्नलिखित में से किसका सम्बन्ध ग्रीनलैण्ड से है?

अ– बुशमैन ब– युकाधिर

स– एस्किमो द– सेमोइड्स

प्रश्न–04– एस्किमो लोगों द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली नाव कहलाती है–

अ– सिमूम ब– बिली–बिली

स– कयाक द– इनुइत

प्रश्न–05– एस्किमो जनजाति का प्रमुख व्यवसाय है–

अ– आखेट ब– खनन

स– कृषि द– पशुपालन

प्रश्न–06– इग्लू है–

अ– मसाई का घर ब– एस्किमो का घर

स– बुशमैन के निवास द– सेमांग का घर

प्रश्न–07– क्रॉल क्या है ?

अ– मसाई का घर ब– एस्किमो का घर

स– बुशमैन के निवास द– पिग्मी के निवास

प्रश्न–8– बुशमैन जनजाति का मुख्य व्यवसाय है–

अ– शिकार ब– कृषि

स– मत्स्याखेट द– खनन

उत्तरमाला–

01– अ **02–** अ **03–** स **04–** स

05– अ **06–** ब **07–** अ **08–** अ

8.8सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, माजिद हुसैन चतुर्थ संस्करण, सत्यम अपार्टमेंट, सेक्टर 3 जवाहर नगर जयपुर 302004, पृष्ठ सं–458 पैरा05, पृष्ठ सं 460 पैरा 02, पृष्ठ सं 464 पैरा 02

02– मानव भूगोल, डॉ0 काशीनाथ सिंह, डॉ0 जगदीश सिंह, ज्ञानोदय प्रकाशन 234 दाऊदपुर, गोरखपुर। पृष्ठ सं 123,124,125, 126,।

03– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए0 यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद। पृष्ठ सं 280, 281,

04– मानव भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, डॉ दीपक माहेश्वरी, साहित्य भवन पब्लिकेशन, हास्पिटल रोड आगरा, 282003, पृष्ठ सं 177।

इकाई–9 जनसंख्या वितरण प्रतिरूप एवं संसाधन अन्तर्सम्बन्ध महत्व

इकाई की रूपरेखा

9.1– प्रस्तावना

9.2– उद्देश्य

9.3– जनसंख्या वितरण प्रतिरूप

- 9.3.1– प्रथम श्रेणी के प्रतिरूप
- 9.3.2– द्वितीय श्रेणी के प्रतिरूप
- 9.3.3– तृतीय श्रेणी के प्रतिरूप

9.4– जनसंख्या संसाधन सम्बन्ध

- 9.4.1– अनुकूलतम जनसंख्या
- 9.4.2– अति जनसंख्या या जनाधिक्य
- 9.4.3– अल्प जनसंख्या या जनाभाव

9.5– जनसंख्या संसाधन प्रदेश

9.6– सारांश

9.7– बोध प्रश्न

9.8– संदर्भ ग्रन्थ सूची

जनसंख्या वितरण प्रतिरूप एवं संसाधन सम्बन्ध

9.1 प्रस्तावना (Preface)

पृथ्वी पर मानव उद्भव से लेकर आज तक जो संघर्ष करता रहा है उसका परिणाम है कि आज पृथ्वी मानव पुंज के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। पृथ्वी पर विद्यमान सभी प्राणियों में मानव तीव्र बुद्धि का होने के कारण पृथ्वी पर विद्यमान सभी जैविक एवं अजैविक संसाधनों का तीव्र दोहन कर रहा है और अपना वर्चस्व स्थापित करता जा रहा है। मानव जीवन यापन के मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पृथ्वी पर विद्यमान संसाधनों से अन्तःक्रिया करता है। हम यह भी जानते हैं कि पृथ्वी पर मानव जीवन यापन के लिए संसाधनों का समान वितरण नहीं पाया जाता है। इसलिए मानव जनसंख्या पुंज संसाधन प्राप्ति क्षेत्रों में अधिक है जबकि संसाधन दुर्लभ क्षेत्रों में जनसंख्या अधिक विरल पायी जाती है।

9.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत विषय–वस्तु का अध्ययन करने से विद्यार्थियों में निम्नलिखित ज्ञान एवम बोध हो सकेगा–

01– भौगोलिक वातावरण के परिणाम स्वरूप इस प्रकार की संस्कृति तथा सभ्यता का विकास हुआ है और किसी देश के निवासी किसी विशेष प्रकार का जीवन यापन क्यों कर रहे हैं?

02– जीविकोपार्जन में सहायता, जिसमें शक्ति के साधनों, खनिज पदार्थो तथा कच्चे माल के विषय में ज्ञान प्रदान करना।

03– वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना विकसित कर सम्पूर्ण संसार के प्राणियों के प्रति कुटुम्बी जनमानस की भावना उत्पन्न करना।

अयं निज परोवेति गणनायां लघुचेतसां,

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम।।

अर्थात् यह मेरा है वह पराया है, की भावना से ऊपर उठकर सम्पूर्ण संसार को परिवार मानें।

04– प्रस्तुत इकाई मानव एवं संसाधनों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होगी।

05– विश्व में जनसंख्या प्रतिरूप के वितरण की स्पष्ट जानकारी उपलब्ध कराना तथा मानव संसाधन का प्राकृतिक संसाधन सम्बन्धों को स्पष्ट करना।

06– जनसंख्या के बसाव के सन्दर्भ में प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को स्पष्ट करना तथा यह बताना कि किस प्रकार प्राकृतिक संसाधन जनबसाव में महती भूमिका अदा करते हैं।

9.3 जनसंख्या वितरण प्रतिरूप (Patterns of Population Distribution)

मानव भूगोल में प्रमुख रूप से इस धरालत के सांस्कृतिक स्वरूप एवं इसके सन्दर्भ में भौतिक तत्वों का अध्ययन किया जाता है। सांस्कृतिक भू–दृश्य का निर्माण इस संसार के सबसे अधिक बुद्धिमान एवं समर्थ प्राणी मानव के द्वारा किया जाता है। पर सांस्कृतिक भू–दृश्य भी सर्वत्र एक समान नहीं हैं अपितु उनमें स्थानानुरूप विविधता देखने को मिलती है। इन विषमताओं का यदि सूक्ष्म अवलोकन किया जाये तो हमारे सामने दो बातें निकल कर आती हैं। **प्रथम** यह कि मानव शक्ति ने अपने अनुरूप पर्यावरण पर विजय प्राप्त कर विशेष प्रकार के सांस्कृतिक भूदृश्य का निर्माण किया तथा पर्यावरण को अपने अनुकूल बनाया। **दूसरा** यह कि सांस्कृतिक भू–दृश्य पर पर्यावरणीय प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अर्थात् मनुष्य ने पर्यावरण के साथ समायोजन किया एवं अपने रहने योग्य वातावरण बनाया। इस सन्दर्भ में जी0 टेलर का कथन उल्लेखनीय है कि ''मनुष्य चौराहे पर खड़े एक ट्रैफिक इंस्पेक्टर की भाँति है जो आने जाने वाले लोगों की गति को तो कम कर सकता है पर उनकी दिशा को बदल नहीं सकता।'' अर्थात् पर्यावरण के साथ अनुकूलन करके ही मानव विकास हो सकता है और मनुष्य अपनी आकांक्षाओं को मूर्त रूप दे सकता है। इसी का परिणाम है कि मानव समुदाय आज विश्व के सभी भागों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुका है और जनसंख्या वितरण का प्रतिरूप देखें तो मानव के बसाव की स्थिति को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। **जेम्स** ने विश्व जनसंख्या का वितरण का वर्णन करते हुए पृथ्वी पर मुख्यतः दो जनसंख्या समूहों को व्यक्त किया है–

अ– दक्षिणी पूर्वी एशिया जहाँ विश्व की लगभग आधी जनसंख्या 1/10 भू क्षेत्र पर निवास करती है।

ब– यूरोप जहाँ विश्व की लगभग 1/5 जनसंख्या 1/20 भू क्षेत्र पर निवास करती है।

क्लार्क महोदय के अनुसार विश्व की मात्र 30 प्रतिशत जनसंख्या ही स्थायी रूप से निवास करती है। इन्होंने विश्व की 3/4 जनसंख्या का संकेन्द्रण स्थल पूर्वी एशिया, दक्षिणी एशिया, उ0प0 यूरोप व उत्तरी पूर्वी अमेरिका के रूप में व्याख्यायित किया है। इस प्रकार पुरानी दुनिया में विश्व की कुल जनसंख्या का 86 प्रतिशत भाग निवास करती है जबकि नई दुनिया में मात्र 14% जनसंख्या निवास करती है।

विश्व में जनसंख्या वितरण सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य–

जनसंख्या वितरण प्रतिरूप को समझने से पूर्व निम्नलिखित तथ्यों को समझना आवश्यक है–

01– ट्रिवार्था के अनुसार– विश्व जनसंख्या की सबसे महत्वपूर्ण विलक्षणता यह है कि जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों में पर्याप्त विविधता मिलती है तथा इसमें संख्यात्मक एवं स्थानिक विसंगतियां मिलती है। उत्तरी गोलार्द्ध में विश्व की लगभग 90% जनसंख्या निवास करती है जबकि लगभग 10% जनसंख्या दक्षिणी गोलार्द्ध में निवास करती है। जनसंख्या वितरण में अक्षांशीय विषमता देखी जाती है जैसे– एशिया महाद्वीप में भूमध्य रेखा से 20^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य एशिया की लगभग 10% जनसंख्या, 20^0 से 40^0 अक्षांशों के मध्य एशिया में विश्व की 50% जनसंख्या निवास करती है और 40^0 से 60^0 अक्षांशों के मध्य यूरोप में विश्व की 30% जनसंख्या, जबकि 60^0 उत्तरी अक्षांश के उत्तर में मात्र 1% जनसंख्या निवास करती है। इस प्रकार एक तथ्य निकलकर आता है कि विश्व की लगभग आधी जनसंख्या 5% भू भाग पर तथा आधी जनसंख्या 60% भू भाग पर निवास करती है।

02– क्लार्क के अनुसार– विश्व की अधिकांश जनसंख्या समुद्र तटीय क्षेत्रों में निवास करती है। इनके अनुसार सागर तटीय क्षेत्र सघन जनसंख्या जबकि आन्तरिक क्षेत्र विरल जनसंख्या धारित करते हैं। इनके अनुसार विश्व की 3/4 जनसंख्या सागर से 1000 किमी0 तथा 2/3 जनसंख्या 500 किमी0 दूरस्थ क्षेत्र में बसी है। अफ्रीका,

दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया के भागों में यह अन्तर और विषम है। अकाल, कम वर्षा, शीत एवं वाणिज्य क्षेत्रों से दूर बसे होने के कारण आन्तरिक भाग कम बसे होते हैं। इसीकरण जनसंख्या कम पायी जाती है। क्लार्क के अनुसार सम्भवतः दो कारण ऐसे हैं जिनके प्रभाव से सागरीय तटों पर अधिक जनसंख्या पायी जाती है। प्रथम कारण यहाँ की जलवायु एवं दूसरा कारण है अभिगम्यता। इनके अनुसार यूरोप महाद्वीप अन्य महाद्वीपों की तुलना में भिन्न है क्योंकि यूरोप महाद्वीप ऐसा भू भाग है जहाँ मरुस्थल नहीं पाये जाते हैं तथा अति शीत भी नहीं पायी जाती है।

ट्रिवार्था ने अपने अध्ययन में यह तथ्य स्पष्ट किया है कि जनसंख्या के ऊर्ध्वाधर वितरण का औसत तल दक्षिणी अमेरिका में सर्वोच्च (644 मीटर) और आस्ट्रेलिया में न्यूनतम (95 मीटर) है। इस प्रकार विश्व की लगभग 80% जनसंख्या सागरतल से 500 मीटर तक की ऊँचाई तक निवास करती है।

चित्र सं–9.1 स्रोत–मानव भूगोल प्रो0 बी0 एन0 सिंह पृष्ठ सं–189

03– विश्व के जनसंकुल क्षेत्र द0 एशिया, द0पू0 एशिया, पश्चिमी यूरोप, एवं उ0पू0 संयुक्त राज्य अमेरिका हैं जहाँ पर अधिकतम (1000 से 2500 व्यक्ति/वर्ग किमी) जनघनत्व पाया जाता है। एशिया में जनसंकुल का प्रमुख कारण कृषि सुविधाएं एवं यूरोप और आंग्ल अमेरिका में नगरीय एवं औद्योगिक विकास है।

04– विश्व में जनसंख्या के असमान वितरण के लिए मुख्यतः प्राकृतिक, सांस्कृतिक एवं जनसांख्यिकीय कारक उत्तरदायी हैं। विश्व की विभिन्न सभ्यताओं का विकास नदियों की घाटियों में हुआ है क्योंकि यहाँ पर कृषि के लिए उपजाऊ भूमि एवं जल की सुविधा पर्याप्त रूप में विद्यमान थीं। इसके अतिरिक्त यदि देखा जाये तो विश्व के प्रमुख जनसंकुल क्षेत्र एवं नगर नदियों के किनारे बसे हुए हैं। सांस्कृतिक कारक स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवहन, राजनीति, धर्म, उद्योग आदि भी जनसंख्या को आकर्षित करते हैं। इस आधार पर भी विश्व में अनेक नगरों का विकास हुआ है (चित्र सं–9.1)।

05– विश्व क्षेत्रफल का लगभग एक तिहाई भू–भाग मानव निवास के लिए अनुपयुक्त हैं। इस वर्तमान युग में मानव निवास हेतु उपयुक्त एवं अनुपयुक्त के बीच रेखा खींचना सम्भव नहीं है। ग्रीनलैण्ड, अण्टार्कटिका के वृहत क्षेत्र निर्जन अस्थाई आबाद क्षेत्र हैं। ये अस्थाई अधिवास क्षेत्र मुख्यतः अनुपयोगी मरुस्थल, अनुत्पादक शीत क्षेत्र, हिमाच्छादित पर्वतीय क्षेत्र, दलदली क्षेत्र एवं उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्र हैं। इन दुरूह क्षेत्रों में भी यत्र–तत्र प्रकीर्ण रूप में मानव अधिवास देखने को मिलते हैं। विश्व के ऐसे क्षेत्र जहाँ प्राकृतिक दुरूहता जरा सी भी कम है। मानव वहां

अपना अधिवास बनाने लगता है। इस प्रकार कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आज विश्व का कोई भी भू भाग ऐसा नहीं है जहाँ मानव ने अपनी उपस्थिति न दर्ज करायी हो।

06– विश्व की लगभग 3/4 जनसंख्या चार प्रमुख क्षेत्रों में निवास करती है जिनमें दो एशिया महाद्वीप (पूर्वी एशिया में चीन एवं जापान– विश्व का सबसे विस्तृत जनसमूह, द0 एशिया जिसमें भारत, बांग्लादेश, तथा पाकिस्तान हैं) में विस्तृत हैं एवं यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में स्थित है। विश्व के कुछ देश हैं जहाँ पर विश्व की अधिकतम जनसंख्या निवास करती है।

विश्व के दस सबसे अधिक जनसंख्या वाले देशों में सम्पूर्ण विश्व की लगभग 60% जनसंख्या निवास करती है। इन दस देशों में से अधिकतम एशिया महाद्वीप से सम्बन्धित हैं। तालिका सं 9.1 में विश्व के दस सबसे अधिक जनसंख्या वाले देशों की जनसंख्या दी गयी है।

तालिका सं–9.1

विश्व के दस सर्वाधिक जनसंख्या धारित करने वाले देश एवं उनकी जनसंख्या

क्रम सं	देश का नाम	जनसंख्या करोड़ में	विश्व की कुल जनसंख्या का %
01	चीन	143.37	18.59
02	भारत	136.64	17.71
03	संयुक्त राज्य अमेरिका	32.90	4.27
04	इण्डोनेशिया	27.06	3.51
05	पाकिस्तान	21.65	2.81
06	ब्राजील	21.10	2.74
07	नाइजीरिया	20.09	2.61
08	बांग्लादेश	16.30	2.11
09	रूस	14.58	1.89
10	मैक्सिको	12.75	1.65

स्रोत– बैकल्पिक भूगोल, संजय सिंह, क्रॉनिकल पब्लिकेशन।

तालिका क्र0 9.1 से स्पष्ट है कि चीन में सबसे अधिक 127.76 करोड़ जनसंख्या निवास करती है। चीन के बाद भारत दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या रखने वाला देश है। भारत की जनसंख्या 102 करोड़ है (जनगणना 2001 ई0)।यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या चीन एवं भारत के बाद तीसरे क्रम पर है, तथापि इन दोनों देशों

की जनगणना में 99 करोड़ का बहुत बड़ा अन्तर है जो संयुक्त राज्य अमेरिका की कुल जनसंख्या की तीन गुना से भी अधिक है। चित्र सं0 9.2 में विश्व के दस सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों की जनसंख्या को दर्शाया गया है।

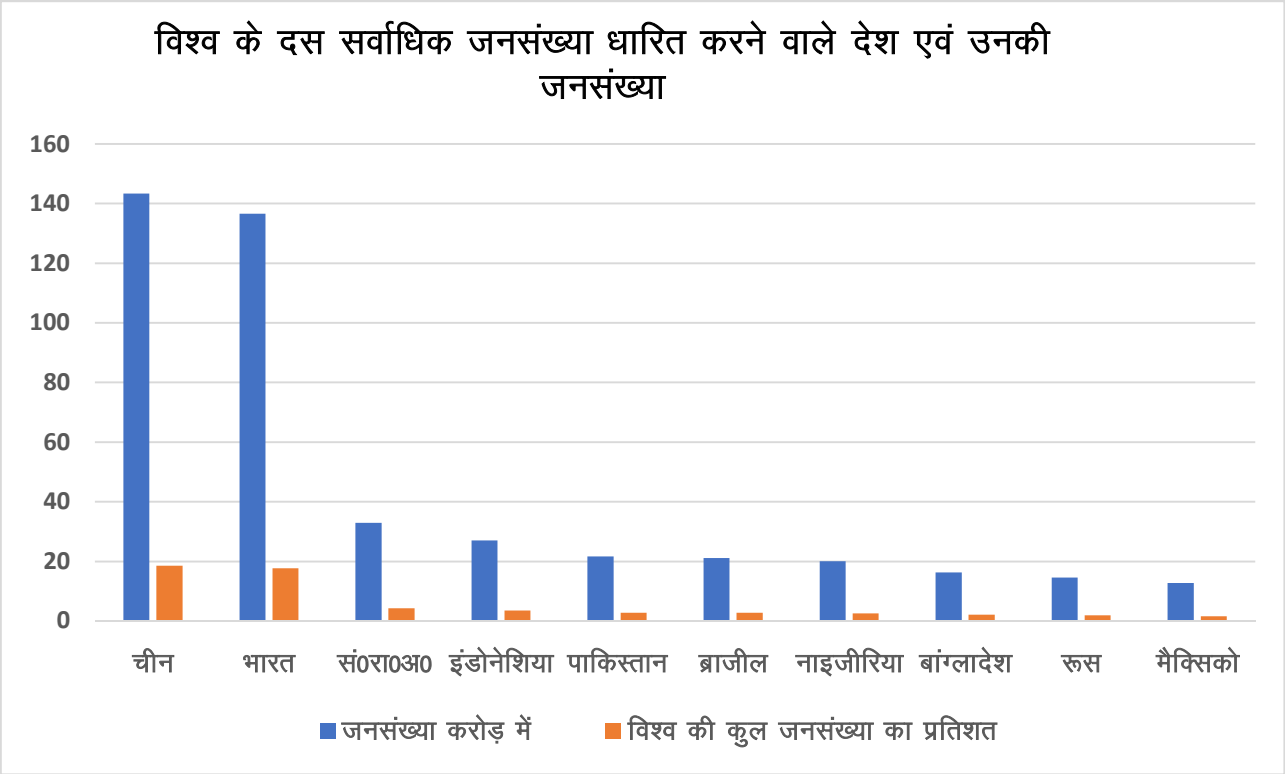

चित्र सं–9.2

स्रोत– समग्र भूगोल, खुल्लर डी0 आर0, मैग्राहिल प्रकाशन चेन्नई।

विश्व के दस सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में से छः देश एशिया से सम्बन्धित है जिसमें चीन, भारत, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा जापान हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका उत्तरी अमेरिका महाद्वीप में, ब्राजील दक्षिणी अमेरिका में तथा नाइजीरिया अफ्रीकी देश है। चित्र सं 9.3 से स्पष्ट है कि जनसंख्या की दृष्टि से चीन तथा भारत का क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय स्थान है, के पास विश्व की क्रमशः 21.3 तथा 16.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि यदि विश्व की जनसंख्या को विखेर दिया जाये तो उसमें प्रत्येक पाँचवा व्यक्ति चीनी एवं प्रत्येक छठा व्यक्ति भारतीय होगा। चित्र से यह भी स्पष्ट है कि विश्व की 60 % जनसंख्या इन्हीं दस देशों में निवास करती है। शेष विश्व के सभी देशों में मिलाकर 40 % जनसंख्या निवास करती है।

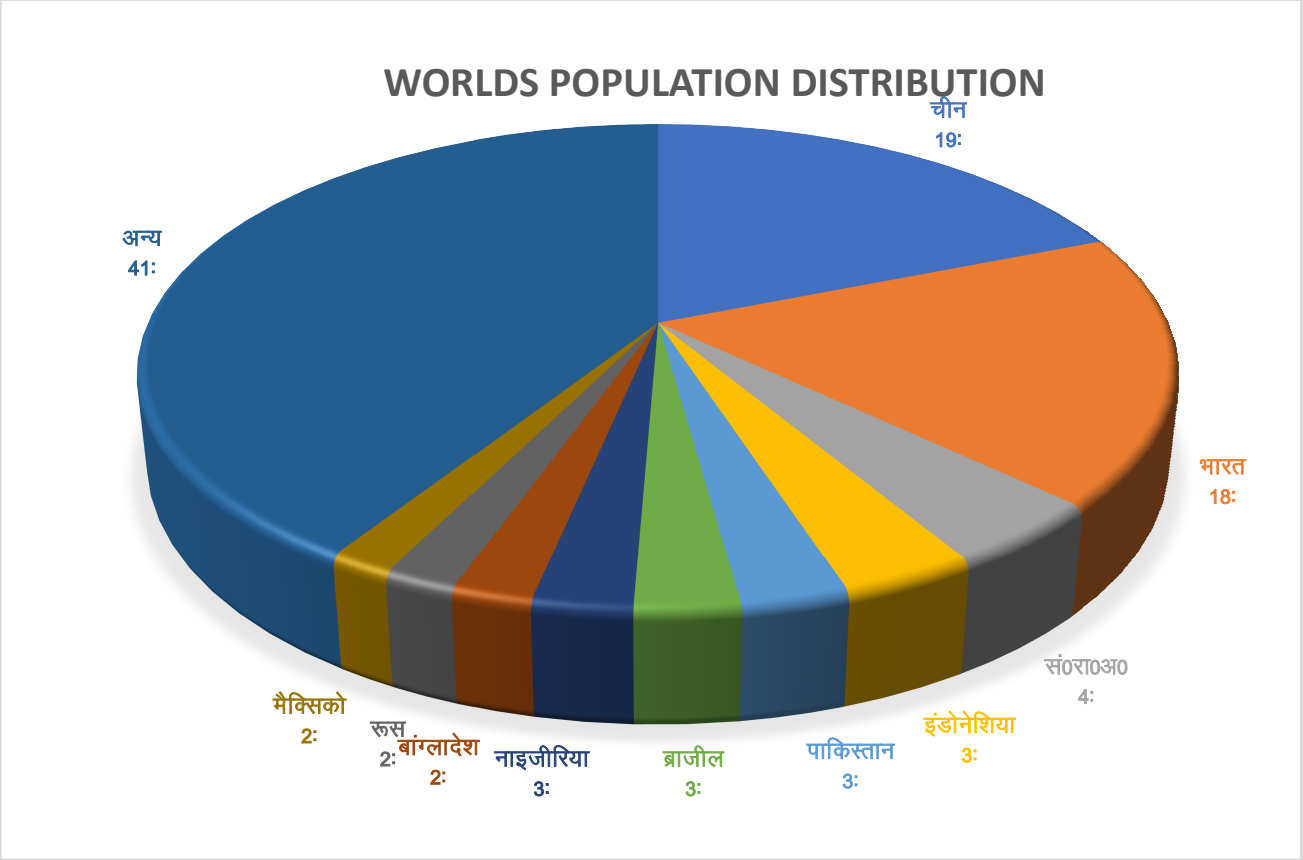

चित्र सं–9.3 विश्व में जनसंख्या का वितरण

जनसंख्या वितरण के केन्द्रीकरण अथवा प्रसार की दृष्टि से अनेक प्रकार के प्रतिरूप देखने को मिलते हैं–

9.3.1– प्रथम श्रेणी के प्रतिरूप (Pattern of first Order) :–

प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत वे प्रदेश आते हैं जिनमें जनसंख्या के पुंज या जमाव मिलते हैं जैसे पूर्वी एशिया, द0 पूर्वी एशिया, उ0 पश्चिमी यूरोप, रूस के दक्षिणी पश्चिमी भाग और उत्तरी अमेरिका के उत्तरी पूर्वी भाग तथा कनाडा के सेन्ट लॉरेन्स क्षेत्र इस श्रेणी में सम्मिलित किए जाते हैं। इन्हें वृहत् जन समूह (Major area of concentration) कहा जाता है। पूर्व में किए गये अध्ययन से स्पष्ट है कि विश्वजनसंख्या का लगभग 80% भाग तीन बड़े महा समूहों में निवास करता है। इनमें सबसे बड़ा जनसमूह द0 पूर्व एशिया है। इस जनसमूह के निम्नलिखित दो प्रमुख जनसमूह हैं–

अ– दक्षिण एशिया (South Asia) :–इसके अन्तर्गत भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, इण्डोनेशिया एवं फिलीपीन्स है।

ब– पूर्वी एशिया (East Asia):– यह विश्व का सबसे बड़ा जनसंकुल है। इसमें चीन, जापान तथा कोरिया को सम्मिलित किया जाता है। यह एशिया का वह भूभाग है जो अनुकूल जलवायु धारित करता है।

ये दोनों क्षेत्र प्रशान्त महासागर एवं हिन्द महासागर के माध्यम से एक दूसरे से मिलते हैं।

एशिया के पश्चात् दूसरा सबसे बड़ा जनबसाव क्षेत्र यूरोप महाद्वीप है। इस महाद्वीप में सघन जनसंख्या की पेटी का विस्तार औद्योगिक प्रदेश में है। जनसंख्या जमाव का यह समूह अटलांटिक महासागर के पूर्व में स्थित है। तीसरा जनसंख्या जमाव का प्रमुख संकेन्द्रण आंग्ल अमेरिका के उत्तरी पूर्वी भाग में हुआ है। एशिया एवं यूरोप महाद्वीप की तुलना में यहाँ की जनसंख्या कम है। यह महासमूह महान झील प्रदेश के दक्षिण पूर्वी भाग में खनिज एवं औद्योगिक केन्द्रों के क्षेत्र में विस्तृत है। ये तीनों सघन जनसंख्या प्रदेश विभिन्न अक्षांशों में स्थित हैं अर्थात् ये अपनी अक्षांशीय स्थिति के कारण इतना जनभार रखते हैं। दक्षिण पूर्व एशिया की अक्षांशीय स्थिति 10^0 उत्तर से 40^0 है। यह क्षेत्र उष्ण कटिबन्धीय पेटी के अन्तर्गत आता है। शेष दोनों सघन जनसंख्या क्षेत्र 40^0 से 55^0 उत्तरी

अक्षांश के मध्य विस्तृत है। कह सकते हैं कि ये दोनों क्षेत्र मध्यअक्षांशीय पेटी के अन्तर्गत आते हैं।

दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में जहाँ जनसंख्या संसाधन की प्रचुरता है, वहाँ अधिकतम जनसंख्या अनुमानतः 75% जनसंख्या प्राथमिक कार्यों (मुख्यतः कृषि एवं पशुपालन, मत्स्यपालन, वनों की कटाई आदि) में संलग्न है। यहाँ गहन कृषि होती है, रहन–सहन का स्तर निम्न है (हालॉकि इस प्रदेश में स्थित कुछ शहर एवं देश विकसित अवस्था में हैं), जन्मदर एवं मृत्युदर दोनों उच्च हैं। प्रायः जीवनोपयोगी आवश्यक आवश्यकताओं की कमी रहती है। यहाँ की जनसंख्या विभिन्न प्रकार की समस्याओं (निर्धनता, बाढ़–सूखा, आर्थिक एवं शारीरिक निर्बलता एवं बीमारी) से ग्रस्त रहती है। नगरीय जनसंख्या की तुलना में ग्रामीण जनसंख्या अधिक पायी जाती है। आज विकास के इस युग में विभिन्न तकनीकी एवं प्रौद्योगिकीय विकास के परिणाम स्वरूप इनके जीवन स्तर में सुधार आ रहा है तथा विभिन्न प्रकार के औद्योगिक एवं तकनीकी विकास किए जा रहे हैं। एशियाई केन्द्र में केवल जापान ही एक ऐसा देश है जिसने आर्थिक उन्नति की है और निर्माण उद्योग एवं व्यापार को अधिक विकसित किया है। द0पू0 एशिया में जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति को सीमित कर औद्योगिक विकास की गति को तेज करने से आर्थिक स्तर एवं रहन–सहन का स्तर ऊँचा हो गया है।

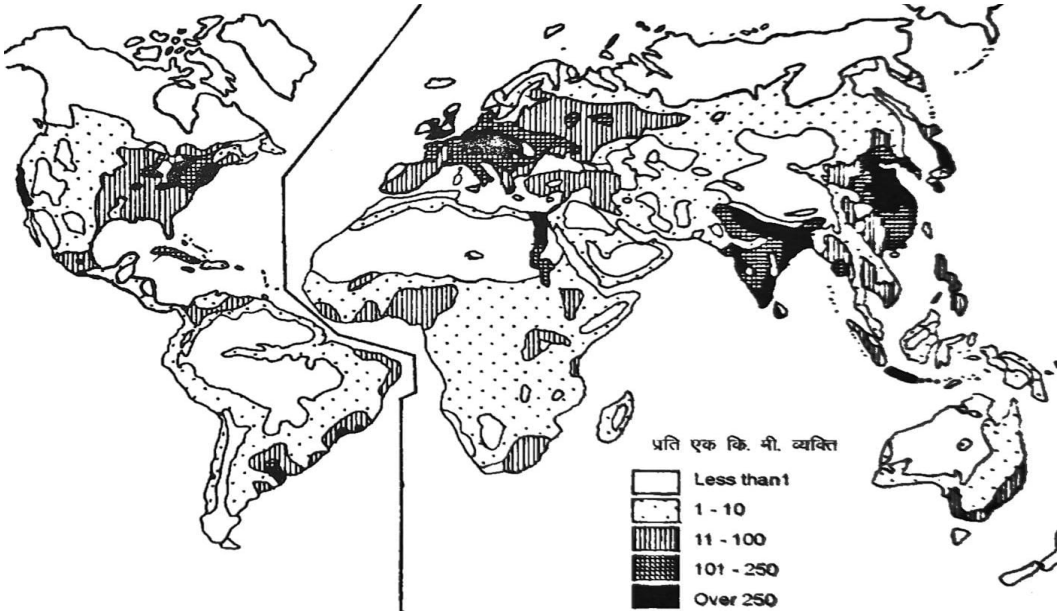

चित्र सं–9.4 विश्व जनसंख्या घनत्व

अमेरिका का विकास पर्याप्त मात्रा में हुआ है क्योंकि यूरोपियन लोगों के आगमन से यहाँ पर यूरोपीय सभ्यता का विकास हुआ जो पहले ही इनसे विकसित हो गये थे। अमेरिका में विशेषीकृत कृषि की जाती है जिसमें विभिन्न प्रकार के आधुनिक कृषि यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। अमेरिका एवं **यूरोप** की जनसंख्या विश्व के अन्य देशो की तुलना में अधिक विकसित अवस्था में है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या नगरों एवं महानगरों में निवास करती है। इन देशों में जन्मदर एवं मृत्युदर दोनों निम्न है, जिससे संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग किया जाता है।

9.3.2– द्वितीय श्रेणी के जनसंख्या प्रतिरूपः–(pattern of second order)

उपरोक्त प्रथम श्रेणी के बसे हुए क्षेत्रों में जनसंख्या का निवास सर्वत्र एक समान न होकर विषम रूप में पाया जाता है। इसके कुछ क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व अत्यधिक पाया जाता है। द्वितीय श्रेणी के प्रतिरूप को जनसंख्या का लघु क्षेत्र भी कहा जाता है। जहाँ जनसंख्या कुछ भागों में अत्यन्त घनी और अपने निकटवर्ती स्थानों में कम घनी है। उदाहरण के लिए सतलज, सिन्धु और गंगा के मैदान में जनसंख्या अधिक घनी है किन्तु इसके निकट ही पठारी भाग और मरूस्थलीय क्षेत्रों में कम घनी मिलती है। घनी जनसंख्या वाले पश्चिम बंगाल के बगल में ही बिखरी जनसंख्या वाले असम, मेघालय और अरुणांचल प्रदेश है। इसी प्रकार वियतनाम के पड़ोस में लाओस देश बसा है। जनसंख्या के इस प्रकार के प्रतिरूप में जनसंख्या का कृषि एवं औद्योगिक दोनों प्रकार के

प्रदेशों में सामूहिक वातावरण के संसाधनों से घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। इनकी दो प्रमुख विशेषताएं पायी जाती हैं। –

01– कृषि प्रधान देशों में उपसमूहों के धरातल की आकृति, मृदा, जलवायु एवं जलापूर्ति के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इसी कारण से कृषि प्रधान देशों की जनसंख्या का जमाव अधिकतम कॉप मिट्टी के मैदोनों में मिलते हैं जहाँ सिंचाई के साधन एवं वर्षा पर्याप्त मात्रा में मिलती है।

02– विनिर्माण उद्योगों के प्रदेश में जनसंख्या के उपसमूहों का खनिज संसाधनों और परिवहन की सुविधाओं से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। अर्थात औद्योगिक प्रदेशों में संसाधन एवं विभिन्न प्रकार की सुविधाएं जनसंख्या को अपनी और आकर्षित करती हैं।

एशिया महाद्वीप के विभिन्न भागों में जनसंख्या का विस्तार पाया जाता है। मुख्यरूप से जनसंख्या का पुंज सामान्यतया नदियों के आर्द्र मैदानों में है, जहाँ वर्षा की मात्रा 100 सेमी0 से अधिक है। इसके विपरीत मंगोलिया, तिब्बत, साइबेरिया तथा सीक्यांग के विस्तृत भागों में जनसंख्या विरल है। जनसंख्या के वितरण को विभिन्न देशों के आधार पर निम्नरूप में देखा जा सकता है–

चीन (China) :–

विश्व जनसंख्या का लगभग 25% भाग चीन में रहता है, चीन की अधिकतम जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है तथा जनसंख्या का बड़ा भाग कृषि कार्यों में संलग्न है। इस देश के निवासी अपने देश की मिट्टी से विशेष रूप से जुड़े होते हैं और चीनी सभ्यता यहाँ की मिट्टी से ही उत्पन्न हुई है।[03] चीन में जनसंख्या का वितरण एक समान न होकर विषम रूप में पाया जाता है। अधिकतम जनसंख्या दक्षिण पूर्व चीन में केन्द्रित है। यन्नान से लेकर उ0 मंचूरिया तक एक रेखा खींची जाये तो इस रेखा के उत्तर पश्चिम का भाग पर्वतीय एवं मरुस्थलीय है जो जनसंख्या के बसाव के लिए प्रतिकूल है जबकि इस रेखा के दक्षिण पूर्व चीन की आर्द्र जलवायु का क्षेत्र पाया जाता है जिसमें यांग्टीसीक्यांग, जेचुआन बेसिन, सिक्यांग बेसिन और सागरतटीय पेटी आती हैं। चीन के निम्नलिखित क्षेत्रों में जनसंख्या का केन्द्रण अधिक पाया जाता है।

अ– चीन का उत्तरी बड़ा मैदान–इसके अन्तर्गत ह्वांगहो का निचला बेसिन, वीही नदी घाटी एवं शान्तनु घाटी आते हैं।

ब– यांग्टीसीक्यांग नदी डेल्टा एवं शंघाई का पृष्ठ प्रदेश में जनसंख्या का जमाव पाया जाता है।

स– यांग्टीसीक्यांग की मध्यवर्ती घाटी एवं काऊ क्षेत्र।

द– जैकुआन बेसिन, केंगटू–चुंगकिंग क्षेत्र में भी जनजमाव पाया जाता है।

य– सिक्यांग नदी घाटी एवं डेल्टाई भाग तथा ह्वांगकांग का पृष्ठ प्रदेश।

र– दक्षिण पूर्वी सागर तटीय भाग की संकीर्ण पट्टी में जनसंख्या पायी जाती है।

ल– मंचूरिया, मुकडेन एवं आनसान क्षेत्र की जनसंख्या सघन है।

इन उपरोक्त प्रदेशों में जनसंख्या मुख्यरूप से कृषि कार्यों में संलग्न है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इन उपरोक्त प्रदेशों में पर्याप्त औद्योगिक विकास हुआ जिसके परिणाम स्वरूप पेकिंग (वीजिंग), शंघाई, कैन्टन, नान्किंग, हैकाऊ, सिंगटाओ आदि नगरों की जनसंख्या 2000 व्यक्ति/किमी0^2 से भी अधिक हो गयी है जबकि उपर्युक्त प्रदेशों का घनत्व 1000 व्यक्ति/किमी^{2} तथा चीन का औसत घनत्व 115 व्यक्ति/किमी^{2} है। इस क्षेत्र में उपजाऊ मैदान की प्रधानता है और इसी कारण इस क्षेत्र में जनसंख्या सघन रूप में पायी जाती है। चीन की अधिकांश जनसंख्या गावों में पायी जाती है और वे अपनी मिट्टी से जुड़े होते हैं।

जापान (Japan):–

जापान ऐसा देश है जहाँ कृषि योग्य भूमि सीमित मात्रा में है, जापान में 15% भूमि पर कृषि होती है। जापान में सघन आबादी सागर तटीय क्षेत्र में संकीर्ण मैदोनों में पायी जाती है। जापान में कृषि उन्नत तकनीकी द्वारा की जाती है। इसी कारण यहाँ गहन कृषि की जाती है। जापान में औद्योगिक विकास सागर तटीय क्षेत्रों में अधिक हुआ है तथा उद्योग–धन्धे जल विद्युत द्वारा संचालित होते हैं। एशिया महाद्वीप का जापान ही एक ऐसा

देश है जहाँ सबसे अधिक औद्योगीकरण एवं नगरीकरण हुआ है। जापान की लगभग 75 से 80 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। जापान की तीन चौथाई जनसंख्या क्यूशू, शिकोकू, एवं होन्शू द्वीपों में फैली है। जापान की जनसंख्या का घना जमाव मुख्यतया औद्योगिक क्षेत्र में हुआ है। इस देश की जनसंख्या निम्नलिखित पाँच क्षेत्रों में मुख्यरूप से फैली है–

अ– क्वांटो प्रदेश में टोकियो में जनजमाव अधिक है।

ब– नागोया क्षेत्र

स– उत्तरी क्यूशू क्षेत्र जिसमें हिरोशिमा, नागाशाकी, मोजी एवं यावाता में जनसंख्या का निवास अधिक है।

द– कनजवा क्षेत्र

जापान में अधिक जनसंख्या एक पेटी जो कि 33^0 उत्तरी अक्षांश से 38^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य विस्तृत है, सघन रूप में निवास करती है। यहाँ जनसंख्या का सबसे अधिक जमाव उत्तरी–पूर्वी टोकियो और याकोहामा से लेकर प्रशान्त महासागरीय तट के दक्षिण–पश्चिमी भागों के सहारे होकर उत्तरी क्यूशू तक विशेषकर औद्योगिक पेटी में मिलता है, जो 900 किमी लम्बी है।

भारत (India) :–

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार 121,01,93,422 बतायी गई जो सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या का लगभग 17.4 % है जबकि क्षेत्रफल 2.4% है। बीसवीं शताब्दी तथा 21 वीं शताब्दी के पहले दशक में भारत की जनसंख्या की वृद्धि की प्रवृत्ति निम्न तालिका एवं रेखाचित्र से स्पष्ट है–

भारत में जनसंख्या एवं जनसंख्या वृद्धि दर वर्ष–2001 से 2021

क्र	जनगणना वर्ष	जनसंख्या (लाख में)	वृद्धि दर
01	1901	236.39	--
02	1911	252.09	5.75
03	1921	251.32	0.31
04	1931	278.97	11.00
05	1941	318.66	14.22
06	1951	361.08	13.31
07	1961	439.23	21.25
08	1971	548.15	24.80
09	1981	638.32	24.70
10	1991	846.31	23.85
11	2001	1027.02	21.34
12	2011	1210.57	17.7
13	2021	1366.41	12.87

स्रोत–जनसंख्या भूगोल, डॉ पृथ्वीश नाग एवं वैकल्पिक भूगोल, संजय कुमार सिंह।

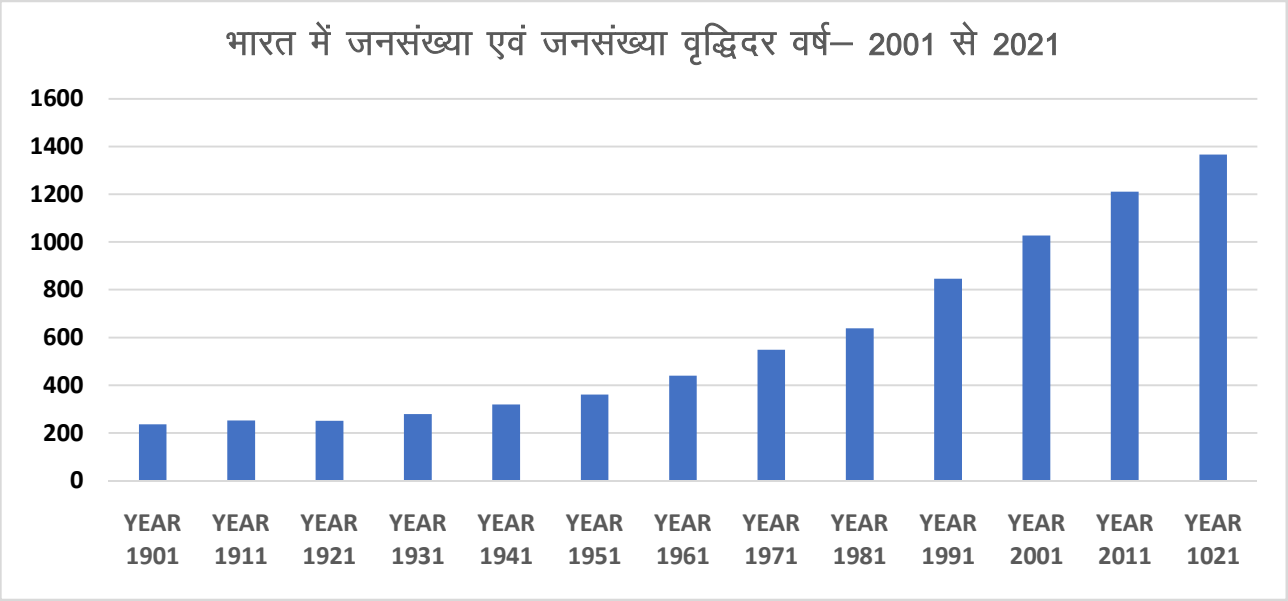

चित्र सं– 9.5 भारत की जनसंख्या (दस लाख में) 1901 से 2021

विश्व में भारत चीन के बाद सर्वाधिक जनसंख्या धारित करने वाला देश है। भारत की लगभग दो–तिहाई जनसंख्या इसके मात्र एक तिहाई भाग पर निवास करती है। भारत में उत्तरी सतलज–गंगा मैदान तथा सागरतटीय मैदोनों में जहाँ मृदा, स्वच्छ जल, समतल भूमि, अनुकूल जलवायु उपलब्ध है, इसीलिए इस भाग में जनसंख्या अधिक सघन पायी जाती है। भारत की अधिकांश जनसंख्या मैदानी भागों में निवास करती है जहाँ पर मानव के बसने के लिए पर्याप्त अनुकूल दशाएं पायी जाती हैं। इसके साथ–साथ अन्य भौतिक विभागों जैसे पर्वतीय, पठारी एवं समुद्रतटीय मैदोनों तथा भारतीय सीमा के अन्तर्गत आने वाले द्वीपों पर भी जनसंख्या का संकेन्द्रण पाया जाता है। भारत में जनसंख्या का घनत्व एक समान न होकर अलग–अलग पाया जाता है, चित्र सं0 9.5।

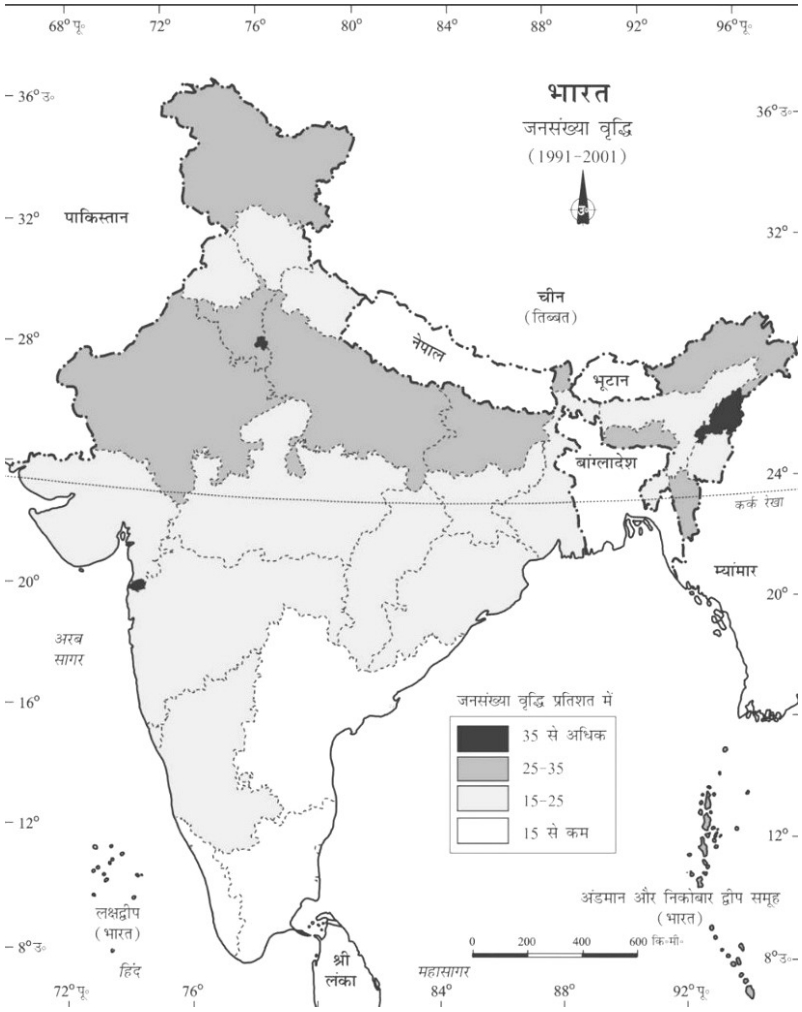

चित्र सं–9.6

भारत –जनसंख्या घनत्व, 2011

जनसंख्या के घनत्व को प्रति इकाई क्षेत्र में व्यक्तियों की संख्या द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। जनसंख्या घनत्व के द्वारा भूमि के सन्दर्भ में जनसंख्या के स्थानिक वितरण को बेहतर ढंग से समझने में सहायता मिलेती है। जनगणना 2011 के अनुसार भारत का जनसंख्या घनत्व 382 व्यक्ति/किमी0^2 है। यह घनत्व 1951 में 117 व्यक्ति/किमी^{2} था। भारत में जनसंख्या की अधिकता के दृष्टिकोंण से उत्तर प्रदेश सबसे बड़ा राज्य है जिसकी कुल जनसंख्या 199,812,341 (जनगणना 2011)। उत्तर प्रदेश की यह जनसंख्या हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान से कहीं अधिक है। यदि उत्तर प्रदेश को एक देश मान लिया जाये तो यह जनसंख्या की दृष्टि से विश्व का छठां सबसे बड़ा देश होगा। उत्तर प्रदेश जनसंख्या के दृष्टिकोंण से तो बड़ा राज्य है परन्तु क्षेत्रफल के दृष्टिकोंण से यह राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद चौथे स्थान पर है।

इण्डोनेशिया में जनसंख्या का वितरण असमान है। जावा एवं मदुरा द्वीपों में देश की लगभग 70% जनसंख्या निवास करती है जबकि इन द्वीपों का क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का 7% है। इन द्वीपों में उच्च जनघनत्व का मुख्य कारण यहाँ की उपजाऊ मिट्टी, सागरीय प्रभाव, अनुकूल जलवायु आदि हैं।

बांग्लादेश की अधिकांश जनसंख्या इस देश के मैदानी भागों एवं नदी बेसिनों में निवास करती है। इस देश में डेल्टाई भागों में अधिकतम जनघनत्व (750 व्यक्ति/वर्ग किमी0 से भी अधिक) पाया जाता है तथा 90% जनसंख्या नदियों के बेसिनों एवं मैदानी भागों में पायी जाती है। ढाका एवं मैमन सिंह यहाँ के बड़े औद्योगिक नगर हैं। बांग्लादेश की जनसंख्या 168,070,54 है। **पाकिस्तान में** जनसंख्या का अधिक जमाव पर्वतीय भागों एवं

नदी घाटियों और डेल्टाई प्रदेशों तथा सागरतटीय भागों में निवास करती है। पाकिस्तान में जनसंख्या का जमाव एशिया की जनसंख्या में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

उपरोक्त के अतिरिक्त म्यांमार, थाईलैण्ड, मलाया, श्रीलंका, फिलीपीन्स और वियतनाम में अपेक्षाकृत कम जनघनत्व पाया जाता है तथा इन देशों में औद्योगिक विकास भी कम हुआ है। इन देशों में जनसंख्या का केन्द्रण प्रमुख रूप से मैदानी भागों में है जो कि नदियों द्वारा लायी गयी मिट्टी से निर्मित हुए हैं।

यूरोप (Europe) :–

एशिया के बाद यूरोप जनसंख्या के संकेन्द्रण के लिए जाना जाता है। यूरोप की वर्तमान जनसंख्या 747,182,751 (वर्ल्डोमीटर के एक आँकड़े के अनुसार) है। यूरोप महाद्वीप के पश्चिमी भाग में जनसंख्या का सघन जमाव पाया जाता है जिसका विस्तार 45^0 उत्तरी अक्षांश से 55^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य है। इन दोनों अक्षांशों के मध्यवर्ती भाग में अधिकतम जनसंख्या निवास करती है तथा यहीं पर यूरोप के औद्योगिक प्रतिष्ठानों की भी बहुलता है। यह औद्योगिक पेटी इंग्लिश चैनल तथा उत्तरी सीमा से लेकर रूस के वोल्गा नदी तक विस्तृत है। यूरोप के इस भाग में जनसंख्या के संकेन्द्रण के कारण ही इसे यूरोपीय जनसंख्या की धुरी भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त यूरोप में संसाधनों की प्रचुरता वाले प्रदेशों में जनसंख्या का विकास अपने चरम पर पहुंच चुका है। यूरोप में तीन प्रमुख क्षेत्रों में जनसंख्या का अधिकतम बसाव पाया जाता है जो कि निम्नलिखित हैं–

अ– ब्रिटेन से लेकर पूर्ववर्ती सोवियत रूस में यूक्रेन की कोयला पेटी तक विस्तृत भूभाग में।

ब– राईन नदी बेसिन क्षेत्र यह नदी दो रूपों जनसंख्या के आकर्षण का कारण बनती है, प्रथम तो जलापूर्ति एवं खनिज उपलब्धता एवं दूसरा यह नदी अन्तर्राष्ट्रीय जलमार्ग का कार्य करती है।

स– इटली का उत्तरी तटीय मैदान।

इन तीन प्रमुख पेटियों को पुनः 12 उपपेटियों में विभाजित किया जाता है जहाँ पर जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है, ये पेटियां निम्नलिखित हैं–

01– इंग्लैण्ड का कोयला क्षेत्रः– इस क्षेत्र में उद्योगों का बहुत अधिक विकास हुआ है और यहाँ पर 85 से 90% जनसंख्या उद्योग एवं व्यापार में लगी हुई है। इस क्षेत्र में केवल 8% लोग ही कृषि कार्य में संलग्न हैं। ग्रेट ब्रिटेन की लगभग 82% जनसंख्या नगरीय है। इस क्षेत्र की अधिकतम जनसंख्या कोयला क्षेत्रों में बसी है। लंकाशायर, लिवरपूल, मानचेस्टर, लीड्स, ब्रैडफोर्ड, शेफील्ड, बर्मिंघम, स्टॉकहोम आदि औद्योगिक केन्द्र हैं। केवल लंदन ही ऐसा सघन जनसंख्या का क्षेत्र है जो कि कोयला क्षेत्र पर निर्भर नहीं है।

02 :– बेल्जियम कोयला क्षेत्र

03 :– पश्चिमी जर्मनी का रूर क्षेत्र

04 :– राइन नदी की घाटी

05 :– सार कोयला प्रदेश

06 :– पूर्वी जर्मनी

07 :– पोलैण्ड का साइलेशिया

08 :– फ्रांस का पूर्वी भाग

09 :– फ्रांस का पेरिस क्षेत्र

10 :– इटली में पो नदी बेसिन

11 :– यूरोपीय रूस

12 :– मास्को तुल्य प्रदेश

उत्तरी अमेरिका का उत्तरी पूर्वी क्षेत्र :–

उत्तरी अमेरिका महाद्वीप क्षेत्रफल के दृष्टिकोंण से वृहत् स्थान घेरता है जिसमें विभिन्न प्रकार की

उच्चावचीय विशेषताएं पायी जाती हैं। इस महाद्वीप का क्षेत्रफल लगभग 282 लाख वर्ग किमी है जिसके मात्र 17% भाग पर सघन जनसंख्या पायी जाती है। इस महाद्वीप विश्व के दो प्रमुख देश हैं एक संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दूसरा कनाडा है। यहाँ की सम्पूर्ण जनसंख्या का क्रमशः 70 और 90% जनसंख्या निवास करती है। इस महाद्वीप की अधिक जनसंख्या का केन्द्रण उत्तरी अमेरिका के उत्तर पूर्वी भाग में निवास करती है जिसका विस्तार 30^0 से 35^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य है। इसके साथ संयुक्त राज्य अमेरिका की लगभग 85% जनसंख्या 100^0 देशान्तर के पूरब में निवास करती है। संयुक्त राज्य अमेरिका की औद्योगिक पेटी मिसीसिपी नदी के पूर्व एवं ओहियो नदी के उत्तर में स्थित है। इसी क्षेत्र में नगरों एवं महानगरों में सघन जनसंख्या निवास करती है, क्योंकि यहाँ पर उपयुक्त जलवायु, परिवहन के साधनों की प्रचुरता, आन्तरिक जलमार्ग एवं महासागरीय तट पर सर्वोत्तम एवं आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न बन्दरगाहों की सुविधा उपलब्ध है। इस क्षेत्र में जनसंख्या के अधिक संकेन्द्रण के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं–

अ :– अटलांटिक तटीय क्षेत्र :– इसके प्रमुख केन्द्र हडसन नदी का मुहाना (न्यूयार्क क्षेत्र), बोस्टन, फिलाडेल्फिया, आदि हैं। इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास अधिक है।

ब :– महान झील क्षेत्र :– इसके प्रमुख क्षेत्र–मिशिगन झील का दक्षिणी पश्चिमी तट, इरी झील क्षेत्र जिसमें डेट्रायट, टारनेडो, क्वींशलैण्ड, बफैलो आदि, ओण्टारियो झील क्षेत्र प्रमुख हैं।

स :– सेंट लारेंस घाटी क्षेत्र :–पिट्सवर्ग, कनाडा में ओण्टारियो प्रायद्वीप से लेकर सेंटलारेंस की एश्चुअरी तक एक संकीर्ण पेटी में सघन जनसंख्या का निवास पाया जाता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिम में कैलीफोर्निया में घाटी के प्रशान्त तटीय क्षेत्र भी लघु जनसंख्या के केन्द्र हैं। इस प्रदेश में जनसंख्या के अन्य प्रमुख क्षेत्र लांसएन्जिल्स, प्यूजेट साउण्ड, विलामेंट घाटी आदि प्रमुख हैं।

जनसंख्या के लघु प्रदेश :–

जनसंख्या वितरण के प्रतिरूप के अब तक के अध्ययन से ज्ञात होता है कि विश्व में अनेक सघन जनसंख्या के घनत्व के क्षेत्र पाये जाते हैं जहाँ सघन तथा अतिसघन जनसंख्या पायी जाती है जिसमें दो वितरण प्रतिरूपों का अध्ययन किया गया। तीसरा वितरण प्रतिरूप है जिसमें जनसंख्या का विरल रूप को दर्शाया जाता है। अर्थात उसमें ऐसे क्षेत्र सम्मिलित किए जायेंगे जहाँ जनसंख्या का वितरण अति विरल अथवा निर्जन हैं। परन्तु ध्यातव्य है कि इन दोनों प्रकार के जनसंख्या वितरण प्रतिरूपों के मध्य कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जहाँ जनसंख्या का वितरण न तो बहुत सघन है और न ही अत्यन्त न्यून बल्कि ऐसे प्रदेशों में मध्यम जनसंख्या का जमाव पाया जाता है। इस प्रकार के क्षेत्र महानगरों के उपान्त क्षेत्र हो सकते हैं जहाँ की जनसंख्या विरल प्रतिरूप का अनुसरण करती है। इन्हें ही जनसंख्या के लघु प्रदेश के नाम से जाना जाता है। जैसे गंगा के मैदान एवं थार मरूस्थल के मध्य जनसंख्या का वितरण मध्यम प्रकार का पाया जाता है। इसी प्रकार गंगा के मैदान जहाँ कि जनसंख्या सघन रूप में पायी जाती है और उच्च पर्वतीय प्रदेश जहाँ जनसंख्या अति न्यून पायी जाती है के बीच के भाग में जनसंख्या का वितरण प्रतिरूप मध्यम प्रकार का है। इस क्षेत्र का जनसंख्या घनत्व 100 से 150 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी पाया जाता है।

विश्व के प्रत्येक महाद्वीप इस प्रकार के प्रतिरूप सामान्यतः देखने में आते हैं। पूर्वी एशिया के देशों चीन, जापान, उत्तरी एवं दक्षिणी कोरिया और दक्षिणी एशिया में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि की नदी घाटियों एवं समुद्र तटीय क्षेत्रों में अति सघन जनसंख्या घनत्व (1000 व्यक्ति/वर्ग किमी एवं उससे अधिक) पाया जाता है जबकि इनके पास ही स्थित जंगलों, मरूस्थलों, एवं पर्वतों में जनसंख्या घनत्व कम पाया जाता है। इसी प्रकार यूरोप एवं अफ्रीका के सघन जनसंख्या के क्षेत्रों के समीप के क्षेत्रों में मध्यम प्रकार का जनसंख्या घनत्व पाया जाता है।

9.3.3– तृतीय श्रेणी के जनसंख्या प्रतिरूपः– (pattern of third order) :–

सघन एवं मध्यम प्रकार के जनसंख्या वितरण प्रतिरूप के विपरीत कुछ प्रदेश ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ जनसंख्या घनत्व अति न्यून अथवा शून्य पाया जाता है। विभिन्न आँकड़ों से ज्ञात होता है कि विश्व के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के लगभग 70% भूगाग में विरल जनसंख्या पायी जाती है। सामान्य रूप में उष्ण, शीत, शुष्क एवं पर्वतीय क्षेत्रों में

विरल जनसंख्या पायी जाती है। इन प्रदेशों में जनसंख्या का घनत्व 2 व्यक्ति/किमी0^2 से भी कम पाया जाता है। इन्हें निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

9.3.3 अ– मरूस्थल एवं शुष्क भूमि क्षेत्र (Desert and arid Land):–

वर्षा एवं जलाभाव के कारण विश्व के अनेक भाग ऐसे हैं जो वृहत् स्तर पर क्षेत्रफल रखते हैं, निर्जन प्राय हैं। अर्थात् जिन क्षेत्रों में वर्षा की दर की तुलना में वाष्पीकरण की दर अधिक होती है, वे सभी क्षेत्र विरल जनसंख्या के क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। शुष्क प्रदेशों में जनसंख्या के बसने के लिए सर्वप्रमुख अवरोध जल का अभाव अथवा अनुपलब्धता होता है। इन विशेषताओं को रखने वाले कुछ क्षेत्र अपवाद भी हैं यथा शुष्क प्रदेशों में जहाँ जल की उपलब्धता होती है और मृदा में खनिजों की उपलब्धता होती है। कृषि कार्य भी किया जाता है। इस प्रकार के क्षेत्र नील घाटी, सिंधु घाटी, मैक्सिको एवं सं0रा0अ0 में सोनारा मरूस्थ्ल, और यूरेशिया के अनेक बिखरे मरूद्यान आदि।[04] इन उपजाऊ घाटियों और मरुद्यानों को छोड़कर मरुस्थलों की महान श्रंखला महाद्वीपों के पश्चिमी किनारों पर विशेषकर कर्क एवं मकर रेखाओं के किनारे जनसंख्या विरल पायी जाती है। लीबिया, अल्जीरिया, नाइजर, चाड और मोरितानिया के मरुस्थलों में जनसंख्या घनत्व 15 व्यक्ति/किमी^{2} पायी जाती। इस प्रकार के विषम जलवायु के मरुस्थलों में जल के अभाव में यहाँ रहने वाली जनसंख्या का एक बड़ा भाग एक विवाही प्रथा अथवा आजीवन अविवाहित जीवन प्रणाली अपनाकर जनसंख्या को कम रखने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार की जीवन शैली लेह एवं लद्दाख के क्षेत्रों में देखने को मिलती है। जनसंख्या की वृद्धि और प्राकृतिक समस्याओं के प्रभाव से अनेक बर्बर जातियों में रीति रिवाजों का निर्धारण कर लिया गया है। जैसे– सोमाली जातियों में अभी हाल तक एक व्यक्ति तब तक विवाह नहीं करता था जब तक कि वह अपने हाथों से अपनी ही जाति के लोगों में से एक निश्चत संख्या में हत्या नहीं कर देता था। मध्य एशिया एवं आस्ट्रेलिया के मरुस्थलीय क्षेत्र में यहाँ के निवासी भेंड़, बकरियां रखते हैं। इसके साथ–साथ इनका जीवन–स्तर बहुत निम्न स्तर का है। इन विपरीत परिस्थितियों वाले शहरों में कहीं–कहीं जनसंख्या का जमाव देखने को मिलता है जहाँ पर खनिज संसाधनों की प्रचुरता होती है। अरब एवं लीबिया के मरुस्थलों के भीतरी भागों में खनिज तेल के कारण कुछ श्रमिकों के समूह और वैज्ञानिकों की बस्तियां स्थापित की हैं जो सच्चे स्वावलम्बी समूह का निर्माण नहीं करते हैं।

9.3.3 ब– हिमावरण एवं शीत प्रदेश–(Ice caps and cold region):–

यह दूसरा ऐसा महत्वपूर्ण क्षेत्र है जहाँ उत्तरी एवं दक्षिणी दोनों गोलार्द्धों में अत्यधिक ठंडे क्षेत्र हैं। विश्व में दो ऐसे क्षेत्र हैं जो इस प्रकार का सबसे प्रमुख उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, प्रथम आर्कटिक एवं द्वितीय अंटार्कटिका महाद्वीप जो अपने ठंड एवं हिमावरण के लिए विशेष रूप से जाने जाते हैं। इनमें शीत ऋतु भयानक अन्धकारयुक्त एवं दीर्घ होती है। अन्टार्कटिका महाद्वीप लगभग पूर्णतः निर्जन प्रदेश है, जबकि आर्कटिक के टुण्ड्रा प्रदेश में शिकार करने और मछली पकड़नें वाली कुछ जनजातियां निवास करती हैं। इन जनजातियों की संख्या बहुत कम है। कुछ शिकारी समूह के लोग ही सील का शिकार करने के लिए 82^0 उत्तरी अक्षांश तक पहुंच सके हैं। कुछ क्षेत्रों में उपलब्ध संसाधन यथा खनिज की उपलब्धता मिल जाती है। वहां कुछ जनसंख्या अपना निवास बना लेती है जैसे गलिवारे (स्वीडन) से लौह अयस्क निकालने, कनाडा की यूकन घाटी में सोना और फेयर बैंक तथा अलास्का में यूकन फोर्ट से सोना तथा साइबेरियाा तथा एशिया में टुण्ड्रा की खानों से सोना, खनिज तेल एवं नमक तथा कोयला जैसे मूल्यवान खनिज प्राप्त किए जा रहे हैं।

9.3.3 स– विषुवत रेखीय घने वन (Tropical Rain Forest) :–

इन क्षेत्रों में अमेजन बेसिन, कांगो या जायरे बेसिन, न्यूगिनी एवं उत्तरी आस्ट्रेलिया के क्षेत्र आते हैं जहाँ अत्यधिक तापमान एवं वर्षा के कारण अनेक जहरीले एवं हानिकारक कीड़े–मकोड़े, मच्छर एवं टिसी–टिसी मक्खियों से प्रभावित यह क्षेत्र मानव आवास के लिए बहुत कम प्रेरक होता है। परिस्थितियाँ इतनी अस्वास्थ्यकर हैं कि इन क्षेत्रों को शक्तिहीनता का प्रदेश कहा जाता है। इन क्षेत्रों में प्रतिदिन संवहनीय वर्षा (convectional rain) होने के कारण उर्वरा भूमि और खनिज पदार्थों की कमी पायी जाती है जिसमें खाद्यान्न फसलों के अनुकूल क्षेत्र नहीं हैं। इन क्षेत्रों में पशुपालन कार्य एवं पशुचारण काफी कठिन होता है। उष्ण कटिबन्धीय वर्षा वाले वन भविष्य के लिए सीमान्त सम्भावना प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार के वनों में परिवहन के मार्गों का अभाव है, आदि प्रतिकूल कारणों के कारण से जनसंख्या बहुत ही कम पायी जाती है, परन्तु अफ्रीका महाद्वीप के विषुवत रेखीय क्षेत्र में पड़ने वाला नाइजीरिया देश इसका अपवाद है। सभी विरल जनसंख्या वाले क्षेत्रों में बिना किसी पदानुक्रम के ही जनसंख्या का जमाव पाया जाता है तथा अनियमित विरल बस्तियां पायी जाती हैं। वैसे तो विरल जनसंख्या वाले

प्रदेश के अधिकांश भाग निर्जन होते हैं परन्तु इनमें कहीं–कहीं जनसंख्या के झुण्ड देखे जा सकते हैं। इसका मूल कारण है आधुनिक विकासवादी विचारधारा वाला मनुष्य जो लगभग सम्पूर्ण विश्व में अपनी दस्तक दे चुका है। इस प्रकार के उदाहरण अफ्रीका महाद्वीप एवं पश्चिमी एशिया के मरुद्यानों जावा एवं फिलीपीन्स के द्वीपों, कांगों एवं अमेजन बेसिन के एकांकी भागों में देखे जा सकते हैं। हिमालय एवं आल्पस के कुछ क्षेत्रों में कुछ बड़े कस्बे बन गये हैं। मानव की विकास की प्रवृत्ति यह बताती है कि उन क्षेत्रों में भी जनसंख्या सघन हो सकती हैं जहाँ आज विरल रूप में पायी जाती है और इसके परिणाम भी हमारे सामने पारिस्थितिकी असंतुलन एवं जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं के रूप में आने वाले हैं।

विषुवत रेखीय घने वन क्षेत्र

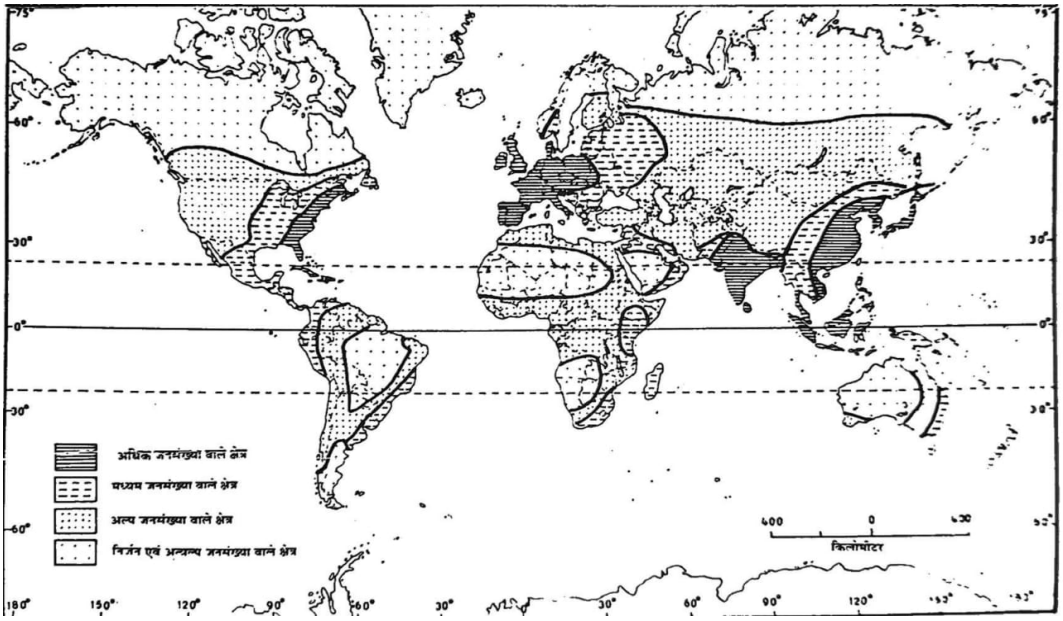

चित्र सं–9.7[05]

9.3.3 द– ऊँचे पर्वत एवं पठार (High mountains And plateaus Areas)

इन क्षेत्रों में भी अनुपयुक्त जलवायु खेतिहर भूमि की कमी तथा छिछली मिट्टी के कारण जनसंख्या बहुत ही कम पायी जाती है। हिमालय, राकी, आल्पस, एण्डीज आदि की ऊबड़–खाबड़ एवं कठोर और पर्वत घाटियों में जनसंख्या कम पायी जाती है। ऊँचें एवं बर्फीले पर्वत लगभग पूर्णरूप से निर्जन होते हैं। उपरोक्त पर्वतों के 2500 मीटर से ऊँचे पर्वत लगभग निर्जन हैं। उच्च अक्षांशों में पर्वतों के तराई भागों में विरल रूप में जनसंख्या पायी जाती है। पर्वतीय भागों में कुछ क्षेत्र ऐसे पाये जाते हैं जहाँ खनिजों की प्राप्ति होती है जनसंख्या का जमाव देखा जा सकता है। पेरू एवं वोलिविया जैसे क्षेत्रों में 4000 मीटर की ऊँचाई पर बहुमूल्य धातुओं का खनन किया जाता है। इन खनन के क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में जनसंख्या का निवास पाया जाता है। जम्मू–कश्मीर के किस्तवार में लगभग 5500 मीटर की उँचाई पर बहुमूल्य पत्थरों का खनन किया जाता है। भारत एवं पाकिस्तान की प्रमुख नदी के उद्गम क्षेत्र में खनिज की उपलब्धता 5000 मी0 की ऊँचाई पर भी जनबसाव को प्रेरित करती है।

उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में जहाँ निम्न ऊँचाई वाले भागों की जलवायु मानव के विकास के लिए प्रेरक नहीं होती है, वहां अधिकांश कस्बे और नगर एवं बस्तियां समुद्रतल से 2000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर विकसित हुई हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं– अदिस–अबाबा (इथियोपिया), कम्पाला (युगाण्डा), क्यूटो, नैरोबी (कीनिया), ऊटी (भारत), केण्डी (श्रीलंका), सना, ताइज, तेहरान, पहलगाम, गुलमर्ग, लेह, ल्हासा आदि हैं, जो कि 2000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर बसे हैं।

9.4 जनसंख्या–संसाधन संबन्ध (Population-Resource relation)

जनसंख्या एवं संसाधन का सम्बन्ध का अध्ययन इसलिए भी अति महत्वपूर्ण है क्योंकि मनुष्य स्वयं में एक प्रमुख संसाधन है क्योंकि यह संसाधन का कारक भी है। वैसे तो विद्वान कहते हैं कि इस संसार में अनेक प्रकार

के तत्व विद्यमान हैं परन्तु उन्हें हम संसाधन तब तक नहीं कहते जब तक कि प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से वे मनुष्य के उपयोग में नहीं आते हैं। जनसंख्या के वितरण, वृद्धि, जनसंख्या घनत्व एवं सांस्कृतिक विशेषताओं के अध्ययन के पश्चात् जनसंख्या एवं संसाधनों के सम्बन्ध का विवेचन आवश्यक है। वस्तुतः किसी क्षेत्र की जनसंख्या तथा संसाधनों के साथ अन्तर्सम्बन्ध वहां की खाद्य सामग्री के उत्पादन की मात्रा एवं आपूर्ति तथा मनुष्य की जीवन–शैली तथा रहन–सहन आदि में परिलक्षित होता है। मानव ने अपनी तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी विकास के परिणाम स्वरूप कृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन किया है और खाद्यान्न उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि दर्ज की है। लेकिन विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या के सापेक्ष उत्पादन न होने से विश्व के अनेक प्रदेशों में खाद्यान्न की कमी के कारण समस्याएं स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। अतः जनसंख्या की वृद्धि अनुपात में भरण–पोषण सामग्री एवं व्यवस्थित जीवन निर्वाहन के लिए जनसंख्या एवं मानव के सम्बन्धों का अध्ययन इस समाज की समसामयिक एवं महत्पूर्ण आवश्यकता है। विश्व में जनसंख्या एवं संसाधन सम्बन्धी समस्याएं समान नहीं हैं बल्कि देशकाल एवं स्थान के अनुसार इनमें असमानता देखने को मिलती है। जनसंख्या संसाधन–अनुपात के आधार पर किसी प्रदेश की जनसंख्या को निम्नलिखित तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

9.4.1– अनुकूलतम जनसंख्या (Optimum Population)

9.4.2– अति जनसंख्या (Over Population**)**

9.4.3– अल्प अथवा अधो जनसंख्या (Under Populatio**)**

इन उपरोक्त जनसंख्या के प्रकारों को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है–

9.4.1– अनुकूलतम जनसंख्या (Optimum Population)

अनुकूलतम जनसंख्या वह जनसंख्या होती है जिसमें किसी प्रदेश में उपलब्ध संसाधनों का वर्तमान प्राविधिकी के अनुसार पूर्ण विकास करने तथा उसके उपभोग के लिए आवश्यक एक निश्चित जनसंख्या जिसे उच्च जीवन स्तर प्राप्त होता है। अनुकूलतम या अभीष्ट अथवा आदर्श जनसंख्या के सिद्धान्त के अनुसार किसी देश में किसी समय पर एक ऐसी जनसंख्या होती है जो उस देश के प्राकृतिक संसाधनों के भरपूर शोषण के लिए अनुकूल होती है। जनसंख्या की इसी मात्रा को अनुकूलतम या आदर्श जनसंख्या कहा जाता है। हालॉकि अनुकूलतम जनसंख्या का आधार आर्थिक स्वरूप है परन्तु यह सामाजिक दशाओं या प्राविधिकी से भी सम्बन्धित है। अनुकूलतम जनसंख्या प्राकृतिक संसाधन एवं वहां की जनसंख्या की साम्यावस्था को प्रकट करती है। अनुकूलतम एक सापेक्षिक शब्द है जो देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। सामान्य शब्दों में कह सकते हैं कि किसी प्रदेश की वह जनसंख्या जिसे वहां उपलब्ध संसाधनों के अनुसार उच्चतम जीवन स्तर प्राप्त होता है, अनुकूलतम या अभीष्ट जनसंख्या कही जा सकती है।

अनुकूलतम जनसंख्या का रैखिक प्रदर्शन

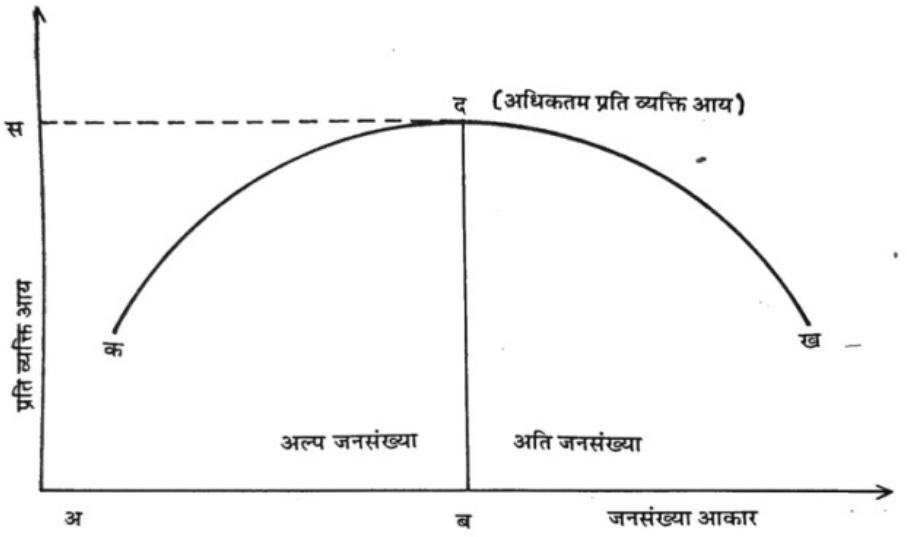

चित्र सं–9.8

आर्थिक सामाजिक दृष्टिकोंण से किसी प्रदेश में उस जनसंख्या को अनुकूलतम जनसंख्या कहा जाता है जिससे वहाँ के संसाधनों का वहाँ की जनसंख्या द्वारा भरपूर उपयोग किया जाता है, तथा उस प्रदेश के लोगों का जीवन स्तर भी उच्च होता है। सर्वप्रथम अनुकूलतम जनसंख्या शब्द का प्रयोग 18 वीं सदी में **कैन्टीलोन** ने किया था। उन्होंने किसी निश्चित प्रदेश की उस जनसंख्या के लिए अनुकूलतम शब्द का प्रयोग किया जो वहां पर उपलब्ध संसाधनों के सापेक्ष उच्च जीवन स्तर रखते हैं। लेकिन कभी–कभी संसाधनों की तुलना में जनसंख्या अधिक या कम हो जाती है और बना हुआ सन्तुलन बिगड़ जाता है और अति अथवा अल्प जनसंख्या की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अनुकूलतम जनसंख्या को विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया है–

9.4. अ– अनुकूलतम जनसंख्या की परिभाषा–

01– बोल्डिंग के अनुसार–

"वह जनसंख्या जिस पर जीवन–स्तर अधिकतम होता है अनुकूलतम जनसंख्या कहलाती है।"

02– **डाल्टन के अनुसार–**

"अनुकूलतम जनसंख्या वह जनसंख्या है जो प्रतिव्यक्ति अधिकतम आय देती है।"

03– मानव भूगोल शब्दकोष के अनुसार (जानसन के अनुसार) –

"मनुष्यों की वह संख्या जो किसी दी हुई आर्थिक, सैन्य एवं सामाजिक लक्ष्यों के सन्दर्भ में अधिकतम प्रतिफल को उत्पन्न करती है, अनुकूलतम जनसंख्या होती है।"

04– ए0 सावी के अनुसारः–

"अनुकूलतम जनसंख्या का अर्थ उस स्थिति से है जिसमें उपलब्ध संसाधनों का पूर्ण उपयोग हो और पूर्ण रोजगार, दीर्घ जीवन प्रत्याशा हो, उत्तम स्वास्थ्य, ज्ञान और संस्कृति, सामाजिक सामंजस्य तथा पारिवारिक स्थायित्व की प्राप्ति होती है।"

इस प्रकार अनुकूलतम जनसंख्या से तात्पर्य उस जनसंख्या से है जिसमें उस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग होता हो तथा जनसंख्या का जीवन स्तर संसाधनों के अनुरूप उच्चतम पाया जाता हो।

9.4.1 ब– अनुकूलतम जनसंख्या के निर्धारण के मापदण्ड :–

अनुकूलतम जनसंख्या सम्बन्धी लक्षणों का निर्धारण करना एक दुष्कर कार्य है जैसे किसी देश या प्रदेश में जनसंख्या का आकार कैसा हो ? किसी प्रदेश में उच्चतम आर्थिक उत्पादन अथवा उच्च जीवन स्तर का निर्धारण करना एक कठिन कार्य है। इस समस्या के निदान के लिए कुछ मानदण्डों को प्रयोग में लाया जाता है जो कि निम्नलिखित हैं–

क– सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) :–किसी निर्धारित स्थान पर आर्थिक उपयोगिता का आंकलन प्रायः सकल राष्ट्रीय आय के रूप में किया जाता है। समाज के सभी वर्गों में एवं व्यक्तियों में इसका वितरण समान न होने के कारण आज यह मापदण्ड अधिक मान्य नहीं है।

ब– रोजगार की पूर्णता :– अनुकूलतम जनसंख्या के अनुसार अभीष्ठ क्षेत्र में निवासित सभी लोगों को रोजगार प्राप्त होना भी इसका एक मापदण्ड है। इसका एक प्रभाव यह होता है कि आय का वितरण समान हो जाता है और सामान्य जनसंख्या का भार भी सन्तुलित हो जाता है।

स– उच्च जीवन स्तर :– अनुकूलतम जनसंख्या के प्रदेश में लोगों का जीवन स्तर उच्च होता है। इसका तात्पर्य है कि आय, खाद्य आपूर्ति, रोजगार एवं आय के साथ स्वास्थ्य एवं अन्य जीवनोपयोगी समस्त सुविधाएं अभीष्ठ क्षेत्र में विद्यमान होती हैं।

द– संसाधनों का पूर्ण उपयोगः– इससे तात्पर्य है कि अनुकूलतम जनसंख्या के क्षेत्र में इतना तकनीकी विकास हो कि ज्ञात संसाधनों का पूर्ण उपयोग होता है। साथ ही नये संसाधनों की खोज एवं क्षयशील संसाधनों का वैकल्पिक माध्यम भी तकनीकी के द्वारा सम्भव हो।

य– जनांकिकीय संरचना :– अनुकूलतम जनसंख्या का सम्बन्ध जनांकिकीय संरचना से भी होता है। जनसंख्या

संरचना में जनसंख्या सम्बन्धी तत्वों (आयुवर्ग, लिगानुपात, घनत्व, साक्षरता आदि) में सन्तुलन होता है और जन्मदर एवं मृत्युदर में अन्तर लगभग समाप्त हो जाता है और दोनों निम्न हो जाते हैं जिससे जनसंख्या स्थिर अवस्था में पहुंच जाती है।

र– सत्त् विकास :– अनुकूलतम जनसंख्या के प्रदेशों में लोग अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए तैयार होते हैं और इसलिए संसाधानों का अधिकतम उपयोग करने पर अधिक जोर देते हैं।

अनुकूलतम जनसंख्या के प्रदेशों में लोगों द्वारा संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग किया जाता है जिससे पर्यावरण को निरन्तर क्षति हो रही है और पर्यावरण प्रदूषण के कारण मानव का जीवन विशेष रूप से प्रभावित होता है और अनुकूलतम जनसंख्या की अवधारणा प्रभावित होती है। इसके निदान के लिए या तो विकास को रोक दिया जाये या तो अपने आप को संकुचित कर लिया जाय। इस सन्दर्भ में कह सकते हैं कि विकास को रोकना तो सम्भव नहीं है हां इसके उपाय के लिए सत्त् विकास की अवधारणा को अपनाया जा सकता है।

स्मरणीय– सत्त् विकास वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों को ध्यान में रखकर किया जाता है।

सत्त् विकास में विकास की गति को पूर्णतया रोकने पर बल न देकर समाप्तप्राय संसाधनों के वैकल्पिक साधनों का प्रयोग किया जाता है। जैसे ऊर्जा के वैकल्पिक साधनों (सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा आदि) का प्रयोग किया जा सकता है। **ग्रिफिथ टेलर** के अनुसार ''अनुकूलतम जनसंख्या वह है जो पर्यावरण अथवा समाज या पोषण की कमी से व्यक्ति के स्वास्थ्य को क्षति पहुचाये बिना ही अनिश्चित काल तक कायम रह सके।''

9.4.2– अति जनसंख्या या जनाधिक्य (Over Population) :–

बीसवीं सदी के पूर्वाद्ध में भारत की जनसंख्या बहुत कम थी लेकिन समयोपरान्त विभिन्न सुविधाओं एवं मनुष्य के अनुकूल जलवायु तथा विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहन के परिणाम स्वरूप भारत में जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई और संसाधनों पर विपरीत प्रभाव पड़ने लगा। इस बात से स्पष्ट होता है कि जब किसी क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों के विकास की तुलना में वहां जनसंख्या वृद्धि की गति तीव्र होती है जिससे जनसंख्या उस क्षेत्र की सामान्य पोषण क्षमता से अधिक हो जाती है और मानव जीवन स्तर गिरने लगता है तो इस अवस्था को अति जनसंख्या या जनाधिक्य अथवा जनातिरेक के नाम से जाना जाता है। अति जनसंख्या, अनुकूलतम जनसंख्या के विचलन का परिणाम होती है जिसमें जनसंख्या के द्वारा शोषण हेतु संसाधनों में कमी आने लगती है। यह स्थिति जारी रहने पर एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसमें संसाधन और जनसंख्या की अनुकूलता का अन्तर बढ़ता जाता हैं। परिणाम स्वरूप विभिन्न प्रकार की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएं उत्पन्न होने लगती हैं और प्रति व्यक्ति आय एवं जीवन स्तर निम्न होने लगता है। यह जनाधिक्य किसी एक कारण का परिणाम नहीं है बल्कि दो या दो से अधिक कारणों से होता है। जनाधिक्य को संसाधनों एवं जनसंख्या के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जाता है–

अ– पूर्ण जनाधिक्य :– इस जनाधिक्य के नाम से ही स्पष्ट है कि यह वह स्थिति है जिसमें संसाधनों की तुलना में जनभार बहुत अधिक हो जाता है। किसी क्षेत्र में ज्ञात प्रौद्योगिकी के अनुसार जब संसाधनों का उपयोग अपनी चरम अवस्था को प्राप्त हो जाता है और विकास की गति रूक जाती है परन्तु जनसंख्या वृद्धि निरन्तर होती रहती है, जनसंख्या एवं संसाधन अनुपात निम्न हो जाता है, प्रतिव्यक्ति आय में कमी एवं जीवन स्तर बहुत निम्न हो जाता है तो इस स्थिति को पूर्ण जनाधिक्य की स्थिति कहा जाता है।

ब– सापेक्ष जनाधिक्य :– सापेक्ष जनाधिक्य वह स्थिति होती है जिसमें संसाधनों के सापेक्ष जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है परन्तु संसाधनों के दोहन की स्थिति बहुत अधिक निराशा जनक नहीं होती है। यह स्थिति वहां उत्पन्न होती है जहाँ सम्पूर्ण उत्पादन की मात्रा जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए अपर्याप्त होती है। इस स्थिति में संसाधनों का पूर्ण विदोहन नहीं हो पाता है परन्तु बढ़ती हुई प्रौद्योगिकी के परिणाम स्वरूप विदोहन की सम्भावना निरन्तर बनी रहती है, हां यदि भविष्य में इस स्थिति में प्रयासों के बाद सुधार हो जाता है तो सापेक्ष जनाधिक्य की स्थिति समाप्त हो सकती है। विश्व के कुछ छोटे एवं कुछ बड़े देश इस प्रकार के जनाधिक्य से गुजर रहे हैं।

9.4.3– अल्प जनसंख्या या जनाभाव (Under Population) :–जब किसी प्रदेश में उपलब्ध संसाधनों के पूर्ण विकास या उपयोग के लिए जितनी जनसंख्या की आवश्यकता होती है, उससे भी कम जनसंख्या पायी जाती है,

तो इस स्थिति के लिए अधो–जनसंख्या, अल्प जनसंख्या, जनाभाव, जनाल्पता आदि शब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है। इस दशा में देश में विद्यमान संसाधन, बेरोजगारी में वृद्धि किये बिना, अथवा जीवन स्तर में बिना गिरावट लाये ही वर्तमान से अधिक जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए सक्षम होते हैं। जनाभाव की प्रकृति पूर्ण एवं सापेक्ष दोनों हो सकती है। पूर्ण जनाभाव की स्थिति बहुत कम पायी जाती है। यह केवल एकांकी लघु क्षेत्रीय इकाई में ही उत्पन्न हो सकती है, जिसका आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक सम्बन्ध अन्य क्षेत्रों से न हो, किन्तु ऐसी स्थिति वर्तमान विश्व के अधिकांश भागों में पायी जाती है। विकसित देशों में जनाभाव की समस्या बहुत सीमित है और केवल कुछ सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में ही पायी जाती है, क्योंकि उन्नत प्रौद्योगिकी, यातायात एवं संचार के साधनों आदि के प्रसार एवं प्रयोग से ये देश जनसंख्या संसाधन के क्षेत्रीय असन्तुलन को ठीक करने में सदैव त्तपर रहते हैं।

9.5 जनसंख्या संसाधन प्रदेश (Region of Population Resource)

जनसंख्या संसाधन के अन्तर्सम्बन्ध दर्शाने के लिए **'एडवर्ड एकरमैन'** ने विश्व के विभिन्न देशों को पांच विशिष्ट वर्गों में विभाजित किया है। प्रत्येक वर्ग संसाधन उपलब्धता, संसाधन उपयोग की तकनीकी अवस्था तथा जनसंख्या के अन्तर्सम्बन्ध की विशिष्ट दशाओं का द्योतक है। इसके अनुसार विश्व के सभी देश निम्न पांच वर्गों में से किसी न किसी वर्ग में पड़ते हैं–

9.5.1– संयुक्त राज्य सदृश (The United State Type) :–

इस वर्ग में संयुक्त राज्य जैसे देश सम्मिलित हैं, तथा जो अधिक प्राकृतिक संसाधन सम्पन्न हैं पर जनसंख्या अपेक्षाकृत कम अथवा सामान्य है। इन देशों में उन्नत तथा तीव्र गति से विकासशील तकनीकी, कुशल श्रमिक तथा व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय सम्पन्नता की अधिकतम वृद्धि करने के उपयुक्त सामाजिक साधन एवं संगठन उपलब्ध है। उच्च स्तर के सामाजिक आर्थिक वातावरण के निर्माण के लिए आवश्यक ज्ञान विद्यमान है। प्रायः सभी महत्वपूर्ण संसाधनों के लिये ऐसे देश आत्मनिर्भर हैं तथा इनके बाह्य राजनीतिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध इस प्रकार के हैं कि जो वस्तुएं विदेशों से प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें अनुकूल शर्तों पर उपलब्ध हो जाती हैं। ऐसे देशों का आर्थिक विकास अल्पकाल में शीघ्रातिशीघ्र हुआ है। आर्थिक विकास प्रक्रिया के चलते कुछ संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग करने के कारण उनके ह्रास की समस्याएं उत्पन्न हो गयी हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड तथा रूस इस वर्ग के देश हैं। अर्जेन्टीना के व्यूनसआयर्स के समीपवर्ती भाग तथा दक्षिणी अफ्रीका संघ एवं जिम्बाम्बे को भी कुछ लोग इस वर्ग में रखने के पक्ष में हैं परन्तु इनको इस वर्ग में रखना बहुत विवादास्पद है।

9.5.2– यूरोप सदृश देश (The European Type) :–

इस वर्ग के देशों में भी एक और जनसंख्या तथा तकनीकी विशेषताएं और दूसरी और संसाधनों की जनसंख्या की संपोषण क्षमता की दशाएं काफी अनुकूल हैं। इन देशों की जनसंख्या कभी सघन एवं कुशल कारीगर सम्पन्न है। इन देशों का सामाजिक वातावरण भी अनुकूल है परन्तु इन देशों का क्षेत्रफल बहुत सीमित है। इसके परिणाम स्वरूप देशान्तरिक संसाधनों पर आत्मनिर्भर रहना सम्भव नहीं है। प्रत्येक देश में सीमित संसाधनों के आधार पर स्थानीय गहन आर्थिक तन्त्रों का विकास हुआ है। इसकी सम्पन्नता अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय पर आधारित है। कुशल सेवाएं तथा उन्नत तकनीकी द्वारा निर्मित वस्तुओं के बदले विविध प्रकार की कच्ची सामग्री खाद्य पदार्थ एवं अनुकूल श्रमिकों का आयात होता है। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए कुछ नये संसाधनों को खोजने तथा विद्यमान संसाधनों से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए नवीन तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है। इस प्रकार कुछ आन्तरिक देशान्तरिक संसाधन ढूंढने, कृषि उत्पादन को बढ़ाने, जल विद्युत का अधिक विकास करने, परिवहन के साधनों का विस्तार एवं सुधार करने, नयी औद्योगिक प्रक्रियाएं अपनाने, पर्यटकों को प्रोत्साहित करने तथा शिक्षण एवं सामाजिक संगठनों को उन्नतशील बनाने में इस वर्ग के देशों में अधिक जनसंख्या एवं कम क्षेत्रफल से उत्पन्न कठिनाइयां बराबर बनी रहेंगी, इनको दूर करने के लिए इन्हें विकासशील देशों से कच्ची सामग्री आदि प्राप्त करने के लिए घनिष्ठ सम्बन्ध बनाए रखना आवश्यक है। इसी के साथ ये देश अधिकाधिक परस्पर सहयोग रखने के लिए भी प्रयत्नशील हैं। यूरोपीय समुदाय इस प्रकार के सहयोग के लिए ही बना है। इस वर्ग में रोमानिया, बुल्गारिया तथा पूर्व यूगोस्लाविया, ब्रिटेन आदि को छोड़कर यूरोप के सभी देश, एशिया के इजराइल तथा जापान और दक्षिणी अमेरिका में चिली हैं ।

विश्व जनसंख्या संसाधन प्रदेश

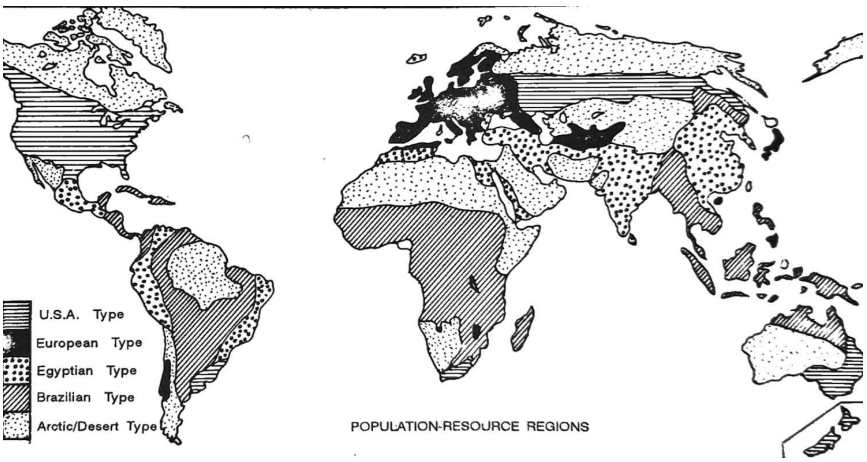

चित्र सं–9.9

9.5.3– ब्राजील सदृश देश (Brazil Type**) :–**

जनसंख्या संसाधन प्रदेश के इस वर्ग में ऐसे देश आते हैं, अधिकतम क्षेत्रफल धारित करते हुए कम जनसंख्या संसाधन रखते हैं। इन प्रदेशों में जनसंख्या की तुलना में संसाधन बहुत अधिक होते हैं। इन देशों में तकनीकी प्रगति कम होती है लेकिन इनके यहाँ जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं से ग्रसित नहीं होते हैं। इन प्रदेशों में जनभार अधिक न होने के बावजूद जीवन स्तर निम्न पाया जाता है। इन देशों में जनसंख्या का अधिक संकेन्द्रण नगरीय क्षेत्रों में अधिक होता है। इन देशों के समक्ष एक समस्या होती है तकनीकी विकास जिसके कारण इन देशों को अपने संसाधनों को यूरोप के देशों में निर्यात करना पड़ता है जिससे यहाँ आर्थिक विकास की गति मन्द होती है। इन देशों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक ढांचा भी निम्न स्तर का होता है जो कि इनके आर्थिक विकास में भी बाधक होता है। वर्तमान विश्व की बढ़ती हुई प्रगति को दृष्टिगत रखते हुए इन देशों में उन्नत तकनीकी की आवश्यकता है। इस प्रकार का जनसंख्या संसाधन अन्तर्सम्बन्ध दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों, सहारा के दक्षिण में उष्ण कटिबन्धीय अफ्रीका के देशों एवं लैटिन अमेरिका के अधिकतर देश इसी वर्ग के अन्तर्गत आते हैं।

9.5.4– चीन या मिश्र सदृश देश (China or Egypt type)

इस वर्ग में ऐसे देश आते हैं जिनके पास संसाधनों की तुलना में जनसंख्या बहुत अधिक है। इन देशों की जनसंख्या वृद्धि दर भी बहुत अधिक है, एवं तकनीकी प्रगति भी कम है। इन देशों में जनसंख्या का दबाव अधिक एवं तकनीकी विकास कम होने का प्रभाव भी अनेक क्षेत्रों पर पड़ता है जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार आदि। इस वर्ग के देशों में प्राकृतिक आपदाओं की भी पुनरावृत्ति होती रहती है जिसके कारण बड़े स्तर पर जन एवं धन की हानि होती है जिसका एक प्रमुख कारण यहाँ की राहत एवं बचाव तथा पुनर्वास की व्यवस्था का उच्चकृत न होना। हालांकि चीन और भारत इस समस्या से निपटने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं और इस क्षेत्र में अपेक्षित सफलता भी प्राप्त कर रहे हैं। इन दोनों ही देशों में जनसंख्या के नियन्त्रण के लिए अनेकों प्रयास किए जा रहे हैं। इनके अतिरिक्त इस वर्ग के अन्य छोटे देशों में अतिरिक्त संसाधनों की उपलब्धता की सम्भावना कम है। इस वर्ग के प्रमुख देश एशिया में बांग्लादेश, भारत, पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका अफगानिस्तान, सीरिया, लैटिन अमेरिका में पेरू, इक्वाडोर, बोलीबिया, अफ्रीका के अल्जीरिया, मोरक्को, ट्यूनीशिया, मिश्र, यूरोप में सिसली, अलवानिया, यूनान, मध्य अमेरिका में मैक्सिको आदि हैं।

स्मरणीय–चीन या मिश्र सदृश देश विश्व के ऐसे देश हैं जो संसाधनों की सम्पन्नता के कारण अनेक मानव सभ्यताओं की जन्मस्थली रहे हैं। विश्व की प्राचीन सभ्यताएं जैसे मिश्र की सभ्यता, सिन्धुघाटी की सभ्यता, चीनी सभ्यता इनके प्रमुख उदाहरण हैं।

9.5.5–आर्कटिक मरुस्थल प्रदेश (Arctic-Desert type):-

इस वर्ग में ऐसे देश आते हैं जिनमें अत्यधिक विषम प्राकृतिक दशाएं पायी जाती है जिसके कारण यहाँ

जनसंख्या का जमाव बहुत कम पाया जाता हैं। कहीं–कहीं पर जहाँ खनिज पदार्थों की उपलब्धता है उन्हीं प्रदेशों में जनसंख्या केन्द्रित है। इन प्रदेशों में जनसंख्या बहुत विरल पायी जाती है क्योंकि कहीं–कहीं पर संसाधनों की उपलब्धता के बाद भी तकनीकी अभाव के कारण इनका समुचित उपयोग नहीं हो पाता है। इस प्रदेश में सामान्यतः भूमि के दर्शन नहीं के बराबर होते हैं क्योंकि वर्ष के अधिकांश दिनों में बर्फ का जमाव रहता है। समुद्री भाग भी हिमाच्छादित अवस्था में रहते हैं। यहाँ शीतकाल बहुत लम्बा होता है। वर्ष भर अत्यन्त न्यून तापमान पाया जाता है। वर्षा हिम के रूप में होती है, तीव्र बर्फीली हवाएं चलेती हैं। यहाँ पर जलीय जैविक संसाधनों की प्रधानता होती है, काई एवं प्लैंक्टन अधिक पाये जाते हैं। यहाँ विविध प्रकार के जन्तु मछलियां, सील, ध्रुवीय भालू, भेड़िये पाये जाते हैं। स्थलीय भागों में कैरीबू, रेनडियर, लैमिंग, खरगोश आदि पाये जाते हैं।

आर्कटिक प्रदेशों में जनसंख्या का घनत्व अत्यन्त विरल पाया जाता है। यहाँ का औसत जनघनत्व 2 व्यक्ति/किमी^{2} से भी कम पाया जाता है। यूरोप एवं एशिया के साथ–साथ उत्तरी अमेरिका के ध्रुवीय भागों को विकास की धारा से जोड़ने का प्रयास विभिन्न सरकारों द्वारा किया जा रहा है एवं इसके अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त हो रहे हैं।

9.6 सारांश (Conclusion)

मानव भूगोल में जनसंख्या का अध्ययन इस विषय की सार्थकता को सिद्ध करता है क्योंकि मानव संसाधन ही इस विषय की विषयवस्तु को आधार प्रदान करता है। मानव ही वह तत्व है जो अपनी बुद्धि एवं कौशल से भौतिक तत्वों में परिवर्तन करता है एवं एक विशेष प्रकार के सांस्कृतिक पर्यावरण का निर्माण करता है जो कि मानव भूगोल की विषयवस्तु है। कहना अतिशयोक्ति न होगा कि मानव संसाधन ही विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों को सार्थकता प्रदान करता है। हालॉकि विभिन्न विद्वान मानव को संसाधनों में सर्वप्रधान संसाधन स्वीकार करते हैं। इस प्रकार मानव संसाधन का अध्ययन इस विषय के लिए और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। प्रस्तुत इकाई में यह विधिवत रूप से स्पष्ट किया गया कि जनसंख्या का वितरण विश्व में विविध रूप में पाया जाता है। विश्व के विभिन्न प्रकार के धरातलीय स्वरूपों के अनुसार जनसंख्या भी विविध रूप में पायी जाती है। प्राकृतिक तत्वों के अनुसार जनसंख्या वितरण प्रतिरूप के साथ महाद्वीप वार भी जनसंख्या का वितरण विशेष रूप में पाया जाता है। जनसंख्या वितरण प्रतिरूप के प्रदर्शन के साथ–साथ जनसंख्या का संसाधनों के साथ सम्बन्धों का अध्ययन इस इकाई की प्रमुख तत्व है। इस इकाई से स्पष्ट है कि मानव स्वयं में एक संसाधन है जिसका अन्य संसाधनों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। प्रिय विद्यार्थियों यह इकाई मानव जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप एवं जनसंख्या–संसाधन सम्बन्धों के सन्दर्भ में आपके धारणात्मक स्वरूप को और भी स्पष्ट करेगी ऐसी अपेक्षा की जाती है।

9.7बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– ''पृथ्वी पर जनसंख्या का वितरण असमान है'' इस कथन की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 02– विश्व जनसंख्या वितरण प्रतिरूप का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

प्रश्न 03– दक्षिण एशिया में जनसंख्या प्रतिरूप का सचित्र वर्णन कीजिए।

प्रश्न 04– जनसंख्या–संसाधन सम्बन्ध पर एक निबन्ध लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– जनसंख्या वितरण प्रतिरूप क्या है स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 02– विश्व के प्रमुख मानव पुंज कौन–कौन से हैं स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 03– दक्षिण पूर्व एशिया में जनसंख्या के वितरण को समझाइए।

प्रश्न 04– उत्तर पूर्व यूरोप में जनसंख्या वितरण को स्पष्ट कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नेत्तर–

प्रश्न 01– सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है–

अ– भारत ब– चीन

स– जापान द– रूस

प्रश्न 02– निम्नलिखित में अधिक जनसंख्या वाला प्रदेश है–

अ– दक्षिण पूर्व एशिया ब– अफ्रीका का मरूस्थली भाग

स– आर्कटिक क्षेत्र स– दक्षिण अमेरिका का उत्तरी भाग

प्रश्न 03– यूरोप के किस भाग में सर्वाधिक जनसंख्या पायी जाती है–

अ– उत्तर पूर्वी यूरोप ब– उत्तर पष्चिम यूरोप

स– दक्षिण यूरोप द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 04– निम्नलिखित में से किस क्षेत्र में सर्वाधिक न्यून जनसंख्या निवास करती है–

अ– एशिया ब–अफ्रीका

स– यूरोप द– अण्टार्कटिका

प्रश्न 05– संसाधनों के सापेक्ष अति जनसंख्या या जनाधिक्य से तात्पर्य है–

अ– जनसंख्या का अधिक होना ब– जनसंख्या का कम होना

स– जनसंख्या स्थिर हो जाना द– उपरोक्त में से कोई नहीं

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए0 यूनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002। पृष्ठ सं–187, 211, 212, 213।

02– भूगोल, मुख्य परीक्षा के लिए, डी0 आर0 खुल्लर, मैग्रा हिल एजुकेशन इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड चेन्नई, पृष्ठ सं–8.13।

03– 'Chineese Culture is product of Soil', George Gessey, Asia's LandAnd People. P.86.

04– मानव भूगोल, माजिद हुसैन, सत्यम अपार्टमेंट, सेक्टर 3, जवाहर नगर, जयपुर, 302004, पृष्ठ सं–89, 131,132,135,।

05– मानव भूगोल, डॉ0 एस0डी0 मौर्य, शारदा पुस्तक भवन, 11 यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद, पृष्ट सं–119,192

06– विश्व का प्रादेशिक भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, साहित्य भवन पब्लिकेशन, हास्पिटल रोड आगरा।

07– बैकल्पिक भूगोल, एन एन ओझा, संजय कुमार सिंह, क्रॉनिकल पब्लिकेशंस प्रा0लि0 का पुस्तक प्रभाग, ए डी27, सेक्टर –16, नोएडा–201301। पृष्ठ सं0–129

08– Chandana R.C. 1990,A Population Geography, Kalyani Press New Delhi.

09– Clarke J.I,(ed.) 1984, Geograph and Population : Approaches and Applications. New York, Pergamon Press.

इकाई–10 विश्व जनसंख्या वितरण प्रतिरूप, अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र, मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र, जनरिक्त क्षेत्र, जनसंख्या घनत्व

इकाई की रूपरेखा

10.1– प्रस्तावना

10.2– उद्देश्य

10.3– जनसंख्या से सम्बन्धित तथ्य

10.4– जनसंख्या वितरण प्रतिरूप

10.5– महाद्वीपों के अनुसार जनसंख्या का वितरण

10.6– जनसंख्या घनत्व

10.7– जनसंख्या घनत्व का विश्व वितरण

10.8– सारांश

10.9– बोध प्रश्न

10.10– संदर्भ ग्रन्थ सूची

10.1 प्रस्तावना–

मानव भूगोल के अध्ययन में मानव का केन्द्रीय स्थान है। मानव भूगोल में मानव एवं मनुष्य से सम्बन्धित समस्त क्रियाओं (प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक एवं चतुर्थक आर्थिक क्रियाओं) का अध्ययन किया जाता है। मानव प्राकृतिक तत्वों का अपनी आवश्यकताओं हेतु उपयोग कर उसे प्राकृतिक तत्व से संसाधन का रूप देता है एवं उन संसाधनों का अति एवं न्यून उपभोग करता है। यही मानव के किसी स्थान पर बसने के लिए प्रेरित एवं उपेक्षित करता है। जिन प्रदेशों में संसाधन प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, उन क्षेत्रों में जनसंख्या का बसाव भी अधिक होता है। इस प्रकार जनसंख्या उन प्रदेशों में अधिक पायी जाती है जहाँ संसाधनों की प्रचुरता पायी जाती है तथा जनसंख्या का संकेन्द्रण संसाधनों की उपलब्धता का द्योतक माना जाता है। विश्व में जनसंख्या का संकेन्द्रण एवं वितरण एक समान न होकर असमान रूप में पाया जाता है। प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप का सामान्य वितरण प्रस्तुत किया जा रहा जिसके माध्यम से विद्यार्थियों को जनसंख्या के विश्व वितरण प्रतिरूप की विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकेगी।

10.2 उद्देश्य Objectives

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. इस इकाई के माध्यम से जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों एवं आंकड़ों के माध्यम से जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप को स्पष्ट करते हुए, उसके वितरण को प्रभावित करने वाले सामान्य कारकों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया जा सकता है।
2. विश्व जनसंख्या वितरण प्रतिरूप की जानकारी उपलब्ध कराना।
3. विश्व जनसंख्या वितरण प्रतिरूप के माध्यम से विद्यार्थियों को यह बताना किस प्रकार संसाधन जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करते हैं।
4. इस इकाई के माध्यम से यह स्पष्ट करना कि निम्न जनसंख्या के उचित कारणों की पहचान कर इनमें सुधार कर किस प्रकार जनसंख्या घनत्व को अनुकूल बनाया जा सकता है।
5. अधिक जनघनत्व वाले क्षेत्रों की पहचान कर उनमें पायी जाने वाली समस्याओं के लिए नीति तैयार करना।
6. अति जनसंख्या वाले क्षेत्रों की पहचान कर उनके नियोजन के लिए सुझाव प्रस्तुत करना एवं विद्यार्थियों को

प्रेरित करना कि किस प्रकार असमान जनसंख्या वितरण को अनुकूल बनाया जा सकता है।

जनसंख्या अध्ययन, भूगोलवेत्ताओं सहित सभी सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए अध्ययन का प्रमुख विषय रहा है। भूगोल के अध्ययन में मानव का विशिष्टतम स्थान है। मानव एक भौगोलिक तत्व एवं संसाधन तथा कारक तीनों है। मानव भूगोल मुख्य रूप से निम्नलिखित तीन दृष्टिकोंण रखता है–

1. मानव जो कि भौतिक वातावरण में परिवर्तन एवं परिमार्जन कर अपने अनुकूल सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण करता है।
2. प्राकृतिक जैविक वातावरण जिसमें मानव कार्यरत है तथा जिसे संसाधन के रूप में प्रयोग करता है। तथा सदैव परिवर्तनीय सम्बन्ध रखता है।
3. मानव का सांस्कृतिक वातावरण जो प्राकृतिक वातावरण एवं मानवीय क्रियाकलाप के परिणाम स्वरूप विशेष रूप से निर्मित होता है।

10.3 जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्य

भूतल पर जनसंख्या वितरण में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक परिवर्तन होता रहा है। यद्यपि परिवर्तन की गति एवं दिशा देशकाल एवं परिस्थितियों के अनुसार भिन्न–भिन्न रही है। धरातल के विभिन्न भागों में जनसंख्या का वितरण अत्यधिक विषम है, कहीं पर छोटे से क्षेत्र में अति सघन जनसंख्या निवास करती है तो कहीं बहुत विस्तृत क्षेत्र में अति न्यून जनसंख्या का निवास देखने को मिलता है। एक अनुमान के अनुसार विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग 90 प्रतिशत भाग विश्व धरातल के केवल 10 प्रतिशत भाग पर संकेन्द्रित है जबकि इसके विपरीत 90 प्रतिशत भू–भाग पर केवल 10 प्रतिशत जनसंख्या ही निवास करती है। इसी प्रकार विश्व की लगभग आधी जनसंख्या सम्पूर्ण स्थलीय क्षेत्र के मात्र 5 प्रतिशत भू–भाग पर निवास करती है। **ब्लॉश** के अनुसार लगभग 5.5 कराड़ वर्ग मील क्षेत्रफल पर 90 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इस प्रकार मानव जनसंख्या का दो तिहाई भाग विश्व के स्थलीय धरातल के 1/7 वें भाग पर निवास करती है। **टिवार्था** के अनुसार विश्व की लगभग आधी जनसंख्या 5 प्रतिशत क्षेत्र पर निवास करती है जबकि 57 प्रतिशत भू–भाग पर केवल 5 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। **जेम्स** [3] ने विश्वजनसंख्या वितरण का वर्णन करते हुए पृथ्वी पर मुख्यतः दो जनसंख्या समूहों को व्यक्त किया है–

अ– दक्षिण–पूर्वी एशिया, जहाँ विश्व की लगभग आधी जनसंख्या 1/10 भू–क्षेत्र पर निवास करती है।

ब– यूरोप जहाँ विश्व की लगभग 1/5 जनसंख्या लगभग 1/20 भू–क्षेत्र पर निवास करती हैं।

धरातल पर जनसंख्या के असमान वितरण के लिए अनेक प्राकृतिक एवं मानवीय कारक उत्तरदायी हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

अ– प्राकृतिक कारक

01– जलवायु

02– मिट्टी

03– भू–विन्यास या स्थलाकृति

04– जलाशय

05– खनिज और ऊर्जा संसाधनों की उपलब्धता

06– भौगोलिक स्थिति

ब– सांस्कृतिक कारक–

01– आर्थिक कारक

02– सामाजिक कारक

10.4 जनसंख्या का विश्व वितरण (World Distribution of population)

आज विश्व की कुल जनसंख्या लगभग 7.4 मिलियन से अधिक है जिसका आधा से अधिक (60%) अकेले एशिया महाद्वीप में बसा हुआ है। संयुक्त राष्ट्र संघ के आंकड़े के अनुसार सन् 2014 में संसार की कुल जनसंख्या 723.8 करोड़ थी। एशिया विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या (435.1 करोड़) वाला महाद्वीप है। जनसंख्या की दृष्टि से अफ्रीका (113.6 करोड़) का दूसरा स्थान है। इसके पश्चात क्रमशः यूरोप (74.1 करोड़), उत्तर अमेरिका (56.1 करोड़), दक्षिण अमेरिका (41.01 करोड़) और ओशेनिया (3.9 करोड़) का स्थान आता है। विभिन्न देशों के पृथक–पृथक आंकड़ों तथा जनसंख्या मानचित्र से स्पष्ट होता है कि विश्व में जनसंख्या का वितरण हिमाच्छादित होने के कारण जनरिक्त है। इस प्रकार विश्व की लगभग 60% प्रतिशत जनसंख्या कुल स्थलीय क्षेत्र के लगभग 5% पर ही निवास है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि विश्व के 50% से अधिक स्थलीय भाग मानव निवास के लिए अनुपयुक्त होने के कारण निर्जन हैं।

विश्व की जनसंख्या

महाद्वीप/देश	जनसंख्या (करोड़ में)	विश्व की प्रतिशत
एशिया	435.1	60.13
अफ्रीका	11.6	15.69
यूरोप	74.1	10.24
उत्तरी अमेरिका	56.1	7.76
दक्षिणी अमेरिका	41.0	5.66
ओशेनिया	3.9	0.54
विश्व	**723.8**	**100.00**

Source : World Population Data Sheet, 2019, Population Reference Bureau, Washington D.C.

जनसंख्या वितरण के विश्व मानचित्र के सम्पूर्ण विश्व को निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

10.4.1– अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र

10.4.2– मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र

10.4.3– अल्प तथा अत्यल्प जनसंख्या वाले क्षेत्र और

10.4.3 निर्जनप्राय एवं बिना बसे हुए क्षेत्र।

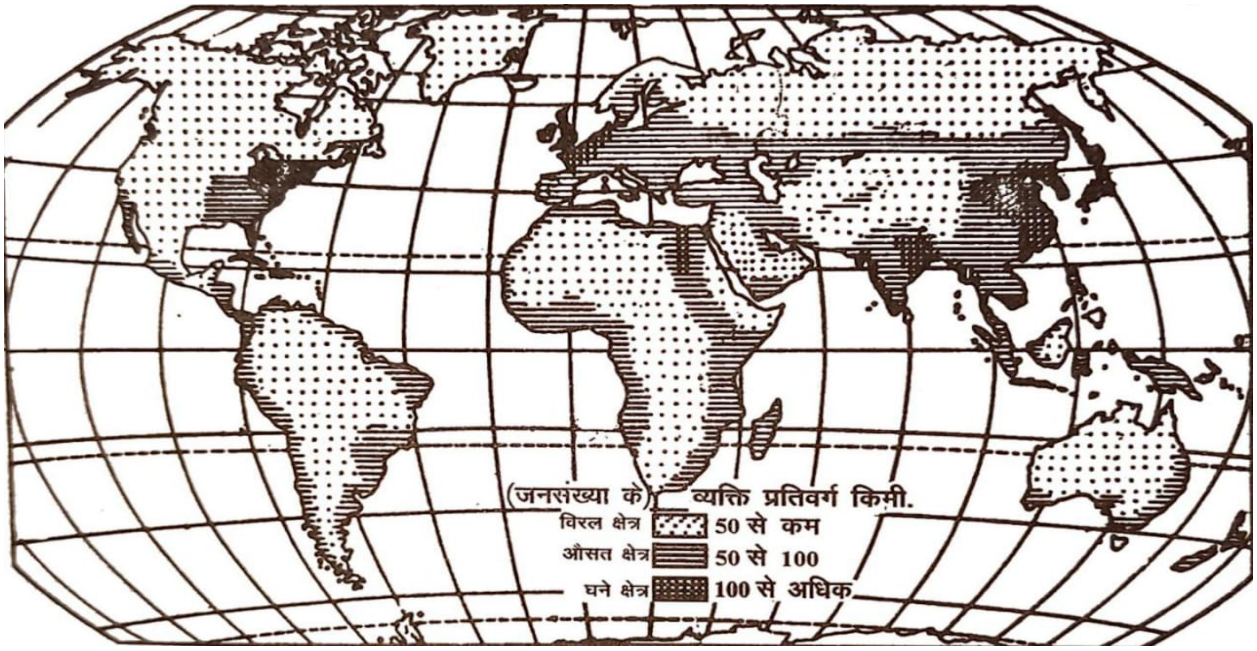

चित्र सं–10.1 विश्व में जनसंख्या का वितरण

10.4.1–अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र (Highly Populated Area) :–

विश्व की लगभग 90% जनसंख्या उत्तरी गोलार्द्ध में निवास करती हैं जिसका अधिकांश निम्नांकित तीन विशाल जनसमूहों (Human Agglomerations) में केन्द्रित है–

10.4.1 अ– पूर्वी, दक्षिणी तथा दक्षिणी–पूर्व एशिया

10.4.1 ब– उत्तरी–पश्चिमी एवं मध्यवर्ती यूरोप और

10.4.1 स– उत्तरी–पूर्वी उत्तरी अमेरिका।

उपर्युक्त तीनों महाजनसमूहों को क्रमशः एशियायी जनसमूह, यूरोपीय जनसमूह और अमेरिका जनसमूह के नाम से भी जाना जाता है। इसका विस्तृत विवरण अग्रांकित पंक्तियों में दिया गया है।

10.4.1 अ– पूर्वी, दक्षिणी तथा दक्षिणी–पूर्व एशियाः–

इस जनसमूह का विस्तार चीन, भारत, बांग्लादेश, जापान, पाकिस्तान तथा इण्डोनेशिया का जावा द्वीप सम्मिलित है, जहाँ जनसंख्या के वृहद् जमघट मिलते हैं। इस प्रदेश की जनसंख्या के जमघट प्रतिरूप की मुख्य विशेषता यह है कि यहाँ सर्वत्र जनसंख्या का समान प्रतिरूप नहीं मिलती है, बल्कि बहुसंख्यक छोटे–छोटे जनसमूहों में जिनके बीच–बीच में जनरिक्त क्षेत्र है, झुण्ड मिलती है। एशियाई जनसमूह के उपर्युक्त सभी देश कृषि प्रधान हैं। इन देशों में जलवायु मानसूनी प्रकार की मिलती है और वर्ष में दो फसलें उत्पन्न की जाती हैं। यह जनसमूह 10^0 उत्तरी अक्षांश से लेकर 40^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य स्थित है। पूर्वी एशिया में चीन प्रमुख है। चीन में सर्वाधिक जनसंख्या यांग्टीसीक्यांग, सीक्यांग, ह्वांग हो तथा वी–हो की घाटियों में पायी जाती है। ह्वांग हो तथा वी–हो घाटी में 1000 व्यक्ति, यांग्टीसीक्यांग नदी घाटी में 2000 व्यक्ति, सिक्यांग नदी घाटी में 1500 व्यक्ति तथा जेचवान बेसिन में 1700 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 में निवास करते हैं।

नदी घाटियों की उपजाऊ मैदान, अधिक विकसित, चावल की कृषि, सन्तान उत्पन्न करने की धार्मिक प्रवृत्ति तथा जन्मभूमि में निवास करने की प्रवृत्ति जनसंख्या वृद्धि में सहायक है। पूर्वी एशिया का दूसरा प्रमुख देश जापान है। यहाँ पर जनसंख्या के विकास का प्रमुख कारण औद्योगिक पेटी है। द0पू0 एशिया का प्रमुख देश इण्डोनेशिया है जहाँ जावा एवं मदुरा द्वीपों में देश की 80%जनसंख्या निवास करती है। दक्षिण एशिया के अन्तर्गत भारत, बांग्लादेश तथा पाकिस्तान तीन प्रमुख देश हैं जहाँ पर दक्षिण एशिया की 85% जनसंख्या निवास करती है। यहाँ के निवासियों का जीवन स्तर बहुत ही निम्न कोटि का है। उद्योग, वाणिज्य एवं द्वितीयक/तृतीयक उद्योगों का अधिक विकास नहीं हो पाया है। यद्यपि औद्योगीकरण प्रगति की ओर है। शताब्दियों से राजनीतिक पराधीनता

एवं आर्थिक षोषण के कारण ये प्रगति की दौड़ में पिछड़ गये हैं क्योंकि वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति नहीं हो पायी है। कृषि पर जनसंख्या का भार अधिक होने के कारण तीन–चौथाई जनसंख्या दरिद्रता की सीमा से भी नीचे रहती है। मानसून एशिया में परिवहन साधन व विद्युत तथा विभिन्न प्रकार के रोगों के निवारण हेतु दवाओं का प्रभाव पड़ा जिससे प्राकृतिक विपत्तियां, अकाल, बीमारी आदि का सामना करना अधिक सरल हो गया। इससे भी अधिक जनसंख्या में वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त यहाँ जन्म दर के बढ़ने तथा परिवार नियोजन की कमी, शिक्षा की कमी और निम्न जीवन स्तर से भी सन्तुष्टि के कारण जनसंख्या अत्यधिक है।

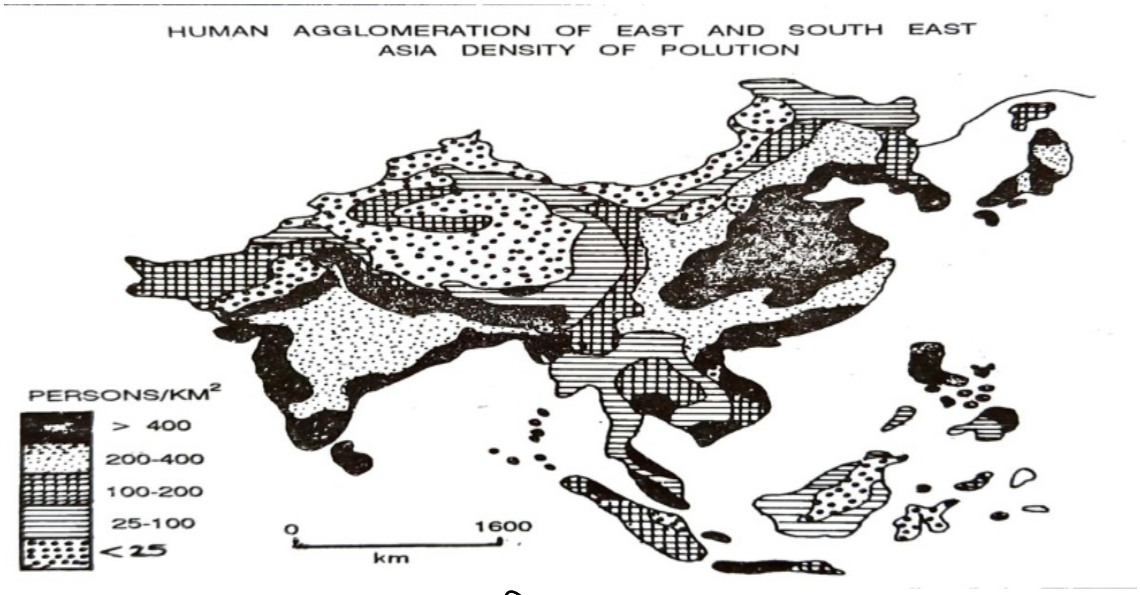

चित्र 10.2

10.4.1 ब– उत्तरी–पश्चिमी एवं मध्यवर्ती यूरोपः–

कृषि योग्य भूमि, आदर्श जलवायु, खनिज पदार्थों की प्रचुरता, यातायात की सुविधा, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण जनसंख्या का विकास पश्चिमी यूरोप में अधिक हुआ है। यहाँ 50^0 उत्तरी अक्षांश के सहारे सघन जनसंख्या की एक लगातार फैली पेटी ग्रेट ब्रिटेन ने रूस के डोनेत्ज बेसिन तक प्रसरित है। इसे यूरोपीय जनसंख्या की धुरी (Axis of European Population) कहते हैं। ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, इटली, स्पेन, पोलैण्ड, नीदरलैण्ड, बेल्जियम इसमें सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र का आर्थिक आधार मुख्यतः उद्योगों, वाणिज्य एवं व्यापार पर निर्भर करता है। इस समूह में विश्व की लगभग 25%जनसंख्या निवास करती है। यह क्षेत्र शीतोष्ण कटिबंध में 40^0 उत्तरी अक्षांश से 60^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य एक लम्बी मेखला में विस्तृत है। इसका सघन भाग 45^0 से 55^0 उत्तरी अक्षांशों के मध्य फैला है। इन क्षेत्रों में औद्योगिक नगरों का विकास सबसे अधिक हुआ है। इन प्रदेशों की सभ्यता को इसलिए औद्योगिक सभ्यता (Industrial Civilization) कहते हैं। अधिकतर घनी जनसंख्या मैदानी भागों, कोयला

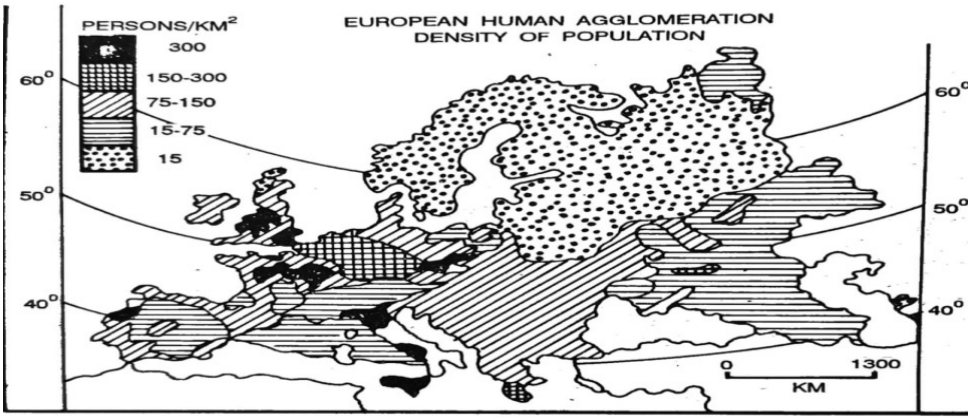

चित्र 10.3

क्षेत्रों और नगरों में केन्द्रित पायी जाती है। समशीतोष्ण जलवायु, उचित वर्षा एवं उपजाऊ मिट्टी वाले भागों में अनेक खाद्यान्न पैदा किये जाते हैं तथा निर्माणी उद्योगों के कारण जनसंख्या पोषण की क्षमता अधिक है और जनसंख्या का जीवन–स्तर सामान्यतः ऊँचा है। आयात–निर्यात व्यापार बढ़ा होने से वाणिज्य संस्कृति भी पनपी है।

10.4.1 स– उत्तरी–पूर्वी उत्तरी अमेरिका :–

यह क्षेत्र 100^0 पश्चिमी देशान्तर के पूर्व में प्रसरित है। यह भाग संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा का सबसे अधिक जनसंख्या वाला क्षेत्र है। यहाँ पर उत्तरी अमेरिका की सम्पूर्ण जनसंख्या का 70 से 90 प्रतिशत जनसंख्या रहती है। इसके अन्तर्गत पूर्वी मिसीसिपी, ओहियो, बोस्टन से फिलाडेल्फिया तक समुद्र तटीय प्रदेश मिशीगन, डेट्रायट, न्यू इंग्लैण्ड प्रदेश, कोलम्बिया का तटवर्ती भाग सम्मिलित किया जाता है। यहाँ पर जनसंख्या का घनत्व 500–800 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी है। औद्योगिक क्रान्ति, यान्त्रिक क्रान्ति तथा प्रचुर मात्रा में विद्यमान खनिज आदि प्रमुख आकर्षण हैं, जिस कारण जनसंख्या का घनत्व अधिक है। इस भाग में विश्व की लगभग 5% जनसंख्या केन्द्रित पायी जाती है। अटलांटिक महासागर के तटपर समुद्र पत्तनों का उल्लेखनीय विकास हुआ है जिनके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार होता है। औद्योगिक पेटी के पश्चिम में उपजाऊ कृषि भूमि का विस्तार है। जहाँ बड़े–बड़े पैमाने पर उन्नतशील ढंग से खेती की जाती है। यहाँ की लगभग 95 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है। लोगों की प्रति व्यक्ति आय अधिक तथा रहन–सहन का स्तर बहुत ऊंचा है। अमेरिका में जन्म दर और मृत्युदर दोनों पूर्णतः नियन्त्रित है और अत्यन्त निम्न स्तर पर पायी जाती है। विदेशों से अप्रवासन भी प्रतिबंधित है, अतः जनसंख्या वृद्धि दर मन्द (1% वार्षिक) है तथा जनसंख्या बहुत धीरे–धीरे बढ़ रही है।

10.4.2– मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र (Moderately Populated Areas) :-

नई तथा पुरानी दुनिया के सभी महाद्वीपों में मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र स्थित है। विश्व के उन भागों में जहाँ प्राकृतिक तथा मानवीय दशाएं अधिक जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए उपयुक्त नहीं है किन्तु वे मानव निवास के लिए बिल्कुल अनुपयुक्त भी नहीं हैं, ऐसे क्षेत्रों में कहीं–कहीं भौगोलिक दशाएं मानव–निवास के लिए उपयुक्त भी हैं लेकिन इनका विस्तार अपेक्षाकृत कम है। एशिया में भूमध्य सागर के पूर्व में स्थित टर्की, इजराइल, जार्डन और लेबनान में जनसंख्या का वितरण मध्यम प्रकार का है। रूम सागर के तटवर्ती देशों के पुर्तगाल, द0 फ्रांस, इटली, यूगोस्लाविया, यूनान आदि यूरोपीय देश में जनसंख्या अधिक सघन नहीं है। इन देशों में कृषि के लिए पर्याप्त उपजाऊ भूमि नहीं है क्योंकि अधिकांश भूमि पहाड़ी और पठारी है। उत्तरी अमेरिका का मध्य पूर्वी भाग जो मुख्यतः कृषि प्रदेश है, मध्यम जनसंख्या वाला क्षेत्र है। संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा के पश्चिमी तट पर भी नगरों के विकास से जनसंख्या का जमाव बढ़ा है। दक्षिण अमेरिका में पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्र तटीय भागों में जनसंख्या का वितरण सामान्य है। ब्राजील, अर्जेन्टाइन, उरुग्वे, वेनेजुएला, कोलम्बिया, पेरू तथा चिली के समुद्रतटीय भाग इसी प्रकार के हैं। आस्ट्रेलिया के दक्षिण–पूर्वी अफ्रीका में भी अधिकांश जनसंख्या का निवास है जिसकी सघनता मध्यम प्रकार की ही है। न्यूजीलैण्ड की गणना भी इसी श्रेणी के अन्तर्गत की जा सकती है।

10.4.3– अल्प एवं अत्यल्प जनसंख्या वाले क्षेत्र (Low And Very low Populated Area) :-

इसके अन्तर्गत विश्व के बसे हुए उन क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाता है जहाँ जनसंख्या का बसाव बहुत कम है। यह यत्र–तत्र बिखरे समूहों में पायी जाती है। ये क्षेत्र पूर्णतया जनरिक्त नहीं है। इन क्षेत्रों में भूविन्यास, जलवायु, मिट्टी, जलापूर्ति, आदि का अनुपयुक्त होना और आर्थिक संसाधनों, यातायात के साधनों आदि का अभाव जनसंख्या वृद्धि तथा सघनता में अवरोधक है। इस प्रकार के क्षेत्र सामान्यतः मरुस्थलों, भूमध्यरेखीय घने जंगली भागों के बाहर स्थित सीमान्त क्षेत्रों, कटे–फटे पठारों तथा पहाड़ी प्रदेशों, कनाडा तथा यूरेशिया के टैगा वन प्रदेशों में मिलते हैं। एशिया में पश्चिमी चीन, तिब्बत, मंगोलिया तथा एशियाई रूस के विस्तृत भूभाग में अल्प जनसंख्या का निवास पाया जाता है।

10.4.4– निर्जनप्राय एवं बिना बसे हुए क्षेत्र (Non EccmeneArea) :-

पृथ्वी का लगभग आधा स्थलीय क्षेत्र पूर्णतः अथवा लगभग जनरिक्त है जहाँ स्थायी मानव निवास का अभाव है। ऐसे क्षेत्र अत्यंत शीतल अथवा अत्यंत उष्ण तापमान, अत्यधिक वर्षा अथवा शुष्कता तथा धरातलीय विषमता के कारण मानव निवास के लिए सर्वथा प्रतिकूल हैं, जिसके कारण यहाँ स्थायी मानव निवास अभी तक सम्भव नहीं हो पाया है। इन क्षेत्रों में मानव बसाव के अभाव के लिए जलवायु की कठोरता ही सर्वाधिक उत्तरदायी है। विश्व के बिना बसे हुए प्रदेश अति प्रधान हैं जिन्हें निम्नलिखित चार वर्गों में रखा जा सकता है–

अ– अतिशीत प्रदेश (Very Cold Lands)

ब– मरुस्थल (उष्ण एवं मध्य अक्षांशीय) (Hot And Mid Latitude Desert)

स– विषुवत रेखीय उष्णार्द्र वन प्रदेश (Humid tropical Forests)

द– उच्च पर्वतीय प्रदेश (High Mountains Regions)

य– अतिशीत प्रदेश (Very Cold Lands) :–

पृथ्वी पर उच्च अक्षांशीय प्रदेश शीत प्रधान है, जहाँ मानव का स्थायी निवास नहीं है। इन शीत प्रदेशों में अण्टार्कटिका, ग्रीनलैण्ड, आर्कटिक सागर के तटीय क्षेत्र सदैव हिमाच्छादित रहते हैं। भारत की तुलना में अंटार्कटिका का क्षेत्रफल लगभग 6 गुना है। आर्कटिक प्रदेश में टुण्ड्रा लाखों किमी में विस्तृत है, परन्तु वहाँ मानव बहुत ही कम निवास करते हैं। टुण्ड्रा प्रदेश में 60^0 से उच्च अक्षांशों पर जनसंख्या शून्यता है। इन प्रदेशों में मानव के लिए अनेक असुविधाएं हैं, जिससे यह क्षेत्र मानव निवास के अनुकुल नहीं है जैसे–

1– यहाँ वर्ष पर्यन्त अतिशीत के कारण हिमावरण रहता है। शीत ऋतु अत्यन्त ठण्डी होती है। घर से बाहर बर्फ भरी हवाएं तीव्र गति से चलने के कारण बाहर निकलना कठिन रहता है। अतः कोई भी फसल उग नहीं सकती है।

2– पाला रहित दिनों की संख्या बहुत कम है जिससे फसल का आना संभव नहीं है क्योंकि स्थायी तुषार भूमि स्थित क्षेत्र पर मिलेती है।

3– अपवाह तंत्र बहुत बदतर है। शीत ऋतु लम्बी व बिना प्रकाश की रहती है।

4– टुण्ड्रा प्रदेश में मिट्टियां अनुपजाऊ और दलदली हैं। उनमें जल प्रवाह की दशा अच्छी नहीं है।

5– अनुपजाऊ मृदा वनस्पति रहित क्षेत्र होने से मानव निवास दूभर है।

ब– मरुस्थल (उष्ण एवं मध्य अक्षांशीय) (Hot And Mid Latitude Desert) :–

वर्षा तथा जलाभाव के कारण पृथ्वी के कई बड़े–बड़े प्रदेश निर्जन पड़े हुए हैं। इसके अंतर्गत निम्न तथा मध्य अक्षांशों में स्थित मरुस्थल सम्मिलित हैं। अफ्रीका में सहारा एवं कालाहारी मरुस्थल, एशिया में अरब, थार, तुर्किस्तान, गोबी और तकलामकान मरुस्थल, उत्तरी अमेरिका में ग्रेट बेसिन, द0 अमेरिका में पैंटागोनिया और आटाकामा मरुस्थल और पश्चिमी आस्ट्रेलिया का मरुस्थल संसार के बहुत बड़े–बड़े शुष्क प्रदेश हैं, जहाँ वर्षा और जल के अभाव के कारण वनस्पतियों का विकास नहीं हो पाता है और सम्पूर्ण भाग रेत (बालू) अथवा नग्न शैलों से आच्छादित रहता है। मरुस्थलों में भयंकर रेत भरी आंधियां चलती हैं। इनमें कहीं–कहीं जलाशय पाये जाते हैं। उनके किनारे–किनारे ही हरियाली देखी जा सकती है। इन मरुद्यानों (Oasis) में लघु मानव समूह अस्थायी निवास बनाकर तब तक रहता है जब तक जलाशय में जल उपलब्ध रहता है। भविष्य में कृत्रिम वर्षा अथवा सिंचाई के साधनों के प्रयोग से मरुस्थलों में जनसंख्या निवास के क्षेत्रों को बढ़ाया जा सकता है।

स– विषुवत रेखीय उष्णार्द्र प्रदेश (Humid tropical Forests) :–

इन प्रदेशों में उच्च तापमान और अत्यधिक वर्षा के कारण सघन वनस्पति मिलेती है जिसके कारण यह क्षेत्र मानव के लिए व्याधियों का घर बना हुआ है। मक्खी, मच्छर, विषैले कीड़े–मकोड़े आदि गर्मी व आर्द्रता के कारण पैदा होते हैं जो मानव एवं पशुओं के लिए हानिकारक होते हैं। इन प्रदेशों में दक्षिणी अमेरिका में अमेजन बेसिन, अफ्रीका में कांगों बेसिन, न्यूगिनी और पूर्वी द्वीप समूह के भाग आते हैं। ऊंचे वृक्षों, घनी झाड़ियों तथा घास के कारण ये वन कई स्थानों में दुर्गम हैं। इस उष्णार्द्र जलवायु में वायु प्रवाह मन्द अथवा स्थिर होने के कारण घुटन महसूस होती है। यहाँ न तो शीत ऋतु होती है और न ही लम्बा शुष्क काल होता है। इन जंगलों में आदिम जातियों के कुछ समूह मिलते हैं जो पेड़ों पर मचान बनाकर रहते हैं। ये लोग जंगली जानवरों के शिकार तथा पेड़–पौधों से भोजन प्राप्त करते हैं।

द– उच्च पर्वतीय प्रदेश (High Mountains Regions) :–

ऊंचे पर्वतों के ऊपरी भाग विषम धरातल तीव्र ढाल और प्रतिकूल पर्यावरण के कारण प्रायः जनविहीन होते हैं। पर्वत तथा पठार अधिक ऊँचाई के कारण भौतिक दृष्टि से उच्च अक्षांशों के समान ही अतिशीत जलवायु के द्योतक हैं। यहाँ पर अनुपयुक्त जलवायु, विषम उच्चावच, कृषि भूमि की कमी, छिछली मृदा की तहें हैं। इस कारण जनसंख्या की दृष्टि से शून्यता पायी जाती है। भारत के हिमालय पर्वतीय क्षेत्र में विरल हैं। रॉकी, एण्डीज, आल्पस आदि पर भी बहुत कम आबादी है। केवल विषुवत रेखा के समीप एण्डीज पर मृदुल जलवायु के कारण लोगों ने वहां निवास करना पसन्द किया है–

विश्व के उपर्युक्त जनरिक्त अथवा अति न्यून जनसंख्या होने के तीन प्रमुख कारण है–

1– जीवन–निर्वहन सम्बन्धी संसाधनों का पूर्णतया अभाव।

2– मानव स्वास्थ्य के लिए प्रतिकूल एवं जटिल जलवायु का होना।

3– परिवर्तन की असुविधा।

10.5 महाद्वीपों के अनुसार जनसंख्या का वितरण प्रतिरूप (Distribution pattern of population according to continents)

जनसंख्या आकार के अनुसार एशिया विश्व का वृहत्तम महाद्वीप है। जहाँ विश्व की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इसके पश्चात यूरोप (13%) और अफ्रीका (12%) का स्थान है। जनसंख्या के अनुसार उत्तरी अमेरिका का चौथा, दक्षिणी अमेरिका का पांचवां और आस्ट्रेलिया का छठवां स्थान है।

10.5.1– एशिया में जनसंख्या वितरण

एशिया संसार का वृहत्तम महाद्वीप है जो विश्व के कुल स्थलीय क्षेत्र के लगभग एक तिहाई भाग को घेरे हुए हैं। जनसंख्या की दृष्टि से यह और भी बड़ा महाद्वीप है क्योंकि विश्व की लगभग 60 प्रतिशत (435 करोड़) जनसंख्या एशिया में ही निवास करती है। एशिया विविधताओं का महाद्वीप जिसके विभिन्न भागों की स्थलाकृति, जलवायु, मिट्टी, जल संसाधन, प्राकृतिक वनस्पति आदि प्राकृतिक दशाओं में अत्यधिक भिन्नता पायी जाती है जिसका प्रभाव यातायात के साधनों, कृषि, उद्योग–धन्धों आदि के विकास पर पड़ा है। जनसंख्या के सामान्य वितरण प्रतिरूप और सघनता के अनुसार एशिया महाद्वीप को तीन वृहद वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–

10.5.1 अ– अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र

10.5.1 ब– मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र और

10.5.1 स– अल्प जनसंख्या वाले क्षेत्र।

10.5.1 अ– अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र :–

एशिया का मानसूनी जलवायु वाला भाग विश्व का सबसे सघन और अधिक जनसंख्या वाला भूभाग है जिसमें अधिक जनसंख्या के दो क्षेत्र स्पष्ट हैं – (क) पूर्वी एशिया जिसमें चीन, जापान, ताइवान और कोरिया देश आते हैं और (ख) दक्षिणी एशिया जिसके अंतर्गत भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश और श्रीलंका सम्मिलित हैं। पिछले तीन–चार दशकों से नवीन औद्योगिक क्षेत्रों में जनसंख्या के संकेन्द्रण की प्रवृत्ति अधिक बलवती होती जा रही है। चीन, भारत, बांग्लादेश सहित अन्य देशों में भी तीन–चौथाई से अधिक जनसंख्या ग्रामीण है जहाँ जहाँ बेरोजगारी और निर्धनता की समस्याएं अधिक व्यापक हैं। एशिया के अधिक जनसंख्या वाले देश निम्नलिखित हैं–

चीन–

संसार की समस्त जनसंख्या का लगभग एक–चौथाई पूर्वी एशिया में पाया जाता है जिसमें चीन वृहत्तम देश है। जनसंख्या की दृष्टि से चीन एशिया ही नहीं विश्व की भी वृहत्तम देश है जहाँ एशिया की लगभग 35 प्रतिशत और विश्व की 20 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या का निवास है। चीन की जनसंख्या 136 करोड़ (2014) है। चीन का प्रत्येक निवासी अपनी भूमि एवं मिट्टी से प्रेम करता है और चीनी सभ्यता भी यहाँ मिट्टी से उत्पन्न

हुई है। यहाँ की जनसंख्या का वितरण बहुत विषम है। जनसंख्या का एक बड़ा भाग यांग्टीसीक्यांग, ह्वांगहो और उनकी सहायक नदियों की घाटी में रहता है। यदि युन्नान से मंचूरिया तक एक रेखा खींची जाये तो उसके पूर्व का भाग घना बसा है जिसमें लगभग 90 प्रतिशत चीनी रहते हैं। यहाँ पर प्रमुख रूप से नदी घाटियों में, नदियों में सिंचित विशाल मैदोनों में, तटीय मैदोनों तथा तटवर्ती भागों में केन्द्रित है, क्योंकि यहाँ उपजाऊ भूमि, उपयुक्त जलवायु, जल संसाधन तथा परिवहन के साधन उपलब्ध है। इसके विपरीत पश्चिमी भाग में, जो लगभग 60 लाख वर्ग किमी0 क्षेत्र पर प्रसरित है, केवल 10 प्रतिशत जनसंख्या बसी हुई है। इसका पश्चिमी तथा उत्तरी पश्चिमी भाग पर्वतीय अथवा अति शुष्क होने के कारण विरल जनसंख्या वाला क्षेत्र है। आन्तरिक मंगोलिया, सिक्यांग तथा तिब्बत शुष्क तथा निर्जन प्राय है। वहां जहाँ कहीं भी पहाड़ी क्षेत्र घने बसे हैं, वहां की जनसंख्या नदियों के साथ–साथ फैली है।

चीन में सघन जनसंख्या के क्षेत्र निम्नलिखित हैं–

1– चीन का विशाल मैदान (ह्वांग हो का निचला मैदान तथा वी–हो नदी घाटी।

2– यांग्टीसीक्यांग नदी की ऊपरी घाटी (जेचवान बेसिन), मध्यवर्ती मैदान तथा डेल्टाई भाग।

3– सिक्यांग नदी की मध्यवर्ती घाटी तथा डेल्टाई भाग।

4– दक्षिणी–पूर्वी समुद्र तटीय पेटी।

उक्त क्षेत्रों में जनसंख्या का घना निवास कृषि पर आधारित है इनके अतिरिक्त (i) मुकडेन–अनशान औद्योगिक क्षेत्र तथा (ii) पेकिंग–टिंटसीन औद्योगिक क्षेत्र सघन बसे हैं। शंघाई, नानकिंग, कैन्टन, हैन्काऊ, सिंगटाओ आदि औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या की सघनता 2000 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी तक बढ़ गयी है।

प्रमुख एशियाई देशों की जनसंख्या (2014)

क्रम	देश	जनसंख्या (मिलियन)	एशिया का प्रतिशत	जनसंख्या घनत्व (व्यक्ति/किमी)
1–	चीन	1364	31.55	143
2–	भारत	1296	29.77	394
3–	इण्डोनेशिया	252	5.79	132
4–	पाकिस्तान	194	4.46	244
5–	बांग्लादेश	159	3.65	1101
6–	जापान	127	2.92	336
7–	फिलीपीन्स	100	2.30	334
8–	वियतनाम	91	2.09	273
9–	ईरान	77	1.77	47
10–	टर्की	77	1.77	99
11–	थाईलैण्ड	66	1.52	129

12–	म्यांमार	54	1.24	79
13–	दक्षिण कोरिया	50	1.15	507
14–	सउदी अरब	31	0.71	14
15–	मलेशिया	30	0.69	91
16–	नेपाल	27	0.62	184
17–	उत्तरी कोरिया	25	0.57	206
18–	श्रीलंका	21	0.48	315
	एशिया	**4351**	**100.00**	**136**

Source : World Population Data Sheet 2014

जापान–

जापान की वर्तमान जनसंख्या (लगभग) 12.7 करोड़ है। जापान में अधिकांश जनसंख्या 37^0–38^0 उत्तरी अक्षांशों के दक्षिण में ही रहती हैं। 45^0 अक्षांशों के उपरांत तो यह बहुत ही विरल हैं। जापान में दक्षिणी तट के मैदान में जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है, क्योंकि जापान का अधिकांश चावल यहीं पैदा किया जाता हैं और यहीं उद्योगों की उन्नति हुई है। जापान की जनसंख्या का वितरण यहाँ की भूरचना पर आधारित है। देश का अधिकतर भाग पहाड़ी होने से जनसंख्या बिखरी हुयी पायी जाती है। जापान की तीन चौथाई जनसंख्या क्यूशू, शिकोकू और होन्शू द्वीपों में फैली हुई है। समुद्री तटों पर मछली पकड़ने के व्यवसाय के कारण ही घनी आबादी मिलती है। कहा जाता है कि समुद्र ने कहीं भी किसी प्रजाति के भौतिक और नैतिक विकास में इतना महत्वपूर्ण योगदान नहीं दिया है जितना जापान में। यही तथ्य जापान के तट पर घने बसाव का समाधान करता है। जापान की लगभग 60% नगरीय जनसंख्या टोकियो, नगोया, ओसाका, हिरोशिमा, नागासाकी नगरों में केन्द्रित पायी जाती हैं।

एशिया में जनसंख्या का वितरण

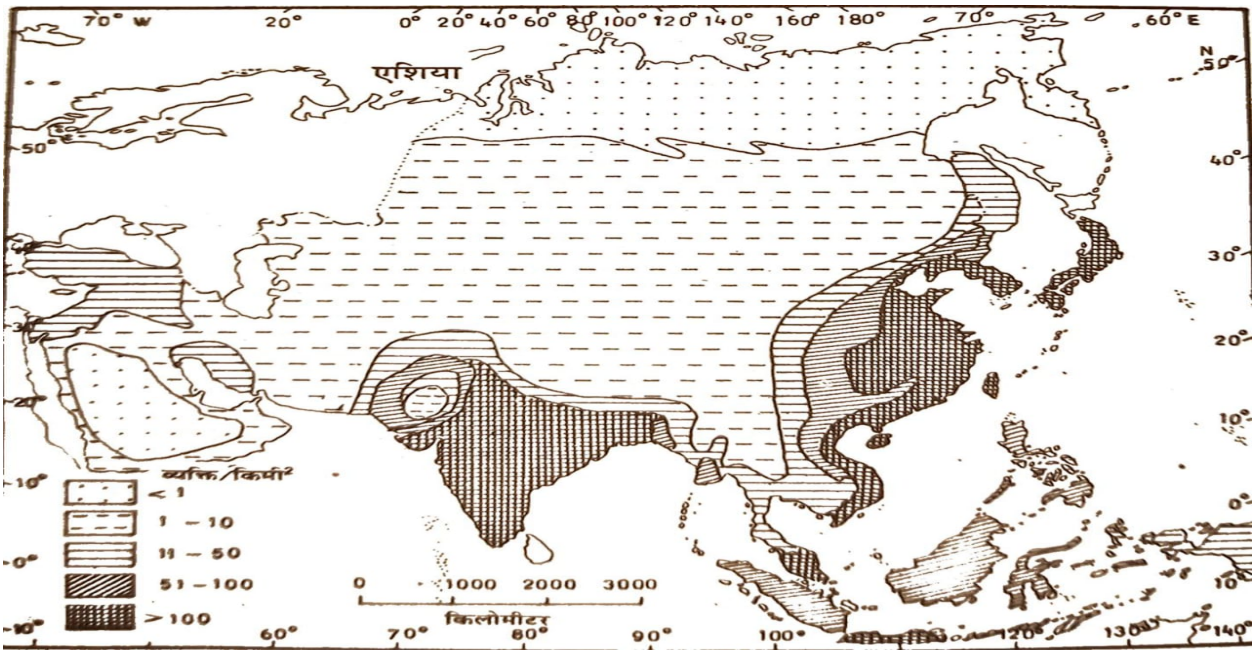

चित्र 10.4

भारत–

यह विश्व में चीन के पष्चात वृहदतम जनसंख्या वाला दूसरा देश हैं। भारत की कुल जनसंख्या लगभग 130 करोड़ (जनगणना 2014) है जिनमें से अधिकतर नदी घाटियों के उपजाऊ बेसिनों में निवास करती हैं। देश की लगभग 45.5% जनसंख्या सतलज और गंगा के मैदानी भाग में पायी जाती हैं। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल सघन बसे क्षेत्र हैं। गंगा–ब्रह्मपुत्र के डेल्टाई भाग में दक्षिणी एशिया की सघनतम जनसंख्या पायी जाती है। तटीय मैदान में लगभग 25% जनसंख्या निवास करती है। पश्चिमी तटवर्ती प्रदेश में मालाबार तट में धान, नारियल, चाय, काफी, मसाले की कृषि तथा कागज, एल्युमीनियम एवं मत्स्य उद्योग तथा अनेक कृषि पर आधारित उद्योगो के कारण घनी जनसंख्या है। पठारी प्रदेश की उच्च भूमियों में कुल जनसंख्या का 5% भाग रहता है। भारत में औद्योगिक नगरों में बन्दरगाहों के आस–पास नदियों की घाटियों में समतल मैदोनों में और खनिज पदार्थों के पाये जाने वाले स्थानों में जहाँ जीवन–यापन और आवागमन के मार्गों की समुचित सुविधाएँ प्राप्त है, जनसंख्या का घनत्व अधिक पाया जाता है। भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण तथा कृषि पर आधारित है। इस विशाल देश में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण में तेजी से वृद्धि हो रही है। फलस्वरूप महानगरों व कोयला क्षेत्रों की जनसंख्या में भारी वृद्धि हो रही है। नये औद्योगिक केन्द्र भी तेजी से बढ़ रहे हैं जिससे जनसंख्या का पुनर्वतरण हो रहा है।

10.5.1 ब– मध्यम जनसंख्या वाले क्षेत्र–

पश्चिमी एशिया और दक्षिणी–पूर्वी एशिया के देशों में जनसंख्या का वितरण मध्यम प्रकार का है। पश्चिमी एशिया में टर्की, इजराइल, जार्डन आदि देशों में वर्षा की कमी तथा भूमि के कम उपजाऊ होने के कारण अधिक लोगों के भरण–पोषण की क्षमता नहीं है और औद्योगीकरण का भी लगभग अभाव है। दक्षिणी–पूर्वी एशिया में म्यांमार (बर्मा), थाईलैण्ड, मलेशिया, इन्डोनेशिया आदि देशों में जनसंख्या अधिकतर नदी घाटियों में रहती हैं। अधिकांश भाग पहाड़ी–पठारी होने के कारण कृषि योग्य नहीं है और अधिक जनसंख्या के पोषण के लिए सक्षम नहीं है। एशियाई रूस के पश्चिमी भाग में जहाँ स्टेपी घास के मैदान है, उपजाऊ चरजोनम मिट्टी पायी जाती है। यहाँ कृषि के साथ ही औद्योगिक विकास में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। अतः इस प्रदेश में जनसंख्या का वितरण पूर्वी भागों की तुलना में अधिक है।

10.5.1 स– अल्प जनसंख्या वाले क्षेत्रः–

दक्षिण–पश्चिम एशिया और मध्य एशिया के शुष्क प्रदेशों में जनसंख्या निवास बहुत कम है। अरब, थार, तुर्किस्तान, आदि मरुस्थलों के मध्य स्थित मरुधानों में भी थोडी जनसंख्या का विस्तार मिलता है। तेल उत्पादक केन्द्रों के निकट नगरों का विकास हुआ है। केवल दक्षिणी पश्चिमीभाग को छोड़कर शेष एशियाई रूस में जनसंख्या का निवास अत्यल्प है। एशिया के अनेक दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र जनविहीन भी हैं।

10.5.2– यूरोप में जनसंख्या का वितरणः–यूरोप में जनसंख्या का जमाव मुख्यतः 40^0 और 60^0 उत्तरी अक्षांशों के बीच पाया जाता है। इन अक्षांशो के उत्तर में जनसंख्या बहुत ही बिखरी हुई मिलेती है। केवल नार्वे, स्वीडन और फिनलैण्ड के समुद्र तटीय भाग इसके अपवाद स्वरूपहैं। यूरोप की रूस सहित जनसंख्या लगभग 74 करोड़ है। **1. भूमि का गहन उपयोग 2. मिश्रित खेती का उपयोग और 3. गेहूँ जौ तथा शाक सब्जियों** की प्रचुर पैदावार होना। यूरोप के महाद्वीपीय भाग में अत्यन्त घनी जनसंख्या की एक पेटी है जो उत्तरी सागर और इंगलिश चैनल से रूस से नीपर नदी के दक्षिणी भाग तक बराबर चली गयी हैं। इसमें यूरोप की लगभग 25% से अधिक जनसंख्या रहती है। इस जनसंख्या की घनी पेटी के मध्य में होकर 50^0 उत्तरी अक्षांश रेखा जाती है। अतः यह अक्षांश **यूरोपीय अक्षांश की धुरी (Pivot of Europians Population)** भी कहा जाता है। जनसंख्या की यह पेटी है जो पश्चिम में अधिक चौड़ी तथा पूर्व में संकरी होती गयी है। यूरोप जनसंख्या का प्रमुख आधार निर्माण उद्योग व्यापार यातायात और सेवाएं हैं। इसीलिए यूरोप की सभ्यता को औद्योगिक सभ्यता और संस्कृति कही जाती है। यहाँ निर्माण उद्योगों के साथ–साथ अन्तर्राष्ट्रीय और अन्तर्महाद्वीपीय व्यापार भी बड़े पैमाने पर होता है।

यूरोप के प्रमुख देशों में जनसंख्या का घनत्व (2020)

देश	जनसंख्या (मि0 में)	घनत्व (व्यक्ति/किमी^{2})
बेल्जियम	11.56	357
डेनमार्क	5.83	128
फ्रांस	67.42	115
जर्मनी	83.24	230
इटली	59.55	200
पोलैण्ड	37.95	122
रोमानिया	19.28	90
स्पेन	47.35	92
ग्रेट ब्रिटेन	67.21	255
नीदरलैण्ड	17.44	491

Source: word development indicators database, word bank, 1 july 2021

यूरोप के भूमध्य सागरीय क्षेत्र में घनी जनसंख्या के केन्द्र छोटे–छोटे डेल्टाओं के मैदान और नदियो की घाटियों में पाये जाते हैं किन्तु घनी जनसंख्या इन केन्द्र में खेती ही लोगों का मुख्य उद्योग है। यहाँ ग्रामीण और नगरीय दोनों ही प्रकार की जनसंख्या का मिश्रण मिलता है। वैलेशिया और पुर्तगाल के तटीय प्रदेशो में (जहाँ गेंहूँ अधिक पैदा होता है) जनसंख्या घनी है। इसके विपरीत पहाड़ियों, दलदली भागों तथा मरुभूमियों में जैसे आल्पस पर्वत, प्रिपेट दलदल और स्पेन के शुष्क, मैसेटा के पठार तथा कैस्पियन के तट में जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि 40^0 अक्षांश रेखा जो एशिया में घनी जनसंख्या की उत्तरी सीमा बनाती है वहीं

यूरोप में उसकी दक्षिणी सीमा निर्धारित करती है।

यूरोप में जनसंख्या वितरण

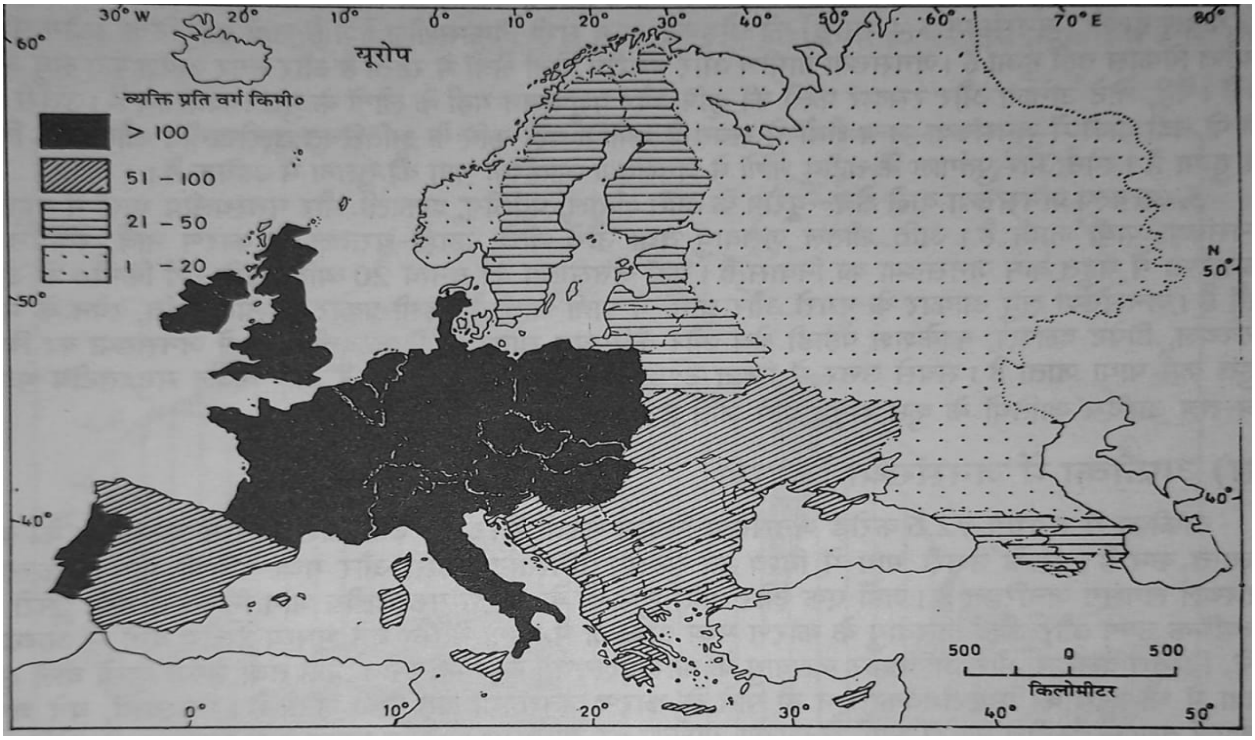

चित्रः 10.5

कोयला उद्योगों की जननी है। यह न केवल शक्ति का साधन है, वरन् कई उद्योगों में एक महत्वपूर्ण कच्चा माल है। इसलिए यूरोप के उद्योग धन्धे कोयला क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। इसी तरह नदियां जलशक्ति, जलापूर्ति तथा यातायात के साधन के रूप में महत्वपूर्ण हैं। इसलिए जनसंख्या का केन्द्रीकरण नदी घाटियों में अधिक देखा जाता है। सीन, राइन, डेन्यूब, एल्ब, नीपर आदि नदियों की घाटियों में सघन जनसंख्या के क्षेत्र हैं।

10.5.3– अफ्रीका में जनसंख्या वितरण :–

अफ्रीका में लगभग 114 करोड़ जनसंख्या निवास करती है। इसके अधिकांश भाग में जनसंख्या का बसाव अत्यन्त कम है। इसके उत्तरी भाग में विश्व का वृहदतम रेगिस्तान सहारा और मध्य दक्षिणी भाग में कालाहारी मरुस्थल लगभग जनरिक्त है। जहाँ एक और अति शुष्कता के कारण मरुस्थलीय भाग निर्जन है वहीं दूसरी और अत्यधिक ऊष्ण और आर्द्र जलवायु के कारण मध्य अफ्रीका में कांगों बेसिन घने भूमध्यरेखीय वनों से आच्छादित होने, विस्तृत दलदल और अधिकतर जलवायु के कारण लगभग जनविहीन है। मरुस्थलों, घने जंगलों, दलदलों तथा ऊंचे नीचे पहाड़ी भागों के कारण अफ्रीका का अधिकांश भू–भाग मानव द्वारा दीर्घ काल से उपेक्षित रहा है। यही कारण है कि अफ्रीका महाद्वीप का औसत जनसंख्या घनत्व लगभग 25 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 है।

अफ्रीका की जनसंख्या (114) करोड़ कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में सीमित हें। अधिकांश जनसंख्या समुद्र तटीय भागों तथा नदी घाटियों में पायी जाती हैं। यहाँ अपेक्षाकृत 5 प्रमुख क्षेत्र हैं जिनका विवरण इस प्रकार है–

अफ्रीका में जनसंख्या वितरण

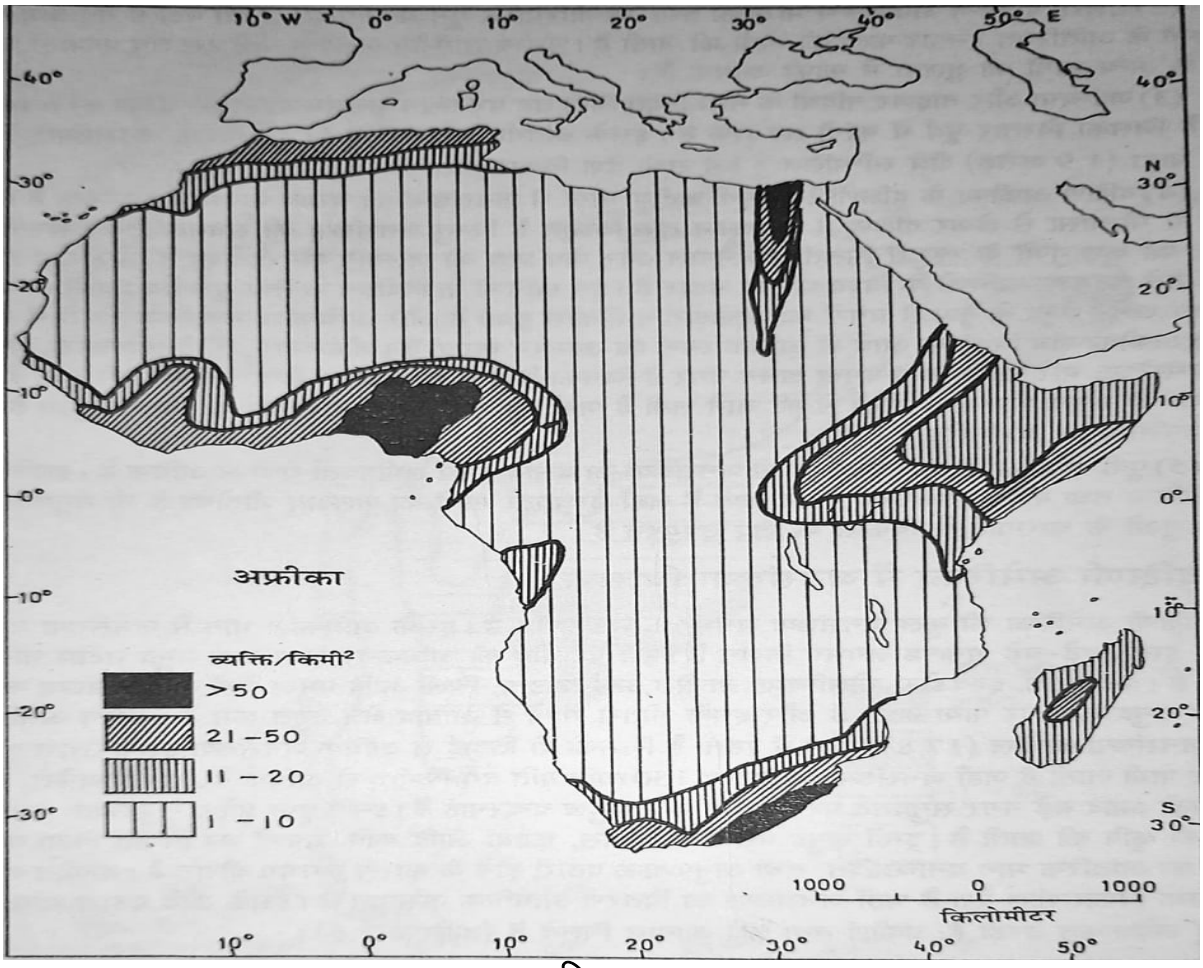

चित्रः10.6

1. मिश्र (8.8 करोड़) में नील नदी की घाटी अफ्रीका महाद्वीप का सबसे घना बसा हुआ है। उत्तरी मिश्र की जनवायु भूमध्यसागरीय और दक्षिण भाग की जलवायु शुष्क रेगिस्तानी है। सिंचाई करके घाटी में कपास, मोटे अनाज, दालों आदि का उत्पादन किया जाता है। इसीलिए मिश्र को **'नील नदी का वरदान'** भी कहा जाता है। यहाँ की जनसंख्या का औसत घनत्व 82 व्यक्ति वर्ग प्रति किमी0 से कम है। अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण है।

2. जाम्बिया और नाइजीरिया नदियों के मध्य स्थित गिनी तट पर सघन जनसंख्या वाला अफ्रीका का सबसे विस्तृत क्षेत्र है। इसका विस्तार पूर्व में कांगो तट तक है। ये सभी देश विकासशील और कृषि प्रधान हैं।

3. उत्तरी– पश्चिमी अफ्रीका में मोरक्को तथा अल्जीरिया के भूमध्यसागरीय संकरी पेटी में गेंहूँ तथा कुछ मोटे अनाजों के अतिरिक्त रसदार फलों की खेती की जाती है। इस लघु प्रदेश में जनसंख्या देश के अन्य भागों की तुलना में काफी अधिक है।

4. पूर्वी अफ्रीका के उच्च प्रदेश में भी जनसंख्या का बसाव अन्य समीपवर्ती क्षेत्रों से अधिक है। इसके अन्तर्गत अबीसीनिया तथा कीनिया के उच्च पठार आते हैं जहाँ की जलवायु शीतोष्ण है जो मनुष्यों के रहने और पशुओं के चारागाह के विकास के लिए उपयुक्त हैं।

5. दक्षिण अफ्रीका के दक्षिणी और पूर्व तटीय भागों में जनसंख्या का बसाव अपेक्षाकृत अधिक है। यह क्षेत्र उत्तर में मोम्बासा से लेकर दक्षिण में केपटाउन तक विस्तृत है किन्तु जनसंख्या की सघनता सर्वत्र समान नहीं है बल्कि यह कुछ पुंजों के रूप में मिलती हैं। दक्षिण अफ्रीका संघ विश्व के आधे से अधिक स्वर्ण का उत्पादन करता हैं। जोहन्सवर्ग, औडेनडाल्सस, लिडनेवर्ग, पिलग्रिम्सरेस्ट, बार बर्टन आदि प्रमुख नगर हैं। जिनका विकास स्वर्ण खनन केन्द्र के रूप में ही हुआ है।

10.5.4– दक्षिणी अमेरिका में जनसंख्या वितरणः–

दक्षिणी अमेरिका की कुल जनसंख्या लगभग 41 करोड़ है। इसके अधिकांश भाग में जनसंख्या बहुत कम है और इसके बड़े–बड़े भूखण्ड लगभग निर्जन हैं। यहाँ की अधिकतर जनसंख्या समुद्र तटीय भागों में ही केन्द्रित है। वेनेजुएला, इन्वेडोर, कोलम्बिया, ब्राजील, अर्जेन्टीना, चिली आदि प्रमुख देशों की जनसंख्या का जमाव मुख्यतः समुद्र तटों पर पाया जाता है और भीतरी भागों में आबाद क्षेत्र कम हैं। इस महाद्वीप की आधी जनसंख्या ब्राजील (20.3 करोड़) में रहती है जिसकी दो तिहाई से अधिक की जनसंख्या इसके उत्तरी तथा पूर्वी तटों पर पायी जाती है जहाँ जनसंख्या घनत्व 150 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी से अधिक है। रियोडिजेनेरो, सैन्टोस, साओपालो आदि बड़े नगर समुद्रतट पर स्थित है और प्रमुख बन्दरगाह है। इनके पृष्ठ प्रदेश में मुख्यतः कपास और कहवा की कृषि की जाती है। अन्यत्र जनसंख्या मुख्यतः ऊंचे भागों में ही मिलती है जहाँ की जलवायु निम्न प्रदेशों की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यप्रद है और जहाँ तांबा, चांदी, शोरा आदि खनिज मिलते हैं। इसी प्रकार कोलम्बिया में 2200 मी0 की ऊँचाई पर केला और गन्ना तथा इससे अधिक ऊँचाई पर गेहूँ, जौ और आलू पैदा होता है। पूर्वी समुद्री तट पर ब्यूनसआयर्स और मांटीबीडियो समुद्र पत्तनों पर जनसंख्या का केन्द्रीकरण अधिक हुआ है और मुख्यतः रसदार फलों, गेहूँ, मोटे अनाजों आदि की कृषि मध्य चिली के तटीय भाग में रूमसागरीय जलवायु में मिलेती है। ब्राजील में विस्तृत अमेजन बेसिन वर्षा प्रचुर, सघन वनों से ढ़के होने और उष्णार्द्र मे स्थित पेंटागोनिया मरुस्थल भी लगभग जनरिक्त है।

10.5.5– उत्तरी अमेरिका में जनसंख्या वितरण :–

उत्तरी अमेरिका की लगभग 60% जनसंख्या अटलांटिक महासागर के तट पर बसी है। संयुक्त राज्य में जनसंख्या के विचार से दो स्पष्ट भाग हैं। एक संयुक्त राज्य का पूर्वी तटीय भाग और दूसरा संयुक्त राज्य का पश्चिमी भाग। पहले में औद्योगिक दृष्टि से चरम विकास हो जाने के कारण जनसंख्या अधिक घनी है, लेकिन दूसरे भाग में यह काफी कम है। भीतरी भाग में धरातल ऊबड़–खाबड़ है और वर्षा भी कम होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा की 85% से अधिक जनसंख्या 100^0पश्चिमीदेशान्तर के पूर्वी भाग में पायी जाती है। इस प्रदेश में सघन जनसंख्या के चार प्रमुख क्षेत्र हैं–

1. अटलांटिक तटवर्ती राज्य (Atlantic sea board states)–जो दक्षिणी मेन से मैरीलैण्ड तक फैला हुआ है।
2. ऊपरी ओहियो घाटी प्रदेश–पिट्सवर्ग–यंगसटाउन क्षेत्र।
3. झील प्रदेश–मिशीगन, ईरी और ओन्टारियो के तटवर्ती भाग।
4. कनाडा में सेन्टलारेन्स नदी घाटी क्षेत्र।

उत्तरी अमेरिका में जनसंख्या वितरण

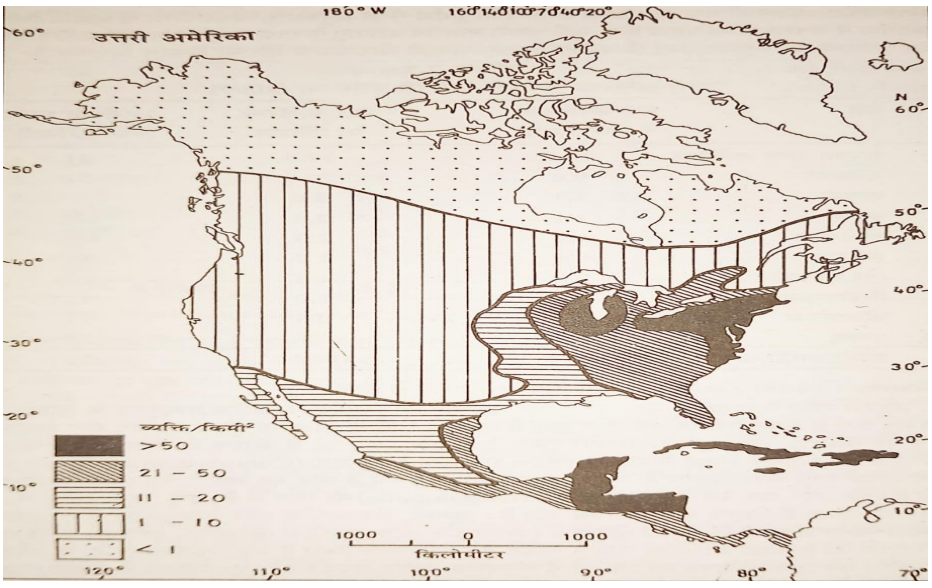

चित्रः 10.7

यूरोपीय जनसमूह की तरह अमेरिकन जनसमूह भी उद्योग प्रधान है। अटलांटिक तटवर्ती क्षेत्र में बोस्टन व न्यूयार्क से फिलाडेल्फिया तक सघन जनसंख्या पायी जाती हैं। इस क्षेत्र में वाणिज्य, निर्माण उद्योग, समुद्री परिवहन तथा नगरीकरण का विकास हुआ हैं। ऊपरी ओहियो घाटी में लोहा व इस्पात उद्योग केन्द्रित है। पेंसिलवानिया तथा उत्तरी अप्लेशियन क्षेत्र के कोयला भण्डारों पर यहाँ के उद्योग आश्रित हैं। यहाँ के प्रमुख नगर पिट्सवर्ग तथा यंग्सटाउन हैं।

झील प्रदेश में सघन जनसंख्या के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं–

1. मिशिगन झील के दक्षिणी तटवर्ती भाग में शिकागो, मेरी मिलवाकी औद्योगिक केन्द्र स्थित हैं। यहाँ लौह इस्पात कृषि यन्त्र, छपाई तथा मांस उद्योग विकसित हैं।

2. ईरी झील का पश्चिमी और दक्षिणी तट जिसमें डेट्रायट टोलैडो, क्लीवलैण्ड, बफैलो आदि कई बड़े औद्योगिक केन्द्र हैं। यहाँ लौह इस्पात, मोटर, विद्युत सामग्री तथा कागज उद्योग आदि विकसित हैं।

3. ऑण्टारियो झील का दक्षिणी सिरा और मोहक घाटी के क्षेत्र जिसमेंराचेस्टड साईराक्यूज और रौनेकटाडी शामिल है।

कनाडा में सेंटलारेंस नदी घाटी में ओंटारियो झील से मुहोने तक प्रदेश पूर्वी उत्तरी अमेरिका का चौथा सघन बसा क्षेत्र है। कनाडा के ओटावा, माट्रियल, टोरंटो, क्यूबेक आदि बड़े नगर इसी भाग में स्थित हैं। अलास्का तथा उत्तरी कनाडा अधिक शीतल जलवायु विशाल दलदलों और झीलों के कारण प्रायः जनशून्य है। मैक्सिको की जनसंख्या अधिकतर वहां के मध्यवर्ती पठार पर रहती है। वहां पर सामान्य वर्षा और मृदुल तापमान रहता है। अन्य भागों में अपेक्षाकृत बहुत कम जनसंख्या निवास करती है।

10.5.6– आस्ट्रेलिया में जनसंख्या वितरणः– अन्य दक्षिणी महाद्वीपों (अफ्रीका और द0 अमेरिका) की भांति आस्ट्रेलिया में भी जनसंख्या का संक्रेन्द्रण महासागर के तटवर्ती कुछ विशिष्टक्षेत्रों में ही हुआ है। पश्चिमी तथा आन्तरिक आस्ट्रेलिया काविस्तृत भूभाग शुष्क रेगिस्तानी है जिसके कारण निर्जनप्राय है। ऑस्ट्रेलिया की कुल जनसंख्या (2.35 करोड़) का अधिकांश दक्षिणी पूर्वी तटीय भाग में है जहॉ जनसंख्या का घनत्व 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 से अधिक है जबकि आस्ट्रेलिया का औसत जनसंख्या घनत्व 3 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 से कम है। आस्ट्रेलिया में लगभग 1.5 करोड़ जनसंख्या श्वेत (गोरी) जातियों की हैजिनका रहन–सहन तथा जीवन स्तर अमेरिका तथा यूरोपीय विकसित देशों की भांति उच्च है। अतः आस्ट्रेलिया विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आता है।

ओशेनिया में प्रमुख देशों की जनसंख्या (2014)

देश	जनसंख्या (मिलियन)	ओशेनिया का %	जनसंख्या घनत्व (व्यक्ति / km^2)
आस्ट्रेलिया	2395	60.3	3
पापुआ न्यूगिनी	7.6	19.5	16
न्यूजीलैण्ड	4.3	11.0	16
ओशेनिया	39		5

Source: word population data sheet 2014

आस्ट्रेलिया में जनसंख्या वितरण

चित्र 10.8

आस्ट्रेलिया महाद्वीप की 86% जनसंख्या नगरीय तथा 14 प्रतिशत ग्रामीण है। नगरीकरण में हाइपर सेफालिज्म (Hypercephalism) की प्रवृत्ति यहाँ भी देखी जाती है। सिडनी, मेलबर्न, एडीलेड, कैनबरा, ब्रिस्बेन तथा पर्थ नगरों में देश की लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती हैं। भेड़ पालन पशुपालन गेहूँ की व्यापारिक कृषि में बहुत कम जनसंख्या नियोजित है। इस महाद्वीप में सघन जनसंख्या वाले क्षेत्र निम्नलिखित हैं–

1. न्यू साउथ वेल्स का अधिकतर भाग।
2. विक्टोरिया राज्य का अधिकतर राज्य।
3. दक्षिणी आस्ट्रेलिया का दक्षिणी भाग।
4. क्वींसलैण्ड का दक्षिणी–पूर्वी भाग।
5. पश्चिमी आस्ट्रेलिया का दक्षिणी–पूर्वी भाग।

मरे–डार्लिंग बेसिन के डाउन्स घास के मैदान वाले भाग में व्यापारिक अन्न उत्पादक कृषि की जाती है जिसकी मुख्य फसल गेंहूँ है। यहाँ बड़े–बड़े कृषि फार्मों पर आधुनिक कृषि यंत्रों की सहायता से कृषि की जाती है। इसमें मानव श्रम कम लगता है किन्तु उत्पादन अधिक होता है। पूर्वी तटवर्ती भाग समतल है जो ग्रेट डिवाइडिंग रेंज और समुद्र तट के मध्य संकरी पेटी के रूप में स्थित है। इस भाग में कुछ उपयुक्त स्थलों पर छोटे नगरों तथा पत्तनों का विकास हुआ।

10.6– जनसंख्या का घनत्व (Density of population)

किसी देश के जनसंख्या तथा उसके जनसंख्या के पारस्परिक अनुपात को जनसंख्या का घनत्व कहते हैं। किसी देश में जनसंख्या का घनत्व वहां के प्राकृतिक संसाधनों और आर्थिक विकास की अवस्था पर निर्भर करता है। जनसंख्या के घनत्व को समझने के लिए उसका भेद समझना आवश्यक है–

10.6.1. गणितीय या सामान्य या वास्तविक या आंकिक घनत्व (Arthemetic or Real Density) :-

किसी प्रदेश या भूक्षेत्र के कुल क्षेत्रफल और उसकी कुल जनसंख्या का अनुपात गणितीय घनत्व कहलाता है। इससे प्रति इकाई क्षेत्रफल (प्रति वर्ग किमी0) में रहने वाले व्यक्तियों की औसत संख्या का बोध होता है। वास्तव में अंक गणितीय घनत्व के मनुष्य और भूमि का साधारण अनुपात (Simple man – land ratio) होता है। गणितीय घनत्व के परिकलन का सूत्र निम्नलिखित है–

गणितीय घनत्व = देश की सम्पूर्ण जनसंख्या/देश का सम्पूर्ण क्षेत्रफल

विश्व के प्रमुख देशों के गणितीय घनत्व (2000)

क्र0 सं0	देश	घनत्व प्रति वर्ग किमी0
01	भारत	342
02	चीन	135
03	जापान	337
04	पाकिस्तान	179
05	बांग्लादेश	997
06	डेनमार्क	126
07	संयुक्त राज्य अमेरिका	31
08	कनाडा	3
09	ब्राजील	20
10	अर्जेंटीना	14
11	चिली	20
12	ग्रेट ब्रिटेन	247
13	नीदरलैण्ड	469
14	जर्मनी	235
15	फ्रांस	107
16	इटली	196
17	पोलैण्ड	127
18	बेल्जियम	312
19	मिस्र	64
20	दक्षिण अफ्रीका	35
21	इशियोपिया	64
22	नाइजीरिया	139

23	आस्ट्रेलिया	**2**
24	सोवियत रूस	**9**
25	**विश्व**	**47**

स्रोत– जनसंख्या भूगोल, डॉ0 पृथ्वीश नाग।

चूँकि जनसंख्या सम्बन्धी आकड़े प्रशासकीय इकाइयों के अनुसार एकत्र किए जाते हैं इसलिए गणितीय घनत्वके मानचित्र केवल जनसंख्या एवं क्षेत्रफल के सम्बन्धों को प्रकट करते हैं। वे जनसंख्या के गुणात्मक विशेषताओं को अथवा क्षेत्रफल की विशिष्टताओं को स्पष्ट नहीं करते। छोटी प्रशासकीय इकाइयों के अनुसार गणितीय घनत्व अध्ययन के लिए अधिक उपयोगी होता है। प्रशासकीय इकाई जितनी छोटी होगी, मानचित्र उतना ही यथार्थ होगा।

10.6.2– कायिक घनत्व (Phisiyological Density):-

यह गणितीय घनत्व का परिमार्जित रूप है जो अपेक्षाकृत अधिक सार्थक तथा उपयोगी है। इसकी गणना के लिए कुल क्षेत्रफल के स्थान पर केवल कुल कृषि योग्य भूमि को ही सम्मिलित किया जाता है। यह घनत्व यह प्रकट करता है कि किसी प्रदेश की प्रति निवास के लिए अनुपयुक्त भूमियों को कुल क्षेत्रफल से निकाल देने के परिणामस्वरूप कायिक घनत्व अधिक सही तथ्य प्रस्तुत करता है। कायिक घनत्व की गणना निम्नलिखित सूत्र से की जा सकती है–

कायिक घनत्व = प्रदेश की कुल जनसंख्या/प्रदेश की कुलकृषि योग्य भूमि

कायिक घनत्व के आकलन हेतु देश की कुल जनसंख्या को उसके कुल कृषि योग्य भूमि से विभाजित किया जााता है। इस प्रकार इस घनत्व से यह ज्ञात होता है कि विशिष्ट देश या प्रदेश में प्रति इकाई कृषि भूमि पर मनुष्यों की औसत संख्या कितनी है।

10.6.3– कृषि घनत्व (Agricultural Density):-

इस घनत्व को ज्ञात करने के लिए कृषि में संलग्न जनसंख्या को कृषित क्षेत्र से भाग दिया जाता है। अतः यह कृषि पर कृषक जनसंख्या के भार को प्रकट करता है। इसे ज्ञात करने कासूत्र निम्न प्रकार है–

कृषि घनत्व = कृषि में संलग्न जनसंख्या/कृषित क्षेत्र

कृषि में संलग्न जनसंख्या में कृषक, कृषि श्रमिक तथा उसके परिवार सम्मिलित होते हैं। कृषि घनत्व भी छोटे इकाइयों में ज्ञात करना अधिक उपयुक्त होता है। इससे विभिन्न भागों के घनत्व में अन्तर स्पष्ट हो जाते हैं। भारत सरीखे कृषि प्रधान देशों के लिए कृषि घनत्व का अध्ययन उपयोगी होता है।

10.6.4– पौष्टिक घनत्व (Nutritional Density):-

पौष्टिक घनत्व यह प्रदर्शित करता है कि किसी प्रदेश में खाद्यान्नों के अन्तर्गत प्रयुक्त प्रति इकाई भूमि पर मनुष्यों की औसत संख्या कितनी है? इस प्रकार यह साधारणतः खाद्यान्न भूमि और कुल जनसंख्या का अनुपात होता है। पोषण घनत्व का आकलन निम्नलिखित सूत्र से किया जा सकता है–

पौष्टिक घनत्व = प्रदेश की कुल जनसंख्या /प्रदेश की प्रमुख खाद्यान्न अथवा कुल खाद्यान्न भूमि

उच्च कायिक तथा पौष्टिक घनत्व इस बात का द्योतक है कि जनसंख्या को अनाज तथा खाद्य पदार्थ के लिए दूसरे देशों पर निर्भर रहना पड़ता है क्योकि किसी देश के कुल कृषि भूमि की वहल क्षमता सीमित होती है। यह घनत्व खाद्यान्न फसलों में आत्मनिर्भर अथवा आयात पर निर्भरता को स्पष्ट करता है।

10.6.5– आर्थिक घनत्व (Economic Density):-

जिन देशों में कृषि भूमि कम है अथवा कृषि भूमि पर बहुत कम जनसंख्या आश्रित होती है और अधिकांश जनसंख्या उद्योग, व्यापार, परिवहन सेवाओं तथा अन्य विविध कार्यों से आय अर्जित करती है वहां भूमि पर

जनसंख्या के वास्तविक दबाव को कायिक अथवा कृषि घनत्व द्वारा नहीं प्रकट किया जा सकता। ऐसे देशों के लिए आर्थिक घनत्व सबसे अधिक है। आर्थिक घनत्व सम्पूर्ण जनसंख्या और सभी संसाधनों के मूल्यों (किसी एक इकाई में) का अनुपात होता है। इसकी गणना निम्नलिखित सूत्र से की जा सकती है–

आर्थिक घनत्व = देश की कुल जनसंख्या/देश की सम्पूर्ण संसाधनों का मूल्य (एकल इकाई में)

इस सूत्र के अनुसार यदि किसी प्रदेश में देश की 2 प्रतिशत जनसंख्या पायी जाती है और वहां देश के कुल उत्पादन का 3 प्रतिशत प्राप्त होता है, तब उस क्षेत्र का आर्थिक घनत्व 2/3 x 100 = 66.67 आयेगा।

10.7– जनसंख्या घनत्व का विश्व वितरण (Word distribution of Density of population)

विश्व में जनसंख्या का वितरण जिस प्रकार असमान है, उसी प्रकार जनसंख्या के घनत्व का वितरण भी असमान है। जिस स्थान पर जनसंख्या आधिक है उस स्थान पर जनसंख्या का घनत्व भी अधिक है, अतः जनसंख्या के विश्व वितरण तथा घनत्व के वितरण में घनिष्ठ सम्बन्ध होता हैं। वितरण की दृष्टि से विश्व को चार घनत्व क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता हैं–

10.7.1–उच्च घनत्व वाला क्षेत्र (Areas of Highest Density):- स्वास्थ्यकर जलवायु, उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त वर्षा अथवा सिंचाई की सुविधा, खनिज पदार्थों और कोयले की प्रचुरता के कारण इनमें अधिकतम घनत्व पाया जाता है। इस पेटी में अग्र क्षेत्र सम्मिलित किए जाते हैं।

विश्व में जनसंख्या घनत्व का वितरण चित्रः 10.9

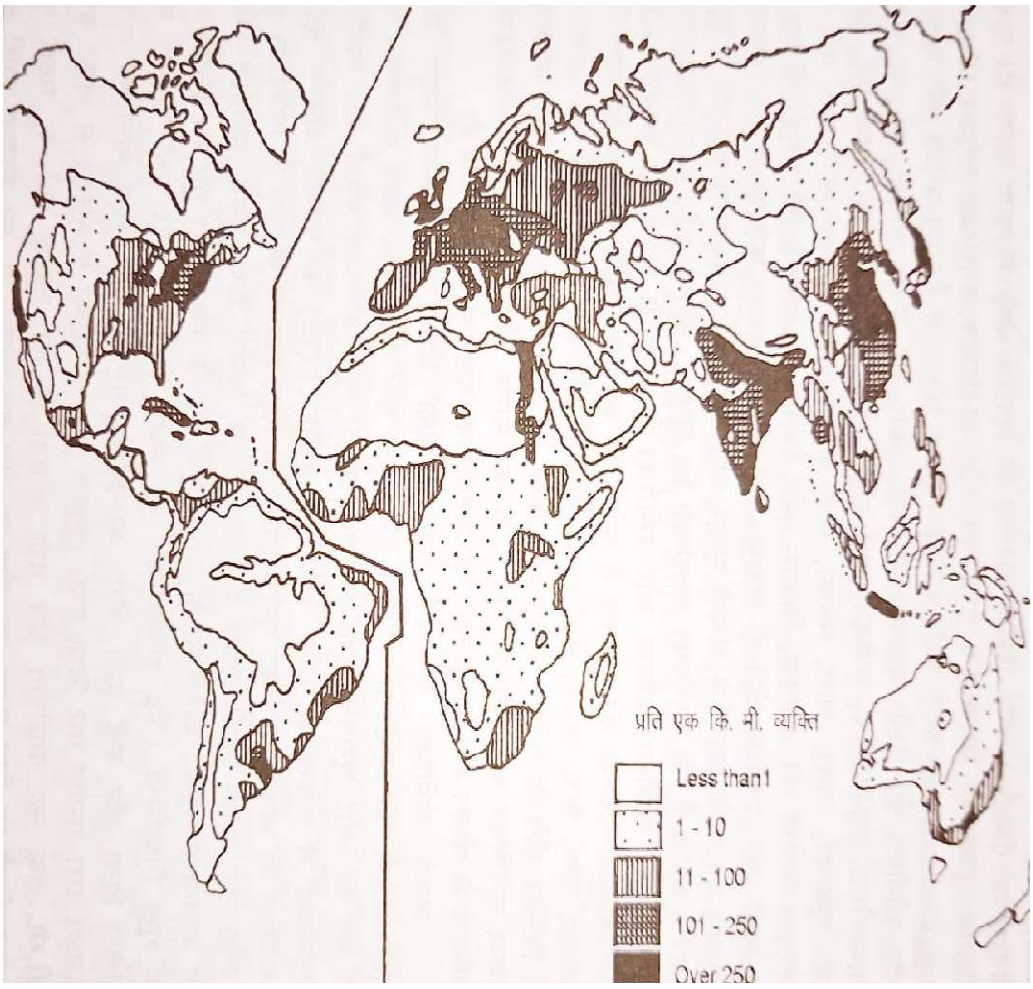

चित्रः 10.9

अ.) एशिया में दक्षिणी–पूर्वी देश :– जिनमें चीन, भारत, जापान, बांग्लादेश, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया मुख्य है– जहाँ यांग्टिसीक्यांग, सिक्यांग नदियों की घाटी, गंगा का डेल्टा, गंगा–सतलज और सिन्धु का मैदान, मीनाम–मीकांग के मैदान तथा जापान और भारत के समुद्र तटीय मैदान में घनी जनसंख्या मिलती है।

ब.) पश्चिम यूरोप में औद्योगिक क्षेत्र :–यह मेखला फ्रांस, बेल्जियम, नीदरलैण्ड, डेनमार्क और जर्मनी के औद्योगिक क्षेत्र में होती हुई दक्षिणी रूस तक फैली है। पो नदी की घटी इसी श्रेणी में आते हैं।

स.) संयुक्त राज्य अमेरिका के औद्योगिक क्षेत्र :–यह अटलांटिक महासागर के तटीय राज्यों में दक्षिणी न्यू इंग्लैण्ड से लेकर मैरीलैण्ड तथा बड़ी झीलों के निचले भाग–औद्योगिक विकास के कारण अधिकतम घनत्व वाले क्षेत्र हैं।

इस क्षेत्र में कुछ ऐसे विशिष्ट क्षेत्र भी हैं, जहाँ घनत्व औसत से भी अधिक पाया जाता है– जापान के समुद्र तटीय भाग, चीन के यांग्टिसीयांग डेल्टा और गंगा नदी का डेन्टा में 600–1250 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 पाए जाते हैं।

10.7.2– मध्यम या साधारण घनत्व वाले क्षेत्र (Areas of modrate or intermediate Density):- ये क्षेत्र सामान्यतः उपर्युक्त क्षेत्र के सीमान्त भागों में पाए जाते है। इनमें वार्षिक वर्षा 50 सेमी0 से 100 सेमी0 तक होती है, ग्रीष्मकालीन तापमान कृषि के उपयुक्त रहते हैं तथा वर्षा का अभाव सिंचाई के द्वारा पूरा किया जाता है। यूरोप, अफ्रीका और एशिया के देशों में खेती का ढंग पुराना, अवैज्ञानिक एवं बिखरा हुआ होता है, जबकि अमेरिका, आस्ट्रेलिया और रूस में यन्त्रों द्वारा कृषि की जाती है। इस प्रकार के क्षेत्र निम्न है।

1. पूर्वी यूरोप के अधिकांश देश (स्पेन, बाल्कन प्रायद्वीप के देश)
2. अमेरिका में 87^0 पश्चिम और 100^0 पष्चिम देशान्तरों के बीच के संयुक्त राज्य के क्षेत्र
3. मध्य अमेरिका
4. एशिया में म्यांमार, मलेशिया, कम्बोडिया, उत्तरी कोरिया, भारत के मध्यवर्ती भाग
5. अफ्रीका के अल्जीरिया, नाइजीरिया
6. दक्षिणी अमेरिका में मध्य चिली और ब्राजील का तट।

10.7.3– निम्न घनत्व वाले क्षेत्र (Areas of low Density):- जिस क्षेत्र में 10 से 50 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 में निवास करते हैं, इसके अन्तर्गत आते हैं, इन भागों में पशुचारण, अस्थाई कृषि, मरुद्यान कृषि आदि की प्रवृत्ति विद्यमान रहती है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत सूडान, इक्वेडोर, कोलम्बिया, पश्चिमीसाइबेरियाा, मैडागास्कर आदि आते हैं।

10.7.4– प्रायः जनविहीन क्षेत्र (Almost Empty or UnhabitedAreas):-

इसके अन्तर्गत अत्यधिक ठण्डे भाग (ध्रुवीय तथा उपध्रुवीय क्षेत्र, उत्तरी कनाडा, साइबेरिया का टुण्ड्रा प्रदेश) मरूस्थल तथा सूखे घास के कम वर्षा वाले क्षेत्र (सहारा, कालाहारी, अरब, थार और महान आस्ट्रेलिया मरूस्थल) उच्च पर्वतीय भाग (मध्य एशिया एवं मंगोलिया के क्षेत्र) तथा उष्ण कटिबन्धीय वन क्षेत्र आते हैं, जो सभी मानवता से प्रायः शून्य हैं। इनमें शिकार करना मछली पकड़ना, समूहदार पशुओं को पकड़ना, भोजन एकत्रित करना तथा पशुचारण क्रियाएं की जाती हैं। धरातल का लगभग 70 प्रतिशत भाग ऐसा है।

10.8 सारांश

भूगोल के अध्ययन में मानव का विशिष्टतम स्थान है। पृथ्वी पर मनुष्य कहां और कितनी संख्या में पाये जाते हैं? इसका विवरण जनसंख्या वितरण के अध्ययन द्वारा प्रकट होता है। जनसंख्या का यह स्थानिक एवं असमान वितरण मानव भूगोल का एक महत्वपूर्ण विषय है जिसका अध्ययन भूगोल सहित सभी सामाजिक विज्ञानों में आवश्यक है। थोड़े से क्षेत्र अत्यधिक घने बसे हैं तथा अधिकांश क्षेत्रों में जनसंख्या विरल पायी जाती है। महाद्वीपीय वितरण के अनुसार एशिया में संसार की लगभग दो तिहाई जनसंख्या का निवास है जबकि अंटार्कटिका महाद्वीप तथा ग्रीनलैण्ड के हिमाच्छादित भाग आज भी जन विहीन है। जनसंख्या का विश्व वितरण क्षेत्रफल और जीवन–यापन के उपलब्ध संसाधनों के आनुपातिक अध्ययन द्वारा सही अर्थों में समझा जा सकता है। किसी प्रदेश में निवास करने वाली मानव संख्या और प्रदेश विशेष के क्षेत्रफल के पारस्परिक अनुपात से जनसंख्या का घनत्व

मालूम होता है। यह ऐसा पैरामीटर है जिसके द्वारा मनुष्य और भूमि के निरन्तर परिवर्तनशील सम्बन्धों की सूचना मिलती है। जनसंख्या के द्वारा ही प्रदेश की उन्नति और भावी विकास हेतु आयोजन तैयार की जाती है। प्रत्येक प्रदेश में कितनी जनसंख्या वहां उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है, इससे ही प्रदेश का आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास निर्धारण होता है। अतः ऐसे देश के भावी विकास के लिए जनसंख्या घनत्व को जानना आवश्यक है। जहाँ पर जनसंख्या अधिक होती है वहाँ जनसंख्या का घनत्व भी अधिक होता है और जहाँ पर जनसंख्या कम पायी जाती है वहां जनसंख्या का घनत्व भी कम पाया जाता है। दोनों में ही इतनी अधिक साम्यता एवं सहगम्ता पायी जाती है। इस प्रकार इस इकाई के माध्यम से स्पष्ट किया गया कि विश्व में जनसंख्या का वितरण कैसा है जिसमें अनेक आधार अपनाए गये। सामान्य रूप से देखा जाये तो जनसंख्या वितरण अति सघन, सघन एवं विरल जनसंख्या वितरण तथा जनशून्य आदि रूपों में पायी जाती है।

10.9 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– जनसंख्या वितरण से आप क्या समझते हैं, समझाते हुए इसके स्वरूप का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 02– विश्व में जनसंख्या के वर्तमान वितरण एवं घनत्व का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 03– "पृथ्वी पर जनसंख्या का वितरण असमान है" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 04– एशिया में जनसंख्या वितरण प्रतिरूप का सचित्र वर्णन कीजिए–

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– जनसंख्या के कायिक घनत्व एवं कृषि घनत्व में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 02– यूरोप में जनसंख्या के वितरण को समझाइए।

प्रश्न 03– कायिक घनत्व क्या है? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 04– विश्व के प्रमुख जनसंख्या पुंजों को संक्षेप में समझाइए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

प्रश्न 01– विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है।–

अ– भारत **ब–** चीन

स– जापान **द–** रूस

प्रश्न 02– विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या धारित करने वाला महाद्वीप है–

अ– एशिया **ब–** यूरोप

स– उत्तरी अमेरिका **द–** उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 03– निम्नलिखित में से कौन सा महाद्वीप जनशून्य माना जाता है–

अ– एशिया **ब–** यूरोप

स– अन्टार्कटिका **स–** द0 अमेरिका

प्रश्न 04– निम्न में से किस देश की जनसंख्या का घनत्व सर्वाधिक है–

अ– चीन **ब–**भारत

स– द0 कोरिया **स–**बांग्लादेश

प्रश्न 05– विश्व प्रमुख जनसंख्या पुंज के अन्तर्गत नहीं आता है

अ– द0, द0पू0 एशिया **ब–**उ0 पू0 यूरोप

स– उ0पू0 उत्तर अमेरिका **स–** अफ्रीका

10.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, माजिद हुसैन चतुर्थ संस्करण, सत्यम अपार्टमेंट, सेक्टर 3 जवाहर नगर जयपुर 302004,

02– मानव भूगोल, डॉ0 काशीनाथ सिंह, डॉ0 जगदीश सिंह, ज्ञानोदय प्रकाशन 234 दाऊदपुर, गोरखपुर।

03– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए0 यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद।

04– मानव भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, डॉ दीपक माहेश्वरी, साहित्य भवन पब्लिकेशन, हास्पिटल रोड आगरा, 282003,

05– मानव भूगोल, डॉ मोहम्मद हारुन, विजडम पब्लिकेशन, मैदागिन वाराणसी।

इकाई–11जनसंख्या के असमान वितरण के कारक, प्राकृतिक तत्व, संसाधन आधार, प्रव्रजन–आव्रजन, राजनीतिक, पूर्वी एशिया, द0पू0 एशिया

11.1– प्रस्तावना

11.2– उद्देश्य

11.3– विश्व की जनसंख्या का वितरण

11.4– जनसंख्या के असमान वितरण को प्रभावित करने वाले कारक

11.4.1– भौतिक या प्राकृतिक तत्व

11.4.1 अ– जलवायु

11.4.1 ब– भू–विन्यास

11.4.1 स– मिट्टी

11.4.1 द– जलाशय या जलापूर्ति

11.4.2– संसाधन आधार

11.4.3– प्रवसन या प्रवास (प्रव्रजन–आव्रजन)

11.4.4– राजनीतिक कारक

11.4.5– पूर्वी एशिया

11.4.6– द0पू0 एशिया

11.5– सारांश

11.6– बोध प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

मानव भूगोल जो कि भूगोल की एक प्रमुख शाखा है। इसमें मानव से सम्बन्धित समस्त तत्वों का अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल को केन्द्रीय विषय मानकर समाज (मानव निर्मित सांस्कृतिक भू दृश्य) का अध्ययन है। मनुष्य अपने जन्म काल से लेकर आज अपने विकास के चरमोत्कर्ष तक नित्य परिवर्तनशील रहा है। मानव भूगोल के अध्ययन में मानव सदैव केन्द्रीय भूमिका में रहा है व भौगोलिक तत्व, संसाधन और कारक तीनों है। मानव अपने क्रियाकलापों द्वारा प्रकृति प्रदत्त भौतिक संसाधन (भू दृश्य) में परिवर्तन करके अपने अनुकूल सांस्कृतिक भू दृश्य का निर्माण करता है। वस्तुतः मानव भूगोल में मानव एवं उसकी संख्या केन्द्रीय तत्व है, जनसंख्या मानव संस्कृति एवं अन्य मानव सम्बन्धी विशेषताएं सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है। **जिन्मरमैन** की एक युक्ति उल्लेखनीय है –

"**संसाधन होते नहीं बनते हैं।**" समीचीन हैं क्योंकि बिना मानव के पृथ्वी संसाधन विहीन हो जायेगी। मानव ही वह घटक है जो प्राकृतिक घटकों को उपयोग में लाकर संसाधन का निर्माण करता है। यही मानव प्राकृतिक तत्वों का संसाधन के रूप में उपयोग एवं उपभोग करता है, तथा प्राकृतिक वातावरण को परिवर्तित करता है। विभिन्न प्रकार की अनुकूल पर्यावरणीय दशाएंमानव समुदाय को अपनी और आकृष्ट करती हैं, जिससे कुछ क्षेत्रों (मानवोनुकूल) में जनबसाव अधिक हो जाता है। जबकि प्रतिकूल पर्यावरणीय दशाओं में मानव जनबसाव विरल हो जाता है परन्तु इस संसार में कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जो जन बसाव के लिए प्रतिकूल दशाएं रखते हैं। ऐसे क्षेत्रों में जनबसाव न्यून होता है, तथा कुछ क्षेत्र तो जनरिक्त प्रदेशों के अन्तर्गत ही आते हैं जहाँ पर जनसमुदाय का अभाव पाया जाता है। विश्व में जनसंख्या का वितरण असमान रूप में पाया जाता है जिसके अनेकों कारण होते हैं। प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का विषद विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

11.2 उद्देश्य Objectives

प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या में असमान वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है जिसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. छात्र/छात्राओं को जनसंख्या के असमान वितरण प्रतिरूप को स्पष्ट रूप में प्रदर्शित कर इससे अवगत कराना।
2. जनसंख्या के असमान वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों को स्पष्ट करना।
3. जनसंख्या के अतिवृद्धि में सहायक तत्वों को इंगित करना।
4. छात्र/छात्राएं इस इकाई के अध्ययन से विश्व में जनसंख्या के वास्तविक वितरण से अवगत हो सकेंगे।
5. अतिसघन क्षेत्रों में जनसंख्या नियोजन तथा विरल एवं जनरिक्त क्षेत्रो में जनसंख्या के वितरण को समान करने के लिए योजना बनाने के लिए छात्र/छात्राओं को प्रेरित करना।
6. जनसंख्या के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा कर बसने एवं वहां के जनभार को बढ़ाने या हानियों से विद्यार्थियों को अवगत कराना एवं इससे बचाव के लिए नीति निर्धारण हेतु विद्यार्थियों को प्रेरित करना।

11.3 विश्व की जनसंख्या का वितरण World Popution Distribution

धरातल पर जनसंख्या वितरण आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक परिवर्तित होता रहा है। यद्यपि जनसंख्या परिवर्तन की गति एवं दिशा देश–काल एवं परिस्थितियों के अनुसार भिन्न–भिन्न रही हैं। धरातलपर जनसंख्या का वितरण अत्यन्त विषम है जहाँ तक कुछ प्रदेश क्षेत्र ऐसे है जहाँ पर जन बसाव अत्यन्त विरल है और वहां पर लोगों को बसाव के लिए प्रेरित किया जा रहा है। विश्व की जनसंख्या का वितरण प्रतिरूप विविधता से भरा पड़ा है। विश्व की 60% जनसंख्या 500 मीटर से कम ऊँचाई वाले भागों में निवास करती है। विश्व की लगभग 50% जनसंख्या 5% से भी कम भू भाग पर निवास करती है। एक आंकड़े के अनुसार एशिया महाद्वीप में 20^0 से 40^0 अक्षांश के मध्य विश्व की लगभग 50 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या निवास करती है और यूरोप में 40^0 से 60^0 अक्षांश के मध्य विश्व की लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है तथा 60^0 के उत्तर में विश्व की मात्र 1 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

विभिन्न महाद्वीपों में जनसंख्या घनत्व एवं कुल जनसंख्या
(महाद्वीपवार)

क्षेत्र	जनसंख्या 2019	भू–क्षेत्र(वर्ग किमी0)	जनसंख्या (व्यक्ति वर्ग किमी0)	विश्व में भाग (%में)
एशिया	460137198	31033131	148	59.7
अफ्रीकाा	1308064195	29648481	44	17
यूरोप	747182751	22134900	34	9.7
द0 अमेरिका एवं करेबियन	648120957	20139378	32	8.4
उ0 अमेरिका	366600964	18651660	20	4.8
ओशेनिया	42128035	8486460	5	0.5
स्रोत–www.wordmeters.info				

सारणी सं–11.1

उपरोक्त सारणी क्र0 11.1 से स्पष्ट है कि विश्व का सर्वाधिक जनघनत्व एशिया के अन्तर्गत आता है जबकि सबसे न्यूनतम जनघनत्व ओशेनिया महाद्वीप में पाया जाता है। धरातल पर जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले अनेक भौतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, जनांकिकी, एवं सामाजिक कारकों में उसके क्षेत्रीय वितरण को अधिकतम असमान बना दिया है। जनसंख्या वितरण को अनेक आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है एवं देखा जाता है।

(अ) जनबसाव वाले क्षेत्र (Ecumene)

(ब) जनरिक्त प्रदेश (Non-ecumen)

ऐसे क्षेत्र जहाँ मानव जनसंख्या के बसाव के अनुकूल भौगोलिक विशेषताएं पायी जाती हैं, बसाव वाले क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। विश्व में चार प्रदेश ऐसे हैं जिनमें जनसंख्या का औसत घनत्व 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी से अधिक है। इन चारों क्षेत्रों को निम्न रूप में देखा जा सकता है–

01– एशिया का पूर्वी भाग :– इसके अन्तर्गत निम्नलिखित देश की जनसंख्या को सम्मिलित किया जाता है– चीन, जापान, उ0 एवं द0 कोरिया और ताइवान।

02– एशिया का दक्षिणी भाग :– यह भूभाग जनसंख्या के बसाव के दृष्टिकोंण से अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है इस भाग के प्रमुख देश भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, मालदीव एवं नेपाल हैं। भारत इस प्रदेश का प्रमुख देश है जो जनसंख्या के दृष्टिकोण से चीन के बाद द्वितीय स्थान रखता है।

03– यूरोप का उ0–पश्चिमी भाग :– विश्व का यह भूभाग अपनी विशेष प्राकृतिक बनावट रखता है।यहां की जलवायु एवं अन्य भौतिक दशाएं मानव निवास के लिए अनुकूल हैं। इसके अन्तर्गत प्रमुख देश यूनाइटेड किंगडम, फ्रांस, जर्मनी, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, लक्जमबर्ग, आयरलैण्ड, डेनमार्क, स्पेन, पुर्तगाल और इटली आते हैं।

04– अमेरिका का उ0–पूर्वी भाग– सम्पूर्ण अमेरिका महाद्वीप जो कि अपने क्षेत्रफल एवं सागरीय तट के लिए जाना जाता है। अमेरिका महाद्वीप के उत्तर में पूर्वी तट में जनसंख्या का जमाव आधिक पाया जाता है। इसमें उ0पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका एवं दक्षिण पूर्वी कनाडा आते है।

घनी जनसंख्या के ये सभी प्रदेश उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है और इस प्रकार बसे हुए हैं कि विश्व की लगभग 75 % से अधिक जनसंख्या कर्क रेखा एवं 70^0 उत्तरी अक्षांश के मध्य पायी जाती है। इनमें दो देश ऐसे हैं जहाँ पूर्व के काल से ही अधिक जनसंख्या का निवास पाया जाता है। ये दो क्षेत्र चीन एवं भारतीय उपमहाद्वीप हैं। यूरोप कम प्राचीन है और संयुक्त राज्य अमेरिका केवल पिछले दो सौ वर्षों में ही सघन आबाद हो सका है। जापान, हांगकांग, दक्षिण कोरिया, मकाओ, ताइवान तथा सिंगापुर को छोड़कर पूर्वी एशिया और दक्षिण एशिया के देशों की जनसंख्या मुख्यतः गाँवों में निवास करती है। इन देशों के निवासी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्यों में संलग्न हैं यहाँ के लोग मुख्यतः प्राथमिक क्रियाओं–कृषि, पशुपालन, खनन, मत्स्य और खनन आदि में संलग्न हैं।

इसके विपरीत ऐसे क्षेत्र जो जनसंख्या के बसाव के लिए प्रतिकूल दशाएं रखते हैं। वहां जनबसाव नहीं या अतिन्यून (क्योंकि विश्व का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र है जो मानव की पहुँच से दूर हैं) जनरिक्त क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। पूर्व के कथन से स्पष्ट है कि पृथ्वी तल के 70% से अधिक भूभाग में विरल जनसंख्या पायी जाती है। सामान्यतः उष्ण, शीत, शुष्क और पर्वतीय क्षेत्रों में विरल अथवा बिखरी हुई जनसंख्या पायी जाती है। विरल जनसंख्या के वितरण को देखने से स्पष्ट होता है कि विश्व में अनेक भाग ऐसे हैं जहाँ विरल जनसंख्या पायी जाती है यथा–

01– विश्व के मरुस्थलीय भाग एवं शुष्क भूमि

02– विश्व के उच्च अक्षांशीय अथवा हिमीकृत भाग

03– पर्वतीय क्षेत्र

04– भूमध्य रेखीय घने वन

विश्व जनसंख्या के वितरण को निम्नलिखित सारणी द्वारा आसानी से समझा जा सकता है–

विश्व जनसंख्या का वितरण

जन बसाव वाले क्षेत्र	जनरिक्त प्रदेश
➤ लगभग सम्पूर्ण एशिया (पूर्वी, दक्षिणीपूर्वी, एवं दक्षिणी एशिया)	➤अतिशीत प्रदेश
➤ यूरोप का उ0पश्चिमी भाग	➤ शुष्क मरुस्थलीय प्रदेश उष्ण मरुस्थल षीतोष्ण मरुस्थल
➤ उत्तरी–पूर्वी अमेरिका	➤ विषुवत रेखीय अति आर्द्र प्रदेश
➤ दक्षिणी अमेरिका	➤ उच्च पर्वतीय प्रदेश

सारणी सं–11.2

विश्व जनसंख्या का मानचित्र (कार्टोग्राम)

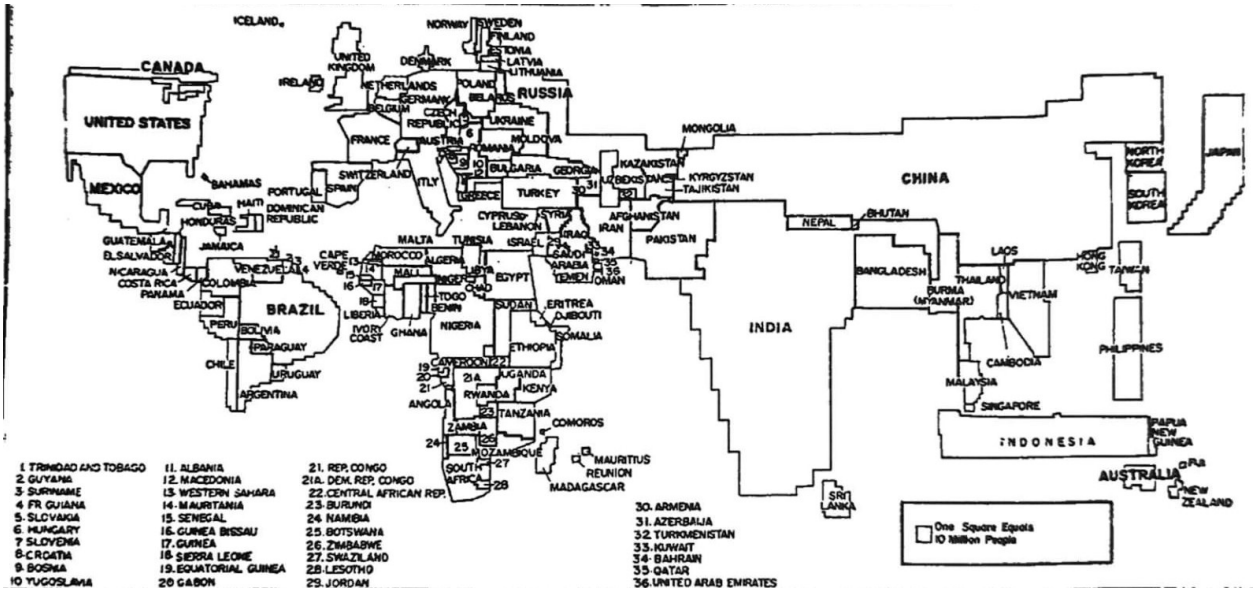

चित्र सं–11.1

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि अतिशुष्क एवं अतिआर्द्ध प्रदेश जनरिक्त प्रदेश के अन्तर्गत आते हैं। जबकि एशिया के सभी भाग में (उत्तरी एशिया को छोड़कर) चाहे वह पूर्वी एशिया हो, दक्षिणी या द0पूर्वी एशिया में घना जन बसाव पाया जाता हैं। इसके साथ–साथ उ0 पश्चिमी यूरोप तथा उत्तर पूर्वी, उत्तर अमेरिका तथा दक्षिणी अमेरिका में जनसंख्या का बसाव सघन रूप में विस्तृत है। इस प्रकार जनबसाव के अति मध्यम या न्यून होने के अनेकों कारण है। जिनका विवरण अग्रलिखित है।

11.4 जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक :–

उपरोक्त पक्तियों से स्पष्ट है कि विश्व में जनसंख्या का बसाव असमान रूप में पाया जाता है। लेकिन आवश्यक है कि इस असमान जनसंख्या वितरण के पीछे किन–किन तत्वों की भूमिका है, का पता लगाना। जैसा

कि पूर्ण वर्णित है कि जनसंख्या के बसाव के लिए कुछ प्रमुख अनुकूल दशाओं की आवश्यकता होती है। जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों को निम्नलिखित बिन्दुओं के रूप में देखा जा सकता है –

1. भौतिक या प्राकृतिक तत्व
2. संसाधन आधार
3. प्रवसन या प्रवास (प्रव्रजन–आव्रजन)
4. राजनीतिक कारक

उपरोक्त तत्वों को विशेषीकृत रूप में स्पष्ट किया जा सकता है जैसे–

11.4.1– भौतिक या प्राकृतिक तत्वः–

जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों में भौतिक कारक सबसे महत्वपूर्ण हैं क्योंकि भौतिक दशाएं किसी भी जीव की वृद्धि एवं विकास के लिए आधारी तत्व कहा जाता है –

"भौतिक तत्व या प्राकृतिक तत्व ऐसे रंगमंच है जिसपर जीवन रूपी नाटक खेले जाते हैं।"

जनसंख्या के असमान वितरण के कारकों के अन्तर्गत भौतिक कारकों में जलवायु, भू–विन्यास, मिट्टी, जलापूर्ति,वनस्पति तथा जीव–जन्तुओं को प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। इनका विवरण निम्नलिखित है–

11.4.1 अ– जलवायु :– जनसंख्या के असमान वितरण के कारकों में जलवायु सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है।

> **स्मरणीय :–**
>
> **किसी स्थान विशेष की दीर्घकालीन पर्यावरणीय दशाओं को जलवायु कहते हैं।**

सैम्पुल, प्रियर्सन आदि विद्वानों ने जनसंख्या वितरण पर जलवायु के प्रभाव को स्वीकार किया है। जलवायु के विभिन्न घटक यथा–तापमान, आर्द्रता, वर्षा एवं प्रचलित पवनें अलग–अलग रूपों में मानव जीवन को प्रभावित करती हैं। जलवायु के जटिल प्रभाव के कारण ही धरातल के 50 प्रतिशत भूभाग पर प्रतिवर्ग एक किलोमीटर से कम मनुष्य निवास करते हैं। किसी प्रदेश की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु मानव को अपनी और आकर्षित करती है। प्रसिद्ध विद्वान एल्सवर्ग हटिंगटन नें विभिन्न कार्यों के लिए उचित तापमान की बात की है जिसमें बताया कि मानसिक कार्य के लिए 3^0 से 5^0 सेन्टीग्रेड और शारीरिक श्रम के लिए 15^0 से 18^0 सेग्रे तापमान उचित होता है। सदैव ही शीतोष्ण जलवायु एवं मानसूनी जलवायु जनसंख्या को आकर्षित करती रही है। इस जगत में सर्वाधिक जनसंख्या का संकेन्द्रण मानसूनी जलवायु वाले क्षेत्र, चीन, जापान, वियतनाम, भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, आदि में पाया जाता है। मानसूनी जलवायु के मैदानी भागो में जनबसाव सर्वाधिक पाया जाता है। इन प्रदेशो में कृषीय उत्पादन बड़ी सरलता से किया जाता है। 'बागानी कृषि' इस प्रदेश की विशेषता है।

> **स्मरणीय–**
>
> 'बागानी कृषि ऐसी कृषि होती है जो पूरी तरह से वर्षा पर आधारित होती है।'

इन प्रदेशों में पर्याप्त मानसूनी वर्षा से कृषि कार्य आसानी से सम्पन्न हो जाता है। इस प्रदेश में से कम वर्ष में दो फसलें उत्पन्न की जाती हैं। परिणाम स्वरूप खाद्य पदार्थो की उपलब्धता बनी रहती है। शीतोष्ण जलवायु भी मानव समुदाय के केन्द्रीयकरण के अनुकूल होते हैं। पश्चिमीयूरोपीयदेश तथा उत्तरी अमेरिका के उत्तर पूर्वी भाग इस जलवायु प्रदेश में आते हैं। इसी कारण इन प्रदेशो में जनसंख्या का बसाव अधिक मात्रा में पाया जाता है, सामान्यतः 4^0 से 21^0 सेग्रे0 तापमान जनसंख्या के केन्द्रण के लिए अनुकूल होते हैं। यही कारण है कि अतिन्यून तापमान और सदैव हिमाच्छादन के कारण ग्रीनलैण्ड और अंर्टाकटिका लगभग 150 लाख वर्ग किमी0 क्षेत्र जनरिक्त पड़ा हुआ है, तथा समस्त टुण्ड्रा प्रदेश अति शीतलता के कारण जनरिक्त पड़ा हुआ है।

तापमान के साथ आर्द्रता और वर्षा भी जनसंख्या के बसाव को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। अत्यधिक वर्षा भी जनसंख्या वितरण को प्रभावित करते हैं। विषुवत रेखीय प्रदेश में उच्च तापमानके साथ–साथ अत्यधिक

वर्षा प्राप्त होते हैं, जैसे अमेजन, कांगो, बेसिन, पश्चिमी द्वीप समूह आदि। इन प्रदेशों में वनावरण के कारण विभिन्न प्रकार के विषैले जीव–जन्तु, उमस भरा मौसम तथा मिट्टी की लीचिंग की समस्या के कारण मानव जीवन दुष्कर हो जाता है। इसीलिए इस प्रदेश में जन बसाव कम पाया जाता है, इसी प्रकार कम षुष्कता भी मानव निवास के लिए प्रतिकूल दशाएं उत्पन्न करती हैं। अफ्रीका का सहारा एवं कालाहारी मरुस्थल, एशिया में अरब एवं थार और गोबी मरुस्थल तथा दक्षिणी अमेरिका का अटाकामा, दक्षिणी पश्चिमी आस्ट्रेलिया का मरुस्थल अपने गर्म तापमान एवं शुष्क जलवायु के कारण जनसंख्या के केन्द्रण के लिए अनुपयुक्त समझे जाते हैं। यहां का जनसंख्या घनत्व लगभग 2 व्यक्ति वर्ग किमी0 पाया जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है जलवायु किसी प्रदेश के जनबसाव के लिए आधारी घटक का कार्य करता है, और जलवायु उपयुक्त है तो जनसंख्या का घनत्व अधिक होगा और यदि जलवायु अनुपयुक्त है तो जनसंख्या का बसाव कम होगा।

11.4.1 ब– भूविन्यासः–

जनसंख्या के असमान वितरण के कारकों में भू–विन्यास या स्थल रूप प्रमुख स्थान रखते हैं, धरातल विभिन्नताओं से भरा है। यहाँ पर विभिन्न प्रकार के स्थल रूपों (समस्त धरातल पर पर्वत 12 प्रतिशत, पहाड़ियां 14 प्रतिशत, पठार 33 प्रतिशत और मैदान 41 प्रतिशत) का विस्तार पाया जाता है। विश्व की जनसंख्या का यदि अध्ययन किया जाये तो यह बात स्पष्ट होती है कि विश्व की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या सागर तल से 500 मीटर की ऊँचाई पर मैदानी भागों में निवास करती है, क्योंकि मैदानी भागो में कृषि, उद्योग, व्यापार, परिवहन, अवस्थापनात्मक सुविधाओं सम्बन्धी क्रिया कलाप सम्पन्न करने में दुरुहता का सामना करना पड़ता है। विश्व की अनेक सभ्यताओं का उद्भव विभिन्न नदियों नील, दजला, सिंधु–गंगा, यांग्ठी सिम्यांग तथा क्वांटो द्वारा निर्मित मैदानी भागों में हुआ। इन्ही प्रदेशों में सघन आबादी का बसाव पाया जाता है तथा जनबसाव होने के कारण विभिन्न प्रकार के औद्योगिक एवं व्यापारिक प्रतिष्ठान यहीं पर स्थित है। भारत में सतलुज, गंगा, और ब्रह्मपुत्र नदियों के मैदान और पाकिस्तान के सिंधु नदी का मैदान अधिकतम जनभार लिए हुए हैं। मैदानी भागों की अपेक्षा ऊबड़–खाबड़ तथा बीहड़ क्षेत्रों में कृषि भूमि का अभाव एवं उत्पन्न पदार्थों के संरक्षण एवं भण्डार तथा परिवहन की कठिनाई भरा है तथा खर्चीला होता है। इसीलिए इन क्षेत्रों में जनसंख्या का बसाव न्यूनतम मिलता है।

कुमारी सैम्पुल के अनुसार–

"विश्व के कुछ खनिज संसाधनों से सम्पन्न भागों और उष्ण प्रदेशों को छोड़कर सर्वत्र ही एक ऊॅचाई के बाद, भोजन एवं जनसंख्या के घनत्व दोनों में ही ऊॅचाई के साथ–साथ कमी हो जाती है।"

जनसंख्या के दृष्टिकोण से सबसे बड़ा देश चीन की अधिकांश जनसंख्या उसके पूर्वी भाग में ह्वांगहो, यांग्टिसिम्यांग नदियों के मैदानों में संकेन्द्रित है जबकि पश्चिम में स्थित पहाड़ी एवं पठारी भाग न्यून जनसंख्या धारित करते हैं। अधिक ऊँचे पर्वतों पर निवास करना इसलिए भी कठिन होता है क्योंकि वहाँ पर कृषि, आवागमन सुविधाओं के अभाव के साथ श्वास सम्बन्धी बीमारियां भी हो जाती हैं। अधिक ऊॅचाई पर वायुदाब एवं आक्सीजन में कमी होने लगती है यही कारण है कि विश्व के लगभग सभी ऊँचे पर्वतीय प्रदेशो में प्रायः जनाभाव पाया जाता है।

11.4.1 स– मिट्टी–

किसी भी प्रदेश में जनसंख्या के केन्द्रीकरण के लिए उपजाऊ मिट्टी एक आवश्यकतत्व है। भूमि की उर्वरता जनसंख्या को अपनी और आकर्षित करती है। मानव जीवन तीन प्रमुख आवश्यकताओं भोजन, वस्त्र और आवास में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से मिट्टी का योगदान है, क्योंकि कृषि कार्य उपजाऊ मिट्टी में ही सम्भव है जिस क्षेत्र की मिट्टी उपजाऊ है, वहां पर जनसंख्या का केन्द्रीकरण अधिक होता है जबकि अनुपजाऊ प्रदेश में जनबसाव कम होता है, जैसे पॉडजोलिक मृदा एवं लैटेराइट मृदा में कृषि उत्पादन करना एक कठिन कार्य हैं जबकि इसके इतर पठारी लावा प्रदेश की काली मिट्टी में वनस्पति के सड़े–गले अंश तथा लौहांश मिलते हैं तथा नमी ग्रहण क्षमता भी होती है और ऐसी मिट्टियाँ भारत, इथोपिया, ब्राजील, उ0प0सं0रा0 अमेरिका तथा ऊष्ण एवं शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदोनों में मिलेती है और विश्व की नदी घाटियों में जलोढ़ मिट्टी (जल धारण क्षमता से युक्त) में उर्वरता प्रचुर मात्रा में पायी जाती है। इस प्रकार की मिट्टियां कृषि के लिए उपयुक्त होतीं हैं और जनसंख्या को अपनी और आकर्षित करती हैं। भारत का उदाहरण समीचीन होगा क्योंकि भारत विविधताओं का देश है। यहां उर्वर जलोढ़ मृदा वाले मैदानी भागों में जनसंख्या अधिक है जबकि दक्षिण के आन्तरिक पठारी भागों

में उपजाऊ लाल, पीली, एवं लैटेराइट मृदा क्षेत्रों में जनसंख्या विरल है।

भोजन के अलावा वस्त्र के लिए कहीं कृषि योग्य भूमि की आवश्यकता है क्योंकि कपास, रेशमकीट, सनई आदि कृषि से ही प्राप्त होते हैं। आज मानव तकनीकी एवं यान्त्रिक दृष्टि से समान हो रहा है तथा अपने कौशल से रासायनिक उर्वरकों के प्रभाव से अनुर्वर मृदा उर्वर बनाने की क्षमता रखता है और अनुर्वर क्षेत्रों में जनबसाव को प्रेरित कर रहा है, और जनभार को बढ़ा रहा है।

11.4.1 द– जलाशय (जलापूर्ति)–

जनसंख्या एवं जलापूर्ति में घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। यह जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की आपूर्ति से इस धरातल का पारिस्थितिकी तंत्र संचालित होता है और यह जल हमें विभिन्न रूपों में प्राप्त होता है। मानव के दैनिक क्रियाकलाप, कृषि, व्यापार, उद्योग, घरेलू कार्यों के लिए जल की आवश्यकता होती है। वर्षा जल की आवश्यकता होती है। वर्षा का जल धरातल पर सरिताओं, नदियों, नहरों, नालों, झीलों, तालाबों आदि रूप में मिलता है और जन ही वह तत्व है जो धरातल पर अनेक प्रकार के भू दृश्यों का निर्माण करता है। नदियों द्वारा निर्मित विभिन्न प्रकार की घाटियों में मानव निवास करता है। नदियों द्वारा निर्मित विभिन्न मैदानों में विश्व की प्रमुख सभ्यताओं का जन्म हुआ है। आज विश्व का अधिकतम व्यापार जलमार्गों द्वारा सम्पन्न होता है इसलिए विश्व के प्रमुख समुद्र तट जनसंख्या के पुंज के रूप में उभरे हैं और बड़े पत्तनों का विकास किए हैं न्यूयार्क, न्यूफाउण्डलैण्ड, सैन्फ्रासिस्को, लॉस एन्जिल्स, लन्दन, टोकियो, मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता, सिंगापुर, संघाई इसके प्रमुख उदाहरण हैं। एक बात यह भी देखने योग्य है कि विश्व के प्रमुख शहर एवं और उद्योग नदियों के किनारे बसे हैं जैसे–लंदन–टेम्स, शंघाई–यांग्तीसिक्यांग, बेलग्रेड–डेन्यूब, कराची–सिंधु, इलाहाबाद–गंगा यमुना संगम, उज्जैन–क्षिप्रा, टोकियो–अराकुआ, आदि। इसके विपरीत शुष्क प्रदेश जहाँ जल और जलाशय का अभाव पाया जाता है जनसंख्या के निवास के लिए अनुपयुक्त माना जाता है। वेकर महोदय के अनुसार विश्व में लगभग 1.5 करोड़ वर्गमील भूमि खेती के लिए अनुपयुक्त है क्योंकि यह भाग शुष्क है। विश्व के विभिन्न मरुस्थल जैसे गोबी, अटाकामा, सहारा, कालाहारी, कुछ विश्व प्रसिद्ध पठारी भाग आदि। इनमें कहीं–कहीं छिटपुट जलाशय की उपलब्धता पायी जाती है तो वहां पर जनसंख्या का निवास भी देखा जाता है। एक अनुमान के अनुसार विश्व की लगभग 9 प्रतिशत भूमि मरुभूमि के अन्तर्गत है जबकि यहां पर विश्व 4.2 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

11.4.2– संसाधन आधार–

मानव का उद्भव जब इस धरातल पर हुआ तो वह एक प्राकृतिक प्राणी के रूप में था लेकिन धीरे–धीरे मानव की क्षमताओं में परिवर्तन होता गया। प्रारम्भिक काल मानव की सोंच भोजन की प्राप्ति तक ही सीमित हुआ करती थी। समय बदलता गया जहाँ पत्थरों के हथियार बनते थे, वहां विभिन्न प्रकार की धातुओं का प्रयोग होने लगा। मोहनजोदड़ो सभ्यता के समय सोने और तांबे का प्रयोग होता था लेकिन लोहे की खोज नहीं हो पायी थी। धीरे–धीरे मानव को खनिज संसाधनों चाहे वे धातु हों या ऊर्जा के संसाधन का ज्ञान हुआ और मानव ने इनके महत्व को समझा तथा ये क्षेत्र मानव आकर्षण के केन्द्र बन गये। आज सम्पूर्ण विश्व विकास के पथ पर इतना आगे जा चुका है कि उसने विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक तत्वों को अपने उपयोग में लाने लगा है। जिम्मरमैन के अनुसार **"संसाधान होते नहीं बनते हैं"** तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक तत्वों का जब मानव अपने जीवन में उपयोग में (साधन के रूप में) लाता है तो वह संसाधन बन जाता है और इन्हीं संसाधनों को अपने साधन के रूप में प्रयोग कर अपनी सभ्यता को आगे बढ़ाता है। संसाधनों को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है, जैसे उपयोग के आधार पर संसाधनों को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है –

(अ)– नव्य करणीय संसाधन

(ब)– अनव्य करणीय संसाधन

मानवीय उपयोग के आधार पर संसाधनों को तीन प्रकार में बांटा गया है।

(अ)– भोज्य पदार्थ–» वनस्पति, कृषि उत्पादन, खनिज नमक आदि

(ब)– कच्चे माल–» कृषि उत्पाद, जीव–जन्तु उत्पाद

(स)–शक्ति संसाधन–» लकड़ी, कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस, जल, वायु

इसके अलावा खनिज संसाधन जैसे लोहा, तांबा, जस्ता, शीशा, अभ्रक आदि संसाधनों के विभिन्न उदाहरण

हैं। ये संसाधन मानव जीवन रूपी गाड़ी के पहिए हैं। जो मानव सभ्यता को गति प्रदान कर रहे हैं। औद्योगिक क्रांति ने संसाधनों की मांग को बहुत अधिक बढ़ा दिया है। प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता मानव जनसंख्या को अपनी और आकर्षित करती है क्योंकि देखा गया है कि उपलब्ध संसाधनों के समीप उद्योगों की स्थापना की जाती है तथा इन उद्योगों से निकलने वाले उत्पादों से सम्बन्धित छोटे–छोटे लघु उद्योग उन क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं। उ0 अमेरिका की महान झील क्षेत्र के चतुर्दिक उद्योगों का एक पुंज सा स्थापित हो गया है। इसके संचालन के लिए विभिन्न प्रकार तकनीकी प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित मजदूरों की आवश्यकता होती है, इस प्रकार ये प्रदेश जनसंख्या को अपनी और आकर्षित करता है। यूरोप में जनसंख्या का घनिष्ठ सम्बन्ध संसाधनों से जुड़ा है। रूर, डोनेल्स, साइलेसिया, सार और लॉरेल में कोयले की खदानें स्थित हैं। इसी के चलते इन प्रदेशों में सघन आबादी है। भारत में संसाधनों की प्रचुरता पायी जाती है, चाहे वे प्राकृतिक संसाधन हों या मानवीय।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि संसाधनों की उपलब्धता जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करती है। विश्व के कुछ ऐसे क्षेत्र ऐसे हैं जो जलवायुगत दुरूहता रखते हैं, लेकिन इसके बाद भी जनसंख्या का संकेन्द्रण इन प्रदेशों में देखने को मिलता है, जैसे आस्ट्रेलिया के कालगूर्ली तथा कुलगार्डी में मानव भीषण ताप के बावजूद बस गया है क्योंकि वहां सोने का आकर्षण मानव को खींच ले गया। दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट पर स्थित चिली के क्षेत्र **अरीका** में 32 वर्षों मे दो से तीन सेमी0 वर्षा दर्ज की जाती है, लेकिन इस क्षेत्र में खनिजों की प्रचुरता जनसंख्या के संकेन्द्रण को आकर्षित करती है। संसाधन एक ऐसा आधार है जो मनुष्य को जीवन जीने के लिए प्रोत्साहित करता है। उसके लिए आधार प्रस्तुत करता है, क्योंकि मानव को अपना जीवन चलाने के लिए विभिन्न प्रकार की प्राथमिक महत्वपूर्ण वस्तुओं की आवश्यकता होती है जिसकी प्राप्ति पर्यावरण में विद्यमान संसाधनों से ही होती है। कहना अतिशयोक्ति न होगा कि संसाधन ही मानव जीवन के आधार हैं। पूर्वी एशिया, दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्वी एशिया में मानव जनसंख्या के बसाव का प्रमुख कारण संसाधनों की प्रचुरता है।

11.4.3– प्रवसन या प्रवास (प्रव्रजन–आव्रजन)–

प्रवसन एक ऐसी प्रक्रिया या गतिविधि है जो मानव सभ्यता के प्रचार प्रसार एवं मानव समुदाय को विश्वभर में प्रकीर्णित होने के लिए आधार प्रस्तुत करती है। आदिकाल से ही मानव प्रवास अपने उत्पत्ति स्थल से सम्पूर्ण विश्व में होता रहा है। प्रवास करने के लिए साधनों की आवश्यकता होती है। प्राचीन काल में प्रवास पैदल होता था लेकिन मानव बुद्धि कौशल से प्रवास के लिए अनेकों साधनों का विकास किया गया। वर्तमान में विभिन्न माध्यमों स्थल वाहन, जल वाहन, वायुयान आदि द्वारा प्रवास या प्रवसन होता है।

प्रवास किसी स्थान या प्रदेश की जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन (यहां परिवर्तन से तात्पर्य जनसंख्या के संकेन्द्रण) से है। परिवर्तन के कारकों में एक ही किसी प्रदेश या क्षेत्र में जनभार का बढ़ना एवं घटना दो प्रमुख कारकों द्वारा संचालित होती है, एक तो जन्म–मृत्यु एवं दूसरा उत्प्रवास एवं अप्रवास। जनसंख्या वृद्धि जन्मदर के अधिक होने या लोगों के बाहर से अप्रवास द्वारा होती है एवं जनसंख्या में कमी मृत्युदर के अधिक होने या लोगों के उत्प्रवास द्वारा होती है। कहने का तात्पर्य है प्रवास किसी प्रदेश में जनसंख्या के वितरण को नियन्त्रित करता है। प्रवास को संयुक्त राष्ट्र संघ (यू0एन0ओ0) ने निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है –

"प्रवास सामान्यतः निवास स्थान को बदलते हुए एक भौगोलिक इकाई से दूसरी भौगोलिक गतिशीलता का एक प्रतिरूप है"

इसी क्रम में भौगोलिक पारिभाषिक शब्द कोष 1997 में आर0एन0सिंह, एस0डी0 मौर्य ने निम्नलिखित रूप में प्रवास को परिभाषित किया है।

"किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह द्वारा अपना निवास स्थान छोड़कर अन्य स्थान के लिए स्थायी अथवा अस्थायी रुप से किया गया स्थान परिवर्तन जनसंख्या प्रवास कहलाता है।"

इस प्रकार दोनो परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मानव एवं मानव समुदाय का एक स्थान से दूसरे स्थान पर बस जाना प्रवास कहलाता है। प्रवास के लिए अनेको कारण हो सकते हैं यथा–प्राकृतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि हैं। विश्व में कभी–कभी ऐसे प्रवास हुए हैं जिनकी कल्पना करना भी कष्टकारी होता है और कुछ प्रवास ऐसे हुए हैं जिनसे अनेक प्रकार के लाभ होते हैं। इनका विशद विवरण आगे के अध्यायों में किया गया है लेकिन यहां इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि जनसंख्या वितरण के असमान्य होने में प्रवास की भूमिका कहां तक है ?

11.4.3 अ– उत्प्रवास (Emigration)–

मनुष्य जिस स्थान को त्यागकर अन्यत्र जाकर बस जाते हैं उसके सन्दर्भ में इस स्थानान्तरण को उत्प्रवास या प्रव्रजन या बाह्य प्रवास कहतें है। स्थानान्तरित होने वाले मनुष्यों को उत्प्रवासी कहते हैं। भारत से ब्रिटेन, अमेरिका, श्रीलंका–द0पू0 एशिया, म्यांमार आदि देशों को जाने वाले लोगों को उत्प्रवासी कहते हैं। यह उत्प्रवास स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हो सकता है।

11.4.3 ब– अप्रवास (Immigration)–

किसी प्रदेश या देश में बाहर से लोगों का आकर बस जाना **अप्रवास या आव्रजन** कहते हैं। यूरोप व अन्य देशों से लोगों का भारत में आकर बस जाने वाले लोगों को अप्रवासी कहा जाता है। इस सन्दर्भ में कुछ तथ्यों का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। इसमें प्रवास के विभिन्न कारण समाहित हैं –

(अ) मानव प्रजाति के उद्भव क्षेत्र के विषय में विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने विचार व्यक्त किए हैं जैसे टेलर के अनुसार मध्य एशिया, डाटेकीश एवं लीके के अनुसार अफ्रीका एवं आस्बर्न के अनुसार तिब्बत एवं मंगोलिया। इस संदर्भ में देखा जाए तो मानव का उद्भव स्थल मध्य एशिया, अफ्रीका या तिब्बत एवं मंगोलिया में हुआ होगा लेकिन इनका प्रवास विश्व के विभिन्न भागों में हुआ और आज ये प्रजातियां सम्पूर्ण विश्व में बसी हुई हैं। इस जनसंख्या वितरण में प्रवास की प्रमुख भूमिका है।

(ब) कुमारी सैम्पुल के कथनानुसारः–जब एशिया में शुष्कता बढ़ने लगी तो यहां पर रहने वाले आर्य लोग चारों दिशाओं में प्रवासित होने लगे। इन्ही की एक शाखा तुर्किस्तान और अफगानिस्तान के रास्ते भारत पहुॅची। इसी प्रकार मध्य युग में भी इसी शुष्क भाग से आक्रमणकारी जैसे शक, हूड, तातर और मंगोल आदि चीन, भारत और ग्रीक पहुॅचे। भारत में मंगोलों को मुगल के नाम से जाना गया।

(स) विभिन्न प्रकार की आर्थिक एवं औद्योगिक गतिविधियों के कारण प्रवास होता रहता है जैसे बिहार में रहने वाले तमाम लोग तथाकथित रूप में (बिहारी) कहा जाता है अर्थोर्जन के लिए भारत ही नहीं विश्व के अनेक देशों में प्रवास कर रहे हैं।

(द) उत्प्रवास एवं अप्रवास का एक उदाहरण उल्लेखनीय है। सन् 1947 में भारत पाकिस्तान बंटवारे के समय हिन्दुओं का पाकिस्तान से भारत और मुस्लिमों का भारत से पाकिस्तान जाना इसका उदाहरण हैं।

मानव प्रवास आज की त्वरित प्रक्रिया नहीं है अपितु यह प्राचीन काल से चली आ रही प्रक्रिया है जिसने विश्व में जनसंख्या के वितरणको प्रभावित किया है। वर्तमान में जनसंख्या का प्रवास तीव्र गति से हो रहा है जिसका एक मूल कारण है आधुनिक परिवहन के साधन एवं विभिन्न देशों में विकास की स्थिति। इसके अलावा भी अनेक कारण हैं जो मानव प्रवास के लिए उत्तरदायी माने जाते हैं। इन्हें निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

अ– भौतिक कारक

ब– आर्थिक कारक

स– धार्मिक या सांस्कृतिक कारक

द– राजनीतिक कारक

अ– भौतिक कारक :–

भौतिक कारक ऐसे कारक हैं जो जनसंख्या के प्रवास के साथ–साथ जनसंख्या के वितरण को भी विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। इसके अन्तर्गत जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बाढ़, दुर्भिक्ष), भूकम्प, ज्वालामुखी क्रियाएं, हिम सम्बन्धी कारक (हिमावरण, हिमस्खलन, एवलांश), मिट्टी, सागरीय तटों का बढना एवं घटना, उच्चावच, आदि कारकों को सम्मिलित किया जाता है। **कु0 सैम्पुल** का कथन उल्लेखनीय है ''मध्य एशिया में जब शुष्कता बढ़ गयी तो वहां से आर्य लोग सभी दिशाओं की और स्थानान्तरण करने लगे। इन्हीं की एक शाखा तुर्किस्तान और अफगानिस्तान होती हुई भारत की और अग्रसर हुई। इसी प्रकार मध्य युग में भी इसी शुष्क भाग से आक्रमणकारी (शक, हूंण, तातार और मंगोल आदि) चीन भारत और यूनान पहुंचे। यूरोप में भी प्लीस्टोसीन युग के अन्तिम चरण में जब हिमालय का क्षेत्र उत्तरी बाल्टिक खण्ड तक विस्तृत हो गया तो धीरे–धीरे दक्षिण यूरोप से उत्तर की ओर जनसंख्या का विकास हुआ।''[05]उत्तम जलवायु के कारण ही विश्व में प्रवास अनेक

उदाहरण देखने को मिलते हैं। जैसे उत्तरी गोलर्द्ध में जनसंख्या का स्थानान्तरण अटलांटिक एवं प्रशान्त महासागर के किनारे उत्तर एवं दक्षिण के साथ–साथ पूर्व एवं पश्चिम की और भी स्थानान्तरण के उदाहरण देखे जा सकते हैं। जैसे मानव के लिए उत्तम एवं ऊर्जावान जलवायु तथा पर्याप्त वर्षा के कारण ही एशिया के स्टेपी प्रदेशों से गोथ, हूण, अलन, स्लॉव, बलगर एवं टार्टर आदि जातियां एशिया के पश्चिम अर्थात् यूरोप की और बढ़ीं और बाल्टिक सागर के लोग भूमध्य सागर की और बढ़े।

जलवायु सम्बन्धी कारकों के अतिरिक्त बाढ, सूखा, दुर्भिक्ष के कारण भी अनेक स्थानान्तरण देखने को मिलते हैं। जब बाढ या सूखा की स्थिति बन जाती है तो लोग सुरक्षित स्थानों की और चले जाते हैं और जब स्थिति अनूकूल हो जाती है तो वे लोग पुनः अपने स्थान की और लौट आते हैं अथवा उसी स्थान पर अनुकूल परिस्थिति मिल जाने पर वहीं स्थायी रूप से बस जाते हैं। विश्व में अनेकों नदियां बाढ़ के लिए जानी जाती हैं। विहार की कोसी नदी, चीन की ह्वांगहो नदी और कम्बोडिया की मीकांग नदी में भयंकर बाढ़ें आती है जिसके कारण इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों को बाढ़ के समय अपने मूल निवास को छोड़कर सुरक्षित स्थानों की और प्रस्थान करना पड़ता है।

ब– आर्थिक कारक–

आर्थिक कारक जनसंख्या के प्रवास में महती भूमिका निभाते हैं। आर्थिक कारकों में जनभार, भरण पोषण के लिए अपर्याप्त भोजन सामग्री, भूमि की उर्वरता का आकर्षण, खनिज, वन, उद्योग आदि आते हैं। **डॉ हैडन के अनुसार**–''जनसंख्या के स्थानान्तरण के मुख्य कारण किसी देश की भूमि पर उसकी जनसंख्या का अधिक भार होने पर उस देश में खाद्य सामग्री का अभाव होना है जिसके वशीभूत होकर पड़ोसी देशों की धन–धान्यता से लाभान्वित होने के लिए आक्रमण कर देने की भावना है।'' उत्तरी अमेरिका, लैटिन अमेरिका, आस्ट्रेलिया एवं दक्षिण अफ्रीका में उपजाऊ कृषि भूमि ने यूरोप, चीन, एवं जापान के अलावा विश्व के अनेक देशों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इसी प्रकार नदियों के समीप की उपजाऊ भूमि एवं जल की उपलब्धता ने जनसंख्या को अपनी और आकर्षित किया है। इसी कारण विश्व की अनेक सभ्यताएं नदी घाटियों में विकसित हुई हैं। इन्हीं के आकर्षण के कारण अनेक प्रकार के संघर्ष भी हुए हैं। विश्व के जिन क्षेत्रों में संसाधनों की प्रचुरता रही है उस क्षेत्र की ओर लोगों का प्रवास हुआ है। अंग्रेजों ने लगभग सम्पूर्ण विश्व में अपने उपनिवेश स्थापित किए थे। इस साम्राज्य का इतना अधिक विस्तार हुआ कि शताब्दियों तक यह लोकोक्ति बन गयी कि–''ब्रिटिश साम्राज्य में कभी सूर्य नहीं डूबता।'' आज भी स्पेन, पुर्तगाल, फ्रांस, नीदरलैण्ड, इंग्लैण्ड, रूस, चीन आदि देशों में साम्राज्य विस्तार को लेकर होड़ लगी हुई है।

इसी प्रकार धार्मिक कारणों से भी जनसंख्या का स्थानान्तरण होता है। जैसे प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में दुनिया भर से मुस्लिम धर्म के लोग मक्का मदीना की और प्रवास करते हैं। इसी प्रकार आर्मेनिया, फ्रांस, इथियोपिया और ब्रिटेन से यहूदी धर्म के लोग येरुस्लम की ओर रोमन कैथोलिक रोम की और प्रवास करते हैं। हालॉकि यह प्रवास स्थायी न होकर अस्थायी होता है।

स– सामाजिक सांस्कृतिक कारक :–

सामाजिक सांस्कृतिक कारकों से भी जनसंख्या का स्थानान्तरण होता है। धर्म एवं संस्कृति का प्रचार प्रसार, बलात् धर्मान्तरण के भय से भी मानव एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित हो जाता है। निम्नलिखित बिन्दुओं से इस बात को समझा जा सकता है–

01– भारत से वर्मा, श्रीलंका हिन्द चीन, मलाया, इण्डोनेशिया आदि को ईसा पूर्व से लेकर ईसा पस्चात 5 वीं शताब्दी तक धर्म एवं संस्कृति के प्रचार प्रसार के लिए लोग गये थे।

02– अरब से बाहर को प्रवास करने वाले इस्लाम धर्मावलम्बी अपने धर्म के प्रसार के लिए पश्चिम में मिश्र, अफ्रीका के मरुस्थलीय देशों सूडान तक पूरब में ईरान अफगानिस्तान, उत्तर में टर्की, सीरिया आदि देशों में स्थानान्तरित हुए।

03– कई शताब्दियों तक धार्मिक एवं आध्यात्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर मानव स्थानान्तरण में स्पेन के लोग मैक्सिको में तथा फ्रांसीसी लोग कनाडा में जाकर बस गये।

अपनी धार्मिक स्वतन्त्रता की रक्षा हेतु जर्मनी एवं रूस से भागकर अमेरिका में जाकर बस गये।

04– सन् 1947 में भारत एवं पाकिस्तान के विभाजन के समय लाखों लोगों का स्थानान्तरण एक दूसरे देश में हुआ। पाकिस्तान के हिन्दुओं को आवश्यक रूप से देश छोड़ने को बाध्य होना पड़ा जबकि भारत में मुसलमानों को देश चयन की स्वतन्त्रता मिल गयी। यहां एक बात स्मरणीय है कि यह स्थानान्तरण धार्मिक के साथ–साथ राजनीतिक कारण से भी था। 18 वीं सदी में श्रमिक ठेकेदारी द्वारा विभिन्न ब्रिटिश औपनिवेशिक देशों में श्रमिक की आपूर्ति भी इसी वर्ग का प्रवास था। सन् 1948 में जब इजराइल की स्थापना हुई उस समय विश्व भर से लगभग 30000 यहूदी यहां पर आकर बस गये। यह प्रक्रिया अगले वर्ष भी जारी रही और दूसरे वर्ष 1974 से 75000 यहूदी यहां आकर बस गये।

द– प्रवसन के राजनीतिक कारक :–

विश्व में स्थानान्तरण के उपरोक्त कारकों के अतिरिक्त राजनीतिक कारक भी एक महत्वपूर्ण कारक है। जनसंख्या के राजनीतिक कारणों में चार प्रमुख विशेष कारण माने जाते हैं– **आक्रमण, विजय, उपनिवेश एवं बलात स्थानान्तरण तथा स्वतन्त्र स्थानान्तरण** हैं। भारत में 12 वी सदी के बाद बाहर से लोगों का आगमन होने लगा जो आज तक विभिन्न रूपों में जारी है। मध्यकाल में जिसमें मुस्लिमों के आक्रमण (सिकन्दर, गजनवी, मुहम्मदगोरी, चंगेज खां एवं तैमूर), मुगल, अंग्रेज और वर्तमान में विभिन्न प्रकार के उपनिवेशी संस्कृतियां लगातार भारत में प्रवास कर रहीं हैं। ब्रिटेनवासियों ने मूल निवासी रेड इण्डियन्स को भगा दिया। इसी प्रकार आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों तथा न्यूजीलैण्ड के मूल निवासियों को भगाकर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। आज ये लोग जंगलों में अल्प संख्या में रह गये हैं। 8 वीं सदी में मुसलमानों के आतंक से राजस्थान के राजपूत राजस्थान के मरुस्थलीय भागों में एवं उत्तर प्रदेश पर्वतीय एवं तराई के जंगली भागों में जाकर बस गये। एक ज्वलंत उदाहरण उल्लेखनीय है – भारत के पड़ोसी देश म्यांमार के निष्कासित एवं उपेक्षित लोग पूर्वोत्तर भारत के रास्ते भारत में आकर बस जा रहे हैं जिन्हें रोहिंग्या के नाम से जाना जाता है। इसका मूल कारण राजनीतिक अस्थिरता ही है क्योंकि म्यांमार सरकार इन्हें अपना नागरिक मानने से इन्कार कर दिया है। वहीं भारत की राजनीतिक ढील के कारण ये भारत के सिर का दर्द बनते जा रहे हैं। विश्व में प्रवसन को निम्नलिखित दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जा रहा है–

अ– प्रागैतिहासिक प्रवसन :–

इस प्रकार के प्रवसन में प्रस्तर कालीन सभ्यता को सम्मिलित किया जाता है। इस काल में मानव प्रवास शिकार एवं स्थानान्तरणशील प्रवृत्ति के कारण होता था। प्रस्तरकालीन सभ्यता को तीन कालों में विभाजित किया जाता है–

I. पूर्व पाषाण काल (Palaeolithic Age)

II. मध्य पाषाण काल (Mesolithic Age)

III. नव पाषाण काल (Neo lithic Age)

इन तीनों कालों में मानव का स्थानान्तरण मध्य एशिया से विश्व के अनेक भागों की और हुआ जिसमें पूर्वी चीन से ह्वांगहो घाटी की और एवं सागर तटीय भागों से होते हुए हिन्द चीन की और गये। इसी प्रकार सिंधु घाटी, गंगा नदी घाटी, यूक्रेन और वोल्गा नदी घाटी, काला सागर होते हुए डेन्यूब घाटी, नील घाटी से आगे निकलते जिब्राल्टर होते हुए, फ्रांस एवं स्पेन, मंगोलिया की और आदि। इस प्रकार के प्रवास को निम्न मानचित्र द्वारा समझा जा सकता है।

संसार के प्राचीन प्रवसन के मार्ग

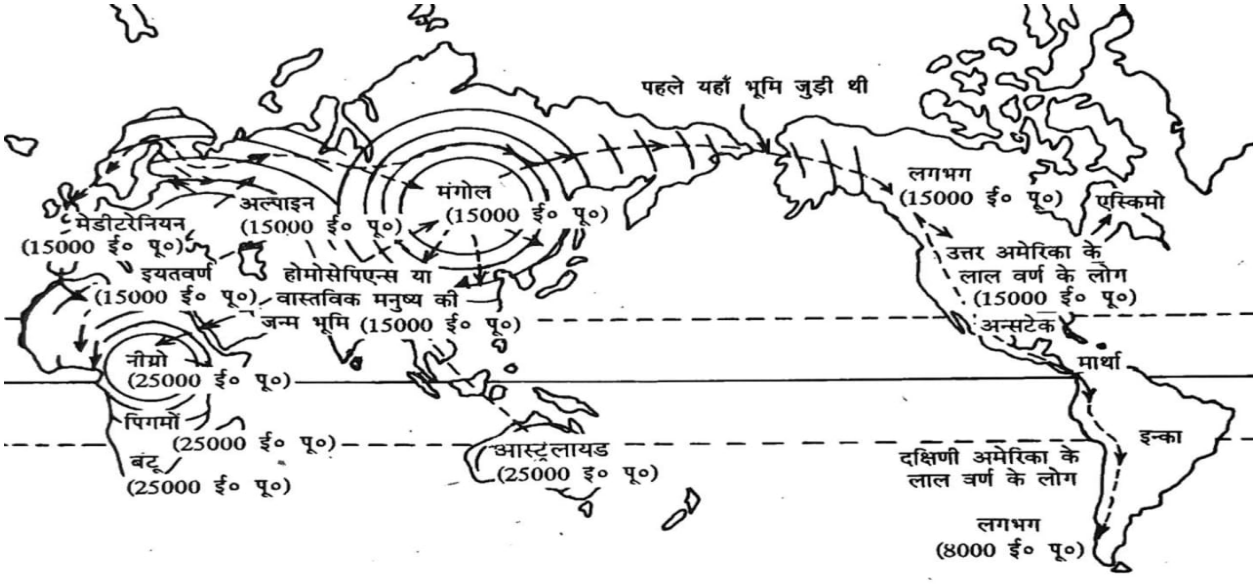

चित्र सं–11.2

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, पृष्ठ सं–232

ब– ऐतिहासिक प्रवसन :–

इस स्थानान्तरण में उस प्रवास को सम्मिलित किया जाता है जो स्थानीय, अन्तर्राष्ट्रीय एवं महाद्वीपीय होता है। इसमें जनसंख्या का स्थानान्तरण सघन आबाद क्षेत्रों से विरल आबाद क्षेत्रों की और होता है। इसमें विभिन्न प्रकार के प्रवसन सम्मिलित हैं जिसमें गांव से शहर की ओर, ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक क्षेत्रों की और एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप की ओर। जैसे यूरोपीय प्रवास (यूरोप से अमेरिका, यूरोप से अफ्रीका, यूरोप से आस्ट्रेलिया–न्यूजीलैण्ड), एशियाई प्रवास आदि।

संसार के आधुनिक प्रवसन के मार्ग

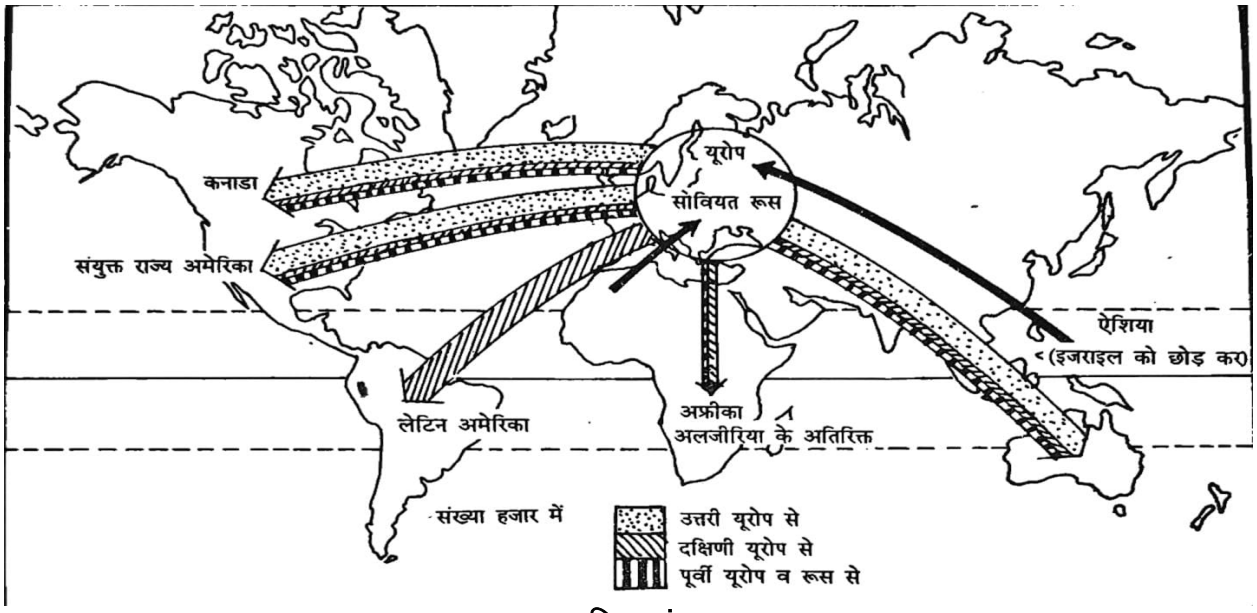

चित्र सं–11.3

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, पृष्ठ सं–233

यूरोप महाद्वीप से प्रवास

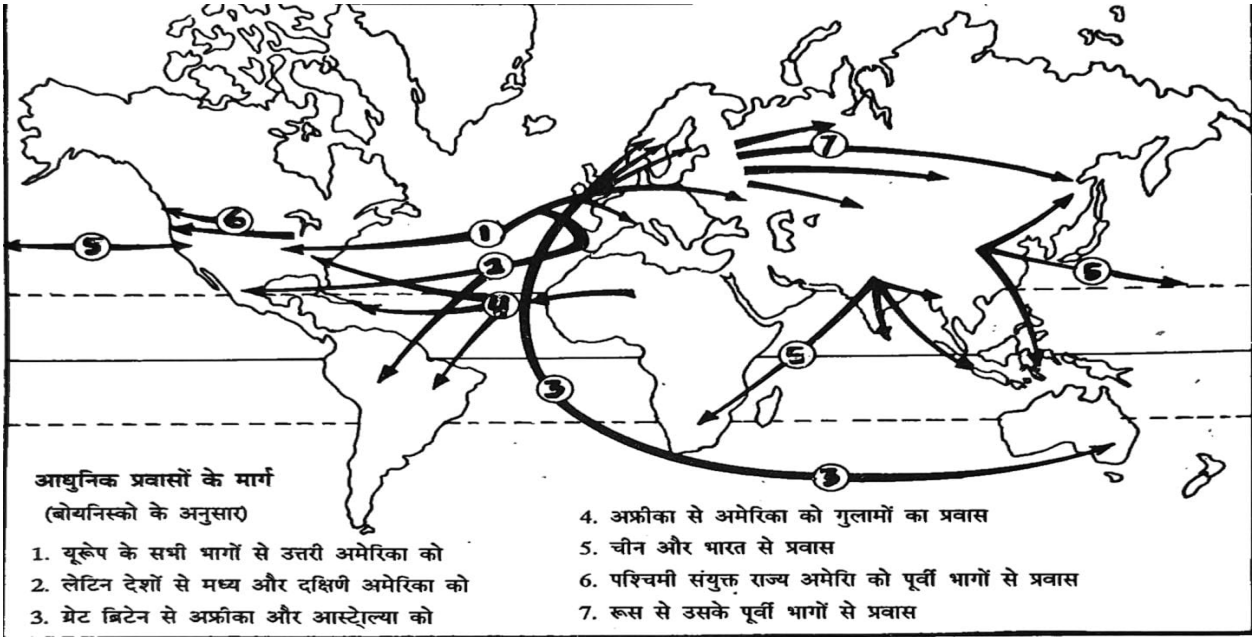

चित्र सं–11.4

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, पृष्ठ सं–235

11.4.1 राजनीतिक कारणः–

जनसंख्या के असमान वितरण को प्रभावित करने वाले कारको में राजनीतिक कारक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। राजनीतिक नियमों का प्रभाव जनसंख्या के वितरण पर सीधा पड़ता है। आस्ट्रेलिया में श्वेत नीति के कारण बाहर से आने वाले लोग नहीं बसने पाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में राजनीतिक सुरक्षा चाहता है जिस प्रदेश या देश में राजनीतिक स्थिरता की दशा होगी, वहां पर जनसंख्या वितरण सघन पाया जाता है जबकि अस्थिर राजनीति दशाओं का परिणाम यह होता है कि वहां पर जनसंख्या का वितरण विरल पाया जाता है। रेटजेल की पुस्तक **'राजनीति भूगोल'** ने पूरे विश्व में अपना प्रभाव दिखाया। रेटजेल डार्विन के विचारों से पूर्णतः प्रेरित थे और उन्होने लिखा है –

''राज्य एक जीव की भॉति है जो अपने अस्तित्व और सीमा के विस्तार के लिए संघर्ष करता है जो इसमें सफल होता है उस राज्य का विस्तार हो जाता है।'' रेटजेल की इस विचारधारा का प्रभाव पूरे यूरोप में छाया रहा। इस विचार को द्वितीय विश्वयुद्ध के कारणों में एक कारण माना जाता है। 17 वीं से 19 वीं सदी तक अंग्रेजों पुर्तगालियों, अंग्रेजों, स्पेनियों, डचों, जर्मनों, फ्रांसीसी, इतावली से उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया में अपने–अपने उपनिवेशों की स्थापना की जिसके लिए करोड़ों यूरोपवासियों ने इन प्रदेशों की और प्रस्थान किया।

इस समय का ज्वलन्त मुद्दा उल्लेखनीय है। अभी म्यांमार में राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न हो गयी है। इसका परिणाम यह हुआ कि यहां पर रहने वाले तमाम मुसलमानों को वहां की नागरिकता ही नहीं मिल पा रही है। परिणाम स्वरूप इस रूप में अनेक देश से निष्कासित रोहिग्या लोग पड़ोसी देशों में शरण ले रहे हैं और वहां की जनसंख्या को बढ़ा रहे हैं। इस समय लाखों की संख्या में रोहिग्या पूर्वी भारत से होते हुए समूचे देश में बस रहे हैं। यह भारत के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। ऐसे उदाहरण विश्व में जगह–जगह देखने को मिल जायेंगे जहाँ राजनीतिक कारणों से लोगों का पलायन हुआ है और एक देश के लोग जाकर दूसरे देशों में शरण लेते हैं और वहां के जनसंख्या के भार को बढ़ाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि जनसंख्या के असमान वितरण में राजनीतिक गतिविधि एक ऐसा घटक है जो कि जनसंख्या घनत्व प्रतिरूप को प्रभावित करती है।

यदि विश्व जनसंख्या प्रतिरूप का विश्लेषण किया जाये तो एक बात स्पष्ट रूप से निकल कर आती है कि विश्व में जनसंख्या घनत्व का वितरण असमान है। कहीं पर बहुत अधिक जनसंख्या निवास करती है तो कहीं पर जनसंख्या को आकर्षित करने के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। एशिया महाद्वीप समस्त महाद्वीपों में सर्वाधिक क्षेत्रफल धारित करता है। इसके साथ–साथ वह सबसे अधिक जनसंख्या 58 प्रतिशत भी धारित करता है और एशिया का अवलोकन करें तो इस महाद्वीप में भी जनसंख्या का वितरण एक समान न होकर बहुत विविधता भरा है जैसे जनसंख्या का अधिकतम केन्द्रीकरण पूर्वी एशिया, दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया में अधिक है।

पूर्वी एशिया–

पूर्वी एशिया न केवल एशिया अपितु सम्पूर्ण विश्व में अपना प्रमुख स्थान रखता है। इसका एक प्रमुख कारण है यहां पर दो प्रमुख देशों चीन और जापान की स्थिति। पूर्वी एशिया की स्थिति 18^0 उत्तरी अक्षांश से 45^0 उत्तरी अक्षांश एवं 74^0 पूर्वी देशान्तर से 146^0 पूर्वी देशन्तर के मध्य है, यह क्षेत्र जलवायुगत दृष्टिकोण से भी अनुकूल है। एशिया के इस भाग में दो प्रमुख देशों चीन जापान के अलावा उत्तरी कोरिया, दक्षिणी कारिया, ताइवान, तथा दक्षिणी मगोलिया स्थित है। पूर्वी एशिया में जनसंख्या का वितरण सघन रूप में देखने को मिलता है।

सारणी सं–11.3

पूर्वी एशिया एक नजर में (2016)

क्रम सं0	देश	क्षेत्रफल	जनसंख्या (वर्ग किलोमीटर)	राजधानी
1.	चीन	9388211	1433783686	बीजिंग
2.	जपान	364555	126860301	टोकियो
3.	उ0 कोरिया	120410	25666161	प्योंगयांग
4.	दक्षिण कोरिया	97230	51525308	सियोल
5.	ताइवान	35410	3773876	ताइपे

स्रोत –जनसंख्या भूगोल, डॉ0 पृथ्वीश नाग।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि एशिया के इस भाग में विश्व की अधिकतम जनसंख्या निवास करती है। इसका प्रमुख कारण वैश्विक प्रवास एवं जलवायुगत विशेषताएं जो जनसंख्या को आकर्षित करती हैं। चीन विश्व में किसी भी देश से अधिक जनसंख्या धारित करता है। चीन में जनसंख्या का वितरण समान न होकर असमान है। चीन के पूर्वी भाग एवं दक्षिण पूर्वी भाग में नदियों की घाटियों में जनसंख्या का अधिक संकेन्द्रण है। जापान जनसंख्या का वितरण तृतीय औद्योगिक प्रदेशों में है।

दक्षिण पूर्व एशिया :–

दक्षिण पूर्व एशियाएशिया महाद्वीप का सबसे महत्वपूर्ण भाग है जो भारत के पूर्वी एवं एशिया के दक्षिणी–पूर्वी भाग में स्थित है। इस क्षेत्र का कुछ भाग भूमध्य रेखीय जलवायु के अन्तर्गत आता है। द0 पूर्व एशिया का अक्षांशीय स्थिति 11^0 दक्षिणी अक्षांश से 28^0 उत्तरी अक्षांश तक है एवं देशान्तरीय विस्तार 92^0 पूर्वी देशान्तर से 141^0 पूर्वी देशान्तर तक है। एशिया के इस प्रदेश में अनेक देश म्यांमार, थाईलैण्ड, वियतनाम, कम्बोडिया, लाओस तथा द0 पूर्व एशिया के सम्पूर्ण द्वीप सम्मिलित हैं। इस सम्पूर्ण क्षेत्र को दो प्रमुख उपखण्डों में विभक्त करते हैं–

अ– दक्षिणी पूर्वी एशिया का महाद्वीपीय भाग :–

म्यांमार, थाईलैण्ड, लाओस, वियतनाम, तथा कम्बोडिया देश इसके अन्तर्गत आते है, जो प्रत्यक्षतः भौतिक रुप से एशिया से जुड़े हुए हैं।

ब–दक्षिण–पूर्वी एशिया का द्वीपीय भागः–

इसमें मलेशिया, इण्डोनेशिया, फिलीपीन्स, द्वीप समूह इस प्रदेश के अन्तर्गत आते हैं। यह प्रदेश विश्व स्तर पर अपनी अलग विशेषता रखता है। एशिया के इस भाग में मानसूनी जलवायु के साथ विषुवत रेखीय जलवायु पायी जाती है, इसलिए उच्च जैव विविधता धारित करता है। इस प्रदेश के कुछ शहर विश्व के आधुनिकतम शहरों में गिने जाते हैं। इसके बाद वियतनाम (10 करोड़ 80 लाख) थाईलैण्ड (6 करोड़ 96 लाख) म्यांमार (4 करोड़ 40 लाख) प्रमुख जनसंख्या बहुल देश हैं। द0पू0 एशिया के प्रमुख देशों की राजधानियां मनीला, बैंकाक, सिंगापुर, कुआलालम्पुर आदि विश्व के आधुनिकतम शहरों में गिने जाते हैं जिससे यहां केन्द्रीकरण अधिक हुआ है। प्रतिवर्ष सम्पूर्ण महादेशों से लोग यहां पर घूमने के लिए आते हैं यहां पर पर्यटन की अच्छी सुविधाएं विद्यमान हैं जो देश विदेश के सैलानियों को अपनी और आकर्षित करती हैं।

11.5 सारांश

भौतिक जगत के समस्त जीवों में मनुष्य सबसे अधिक बुद्धिमान प्राणी है। अपने कौशल से ही यह पूरी पृथ्वी के सभी भागों में किसी न किसी रूप में अपनी उपस्थिति करा चुका है। संसार के समस्त संसाधनों में मानव संसाधन सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह वह माध्यम है जो विभिन्न प्राकृतिक तत्वों को संसाधन के वितरण में अनेकों कार्य करते हैं। मानव संसाधन (जनसंख्या) का वितरण सभी जगह समान न होकर असमान रूप में पाया जाता है जिसके लिए अनेक कारक उत्तरदायी है। कुछ कारक भौतिक है। कुछ सांस्कृतिक जनसंख्या के असमान वितरण के भौतिक कारक जलवायु, वर्षा, आर्द्रता, मिट्टी एवं मानवीय कारक संसाधन आधारित, उत्प्रवास, अप्रवास, राजनीतिक कारकों का वितरण इस इकाई में प्रस्तुत किया जाता है। इसके साथ–साथ पूर्वी एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया में जनसंख्या स्वरूप का विवरण इस इकाई में प्रस्तुत किया गया। आशा है यह इकाई छात्र/छात्राओं को जनसंख्या के असमान वितरण को प्रभावित करने वाले कारकों को समझने में सहायक सिद्ध होगी।

11.6 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– जनसंख्या के घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 02– जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले भौतिक कारको का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 03– जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले राजनैतिक कारको का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 04– जलाशय या जल किस प्रकार जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करता है, सोउदाहरण स्पष्ट कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– जनसंख्या के वितरण को प्रभवित करने वाले कारको का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

प्रश्न 02– जनसंख्या के वितरण में जलवायु एक निर्धारक तत्व है इस कथन की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 03– जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले निम्नलिखित कारकों पर विचार कीजिए–

1– मिट्टी 2– वनस्पति

प्र01:– विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है।

अ– भारत ब– चीन

स– रूस द– ब्राजील

प्र02:– जनसंख्या में गिरते क्रम का सही युग्म है।

अ– चीन–भारत–सं0रा0अमेरिका–रूस

ब– भारत–चीन–रूस–सं0रा0 अमेरिका

स– सं0रा0अमेरिका–भारत–चीन–रूस

द– रूस–सं0रा अमेरिका–भारत–चीन

प्र03:– जनसंख्या के दृष्टिकोण से भारत का विश्व में स्थान है।

अ– प्रथम ब– द्वितीय

स– तृतीय द– चतुर्थ

प्र04– जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाला प्राकृतिक कारक है।

अ– राजनीति ब– आर्थिक

स– जलवायु द– परिवहन

प्र05– जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाला मानवीय कारक है।

अ– जलवायु ब– मिट्टी

स– प्रवास द– वर्षा

प्र06– चीन एशिया के किस प्रदेश में आने वाला देश है।

अ– उत्तरी ब– दक्षिणी

स– पूर्वी द– द0 पूर्वी

प्र07– सघन झील क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व पाया जाता है।

अ– सघन ब– विरल

स– जनशून्य द– उपरोक्त सभी

प्र08– मनुष्य का एक स्थान से दूसरे स्थान बस जाने की प्रक्रिया को कहते हैं।

अ– उत्प्रवास ब– अप्रवास

स– उपरोक्त दोनों द– उपरोक्त में से कोई नहीं

प्र09– निम्नलिखित में से जनरिक्त प्रदेश के अन्तर्गत आता है।

अ– एशिया ब– द0 अफ्रीका

स– भारत द– अन्टार्कटिका

प्र010– विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या रखने वाला महाद्वीप है।

अ– एशिया ब– अफ्रीका

स– यूरोप द– अन्टार्कटिका

उत्तरमाला:–1– ब, 2– अ, 3– ब, 4– स, 5– स, 6– स, 7– अ, 8– अ, 9– द, 10– अ

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज।

2. मानव भूगोल, डॉ0 मो0 हारुन, विजडम पब्लिकेशन मैदागिन वाराणसी तृतीय संस्करण।

3. मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण।

4. भूगोल, मुख्य परीक्षा के लिए, डी0आर खुल्लर, मैग्राहिल प्रकाशन, 12वां पुनः संस्करण।

5. भूगोल, डॉ चतुर्भुज मामोरिया साहित्य भवन पब्लिकेशन, हास्पिटल रोड आगरा 282003। पृष्ठ सं 86

इकाई–12 जनसंख्या वृद्धि के सिद्धान्त–माल्थस, नव माल्थस, ऐतिहासिक, जनांकिकीय संक्रमण सिद्धान्त, सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त

इकाई की रूपरेखा

12.1– प्रस्तावना

12.2– उद्देश्य

12.3– विश्व में जनसंख्या वृद्धि की स्थिति एवं उससे सम्बन्धित सिद्धान्त

12.4– जनसंख्या वृद्धि सम्बन्धी सिद्धान्त

12.5– माल्थस का जनसंख्या वृद्धि का सिद्धान्त

12.6– नव माल्थस सिद्धान्त

12.7– जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त

12.8– सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त

12.9– सारांश

12.10– पारिभाषिक शब्दावली

12.11– बोध प्रश्न

12.12– संदर्भ ग्रन्थ सूची

12.1 प्रस्तावना

परिवर्तन प्रकृति का नियम है अर्थात इस प्रकृति के सभी घटक नित परिवर्तनशील हैं। कुछ परिवर्तन दृष्टिगोचर होते है जबकि कुछ परिवर्तन ऐसे हैं जिन्हें हम प्रत्यक्षतः देख नहीं सकते हैं। मानव भी इस प्रकृति का प्रमुख घटक है। इसलिए स्वाभाविक है कि प्रकृति के इस अमूल्य जीव में परिवर्तन हुआ। यह परिवर्तन दो रूपों में सम्पन्न हुआ हैं। एक तो मानव का शारीरिक परिवर्तन जिसमें मनुष्य वन मानुष से परिष्कृत होते हुए आज आर्थिक और वैज्ञानिक मानव के रूप में प्रकट हुआ है जो कि वन मानुष से सर्वदा भिन्न है, जहां प्राचीन मानव प्रकृति प्रदत्त संसाधनों को प्राप्तकर्ता के रूप में प्रयोग करता था अर्थात प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करता था लेकिन अब वर्तमान मनुष्य उसी संसाधन का स्वामी बन बैठा है। दूसरा परिवर्तन मानव की संख्या (जनसंख्या) में हुआ है। प्राचीन काल में जनसंख्या की स्थिति चिन्ताजनक थी क्योंकि वह कम थी पर आज की जनसंख्या चिन्ताजनक है क्योंकि वह आज अत्यधिक है। प्राचीन काल में जनसंख्या वृद्धि न्यूनतम हुआ करती थी क्योंकि जन्मदर कम थी और मृत्युदर अधिक परन्तु वर्तमान में जनसंख्या की वृद्धि जन्मदर अधिक है और मृत्युदर कम, क्योंकि आज अप्रत्याशित मात्रा में स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास हुआ है। आज विश्व में जनसंख्या वृद्धि अपने चरम पर है। ई0पू0 10,000 में जनसंख्या अनुमानित 50 लाख से 100 लाख के आस–पास रही होगी जो कि 2020 में बढ़कर 777 करोड़ हो गई है। इस बढ़ती हुई जनसंख्या का मूल्यांकन कर इसकी वृद्धि को रोकने की तरफ विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हुआ, तथा इस सन्दर्भ में अनेक सिद्धान्तों यथा माल्थस, नव माल्थस, जनांकिकीय, संक्रमण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया। प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या वृद्धि सम्बन्धी सिद्धान्तों का विस्तृत विवरण एवं मूल्यांकन प्रस्तुत किया जा रहा है।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

i. जनसंख्या वृद्धि एक वैश्विक समस्या है। इसके प्रति विद्यार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना।

ii. छात्र/छात्रों को जनसंख्या वृद्धि से होने वाले हानिकारक प्रभावों से अवगत कराना एवं उसके नियोजन के सम्बन्ध में जागरूकता के लिए प्रेरित करना।

iii. जनसंख्या वृद्धि को कैसे नियाजित किया जाय। इस सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों द्वारा दिये गए सिद्धान्तों के माध्यम से मूल्यांकन एवं नियोजन करने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित करना।

iv. जनसंख्या एवं संसाधनों के पारस्परिक सम्बन्धों का सिद्धान्तों के माध्यम से निरूपण करना।

v. जनसंख्या वृद्धि का संसाधनों पर पड़ने वाले दबाव का मूल्यांकन करना एवं इस दबाव को कम करने के लिए सुझाव बताना।

vi. मानव पर्यावरण के सम्बन्धों को सिद्धान्तों के द्वारा मूल्यांकित करने के लिए छात्र/छात्राओं को प्रेरित करना।

इस प्रकार मानव जनसंख्या वृद्धि के बारे में विस्तार पूर्वक चर्चा कर विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत सिद्धान्तों से छात्र/छात्राओं को अवगत कराना एवं संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग के लिए प्रेरित करना इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है।

12.3 विश्व में जनसंख्या वृद्धि की स्थिति एवं इससे सम्बन्धित सिद्धान्त

आज सम्पूर्ण विश्व में अनेकों समस्याओं ने जन्म लिया है। इसमें दो प्रमुख हैं एक तो संसाधनों एवं पर्यावरण की सततता तथा दूसरा मानव समाज का अवमूल्यन एवं मानव समुदाय की बढ़ती संख्या। जनसंख्या की अतिरेकता मानव जीवन के लिए एक बड़ी चुनौती है, यद्यपि पृथ्वी की सतह पर मानव का आगमन पृथ्वी के कुल भूवैज्ञानिक इतिहास ही नहीं बल्कि जैव विकास काल की दृष्टि से भी बहुत नवीन काल है, अर्थात धरातल पर वनस्पति समुदाय एवं एक कोशिकीय जीव समुदाय का आगमन 50 से 55 करोड़ वर्ष पूर्व की घटना है। इस धरातल पर मानव का आगमन सम्भवतः 10 लाख वर्ष पूर्व की घटना है। यह वह काल था जिसको प्लीस्टोसीन के नाम से जाना जाता है। यह युग अपने हिमावरण के कारण जाना जाता है, जिसमें चार बार हिमयुग का आगमन हुआ है।

स्मरणीयः– प्लीस्टोसीन काल में 4 हिमयुग आये जिन्हें क्रमशः **गुंज, मिण्डेल, रिस तथा वुर्म** के नाम से जाना जाता है।

इस युग की समाप्ति पर आज से लगभग 15 से 20 हजार वर्ष पूर्व नव पाषाण काल में जनसंख्या एक करोड़ के आस–पास रही होगी जो कि विभिन्न कालों में परिवर्तित अर्थात बढ़ते हुए आज विश्व की जनसंख्या लगभग 8 करोड़ (777 लाख) पहुँच गयी है। इसे निम्नलिखित सारणी द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

सारणी क्र0–12.1

विश्व की जनसंख्या का विकास

क्रम सं0	समय (काल)	जनसंख्या
1	10000 ई0 पू0	50 लाख से 1 करोड़
2	1000 ई0 पू0	18 से 20 करोड़
3	रोमन काल	24 करोड़
4	1000 ई0	30 करोड़
5	1650 ई0	50 करोड़
5	1850 ई0	100 करोड़
7	1900 ई0	160 करोड़

8	1950 ई0	240 करोड़
9	2000 ई0	625 करोड़
10	2010 ई0	689 करोड़
11	2020 ई0	777 करोड़

स्रोत–मानव भूगोल, मो0 हारुन।

सारणी संख्या 12.1 से स्पष्ट है कि जो जनसंख्या 1900 में 160 करोड़ थी, वह बढ़कर 1950 में 240 करोड़ तथा 2020 में 777 करोड़ हो गयी। यह वृद्धि निश्चित रूप से चिन्ताजनक है। इस समय एशिया (462.6 करोड़) महाद्वीप विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या धारित करने वाला महाद्वीप है, जबकि अफ्रीका महाद्वीप 133.8 करोड़ जनसंख्या के साथ दूसरा स्थान रखता है। जनसंख्या की इस गति से बढ़ती हुई संख्या अनेक क्षेत्रों में अपना प्रभाव दिखाने लगी जिसमें पर्यावरणीय समस्याएं हमारे सामने पैर पसारने लगी हैं। इसके साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, आदि क्षेत्रों में मानव समुदाय को समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। इस प्रकार की घटनाओं को संज्ञान में लेते हुए विभिन्न विद्वानों ने जनसंख्या से सम्बन्धी अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया।

12.4 जनसंख्या वृद्धि सम्बन्धी सिद्धान्त

मानव इस धरातल का एक प्रमुख संसाधन है क्योंकि वहीं प्राकृतिक तत्वों (स्थल, जल, वायु, खनिज, ऊर्जा आदि) को संसाधन बनने का आधार प्रदान करता है। जनसंख्या का वितरण, संघटन, वृद्धि, घनत्व एवं जनसंख्या की भौतिक एवं संसाधनों के मध्य अन्तर्सम्बन्ध की विवेचना मानव भूगोल का प्रमुख ध्येय है। मानव सभ्यता के उद्‌भव के काल से ही जनसंख्या वृद्धि पर विद्वानों के मत अलग अलग रहे हैं अर्थात जनसंख्या वृद्धि पर विद्धानो में सहमति न बन सकी। कुछ विद्धानों ने मानव जाति प्रजातियों और राष्ट्रों की अतिजीविता के लिए निरन्तर जनसंख्या वृद्धि का विचार प्रस्तुत किया। दूसरी तरफ कुछ विद्धानों का मानना है कि जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण धरातल पर सभ्यताओं का लोप हो रहा है। अतः जनसंख्या विकास के ऐतिहासिक विचारों को व्यक्त करना ठीक रहेगा। चीनी दार्शनिक **कन्फ्यूसियस** ने स्पष्ट रूप में कहा है कि जनसंख्या और पर्यावरण (संसाधनों) के मध्य संख्यात्मक सन्तुलन होना आवश्यक है। **कन्फ्यूसियस** अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि को उचित नहीं मानते थे और नहीं उनके वे पक्षधर थे। वे ऐसे विद्धान थे जिन्होंने **अनुकूलता जनसंख्या स्तर** की संकल्पना प्रस्तुत की। प्राचीन ग्रीक में प्रारम्भिक विद्धानों से जनसंख्या में विस्तार किए जाने का समर्थन किया। इस सन्दर्भ में प्लेटो नियन्त्रणवादी विद्धान थे जिन्होंने जनसंख्या की सुनिश्चित सीमा के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किया। **अरस्तू और पोलिबियस**ने बताया कि जनसंख्या वृद्धि में पतन के कारण **हेलोनिक सभ्यता** का पतन हो गया।

प्रारम्भिक रोमन सभ्यता में प्रजनन क्षमता सम्प्रदाय ने जनसंख्या वृद्धि पर जोर दिया और बताया कि रोम के सैनिक और राजनैतिक विस्तार के लिए जनसंख्या में वृद्धि होना आवश्यक है। उनका विचार यह भी था कि विवाह का प्राथमिक कार्य देश के लिए नागरिक एवं सैनिक तैयार करना है। इस जनसंख्या वृद्धि के प्रोत्साहन के लिए आगस्टस ने सिद्धान्त प्रस्तुत किया। इस प्रकार के अनेक प्रयासों के बाद भी जनसंख्या में कमी के कारण इस सभ्यता का पतन हो गया। क्योंकि ये बर्बर लोगों के आक्रमण से अपनी रक्षा नहीं कर सके। इतिहास का मध्य काल ऐसा काल था जिसमें अनेकों युद्ध लड़े गए। इस समय यह विचारधारा पनपी कि जीवित रहने के लिए और सुरक्षा के लिए जनसंख्या वृद्धि आवश्यक है। उस समय मानव सम्पदा सर्वोत्तम सम्पदा थी क्योंकि यह माना जाता था कि मनुष्य नहीं होंगे तो अस्त्र कौन उठाएगा जर्मन सम्प्रदाय ने राज्य के विस्तार के लिए जनसंख्या वृद्धि को आवश्यक बताया। रेटजेल का विचार था कि "राज्य एक जीव की भॉति होता है" जिस प्रकार जीव अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है उसी प्रकार राज्य को अपने विस्तार के लिए संघर्ष करना चाहिए। इस विचार नें लोगों को जनसंख्या वृद्धि के लिए प्रेरित किया। यद्यपि जनसंख्या संसाधन पर विचार प्लेटो के समय से ही प्रारम्भ हुआ लेकिन माल्थस पहले ऐसे विद्धान थे जिन्होंने इस विषय पर व्यवस्थित विचार प्रस्तुत किया। जनसंख्या के सिद्धान्तों को दो भागों में विभाजित किया जाता है–

अ– प्राकृतिक आधार पर आधारित सिद्धान्त

ब– सामाजिक आधार पर आधारित सिद्धान्त

जनसंख्या वृद्धि से सम्बन्धित सिद्धान्त को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जाता है –

12.5 माल्थस का जनसंख्या वृद्धि सिद्धान्त

थामस राबर्ट माल्थस अठारवीं सदी के प्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार एवं अर्थशास्त्र के ज्ञाता थे। थामस राबर्ट माल्थस विश्व के पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने व्यवस्थित रूप में जनसंख्या सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इन्होंने सन् 1798 में प्रकाशित अपने निबन्ध 'Principal of population' में अपने विचारों को प्रकट किया जिसमें एक और तो जनसंख्या वृद्धि एवं जनसांख्यिकी परिवर्तनों तथा दूसरी और सांस्कृतिक और आर्थिक परिवर्तनों का उल्लेख किया। माल्थस मानव कल्याण की बात सोचते थे। इसकी झलक उनके सिद्धान्त में स्पष्ट दिखाई देता है। माल्थस ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि जनसंख्या वृद्धि का मानव पर क्या प्रभाव हो सकता है। एक बात सर्वविदित है कि मानव एवं पर्यावरण में घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है लेकिन माल्थस संसाधन का तात्पर्य 'जीविकोपार्जन के साधन' से है।

माल्थस ने अपने सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए दो प्रमुख अभिग्रहीतों (विशेषताओं) को आधार बनाया ये विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

अ– मानव के जीवित रहने के लिए भोजन आवश्यक है।

ब– स्त्री–पुरुष के मध्य यौन आकर्षण आवेग स्वाभाविक है और यह अपनी वर्तमान स्थिति में ऐसा ही बना रहेगा।

सिद्धान्त का प्रधान रूपः–

उपरोक्त दो मान्यताओं के आधार पर माल्थस ने बताया कि मानव जनसंख्या वृद्धि करने की क्षमता बहुत अधिक है जबकि पृथ्वी में जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि करने की क्षमता सीमित है। किसी भी देश में जनसंख्या निर्वाह के साधनों द्वारा सीमित होती है अर्थात जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि होने पर जनसंख्या में वृद्धि होती है, माल्थस ने बताया कि किसी देश में शक्तिशाली निरोधक उपायों के अभाव की स्थिति में जनसंख्या उत्पादन की तुलना में तीव्र गति से वृद्धि होती है। माल्थस ने स्पष्ट किया कि किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या की वृद्धि गुणोत्तर श्रेणी के अनुसार बढ़ती है जैसे– 1,2,4,8,16,32,64,128, 256.....। तथा जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि गणितीय श्रेणी के अनुसार बढ़ती है यथा– 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10.....।

इस तरह यदि मूल्यांकन किया जाये तो स्पष्ट होता है कि शीघ्र ही जनसंख्या इतनी अधिक हो जायेगी कि उसका भरण–पोषण लगभग असम्भव हो जायेगा तथा भुखमरी और कुपोषण के कारण लोग मरने लगेगें।

माल्थस के अनुसार प्रत्येक 25 वर्षों में जनसंख्या दो गुनी हो जाती है। इस प्रकार गणना को तो दो शताब्दियों में जनसंख्या और जीविकोपार्जन के साधनों में अन्तर 256 तथा 9 एवं तीन शताब्दियों में यही अन्तर 4096 और 13 हो जायेगा तथा 2000 वर्षों में इस अन्तर की गणना करना कठिन हो जायेगा। उत्पादन में चाहे जितनी वृद्धि हो जाये जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि की गति कभी भी जनसंख्या वृद्धि की गति के बराबर नहीं हो सकती है। अन्तः परिणाम यह होगा कि भुखमरी, बीमारी लूटपाट, दुर्भिक्ष संघर्ष आदि का विस्तार होकर जनसंख्या स्वयं ही कम हो जायेगी। इस प्रकार जीविकोपार्जन के साधन जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करते हैं जहां पर खाद्य सामग्री की प्रचुरता होगी वहां जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ेगी जबकि खाद्य सामग्री की कमी की स्थिति में जनसंख्या भुखमरी, बीमारी लूटपाट, दुर्भिक्ष आदि का शिकार होकर कम जायेगा। जनसंख्या कम करने का सामान्य उपाय मृत्यु को माना गया है। माल्थस का सिद्धान्त स्पष्ट करता है कि–

i. भरण–पोषण के संसाधनों द्वारा जनसंख्या अनिवार्यतः सीमित रहती है।

ii. जहां पर जीविकोपार्जन के साधनों में वृद्धि होती है, वहां जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होती है।

iii. वे नियंत्रण तथा जनसंख्या की श्रेष्ठ शक्ति जो नियंत्रण दमन करते हैं और जीविकोपार्जन के साधनों पर अपना प्रभाव बनाये रखते हैं, इन सभी का नैतिक संयम, दुर्गुण और विपत्तियों द्वारा निराकरण सम्भव है।

iv. **माल्थस के अनुसार :–** माल्थस के अनुसार किसी देश की भूमि सीमित होती है लेकिन स्त्रियों की उर्वरता

असीमित होती है। "प्रकृति की मेज सीमित अतिथियों के लिए ही लगी है इसलिए जो बिना निमंत्रण के आयेगा उसे अवश्य भूखों मरना पड़ेगा।''

माल्थस के सिद्धान्त का रैखिक निरूपण

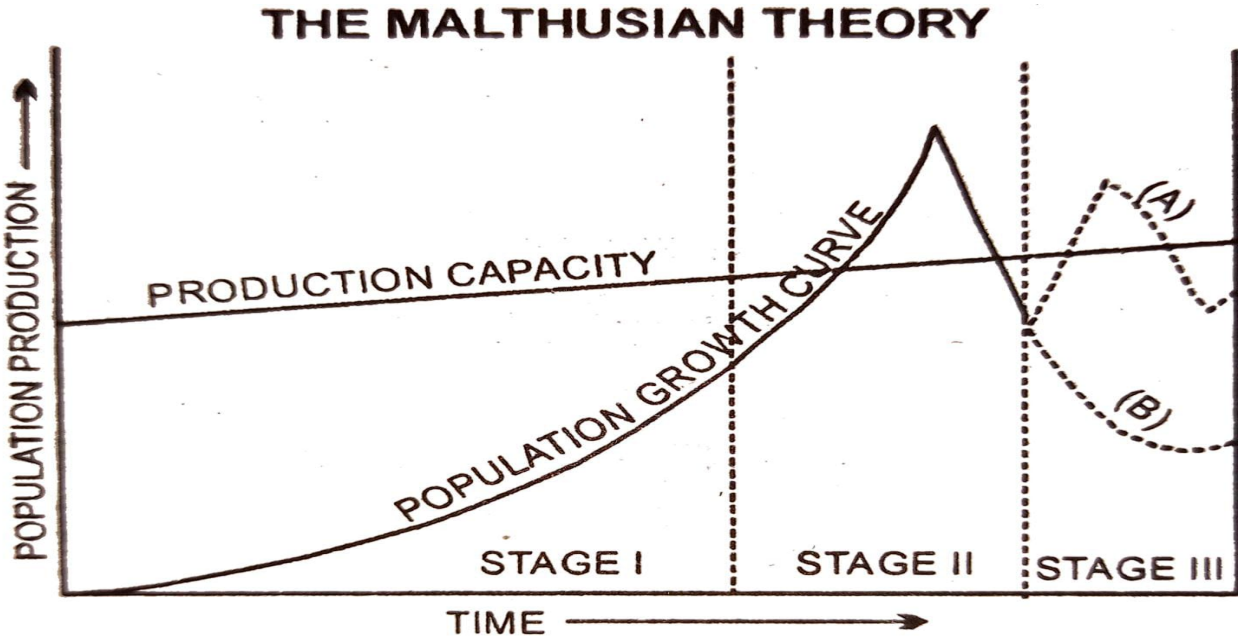

चित्र सं–12.1

माल्थस के सिद्धान्त के उपरोक्त आरेख का अवलोकन करने पर स्पष्टतः तीन चरण परिलक्षित होते हैं–

i. प्रथम चरण में मनुष्य की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताएं उत्पादन क्षमता से कम होती है।

ii. द्वितीय चरण में कृषि उत्पादन क्षमता और मानव आवश्यकताएं लगभग बराबर होती हैं।

iii. तृतीय चरण में मानव की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताएं कृषि उत्पादन क्षमता से अधिक होती हैं।

माल्थस के अनुसार जीविकोपार्जन के साधनों और जनसंख्या के मध्य की दूरी बढ़ती जाती है और जीविकोपार्जन के साधनों पर जनसंख्या का भार बढ़ता जाता है और पूरा समाज दो वर्गों अमीर और गरीब में विभाजित हो जाता है तथा पूँजीवादी व्यवस्था स्थापित हो जाती है। समृद्ध व अमीर लोग जो उत्पादन प्रणाली के स्वामी होते हैं लाभ कमाते हैं और धन संग्रह करते ही अधिक पूँजी अर्जित करके वे उपभोग में वृद्धि करते हैं परन्तु जीवन स्तर के नीचे गिरने के डर से अपनी जनसंख्या वृद्धि नहीं करते। उपभोग बढ़ जाने से कुछ वस्तुओं की मांग बढ़ जाती है जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है। माल्थस ने पूँजीवाद समाज एवं पूँजीवाद का समर्थन किया है क्योंकि यदि पूँजी का निर्धन वर्ग में बांट दी जाये तो यह पूँजी उत्पादन प्रणाली पर निवेश के लिए उपलब्ध नहीं हो पायेगी। इस प्रकार धनीं लगातार धनीं होते जायेंगे और निर्धन, जिसमें मजूमदार वर्ग भी सम्मिलित हैं, निर्धन होते जायेगें।

माल्थस के अनुसार जनसंख्या एवं जीविकोपार्जन के साधनों में अन्तर इतना अधिक हो जायेगा कि भुखमरी, निर्धनता, विपत्ति लूटपाट आदि घटनाएं अवश्यम्भावी हो जायेगी। उन्होने यह माना कि विवाह का स्थगन एक निवारक उपाय हो सकता है और यह आगे भी रहेगा। माल्थस ने अपने प्रारम्भिक लेखों में यह मानने से इन्कार किया कि निवारक निरोध जैसे विवाह में देरी, नैतिक संयम आदि मानव की जनन दर को इतना कम कर देंगे कि सकारात्मक नियंत्रण काम नहीं करेंगे। परन्तु माल्थस स्वयं अपनी पुस्तक के सन् 1817 के संस्करण में यह माना कि जन्मदर कम करने के उपायों मुख्यतः देर से शादी, शादी से पूर्व ब्रह्मचर्य का पालन करके और विवाह के उपरान्त आत्म संयम रखकर अर्थात निरोधक उपायों का प्रयोग कर जनसंख्या वृद्धि को एक हद तक कम कर सकते हैं परन्तु गर्भपात जैसे निरोधक उपायों के धार्मिक कारणों से स्वीकार नहीं किया है।

माल्थस के सिद्धान्त तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल था क्योंकि त्तसमय यूरोप में जनसंख्या वृद्धि तीव्र

गति से हो रही थी और वहां के अन्न भण्डार (जीविकोपार्जन के साधन) कम थे। विद्वानों के एक बड़े वर्ग नें इस सिद्धान्त की पुष्टि की। युद्ध संक्रामक बीमारियों तथा दुर्भिक्षों ने जनसंख्या को जीवन निर्वाह के साधनों के अनुरूप सीमित किया है।

माल्थस के सिद्धान्त की आलोचनाएंः–

माल्थस का सिद्धान्त तर्कों पर और तत्कालीन परिस्थितियों पर आधारित तो था और एक बड़े वर्ग नें इसका समर्थन किया परन्तु कुछ विद्वानों नें इनके सिद्धान्त की आलोचना की जिसमें मार्क्स का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। इस सिद्धान्त की प्रमुख आपत्तियां निम्नलिखित हैं –

i. स्त्री के सम्बन्धों सम्बन्धी माल्थस की धारणा पर प्रश्नचिन्ह लगाया गया और कहा गया कि बच्चों की इच्छा को कामवासना की इच्छा से नहीं जोड़ा जा सकता है क्योंकि सन्तान की चाह सामाजिक नैसर्गिक प्रवृत्ति है।

ii. आलोचकों ने माल्थस के जीविकोपार्जन के साधन में वृद्धि एवं जनसंख्या वृद्धि के गणितीय एवं ज्यामितीय अनुपात पर भी प्रश्न चिन्ह उठाया और बताया कि यह पूरी तरह उचित नहीं है।

iii. माल्थस का यह विचार है कि जनसंख्या 25 वर्षों में दोगुनी हो जाती है, वास्तविकता से परे है। जनसंख्या के दो गुनी होने की अवधि समयानुसार परिवर्तित होती रहती है। विश्व की जनसंख्या 1650 ई0 में 50 करोड़, 1850 ई0 में 100 करोड़? 1930 में 200 करोड़ 1975 में 400 करोड़ थी। यह माल्थस के विचारों से मेल नहीं करती। जनसंख्या के दो गुनी होने की अवधि विभिन्न देशों की अलग–अलग (बांग्लादेश, मैक्सिको, चाड, में 20 वर्ष जबकि सं0राज्य अमेरिका में 116 वर्ष जापान, यू0के0, फिनलैण्ड में दोगुनी होने में 318 वर्ष का समय लगता है) होती है।

iv. माल्थस से सकारात्मक विरोध पर अधिक बल दिया जब कि नकरात्मक विरोध की अनदेखी की जैसे गर्भ निरोधन, परिवार नियोजन आदि।

v. माल्थस का सिद्धान्त बताता है कि जनसंख्या वाले देशों में भी प्राकृतिक आपदाएं आती हैं।

vi. माल्थस ने प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विकास की अनदेखी की।

इस प्रकार विभिन्न आधारों पर माल्थस के सिद्धान्त की आलोचना की जाती है।

12.6 नव माल्थस वादी सिद्धान्त

माल्थस के सिद्धान्त में कुछ संशोधन (मान्यताओं में) कर 1948 ई0 में नव माल्थस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया। सन् 1948 में **फेमरफीन्ड औसबन** तथा **विलियम लोगट** द्वारा लिखित पुस्तकें क्रमशः "our plunderd planet" तथा "the road to survival" प्रकाशित हुई। जिसने नव माल्थसवादी विचारधारा का उद्भव हुआ। इनका मानना था कि माल्थस द्वारा प्रकट किए गयें केवल मौलिक तथ्य ठीक है जबकि उत्पादन सम्बन्धी अनुमान ठीक नहीं है।

नव माल्थसवादियों का मानना है कि कृत्रिम उपायों से संतति निग्रह राष्ट्रीय कल्याण की दृष्टि से नैतिक है। इससे वैवाहिक जीवन खुशहाल रहता है। जीवन स्तर भी उच्च बना रहता है। माल्थसवादियों एवं नवमाल्थसवादियों में एक विचार उभयनिष्ठ है कि जनसंख्या में होने वाली असीमित वृद्धि पर नियंत्रण आवश्यक है। दोनों विचारधाराओं में यदि कोई विभेद है तो वो है जनसंख्या नियंत्रण के साधन। नवमाल्थस वादियों में जनसंख्या नियंत्रण के सन्तति निग्रह के उपाय पर अधिक जोर दिया है क्योंकि विवाह में देरी, आत्म नियंत्रण, ब्रह्मचर्य, नैतिक वचन, कठिनाई वाले कार्य हैं, काम–वासना स्वभाविक है और इसको लगातार दबाने से मनुष्य का नैतिक, मानसिक व शारीरिक पतन भी हो सकता है।

नवमाल्थसवादियों का मानना है कि जनसंख्या वृद्धि उत्पादनों में वृद्धि की समानुपाती है अर्थात जब तक कृषि में वृद्धि होती रहेगी। 20 वीं सदी में यूरोप में विकसित औद्योगिक क्रन्ति ने हरित क्रान्ति और श्वेत क्रान्ति को जन्म दिया। जिससे कृषीय उत्पादनों में अप्रत्याशित वृद्धि हुई तथा पशुधन विकास एवं पशुओं द्वारा उत्पादित वस्तुओं में वृद्धि हुई और नवमाल्थसवादियों का मानना है कि कृषि विकास इतना हुआ है कि हम लगभग 6 अरब जनसंख्या का भरण–पोषण कर पाने में सक्षम है। उदाहरण के तौर पर देखें तो भारत में कृषि उत्पादन की दर

जनसंख्या वृद्धि दर से कहीं अधिक रही है। इस दौरान जब जनसंख्या में दोगुनी वृद्धि हुई उसी काल कृषीय उत्पादन में तीन गुना की वृद्धि हुई।

नव माल्थसवादी विचार को निम्नलिखित रेखा चित्र के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

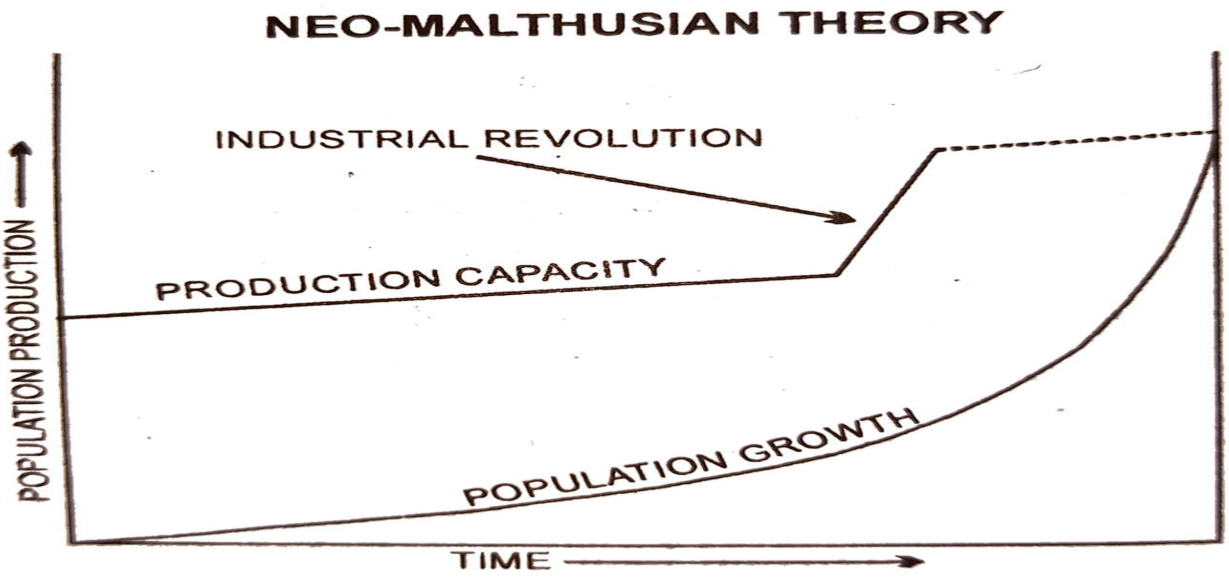

चित्रः–12.2

इन विचारकों के अनुसार जहां एक और जनसंख्या में वृद्धि हुई है, वही जीविकोपार्जन के साधनों (कृषि) में भारी वृद्धि दर्ज की गई है जिससे माल्थस की सकारात्मक नियंत्रण की आवश्यकता नहीं है।

12.7 जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त(The demiographic Transiction theory)

जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त जनसंख्या के सभी सिद्धान्तों में सबसे महत्वपूर्ण है जो विगत वर्षों के जनसंख्या के आंकडों पर आधारित है एवं विश्वसनीय है। इस सिद्धान्त का मूल आधार जन्मदर, मृत्युदर तथा इनके मध्य अन्तर के कारण जनसंख्या में होने वाली प्राकृतिक वृद्धि है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मूल रूप से **प्रसिद्ध विद्वान डब्लू एस थाम्सन** द्वारा 1929 में प्रतिपादित किया गया। सन् 1945 में एफ0डब्लू नोटेस्टीन तथा सी0पी0 ब्लेकर ने इसमें कुछ संशोधन और विकसित करने का प्रयास किया। बृहद स्तर पर अवलोकन करें तो यह सिद्धान्त जनांकिकी परिवर्तनों को दर्शाते है। यह सिद्धान्त पश्चिमी देशों द्वारा अनुभूत जनसंख्या विकास पर आधारित है। ट्रिवार्था ने इस सिद्धान्त के सन्दर्भ में कहा है कि यह सिद्धान्त जनसंख्या के अनेक प्रकार के आंकड़ो को व्यक्त करता है।

जब एक परम्परागत पशुपालक व कृषक समाज प्रौद्योगिकी व नगरीय समाज में क्रमिक अवस्थाओं में विकसित होता है तब इससे उसके जनांकिकी संरचना एवं प्रवृत्तियों में अनेक परिवर्तन होते हैं। संसार के विभिन्न देश किसी विशिष्ट समय में जनांकिकी संक्रमण के विभिन्न चरणों से गुजरते है। यह सिद्धान्त निम्नलिखित दो विशेषताओं पर आधारित है।–

अ– जैव शारीरिकदृष्टि से सभी मानव समान हैं जो पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में संलग्न रहने हैं।

ब– जनसंख्या सम्बन्धी जन्मदर एवं मृत्युदर प्रतिरुप जनसंख्या की सांस्कृतिक विविधताओं और आर्थिक विकास के कारण संचालित होते हैं।

इस सिद्धान्त में नोटेस्टीन ने निम्नलिखित तीन प्रमुख अवस्थाओं का वर्णन प्रस्तुत किया है–

i. जन्म–दर कम होने से पहले जनसंख्या में अधिक वृद्वि।

ii. जन्म–दर कम होने पर जनसंख्या वृद्धि दर में कमी।

iii. मृत्यु दर अधिक तथा जन्म दर कम होने पर जनसंख्या में कमी।

समयोपरान्त नोटेस्टीन एवं थाम्पसन के सिद्धान्त में संशोधन किया गया तथा विभिन्न विद्वानों द्वारा तीन के स्थान पर पांच अवस्थाओं को बताया गया। यहां थाम्पसन की तीन अवस्थाओं एवं अन्य विद्वानों के द्वारा बताए गये 5 प्रकारों का वर्णन समवेत रुप में किया जा रहा है –

प्रथम अवस्था– (प्रकार–1) :–

यह अवस्था आर्थिक विकास आरम्भ होने से पहले की अवस्था है। यह अवस्था औद्योगिक विकास के पहले की यूरोप की जनांकिकी अथवा 19 सदी के मध्य में जापान की जनांकिकी को इंगित करती है अथवा उष्ण कटिबन्धीय वनों में रहने वाले लोगों (जनजाति समुदाय) की जनांकिकी को प्रकट करने वाली अवस्था को प्रदर्शित करती है। इस अवस्था में जनसंख्या का आकार छोटा होता है एवं जनसंख्या का आकार कुछ समय के लिए स्थिर होता है। इस अवस्था में जन्म दर तथा मृत्यु दर उच्च होती है परन्तु सम्पन्नता के काल में मृत्युदर में कमी आती है। इस अवस्था में सामान्यतः जन्मदर एवं मृत्युदर 37 व्यक्ति/हजार होते हैं। लगभग 300 वर्ष पूर्व विश्व के सभी देश इस अवस्था में थे।

जनसंख्या संक्रमण सिद्धान्त का आलेखी निरूपण

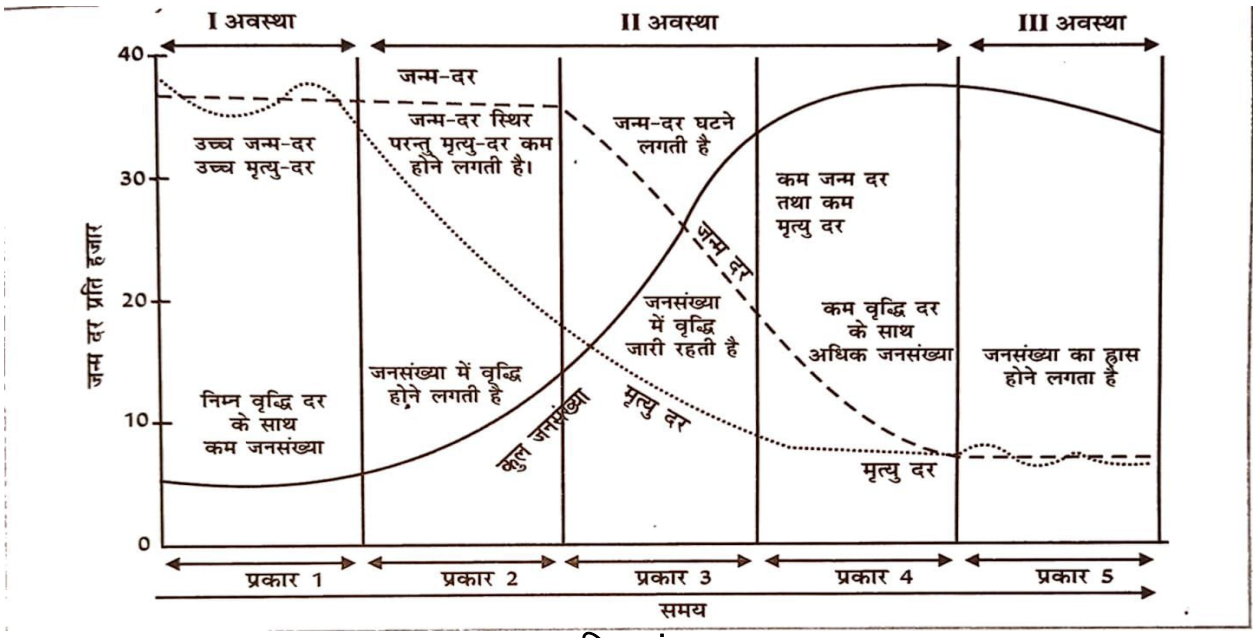

चित्र सं– 12.3

द्वितीय अवस्था :–

यह अवस्था औद्योगिक क्रान्ति की अवस्था के साथ प्रारम्भ होती है जो कि आर्थिक विकास की प्रारम्भिक अवस्था की विशेषता है। औद्योगिक क्रान्ति के काल में (18वीं से 19वीं सदी) यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका ने विभिन्न देशों में एक क्रान्ति को जन्म दिया। इस समय यूरोप के साथ विश्व भर में परिवहन, चिकित्सा तथा कृषि के क्षेत्र में क्रांतिक परिवर्तन किया। जीवन स्तर और खान–पान के स्तर को ऊँचा उठाया। विभिन्न प्रकार की सुविधाओं (स्वास्थ्य, कृषि, भोजन) में विकास से मृत्युदर में तेजी से कमीं आयी लेकिन जन्मदर समृद्धि के प्रारम्भिक काल से ही ऊँची बनी रही। हालॉकि इसमें भी कमी अभी प्रारम्भ हुई लेकिन धीमी गति से क्योंकि बदलेती हुई। यह स्तर सभी स्तरों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जनांकिकी संक्रमण की इस अवस्था को निम्नलिखित तीन भागों में वर्गीकृत किया जाता हैं–

प्रकार 2 :–

यह अवस्था जनसंख्या विस्फोट की अवस्था है, तथा इसे प्रसरणशील अथवा युवा जनांकिकी अवधि के

नाम से भी जाना जाता है। इस अवस्था में जन्मदर उच्च होती है और मृत्युदर में तेजी से गिरावट आने लगती है। इस अवस्था में जन्मदर लगभग 35/हजार बनी रहती है जबकि मृत्युदर 35/हजार से नीचे गिरकर 20/हजार तक चली जाती है। इसका परिणाम होता है कि जनसंख्या में तीव्र गति से बढ़ने लगती है। विश्व के लगभग सभी विकासशील देश इस अवस्था से गुजर रहे हैं।

प्रकार 3 :–

यह परवर्ती प्रसरणशील जनांकिकी अवधि के नाम से जानी जाती है। इसमें जन्मदर में कमी आने लगती है जो कि मृत्युदर की तुलना में अधिक होती है। जन्मदर 35/हजार से घटकर 20 तक चली जाती है जबकि मृत्युदर 20 प्रति हजार से घटकर 13 से 15 प्रति हजार ही रहती है अर्थात जन्मदर में 15 प्रति हजार की गिरावट आती है। हालॉकि जनसंख्या वृद्धि जारी रहती है परन्तु उसकी दर में कमी आ जाती है भारत इस अवस्था को प्राप्त करने वाला देश है।

प्रकार 4 :–

इस अवस्था को निम्न परिवर्तन की अवस्था कह सकते हैं जिसमें जन्मदर एवं मृत्युदर दोनों निम्न होते हैं तथा जनसंख्या पर स्थिर अवस्था को प्राप्त हो जाती है। पश्चिम के अधिकांश देश इस अवस्था को प्राप्त कर चुके है। 21वीं सदी के मध्य में इस अवस्था को प्राप्त कर लेगा। जब यहां की जनसंख्या वृद्धिदर शून्य को प्राप्त हो जायेगी।

तृतीय अवस्था (प्रकार–5):–

यह जनांकिकी संक्रमण की अन्तिम अवस्था है जिसमें जन्मदर मृत्युदर से कम हो जाती है और जनसंख्या में ह्रास होने लगता है अर्थात नकारात्मक वृद्धि होने लगती है। आस्ट्रिया, बुल्गारिया, क्रोएशिया, चेक गणराज्य, एस्टोनिया, आदि इस अवस्था को प्राप्त कर लेने वाले देश हैं। इस अवस्था में जनसंख्या अत्यधिक औद्योगीकृत और नगरीकृत हो जाती है। परिवार के आकार पर नियंन्त्रण जान–बूझ कर रखा जाता है। रूस भी इस अवस्था को प्राप्त कर लेने वाला देश है।

यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में पायी जाने वाली जनांकिकीय प्रवृत्तियां विकासशील विश्व में नहीं पायी जाती। विभिन्न स्वास्थ्य सेवाओं के उच्चीकरण और जीवन प्रत्याशा में वृद्धि के परिणाम स्वरूप इन देशों में दशकों से जनसंख्या वृद्धि देखी गयी है लेकिन विकासशील देशों में एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुॅचने की अवस्था में काफी अन्तर है। विकासशील देशों में चलाई जा रही परिवार नियोजन योजनाओं का प्रभाव जनसंख्या वृद्धि में कमी के रूप में देखा जा सकता है। सबसे महत्वपूर्ण कमी उन लैटिन अमेरिका एवं एशियाई देशों में आयी है जहां पर परिवार नियोजन के अपनाए जाने से सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रभाव स्वरूप जन्मदर में कमी आयी है। लेकिन अधिकांश अफ्रीकी तथा एशियाई तथा लैटिन अमेरिकी देशों में जनांकिकी संक्रमण की उच्च जनसंख्या वृद्धि दशकों से बनी हुई है। इसका प्रमुख कारण परम्परागत रूप से उच्च प्रजनन दर के महत्व का बना रहना है।

जन्मदर तथा मृत्युदर के अतिरिक्त प्रजनन दर आयु संरचना तथा जनसंख्या संचालन के द्वारा जनांकिकी परिवर्तन का अनुमान लगाया जाता है यथा–

01– कुल प्रजनन दर– किसी स्त्री से पैदा होने वाले शिशुओं की औसत संख्या का कुल प्रजनन दर के नाम से जाना जाता है। यदि यह दर–2 है तो इसका तात्पर्य है शून्य जनसंख्या वृद्धि सन् 2000 में विश्व में औसत प्रजनन दर 2.6 शिशु प्रति महिला थी। यह दर विकसित देशों में 1.5 तथा विकासशील देशों में 9 थी।

02– जनसंख्या संरचनाः– यह जन्मदर पर सीधा प्रभाव डालती है। आयु संरचना आवश्यक रूप से जनसंख्या संरचना को प्रभावित करती है।

03– जनसंख्या संचलनः– जहां नवीन मानव बसाव होता है। वहां जन्मदर उच्च पायी जाती है।

जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की आलोचना :–

जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त तथ्यों पर आधारित होने के कारण विभिन्न विद्धानों द्वारा पूरी तरह से वैध माना गया एवं एवं इसकी प्रशंसा हुई परन्तु कुछ बिन्दुओं को लेकर इस सिद्धान्त की आलोचना भी की जाती है–

01– इस सिद्धान्त की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि यह सिद्धान्त यूरोप, आंग्ल अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया के अनुभविक प्रेक्षणों पर आधारित है। विश्व के अन्य भागों के लिए यह सिद्धान्त उपयोगी नहीं है।

02– प्रसिद्ध विद्वान लौसिकी तथा वाइल्ड कोष ने बताया कि यह सिद्धान्त भविष्यवाणी करने में सक्षम नहीं है और न ही इसकी तीनों अवस्थाएं क्रमिक एवं अनिवार्य हैं।

03– स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं का विस्तार करके मृत्युदर पर नियंत्रण लगाया जा सकता है। इससे जनांकिकी संक्रमण मॉडल का क्रम भंग हो सकता है।

इस सिद्धान्त के उपरोक्त आलोचनाओं के बाद भी यह सिद्धान्त विश्व के जनांकिकी इतिहास को प्रभावशील ढंग से प्रस्तुत करता है। यदि किसी प्रदेश की प्राकृतिक परिस्थितियों का उचित ढंग से अध्ययन किया जाए तो यह मॉडल उस क्षेत्र की जनांकिकी परिस्थितियों को सरलतापूर्वक स्पष्ट कर सकता है।

12.8 सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त

यह सिद्धान्त मूल रूप से मानव संस्कृति एवं मानवीय आचरण पर आधारित है। इसके अन्तर्गत मानव के आचरण तथा संस्कृति को जनसंख्या वृद्धि हेतु उत्तरदायी बताया गया है। विश्व का प्राचीनतम विकसित भाग प0 यूरोप को माना जाता है जहाँ पर उच्च आर्थिक सुविधाएं एवं उच्च जीवन यापन करने वाले लोग निवास करते हैं लेकिन यहाँ पर जनसंख्या वृद्धि सामान्य है अर्थात जनसंख्या में कोई विशेष वृद्धि देखने को नहीं मिलेती है क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार उच्च जीवन स्तर एवं उच्च आर्थिक सुविधाएं संतति जनन हेतु बाधक मानी गई हैं। नगरीकरण स्त्रियों की स्वतंत्रता को भी निम्न प्रजनन से जोड़ा जाता है। प्रायः यह देखने को मिलता है कि मनुष्य जब सामाजिक प्रतिष्ठा, स्वतंत्रता, आर्थिक विकास एवं औद्योगिक विकास हेतु सत्त् प्रयत्नशील रहता है तो परिवार बढ़ाने या संतानोत्पत्ति के प्रति उदासीन हो जाता है अथवा इसे नियंत्रित कर देता है।

इसके विपरीत ऐसे प्रदेश जहाँ पर लोगों के पास पर्याप्त समय है एवं अनुकूल पर्यावरणीय दशाएं विद्यमान होती हैं तो यहां के लोग संतति जनन में आगे होते हैं। कुछ सम्प्रदायों की संस्कृति बड़े परिवार को महत्व देने वाली होती है। ऐसी दशा में उस क्षेत्र में उच्च जन्मदर पायी जाती है द0 पूर्वी एशिया, दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया की संस्कृति एवं सामाजिक दशाएं सन्तानोत्पत्ति के लिए अनुकूल मानी गयी है। परिणाम स्वरूप यह क्षेत्र विश्व का एक बड़ा जनसंख्या पुंज धारित करता है।

सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त के प्रमुख प्रवर्तक हैं।

i. टू मात्र का सामाजिक उत्प्रेरकता
ii. फेटर का स्वेच्छा संतति निषेध
iii. ब्रेटन की बढ़ती समृद्धि का सिद्धान्त
iv. टेन वर्ग का तार्किकता का सिद्धान्त

उपरोक्त विद्वानों ने सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धान्त के द्वारा जनसंख्या सम्बन्धी विभिन्न विषयों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

उपरोक्त के अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि से सम्बन्धित अनेकों सिद्धान्तों का प्रतिपादन विभिन्न विद्वानों यथा थामस सैडलर का घनत्व एवं प्रजननता का सिद्धान्त, थामस डवलेड का जनसंख्या वृद्धि का आधार सिद्धान्त, कारोडीगिनी का विकासवादी सिद्धान्त, कार्ल मार्क्स का पूँजी संचय सिद्धान्त आदि हैं जो जनसंख्या वृद्धि के सन्दर्भ में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

अनुकूलतम जनसंख्या की संकल्पनाः–

अनुकूलतम जनसंख्या से तात्पर्य किसी देश या प्रदेश की उस जनसंख्या से है जिसमें संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग होता हो, जो अधिकतम उत्पादन सम्भव करती हो। प्रतिव्यक्ति आय और जीवन स्तर उच्च हो तथा अधिकतम आर्थिक कल्याण प्रदान करती हो। इस प्रकार एक विशेष समय तथा एक परिस्थिति में उसी जनसंख्या को हम अनुकूलतम जनसंख्या कह सकते हैं जिसमें प्रतिव्यक्ति आय अधिकतम हो।

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ डाल्टन के अनुसार ''अनुकूलतम जनसंख्या वह होती है जो प्रतिव्यक्ति अधिकतम आय प्रदान करती हो।''

प्रो0 राबिन्सन के अनुसारः– ''अनुकूलतम जनसंख्या वह है जिससे अधिकतम उत्पादन सम्भव होता है।''

प्रो0 कारसैण्डर्स के अनुसारः– ''अनुकूलतम जनसंख्या वह है जो अधिकतम आर्थिक कल्याण उत्पन्न करती हो।''

प्रो0 आर0 सी0 चन्दना के अनुसार :– ''अनुकूलतम जनसंख्या संसाधनों और जनसंख्या के मध्य सन्तुलन की वह दशा है जो किसी समाज के सभी सदस्यों की सुनिश्चित आवश्यकताओं की पूर्ति करती है तथा जो काल या स्थान के सन्दर्भ में परिवर्तनशील है।''

12.8 सारांश

इस प्रकार आपने देखा कि जनसंख्या एक संसाधन है एवं इसे जनसंख्या संसाधन प्रदेशों में भी बांटा गया है। मानव इस धरातल का अनमोल प्राणी है एवं धरातलीय एवं जलवायुगत तथा अनेक सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण जनसंख्या कहीं सघन है तो कहीं विरल और कुछ क्षेत्र तो जन रिक्त हैं लेकिन अनुकूल दशाओं में जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती है और भी अनेकों कारण ऐसे हैं जो जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करते हैं। इस इकाई में लेखक नें जनसंख्या वृद्धि से सम्बन्धित विभिन्न सिद्धान्तों का सचित्र विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है ऐसी अपेक्षा है कि इन सिद्धान्तों के अध्ययन से छात्र/छात्राओं को जनसंख्या सम्बन्धी आंकडो को समझकर जन्मदर, मृत्युदर और अन्य तथ्यों को समझकर आगे की नीति निर्धारण में प्रेरणा मिलेगी।

12.9 पारिभाषिक शब्दावली

01– जनसंख्या चक्रः–जनसंख्या संक्रमण सिद्धान्त को कुछ विद्वान जनसंख्या चक्र की संज्ञा देते हैं।

02– निरोधक या निवारक उपायः–यह जनसंख्या को रोकने के उपाय हैं जिसमें नैतिक नियंत्रण, वैश्विक निरोध, विवाह से निवृत्ति, संयमित वैवाहिक जीवन और देर से विवाह सम्मिलित हैं।

03– सकारात्मक निरोधः–यह भी जनसंख्या वृद्धि को कम करने के प्राकृतिक, नैसर्गिक प्रक्रिया है जिसमें युद्ध, संक्रामक बीमारियां, दुर्भिक्ष, शिशु हत्याएं, प्लेग आदि सम्मिलित हैं।

12.10 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्र0 1– जनसंख्या चक्र से आप क्या समझते हैं। सोउदाहरण स्पष्ट कीजिए ?

प्र 2– जनसंख्या वृद्धि के माल्थस के सिद्धान्त का समीक्षात्मक परीक्षण कीजिए।

प्र 3– जनसंख्या वृद्धि के नव माल्थस सिद्धान्त का परीक्षण कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र0 1– जनसंख्या वृद्धि के सामाजिक–सांस्कृतिक सिद्धान्त को स्पष्ट कीजिए।

प्र0 2– जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्तों के पांच प्रकारों का वर्णन कीजिए।

वैकल्पिक प्रश्नेत्तरः–

प्र0 1– माल्थस ने जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रतिपादन कब किया

अ– 1978 ई0 **ब– 1798 ई0**

स– 1800 ई0 **द– 1830 ई0**

प्र0 2– Principal of Population ''जनसंख्या का सिद्धान्त'' रचना है।

अ– माल्थस **ब–** मार्क्स

स– नोटेस्टीन **द–** सैडलर

प्र0 3– किस विद्वान ने कहा है कि जनसंख्या ज्यामितीय अनुपात में बढ़ती है।

अ– मार्क्स ब– थाम्पसन

स– माल्थस द– पी ब्लेकर

प्र 4– माल्थस के अनुसारजनसंख्या कितने वर्षों में दोगुनी हो जाती है।

अ– 20 ब– 25

स– 30 द– 40

प्र0 5– जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वाले विद्वान हैं।

अ– थाम्सन व नैटिस्टीन ब– माल्थस

स– सैडलर द– मार्क्स

प्र0 6– जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया।

अ– 1910 ई0 ब– 1929 ई0

स– 1940 ई0 द– 1890 ई0

प्र0 7– जनांकिकी संक्रमण की अन्तिम अवस्थाएं हैं।

अ– जनसंख्या में तीव्र वृद्धि ब– जनसंख्या में मध्यम वृद्धि

स– जनसंख्या में ऋणात्मक वृद्धि द– उपरोक्त में से कोई नहीं

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

6. मानव भूगोल, प्रो0 बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20 ए यूनिवर्सिटी रोड प्रयागराज पृ0सं0 250, 251, 253।

7. मानव भूगोल, डॉ0 मो0 हारुन, विजडम पब्लिकेशन मैदागिन वाराणसी तृतीय संस्करण–2018, पृ0सं0 95, 97, 98, 102।

8. मानव भूगोल, माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण, पृ0सं0 104, 105, 112।

9. भूगोल मुख्य परीक्षा के लिए, डी0आर खुल्लर, मैग्राहिल प्रकाशन, 12वां पुनः संस्करण पृ0सं0 8.35, 8.36, 8.37, 8.41, 8.42।

इकाई–13 मानव अधिवास–अधिवास की परिभाषा, अधिवास के तत्व

इकाई की रूपरेखा

13.1– प्रस्तावना

13.2– उद्देश्य

13.3– मानव अधिवास

13.3 अ– मानव अधिवास का अर्थ

13.3 ब– मानव अधिवास की परिभाषा

13.4– मानव अधिवासों का उद्भव

13.5– अधिवासों का स्थान

13.6– अधिवास के तत्व

13.6.1– समांग या समरूपी तत्व

13.6.2– केन्द्रीय भाग

13.6.3– मानव के अधिवास के परिसंचरण या परिवहन भाग

13.7– सारांश

13.8– बोध प्रश्न

13.9– संदर्भ ग्रन्थ सूची

13.1 प्रस्तावना (PREFACE)

इस धरातल पर दो प्रमुख तत्व पाये जाते हैं। प्रथम प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधन (मिट्टी, वनस्पति, जलवायु, वायु आदि) तथा दूसरे वो तत्व हैं, जो इन प्राकृतिक संसाधनों मेंपरिवर्तन कर बनाये जाते हैं जिन्हें सांस्कृतिक भूदृश्य (मानव निवास (अधिवास) भोजन, वस्त्र, परिवहन, उद्योग, संचार आदि) कहा जाता है। मानव अधिवास मानव द्वारा निर्मित ऐसी संरचना है जिसे मानव अपने रहने एवं अपने एवं अपने परिवार की सुरक्षा हेतु बनाता है। यह सांस्कृतिक भू–दृश्य में सर्वप्रमुख तत्व है। ऐसे प्रदेश जहां पर अधिवासों की उपस्थिति होती है उसे मानव अधिवासी क्षेत्र तथा ऐसे प्रदेश जहां पर अधिवासों की उपस्थिति नहीं पायी जाती है उसे निरधिवासी क्षेत्र कहते हैं। कहना अतिशयोक्ति न होगा कि मानव अधिवास ही वह कारण है जो मानव जीवन को मूलतः सुरक्षित रख उसके अस्तित्व को आधार प्रदान करते है। विश्व के लगभग समस्त भूभागों की परिस्थितियां अलग–अलग पायी जाती हैं तथा इन परिस्थितियों में परिवर्तन कर निर्मित किए गए अधिवासों में भी विभिन्नता पायी जाती है लेकिन किसी भी प्रदेश के अधिवास क्यों न हों उनमें कुछ उभयनिष्ठ विशेषताएं पायी जाती हैं। इन विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

1. इन अधिवासों में मानव एक सामाजिक प्राणी की भांति जीवन व्यतीत करता है। वह आपस में विचारों एवं वस्तुओं का आदान–प्रदान करते हैं।
2. इन अधिवासों में प्राथमिक इकाई इनमें बने हुए मकान या गृह होते हैं। वे चाहे किसी भी पदार्थ– ईंट, पत्थर, घास–फूस, कंकरीट के बने हों या लकड़ी के बने हों।
3. अधिवास एक दूसरे से विभिन्न प्रकार के मार्गों (रेल एवं सड़क) से जूड़े होते हैं तथा इन अधिवासों के मकान एवं गृह पगडंडियों, गलियों, अथवा सड़कों द्वारा आपस में सम्बन्धित होते है।

ग्रामीण एवं नगरीय सभ्यता के अध्ययन के लिए मानव अधिवासों का अध्ययन आवश्यक है। अतः अधिवासों के विकास, अधिवासों की स्थिति, विन्यास एवं स्वरुपों को समझने के लिए मानव अधिवासों का अध्ययन आवश्यक हैं। विद्वानों ने मानव अधिवास को विभिन्न स्वरुपों में व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है। इसके साथ–साथ

अधिवासों के तत्वों, प्रकारों एवं इसकी विशेषताओं का अध्ययन प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत इकाई में नगरीय अधिवासों के इन्हीं तत्वों का अध्ययन विशद रूप में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यह इकाई मानव अधिवासों के सम्बन्ध में विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्वि करेगी।

13.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. मानव अधिवास मानव सभ्यता के प्रतीक के रूप में माने जाते हैं। किसी भी क्षेत्र के अधिवास वहां के मानव समुदाय की सोंच एवं विचारधारा को प्रकट करते है। प्रस्तुत इकाई विभिन्न प्रदेशों के अधिवास सम्बन्धी सोंच को समझने में सहायक होगी।
2. विभिन्न परिभाषाओं के माध्यम से मानव अधिवास के मूल अर्थ को समझाने का प्रयास करना।
3. मानव अधिवास की परिभाषाओं के माध्यम से मानव अधिवास की प्रवृत्तियों एवं आधुनिक नव प्रवृत्तियों को समझाने का प्रयास करना।
4. मानव अधिवास के विभिन्न तत्वों (स्थैतिक एवं गतिक) को स्पष्ट रूप से प्रकट करना।
5. मानव अधिवास के प्रमुख घटक यथा मानव आवास, गृह, इनके निर्माण की सामग्री को बताना एवं इनमें सम्भावित सकारात्मक परिवर्तन करने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित करता है।
6. इस इकाई के माध्यम से यह समझाना कि मानव अधिवास के तत्वों के निर्माण में किन सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है।
7. इस इकाई के माध्यम से छात्र/छात्राओं के अधिवासों से सम्बन्धित ज्ञान में वृद्धि करना।

13.3– मानव अधिवास (HUMAN SETTELMENT)

मानव अधिवास इस धरातल पर मनुष्य के उपस्थित होने एवं क्रियाशील होने का प्रमुख संकेत है। मनुष्य अपने उत्पत्ति काल में अविकसित अवस्था में था। उसे भोजन का कोई विशेष ज्ञान नहीं था अर्थात वह कन्द–मूल फल एवं पेड़ों से प्राप्त वस्तुओं का भोजन के रूप में उपयोग करता था। इसके साथ–साथ जानवरों को मारकर कच्चे ही मांस का सेवन करता था। लेकिन समयोपरांत मानव के ज्ञान एवं बुद्धि तथा कौशल का विकास हुआ और आग के आविष्कार के परिणाम स्वरूप कच्चे मांस को पकाकर खाने की परम्परा का विकास हुआ और मानव अपनी सभ्यता के निर्माण की और अग्रसर हुआ। इसके साथ मनुष्य अपने जन्म के समय खानाबदोसी का जीवन व्यतीत करता था। कहीं गुफाओं में तो कहीं पर पेड़ों पर निवास करता था, अर्थात् वह ऐसे ही प्राकृतिक आवास में अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। इसके कारण मनुष्य को कभी–कभी नुकसान भी उठाना पड़ता था। प्रथम, वह प्रकृति की शीत, गर्मी एवं बरसात एवं अन्य प्राकृतिक आपदाओं से असुरक्षित था तो दूसरी और विभिन्न प्रकार के कीड़े मकोड़ों एवं जंगली जानवरों का कोप–भाजन होना पड़ता था। उपरोक्त तथ्यों से तात्पर्य यह है कि मनुष्य एक असुरक्षित वातावरण में निवास करता था।

मनुष्य के अग्नि के आविष्कार ने मनुष्य के जीवन में एक विशेष परिवर्तन को जन्म दिया। प्रथम तो भोजन को पकाकर खाने लगा। इसके अलावा मनुष्य ने अपनी बुद्धि एवं कौशल के बल पर प्रकृति प्रदत्त भौतिक वातावरण में अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तन करना प्रारम्भ किया और इसने इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप एक सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया जिसमें मानव का अधिवास सर्व प्रमुख है। मानव धीरे–धीरे समूह में रहने लगा और यह समूह वृहद होने से लोगों का समूह बड़ा होने लगा। इससे लोगों को रहने के लिए आवास एवं सुरक्षा के लिए एक आश्रय प्राप्त हो गया। सामान्य रुप से यही विचार मानव अधिवासों की उत्पत्ति के सन्दर्भ में सर्वग्राह्य माना जाता है। मानव अधिवास में विभिन्न प्रकार की असुविधाओं को सम्मिलित किया जा सकता है जैसे मानव निवास गृह, मार्ग, कृषि कार्य (घरेलू), पशुपालन, संचार एवं अन्य सेवाएं। इस प्रकार कह सकते हैं कि मनुष्य का भोजन के पश्चात आश्रय महत्वपूर्ण आवश्यकता है। मौसम एवं जलवायु की विषमताओं तथा विभिन्न प्रकार के संकेतों से अपनी सुरक्षा तथा सामाजिक जीवन के लिए घरों का निर्माण एवं अधिवासों (बस्तियों) का विकास करता है। वास्तव में अधिवास मानव का भौतिक पर्यावरण में अपने आपको अनुकूलन की और एक महत्वपूर्ण कदम है।

अधिवास जो कि मानव से सम्बन्धित प्रमुख सांस्कृतिक भू–दृश्य है। प्राचीन काल से विद्धानों के अध्ययन

का केन्द्र बिन्दु रहता है। मानवशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, नृजाति विज्ञानियों, अर्थशास्त्रियों एवं भूगोलविदों द्वारा ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों के प्रश्न पर गहराई से उत्तरोत्तर अध्ययन किया गया है। हालांकि इन विद्धानों ने इस विषय में विभिन्न उद्देश्यों एवं विधियों का प्रयोग किया है। आज भी मानव अधिवास के सन्दर्भ में विद्धान निरन्तर अध्ययन कर रहें हैं। आज अधिवासीय विकास के सन्दर्भ में विभिन्न विद्धानों द्वारा अनेकों प्रकार के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। वर्तमान मानव प्रवृत्तिएकांकी नहीं है बल्कि वह अलग–अलग न रहकर समूहों में आवास का निर्माण करके रहता है। सम्पूर्ण विश्व का एक न्यून भाग ही अधिवासों के अन्तर्गत अधिग्रहीत है अर्थात विश्व के कम क्षेत्रफल पर इनका विस्तार पाया जाता है परन्तु इनके द्वारा विश्व की संस्कृति अधिक प्रभावित है। अधिवास विश्व की सांस्कृतिक सम्पत्ति के भण्डार के केन्द्र साथ–साथ आर्थिक, सामाजिक, और राजनैतिक, नवाचार, प्रतिमानों के प्रसार के लिए उद्भव के बिन्दु रहे हैं। सांस्कृतिक कार्यो के कारण ही अधिवासों का अध्ययन मानव भूगोल का आधार रहा है (मानव भूगोल मानव के सांस्कृतिक स्वरूपों का अध्ययन करता है)। मूलरूप में यदि अवलोकन किया जाये तो स्पष्ट होता है कि वास्तव में किसी विशेष प्रदेश के अधिवास प्राकृतिक पर्यावरण के साथ मानव के अन्तर्सम्बन्धों को प्रतिबिम्बित करते हैं।

मानव अधिवास या बस्ती जिसमें मानव समुदाय निवास करते हैं और विविध कार्यों जैसे कृषि, पशुपालन, उद्योग, व्यापार, परिवहन, शिक्षा, प्रशासन आदि को संचालित करते हैं को अधिवास की संज्ञा दी जाती है। अधिवास सामान्यतया भवनों या गृहों का समूह होता है। भूतल के जिस स्थान पर कुछ गृह या गृहों का समूह निर्मित होते हैं सामान्यतः उसे अधिवास या बस्ती (Settlement) कहते हैं। अधिवास भूगोल मानव भूगोल की एक विशिष्ट शाखा है जिसमें अधिवासों के विभिन्न पक्षों का भौगोलिक अध्ययन किया जाता है। मानव भूगोल मानवीय या सांस्कृतिक भूदृश्यों का अध्ययन क्षेत्रीय (स्थानिक) भिन्नता के परिप्रेक्ष्य में करता है। मानव द्वारा निर्मित या संशोधित समस्त भूदृश्य सांस्कृतिक भूदृश्य कहलाते हैं। सांस्कृतिक भूदृश्यों (Cultural Landscape) सर्वाधिक स्पष्ट एवं महत्वपूर्ण रचना है। मानव अधिवास या बस्ती जिसमें मानव समुदाय रहते हैं।

अधिवास एक विस्तृत शब्दावली है जिसमें एक–दो गृहों या कुछ गृहों वाले अत्यन्त लघु पुरवा से लेकर हजारों संकेद्रित एवं गगनचुम्बी भवनों वाले महानगरों तक को समाहित किया जाता है। मकान (गृह) और मार्गों के संयोग से ही अधिवास निर्मित होते हैं। विभिन्न गृहों में आने–जाने के लिए मार्गों या रास्तों की अनिवार्यता होती है। या कह सकते हैं कि इनके द्वारा ही अधिवास की आन्तरिक संरचना एवं वाह्य आकृति का निर्धारण होता है। अधिवास भूगोल छोटी–बड़ी, स्थाई–अस्थाई, प्राचीन, नवीन, टूटी–फूटी झोपड़ी से लेकर बृहत अट्टालिकाएं हों सभी प्रकार की बस्तियों का अध्ययन करता है। इस सम्बन्ध निम्न तथ्यों का उल्लेख करना समीचीन होगा–

- किसी आर्द्र भूमि के शुष्क भाग में स्थित बस्तियों को शुष्क स्थल बस्तियां या शुष्क स्थल अधिवास (Dry point Settlement) कहा जाता है। जैसे–डेल्टाई क्षेत्रों एवं समुद्र तटीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली बस्तियां।
- किसी शुष्क भूमि में जल की सुविधा के निकट स्थित बस्तियों या अधिवासों को आर्द्र स्थल बस्तियां या आर्द्र स्थल अधिवास (Wet point Settlement) कहा जाता है।
- किसी किले के चारों और स्थित अधिवासों को मजबूत स्थल अधिवास (Strong point Settlement) कहा जाता है।

13.3 अ– मानव अधिवास का अर्थ (Meaning of Settelement)

मानव द्वारा निर्मित या संशोधित सभी प्रकार के भू–दृश्य सांस्कतिक भू–दृश्य कहलाते हैं। सांस्कृतिक भू–दृश्यों में अधिवास सबसे अधिक स्पष्ट एवं महत्वपूर्ण रचना है जिसका निर्माण मनुष्य ने अपने रहने के लिए, कार्य सम्पादन के लिए, अपने विभिन्न कार्यों द्वारा अर्जित की गयी सामग्रियों के संग्रहण के लिए, अपने पालतू पशुओं के रहने के लिए एवं विभिन्न प्रकार के सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक गतिविधियों के संपादन के लिए निर्मित करता है। अधिवास या बस्ती शब्द अंग्रेजी भाषा के Settlement का हिन्दी रूपान्तर है जिसका सामान्य अर्थ होता है '**बसाव इकाई के रूप में मानव समूह**'। सामान्य रूप में अधिवास का अर्थ उस मानव समूह एवं उसके निवास के लिए निर्मित आवासीय समूह है जो एक दूसरे को सेवाएं प्रदान करने के लिए बनाया जाता है। अधिवास गृहों एवं भवनों का एक समूह होता है जिसमें मनुष्य अपने नित्य एवं आवश्यक क्रियाकलापों का सम्पादन करता है, अर्थात् गृह अधिवास के प्रमुख घटक होते हैं। इसके अलावा इन गृहों को जोड़ने एवं विभिन्न

आवासीय समूहों को जोड़ने के लिए मार्ग, बाग–बगीचे, खेत–खलिहान, खेल के मैदान आदि भी इससे विशेष रूप से सम्बन्धित होते हैं।

प्रसिद्ध फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता **जीन ब्रून्श ने** गृह एवं मार्ग को मानव भूगोल के तीन प्रमुख घटकों (वर्गों) में से एक बताया। **ब्रून्श** के अनुसार अधिवास मानवीय रचनाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं दूर से ही दिखाई देने वाली ठोस रचना है, जिसका निर्माण मनुष्य अपने निवास एवं अन्य कार्यों के लिए भी करता है। ब्रून्श ने मकानों एवं मार्गों के अन्तर्गत उपयोग की जाने वाली भूमि को मिट्टी के अनुत्पादक उपयोग (Unproductive Occupation of Soil) के रूप में बताया, क्योंकि इसके अन्तर्गत उपयोग की जाने वाली भूमि का उपयोग कृषि अथवा पशुपालन के लिए नहीं किया जा सकता। अधिवास में जिस भूमि का उपयोग किया जाता है वह प्रायः उपजाऊ ही होती है। क्योंकि अधिवासों का सबसे प्रमुख तत्व मानव समुदाय उन्हीं प्रदेशों में बसता है जहां पर उपजाऊ भूमि पायी जाती है और कृषि कार्यों के लिए उपलब्ध होती है। इस प्रकार अधिवास ऐसी रचना है जहां पर मनुष्य अपने जीवन से सम्बन्धित विविध क्रियाओं को सम्पादित करता है। इस प्रकार के ठोस प्रारूपों में मनुष्य भोजन, भोजन संगहण, खेल, मनोरंजन, कृषि कार्य, पशुपालन, परिवहन, प्रशासनिक, सामाजिक एवं राजनीतिक क्रियाओं को सुचारु एवं व्यवस्थित रूप से करता है तथा ये अधिवास मनुष्य को विभिन्न सुविधाओं के साथ–साथ सुरक्षा प्रदान करते हैं।

13.3 ब– अधिवास की परिभाषा (Definition of Settlement)

अधिवास भूगोल मुख्य रूप से मानव अधिवास का भूगोल है जिसके अन्तर्गत अधिवासों की उत्पत्ति एवं विकास, अवस्थिति, प्रतिरूपों, आकारिकी तथा पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना की जाती है। वास्तव में अधिवास भूगोल उन समस्त तथ्यों से सम्बन्धित है जिन्हें मानव अपने बसाव प्रक्रिया में उपयोग करता है। मानव जीवन की तीन प्रमुख आवश्यकताओं में आवास महत्वपूर्ण घटक है। मानव समुदाय अपने रहने, भोजन संग्रह, व्यापार तथा अन्य अनेक आवश्यकताओं के लिए आवास का निर्माण करता है। मौसम के आकस्मिक बदलाव से अपने को बचाने के लिए तथा सामाजिक जीवन व्यतीत करने के लिए अधिवासों का निर्माण करता है। कहा जा सकता है कि मानव द्वारा अधिवासों की रचना इस मानव जीवन की एक प्रमुख घटना है।

मानव अधिवास पृथ्वी तल पर मानव परिवार या समूह द्वारा स्थापित निवास्य या दखल की हुई वृहत्तम इकाई (Occupance Unit) है। वृहत्तर सन्दर्भ में इस इकाई में घर–आंगन, गली–कूचे, गोदाम, मकान, पशुशाला, फुलवारी–बगीचे, खेत–खलिहान, सड़क, परिवहन के साधन टेलीफोन या बिजली के खम्भे, रेडियो, टेलीविजन के एण्टीना, मन्दिर, मस्जिद, चर्च, पंचायत, स्कूल, कालेज या अन्य सांस्कृतिक भवन तथा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आजीविका, मनोरंजन (क्लब, मेला, बाजार) प्रदान करने वाली विभिन्न अवस्थापनाएं सम्मिलित होती हैं।[02] ये सभी साधन या अवस्थापनात्मक सुविधाएं मानव समुदाय या समूह को परस्पर सम्बन्धित रखने में सहायता करते हैं, आश्रय एवं प्रेरणा प्रदान करते हैं। अधिवासों का निर्माण विभिन्न उद्दश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। मानव के गृह निर्माण में उद्देश्य के अनुरूप पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। गृहों का निर्माण निवास हेतु, कार्य करने हेतु एवं उत्पादन सामग्रियों को सुरक्षित रखने हेतु किया जाता है। इनके अलावा सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी अधिवासों से ही होती है।

इस प्रकार अधिवास की सबसे अधिक महत्वपूर्ण इकाई मकान (आवास) है जिसका निर्माण विभिन्न प्रकार की सामग्रियों के प्रयोग द्वारा किया जाता है। मकान की दीवारें कच्ची मिट्टी या ईंट, पक्की ईंट, पत्थर आदि से निर्मित की जाती हैं तथा मकानों की छतें झोपड़ी, खपरैल, मिट्टी आदि के साथ–साथ आधुनिक निर्माण सामग्रियों सीमेन्ट, बालू, कंकरीट, लोहा, ईंट, चादरें आदि द्वारा बनायी जाती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि अधिवास शब्द का प्रयोग बहुत व्यापक अर्थ में किया जाता है। वर्तमान में अधिवास का अर्थ एवं स्वरूप बहुत अधिक परिवर्तित हो गया है। आज अधिवास छोटे से बहुत बड़े स्तर तक पाये जाते हैं। ये लघु एवं वृहत्, स्थाई एवं अस्थाई होते हैं जिसका विवरण आगे दिया जायेगा। अधिवासों को विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुसार परिभाषित करने का प्रयास किया है–

1– परपिलऊ (Parpilou) के अनुसार :–

''अधिवास मनुष्य द्वारा अपने वातावरण में अनुकूलन के लिए उठाया गया पहला कदम है।''

2– प्रसिद्ध जर्मन भूगोलविद् **ओट्टो श्लूटर (Otto Schluter)** ने अधिवासों की अवस्थिति, उत्पत्ति एवं विकास, आकार तथा उनके प्राकृतिक पर्यावरण के साथ सम्बन्धों की व्याख्या के साथ ही इनकी वाह्याकृति, आन्तरिक

संरचना, क्षेत्रीय विन्यास आदि के अध्ययन पर बल देते हुए मानव अधिवासों को इस प्रकार परिभाषित किया है–

''मानव अधिवास एकांकी गृह, ग्राम अथवा नगर के अतिरिक्त गृह समूहों का एक पुंज होता है।''

3– ए0 एन0 क्लार्क (A. N. Clark) के अनुसार :–

ए0 एन0 क्लार्क ने **'लॉगमैन शब्दकोष'** में मानव अधिवास को परिभाषित करते हुए कहा है कि–

''मानव निवास का कोई भी स्वरूप यहां तक कि एकल गृह भी अधिवास हो सकता है। यद्यपि यह शब्दावली प्रायः गृह समूह के रूप में प्रयुक्त होती है।''

'A settlement may be 'any form of Human Habitation, evenA single dwelling, Although the term usually Applied to A group of dweling.'**A. N. Clark.**

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि अधिवास एक गृह से लेकर अनेक गृहों का समूह हो सकता है। विश्व में विभिन्न प्रदेशों में जहां पर एकांकी अधिवास हेतु दशाएं पायी जाती हैं वहां पर न्यूनतम गृह वाले अधिवास पाये जाते हैं। उच्च अक्षांशीय क्षेत्रों, मरु प्रदेशों में अधिवास दूर व एकांकी रूप में पाये जाते हैं जबकि मैदानी प्रदेशों में, नदी घाटियों, समुद्र तटीय प्रदेशों में सघन एवं गुच्छित अधिवास पाये जाते हैं। प्रायः इन्हीं प्रकार के अधिवासों के लिए मूल रूप से अधिवास शब्द का प्रयोग किया जाता है।

4– प्रो0 राम लोचन सिंह (Prof. Ram Lochan Singh) :–

''अधिग्रहण इकाई के रूप में अधिवास मानव के संगठित बस्ती को प्रदर्शित करता है। जिसके अन्तर्गत गृह जिनमें वे रहते हैं, कार्य करते हैं, संग्रह करते हैं अथवा उनका अन्य प्रकार से उपयोग करते हैं और मार्ग या गलियां जिनके ऊपर उनका आवागमन होता है, भी समाहित होते हैं।''

"Settlement is An occupance unit represent An organized Colony of Human being, incluling buildings in which they live or work or use them otherwise And the tracts of street over which their movements take place."

इस परिभाषा के अनुसार मानव अधिवास की संगठित बस्ती का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें मानव समुदाय संगठित रूप में निवास करता है एवं अपने जीवन की समस्त प्रमुख आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इन अधिवासों को जिनका कि मानव ने निर्माण किया है विभिन्न रूपों में उपयोग करता है। इसके साथ मार्ग अधिवासों की सर्वप्रमुख विशेषता है जिसका उपयोग मनुष्य समुदाय विभिन्न रूपों यथा आवागमन, माल ढुलाई, कभी–कभी विभिन्न धार्मिक आयोजन, यात्राएं आदि में करता है।

5– कोहन (C. F. Kohen) :–

कोहेन ने गृहों तथा अन्य सुबिधाओं के समूह को अधिवास बताया है। ''सामान्यतः सड़क प्रतिरूपों के केन्द्रीय बिन्दुओं पर अवस्थित व्यक्तिगत गृह तथा अन्य सुविधाएं एक साथ समूह में पायी जाती हैं। ये समूह पदानुक्रम में साधारण खेत गृह से लेकर समिश्र नगरों तथा महानगरों तक पाये जाते हैं और अधिवास समष्टि कहलाते हैं।''

इस प्रकार कहा जा सकता है कि– अधिवास पृथ्वी तल पर मानव द्वारा निर्मित गृहों का समूह होता है जिसके अन्तर्गत सीमित गृहों वाली लघु पल्ली या पुरवा (Hamlet) से लेकर नगर और महानगर तक सभी सम्मिलित होते हैं।

13.4 अधिवासों का उद्भव (Origin of Settlement)

अधिवास या स्थाई मानव निवास कब आरम्भ हुआ तथा इसकी प्रक्रिया क्या रही? इस प्रश्न का उत्तर निश्चित रूप से नहीं दिया जा सकता। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि मानव अधिवास या स्थाई निवास लिखित इतिहास से पूर्व ही हो चुका था, ऐसा अनुमान लगाया जाता है। स्थाई अधिवासों का प्रारम्भ कब एवं क्यों हुआ इस सन्दर्भ में मात्र कल्पना ही की जा सकती है तथा विभिन्न तर्कों के माध्यम से इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया जा सकता है। पौधों को अनुकूल बनाने पशुओं को पालतू बनाने से पूर्व मानव खानाबदोशी जीवन व्यतीत करता था और भोजन की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमता रहता था। बेरों एवं जड़ों को एकत्रित

कर अथवा जंगली पशुओं का शिकार कर भोजन प्राप्त किया जाता था। मानव के रहने के लिए स्थाई अधिवास का प्रायः अभाव पाया जाता था।

विभिन्न इतिहासकारों और सांस्कृतिक एवं नृजातिशास्त्रियों ने मानव अधिवासों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेकों स्पष्टीकरण प्रस्तुत किये हैं और मानव अधिवासों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अपने अनुसार अनेकानेक कारणों की पहचान की है। विद्वानों ने इनकी स्थापना में धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों को अधिवासों की उत्पत्ति का मूल कारण बताया है। इन कारणों को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

13.4.1– धार्मिक कारण (Religious) :–

प्रथम स्थाई अधिवास धार्मिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विशेषकर मृत व्यक्तियों को दफनाने के स्थान के रूप में आते रहे होंगे क्योंकि यदि देखा जाये तो एक कब्र से स्थाई अधिवास कोई स्थल क्या हो सकता है। यह अधिवासों की उत्पत्ति का प्रथम चरण हो सकता है। खानाबदोश जातियों के मृत व्यक्तियों को आदर देने के लिए धार्मिक क्रियाकलाप सम्भवतः किसी व्यक्ति की मृत्यु के उपरान्त होने वाले वार्षिकोत्सव जैसे अवसरों पर प्रार्थना सभाएं होती होंगी। दैनिक जीवन त्यागने वाले व्यक्तियों के लिए स्थाई निवास या विश्राम स्थल स्थापित किए जाने के उपरान्त जाति के लोग उस स्थान पर उचित धार्मिक कार्यो को करने के लिए एक पुजारी की नियुक्ति करते होंगे। समयोपरान्त यह पूजा स्थल (मन्दिर) आकर्षण का केन्द्र बन गये होंगे और इनके चतुर्दिक अधिवासों का निर्माण हुआ होगा। अर्थात इस प्रकार के स्थल अधिवासों की स्थापना में सहायक रहे होंगे। ये कार्य विभिन्न धर्मों में अलग–अलग रूप में रहे होंगे। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि धार्मिक आस्था एवं प्रतिवद्धताएं मानव के स्थाई अधिवास के प्रेरक रहे होंगे।

13.4.2– सांस्कृतिक कारण (Cultural Causes) :–

मानव इस धरातल का सबसे बुद्धिजीवी प्राणी माना जाता है जिसने अपने लिए पहले तो प्राकृतिक अनुकूलन किया परन्तु समय बीतने के बाद इस प्रकृति में परिवर्तन के लिए अपने आप को सक्षम बनाया होगा और अपने लिए अधिवासों का निर्माण किया होगा। स्त्रियों एवं बच्चों को सुरक्षा देने के लिए भी अधिवास काम में लिए जाते रहे होंगे, जिससे कि पुरुषों को भोजन की तलाश में दूर तक जाने का अवसर प्राप्त हो सके। विभिन्न अध्ययनों एवं शोधों से ज्ञात होता है कि पुरुषों द्वारा एकत्र की गयी सामग्री से महिलाएं घर के उपयोग में आने वाली वस्तुएं जैसे वर्तन, टोकरी, वस्त्र एवं विभिन्न पत्थरों से तथा सींगों से गहने तथा अन्य गृहोपयोगी वस्तुओं का निर्माण करती थीं।

13.4.3– राजनीतिक/सैन्य कारण (Political/ Military) :–

मानव अपने उत्पत्ति काल से ही संघर्षशील प्राणी रहा है तथा इसकी अधिकार करने की प्रवृत्ति तथा प्रसारवादी सोंच प्राचीन काल से ही रही है। अन्य जनजातियों के लोगों के आक्रमण के कारण समाज के लोगों, पुजारी, शिक्षक, स्त्रियां और बच्चे असुरक्षित थे। इनकी सुरक्षा के लिए युवाओं को अधिवासों में तैनात किया जाता था। अधिवास ही तत्व थे जहां पर राजनीतिक लोगों (नेताओं) को सुरक्षा की अनुभूति होती थी। विभिन्न प्रकार के राजनीतिक व्यक्तियों के लिए अधिवासों का निर्माण किया गया होगा तथा उन अधिवासों में रहने वाले नेताओं की सुरक्षा के लिए सैनिकों को तैनात किया जाता रहा होगा।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि विभिन्न राजनीतिक एवं सैन्य कारणों से अधिवासों का निर्माण किया गया होगा। अधिवास ऐसी संरचना है जो समाज के किसी भी व्यक्ति चाहे वे समाज के नेता हों, धर्माधिकारी हों या सैन्य अधिकारी अथवा साधारण मानव सभी के लिए आवश्यक होते हैं।

13.4.4– आर्थिक कारण (Economic Causes):–

धार्मिक, सैन्य एवं राजनीतिक व्यक्तियों एवं आश्रितों को भोजन की आपूर्ति लोगों द्वारा शिकार अथवा वनों से संग्रहण करके की जाती थी। अधिवासों में रहने वाले लोगों के लिए भोजन की व्यवस्था, सेवकों (जनजातियों) द्वारा की जाती रही होगी। मानव की भोजन संग्रहण की इस प्रवृत्ति के चलते संग्रहण स्थलों (अधिवासों) की आवश्यकता महसूस की गयी होगी। इसके अलावा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के विनिमय के लिए भी अधिवासों की आवश्यकता महसूस की गयी होगी। धीरे–धीरे विभिन्न आर्थिक क्रियाओं यथा उत्पादन, उपभोग, विनिमय के लिए अधिवासों की रचना की गयी होगी।

13.5 अधिवासों का स्थान (Site of Settlement)

मानव अधिवास विभिन्न प्राकृतिक एवं मानवीय कारकों भूमि, जल, वायु, खनिज एवं संसाधन द्वारा प्रभावित होते हैं। इसके साथ–साथ ये तत्व मानव अधिवास की वृद्धि एवं विकास को भी प्रभावित करते हैं। संसाधनों की क्षमता के अनुसार अधिवास स्थाई और अस्थाई होते हैं। संसाधनों की उपलब्धता यदि स्थाई होती है तो वहां पर स्थाई बस्तियों की उपस्थिति पायी जाती है, जबकि संसाधन की अनुपलब्धता एवं प्राकृतिक अवरोध लोगों को स्थाई अधिवास बनाने के लिए बाध्य करते हैं। एक बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि अधिक दिनों तक संसाधन एवं प्राकृतिक दशाओं की अनुकूलता के कारण ग्रामीण अधिवास नगरीय अधिवासों के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। इनको निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है–

13.5.1– अस्थाई अधिवास (Unstable Settlement) :–

विश्व स्तर पर जनसंख्या के स्वरूप में पर्याप्त विभिन्नता पायी जाती है। कुल जनसंख्या का लगभग 3.5% जनसंख्या घुमक्कड़ी है जिनके अधिवास अस्थाई होते हैं। वास्तव में स्थाई, ग्रामीण एवं नगरीय अधिवास लम्बे उद्विकास के परिणाम हैं। इस धरातल पर अनेक ऐसे मानव वर्ग हैं जो अस्थाई अधिवासों का निर्माण करते हैं। आखेटक, पशुपालक, ऋतु प्रवासी, स्थानान्तरित कृषि करने वाले कृषकों के अधिवास अस्थाई होते हैं क्योंकि समयानुसार ये अपना अधिवास स्थानान्तरित करते रहते हैं। कुछ लोगों (जनजाति एवं स्थानान्तरणशील कृषि करने वाले) को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। घुमक्कड़ प्रायः अपने तम्बू छोटी परिधि में गाड़ते हैं तथा इनके आवास पास–पास होते हैं चित्र सं 13.1।

अरब के बद्दू के **'खाइमास' (Khaimas)**, मध्य एशिया के खिरगीज लोगों के शिविर, अफ्रीकी घुमक्कड़ लोगों के आवास 'क्रॉल' (Cralls), उत्तर पूर्वी भारत के स्थानान्तरणशील कृषि करने वाले किसान (झूमिया) लोगों की स्थाई झोपड़ियां, जम्मू–कष्मीर के गुज्जर एवं बकरवाल लोगों के कोठे (Kothas) बन्दिस (Cattlesheds) अस्थाई अधिवासों के उदाहरण हैं। इसी प्रकार पश्चिमी अफ्रीका प्रदेश के फेन्स (Fens) एवं वियतनाम के मोर्स (Mors) स्थानान्तरित होने वाले गांवों का निर्माण करते हैं। ऐसे गांव एक मौसम में रहते हैं तो दूसरे मौसम में बदल दिये जाते हैं अर्थात् अन्यत्र जाकर नये गांव बनाए जाते हैं।

समस्त प्रकार के आखेटक, खानाबदोश, और भ्रमण करने वाले कृषकों में परस्पर जाति एवं वर्ग आधारित घनिष्ठता पायी जाती है। कुछ समय एक दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप में रहते हैं लेकिन कुछ परिस्थितियों में ये अलग हो जाते हैं और इनके अधिवास विखर जाते हैं। उदाहरण स्वरूप उच्च अक्षांशीय प्रदेशों की एक प्रमुख जनजाति शीत ऋतु में अपने निवास स्थान का निर्णय मौसमी शिकार की उपस्थिति के आधार पर करते हैं। इसके कुछ कारण होते हैं, जब सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में होता है तो यहां पर विकट शीत ऋतु पायी जाती है तथा यहां का पूरा वातावरण अन्धकारपूर्ण हो जाता है, इसके कारण इन जनजातियों की गतिविधियां शिथिल पड़ जाती हैं। इनके भोजन इनके आवास इग्लू (Igloo) के समीप ही संग्रहीत होते हैं और ये लोग एक पुंज के रूप में पुंज बनाकर अधिवासित हो जाते हैं। जब सूर्य भूमध्य रेखा के उत्तर आता है तो इन प्रदेशों में कुछ तापमान बढ़ता है तो एस्किमो लोग अपने–अपने शिकार की तलाश में निकल जाते हैं। और ये लोग अपने पारम्परिक मार्ग का अनुसरण करते हैं जिससे ऋतु परिवर्तन के समय वापस आ सकें। शीत ऋतु जहां इनके अधिवास पुंज के रूप में पास–पास होते हैं वहीं ग्रीष्म ऋतु में अपने अधिवासों को त्यागकर अन्यत्र अपने अधिवास का निर्माण कर लेते हैं। इस अधिवास के उदाहरण जम्मू एवं कश्मीर के गुज्जर एवं बकरवाल जो कि ऋत्विक प्रवास करते हैं में देखे जा सकते हैं। इनके दो प्रकार के आवास होते हैं।

शीत ऋतु में लोग सघन आकृति के गाँवों में निवास करते हैं तथा ग्रीष्म ऋतु में अपनी बकरियों के साथ मध्य हिमालय के ढोंक या मर्ग्स (अल्पाइन चरागाह) पर चढने लगते हैं। जो शीत काल के इनके निवास स्थल से लगभग 200 किमी दूर स्थित होते हैं। ये लोग ऊपर जाने एवं नीचे आने के मार्गों में पड़ने वाले चरागाहों का उपयोग करने के लिए कुछ अस्थाई अधिवासों का (झोपड़ों जो कि अस्थाई होते हैं) का निर्माण करते हैं।

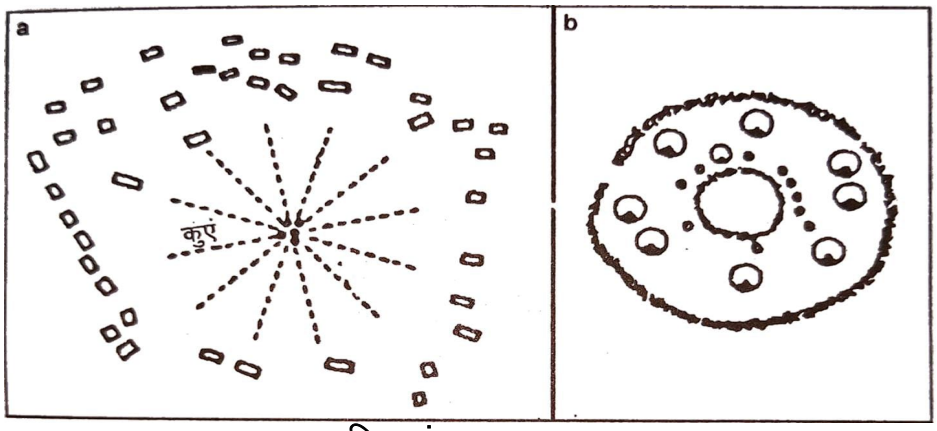

चित्र सं–13.1

स्रोत– मानव भूगोल, हुसैन माजिद, पृष्ठ सं–323

स्थानान्तरणशील कृषि में जंगलों को काटकर या जलाकर साफ किया जाता है तथा कठिन कार्य कर उस भूमि को खेती करने के योग्य बनाये जाते हैं और कृषि कार्य सम्पन्न किया जाता है। इन कृषीय स्थानों पर गाँवों का विकास हो जाता है। इसकी विशेषता यह होती है कि इन प्रदेशों में रासायनिक खादों का प्रयोग प्रायः नहीं किया जाता। परिणाम स्वरूप इन खेतों की उर्वरा शक्ति धीरे–धीरे समाप्त हो जाती है और उत्पादन विल्कुल न्यून हो जाता है। इसलिए ये किसान अन्यत्र जहां पर कृषि कार्य सम्पादित हो सके वहां के लिए प्रस्थान कर जाते हैं और पुनः जंगलों को काटकर कृषि कार्य किया जाता है।

इस प्रकार इन लोगों के द्वारा निर्मित किए जाने वाले अधिवास प्रायः अस्थाई होते हैं। इस प्रकार चलवासी पशुचारण, पशुपालन, स्थानान्तरणशील कृषि आदि में अस्थाई अधिवास पाये जाते हैं। इस प्रकार के अधिवास मरुस्थलों, अर्द्धमरुस्थल क्षेत्रों, टुण्ड्रा, विषुवत रेखीय वन एवं पर्वतीय भागों में पाये जाते हैं। इस प्रकार की जनसंख्या का आकार कुल जनसंख्या में कम (लगभग 02%) है।

13.5.2–स्थाई अधिवास (Stable Settlement) :–

स्थाई अधिवास प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं अर्थात् ऐसे अधिवास जिनका निर्माण उन लोगों के द्वारा किया जाता है जो कि प्राथमिक आर्थिक क्रियाओं कृषि, वानिकी, खनन, मत्स्यन, पशुपालन आदि कार्यों में संलग्न होते हैं। कहने का तात्पर्य है कि इस प्रकार के अधिवास प्रमुख रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं। प्रायः ग्रामीण अधिवासों को कृषि कारखाना भी कहा जाता है।

इस प्रकार स्थाई अधिवास वे अधिवास होते हैं जो एक बार निर्मित हो जाने के बाद स्थानान्तरित नहीं होते वरन् मानव समाज के विकसित होने की दशा में उनमें परिवर्तन अवश्य हो जाता है। अर्थात् प्राथमिक अवस्था में निर्मित गाँव विकसित होकर कस्बा, नगर, और महानगर में परिवर्तित हो जाते हैं। स्थानीय एवं प्रादेशिक स्तर पर इस प्रकार के अधिवासों के अनेकों उदाहरण देखे जा सकते हैं।

13.6अधिवास के तत्व (Elements of Seltlement)

प्रसिद्ध विद्वान **डाकियाडिस** ने बताया कि पारिभाषिक रूप में मानव अधिवास में निहित मानव शब्द अधिवास के प्रारूप और कार्य का द्योतक है। अर्थात यह अधिवास मानव के लिए है न कि पशु के लिए। इन अधिवासों में ऐसे कार्य सम्पन्न होते हैं जो विशेष रूप से मानव के लिए होते हैं एवं इन्हीं के द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं। इसमें मानव जीवन से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के क्रियाकलाप (प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक) सम्पन्न होते हैं। इन अधिवासों में ऐसे कार्य सम्पन्न होते हैं जो मानव समाज के लिए सन्तुष्टि दायक होते हैं एवं कल्याणपरक होते हैं। अतः मानव अधिवास में **मानव या उसका परिवार** या समूह रहता है जिसमें प्राप्त सुविधाओं का उपभोग करता है अर्थात मानव अधिवास ऐसे निर्मित स्थल होते हैं जिन्हें मनुष्य अपने रहने के लिए बनाता है,

जिसमें मनुष्य परिवार सहित एवं उससे सम्बन्धित समाज निवास करता है। इस अधिवास में भौतिक आवास भी होते हैं जिसमें भौतिक एवं मानवीय कार्य–कलाप सम्पन्न होते हैं।

अधिवास के तत्व से तात्पर्य है कि अधिवास का निर्माण कैसे होता किन तत्वों के आधार पर होता है। मानव अधिवास निर्मित होने की मूलभूत आवश्यकताएं होती है। मानव अधिवास अपनी सुरक्षा सुव्यवस्था एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भौतिक एवं सांस्कृतिक तत्वों का समावेश एवं वातावरण के साथ अनुकूलन बनाते हुए अधिवासों का निर्माण करता है। मानव किसी स्थान पर अधिवास या गृह का निर्माण तब तक नहीं करता जब तक कि वह उस स्थान पर बस नहीं जाता। जब वह अपना मकान बना लेता है और उसमें निवास करने लगता है तो उसे अधिवासी मानव कहा जाता है। अधिवासी प्रक्रियाओं के कालगत सन्दर्भ (Time Perspective) में मानव के बसने, बैठने, आश्रय जमाने की क्रिया को निम्नलिखित रूपों में देखा जाता है–

अ– अस्थाई– ऐसे अधिवास जो कि स्थाई नहीं होते हैं। ये परिस्थितियों के अनुसार स्थानान्तरित हो जाते हैं।

ब– ऋत्विक :– ये ऐसे अधिवास होते हैं जो ऋतु के अनुसार बदल जाते हैं अर्थात् इस प्रकार के अधिवास विभिन्न ऋतुओं में मानव अपनी सुविधा के लिए निर्मित करता है। अथवा विभिन्न ऋतुओं में जब वह अपने मूल स्थान को छोड़कर ऋत्विक प्रवास करता है, तब निर्मित करता है।

स– स्थाई :– ऐसे अधिवास जो स्थाई रूप से निर्मित होते हैं, प्रायः ये अपना रूप परिवर्तन करते हैं स्थान नहीं।

स्मरणीय–छोड़े हुए गाँवों को हम बेचिरागी या डीह मानते हैं, अर्थात् प्रेत निवास न कि मानव निवास

पृथ्वी अभी तक मानव जाति की वृहत्तम आश्रय स्थली या आधान–पात्र (Container) है जिसे डाकियाडिस ने मानव विश्व कहा है। पृथ्वी मानव के लिए एवं उसके जीवन की आवश्यकताओं के लिए हर प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध कराती है। मनुष्य पृथ्वी पर रहते हुए अपने आवश्यक कार्यो के सम्पादन के लिए विभिन्न प्रकार के प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का उपयोग करता है। जीवन जीने के लिए वायु, जल, मिट्टी, वनस्पति आदि प्राप्त करता है। इसके साथ ही साथ मनुष्य अपने आश्रय के निर्माण के लिए भी पृथ्वी पर विशेष रूप से निर्भर करता है। डाकियाडिस ने अधिवास की दृष्टि से पृथ्वी को पाँच तत्व समूहों में वर्गीकृत किया है–

01– प्रकृति वह नींव व आधार है जिस पर अधिवासों का निर्माण होता है और जिस सांचे के अन्तर्गत विद्यमान और कार्यशील रहते हैं।

02– मनुष्य (ऐसा तत्व जिसके द्वारा एवं जिसके लिए अनेक कार्यकलाप सम्पन्न होते हैं)

03– भौतिक कवच या खोल जिसमें मनुष्य रहता है एवं अपने कार्यों का सम्पादन करता है।

05– प्रणाली तन्त्र अर्थात् प्रकृति द्वारा एवं मानव निर्मित प्रणालियां जैसे जल प्रणाली, यातायात (परिवहन) प्रणाली आदि।

भौतिक तत्वों के आवरण को हम खोल कह सकते हैं तथा यह ऐसी प्रणाली है जिसके अन्तर्गत प्रणाली एवं तन्त्र बनते हैं। अधिवासों के अध्ययन में उपरोक्त इन पाँच तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों का समग्र अध्ययन आवश्यक होता है। इन्हीं सम्बन्धों के सम्बोधात्मक अध्ययन से मानव अधिवास का अध्ययन किया जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपर्युक्त प्रणाली के तत्व मनुष्य के अधिवास को आधार प्रदान करते हैं। इसीलिए इनका अध्ययन अधिवास के निर्माण के लिए आवश्यक होता है। इसमें जैसा कि आपने देखा कि सबसे प्रमुख तत्व प्रकृति है जो कि अधिवासों के लिए आधार का काम करती है तथा किसी भी अधिवासित क्षेत्र का अध्ययन कर यह निष्चित होता है कि ये वास्तव में प्रकृति के चरित्र के परिणाम हैं अर्थात् प्रकृति मानव अधिवास पर अपनी स्पष्ट छाप छोड़ती है। इसके अलावा मनुष्य सबसे महत्वपूर्ण तत्व है जो कि इन प्राकृतिक तत्वों के साथ सामंजस्य

स्थापित कर अधिवासों का निर्माण करता है और उसमें निवास करता है। इन दोनों तत्वों के अतिरिक्त भौतिक कवच अर्थात् हमारे चतुर्दिक व्याप्त भौतिक तत्व हैं जिनका उपयोग अधिवास की संरचना में किया जाता है तथा अन्त में वे तत्व हैं जो इन उपरोक्त तत्वों में प्राणवायु का का कार्य करते हैं। अर्थात् तन्त्र या प्रणाली जिनके माध्यम से मनुष्य अपना भौतिक एवं सामाजिक जीवन व्यतीत करता है। उपरोक्त तत्वों के विश्लेषण के पश्चात् प्रसिद्ध विद्वान डाकियाडिस मानव अधिवास के चार प्रमुख तत्व मानते हैं–

13.6.1– समांग या समरूपी (Homogeneous)

13.6.2– केन्द्रीय भाग (Central)

13.6.3– परिसंचरण या परिवहन भाग (Transport)

13.6.4– विशिष्ट भाग (Special):-

अधिवास के उपरोक्ततत्वों को आगे विस्तृत रूप में स्पष्ट किया जा रहा है–

13.6.1– समांग या समरूपी (Homogeneous) :–

अधिवास के तत्वों में सबसे पहला तत्व है अधिवास के समांग या समरूपी परिदृश्य। अर्थात् मानव अधिवासों का निर्माण कुछ विशेष अनुकूल दशाओं में किया जाता है जो कि मानव को विभिन्न प्रकार की जीवनोपयोगी सुविधाएं प्रदान करते हैं। आज विश्व के लगभग समस्त प्रदेशों तक मानव की पहुँच हो गयी है। इसका मूल कारण है मानव की कार्य कुशलता एवं इसकी आकांक्षाएं। इसी का परिणाम है कि मानव ने विभिन्न स्वरूपी प्राकृतिक दशाओं में अपने अधिवास का निर्माण किया है। मानव निवास या अधिवास की उपस्थिति पर्वतीय, पठारी, मैदानी, समुद्रतटीय आदि क्षेत्रों में पायी जाती है।

13.6.1 अ– पर्वतीय अधिवास :–

पर्वतीय प्रदेशों में स्वच्छ वायु एवं पर्यावरण पाया जाता है। इसके साथ–साथ स्वच्छ जल की उपलब्धता भी पायी जाती है। प्राचीन काल से ही पर्वतीय भाग मनुष्य के आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। ऋषियों एवं मुनियों ने अपने रहने के लिए इन पर्वतीय भागों का चयन किया था। इसका विवरण विभिन्न भारतीय धर्मग्रन्थों में स्पष्ट रूप से वर्णित हैं। कैलास पर्वत, वद्रीनाथ, केदारनाथ आदि धार्मिक स्थल पर्वतीय भागों में ही स्थित हैं। इसके अलावा पर्वतीय प्रदेशों का प्राकृतिक सौन्दर्य भी मनुष्य को अपनी और आकर्षित करता है। इसी का परिणाम है कि विभिन्न प्रकार के पर्यटन स्थलों का बसाव इन पर्वतीय भागों में हुआ है। इसी के साथ–साथ कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहां पर मानव का निवास करना मनुष्य की मजबूरी रहे हैं। पर्यटन के लिए भी विश्व के अनेक पर्वतीय भू–भाग प्रसिद्ध रहे हैं। भारत के प्रमुख पर्वतीय अधिवास के उदाहरण बद्रीनाथ, केदारनाथ, शिमला, मसूरी, नैनीताल, श्रीनगर, दार्जिलिंग, गंगटोक, माउंट आबू आदि हैं।

13.6.1 ब– मैदानी अधिवास :–

मैदानी प्रदेशों की समतल एवं उपजाऊ भूमि अधिवासों के निर्माण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होती है जिसके कई कारण हैं। समतल धरातल होने के कारण आवागमन की सुविधा अधिक पायी जाती है। इसके साथ मैदानी भागों में प्रायः उपजाऊ मृदा पायी जाती है जिससे कृषि कार्य भी आसानी से किया जाता है। यहां पर रहने वाले लोगों की क्षुधापूर्ति भी सुचारू रूप से हो जाती है। ऐसे प्रदेशों में समतल भूमि पर सड़कों, रेलमार्गों आदि तथा सिंचाई के लिए नहरों के निर्माण में सुगमता होती है। इसके साथ ही बड़े–बड़े खेत बनाने एवं वृहत स्तर के उद्योग स्थापित करने में भी समतल मैदान उपयुक्त प्रदेश होते हैं। यही कारण है कि विश्व के वृहत् नगरों का विकास इस प्रकार के धरातलीय प्रदेशों में हुए हैं। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के महानगर, नगर, कस्बे, गाँव, आदि नदियों द्वारा निर्मित मैदोनों अथवा सागर तटीय प्रदेशों में हुए हैं। विभिन्न प्रमाण यह बताते हैं कि विश्व की प्रमुख

सभ्यताओं का विकास नदी तटीय प्रदेशों में हुआ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस धरातल के विभिन्न भागों में अधिवासों का निर्माण किया गया है। आज विश्व का शायद ही कोई भू–भाग बचा हो जहां पर जन बसाव न पाया जाता हो। मनुष्य ने पर्वतीय, पठारी, मैदानी, समुद्र तटीय प्रदेशों, के साथ–साथ अनेक दुरूह भागों में भी अधिवासों का निर्माण किया है।

13.6.2– केन्द्रीय भाग :–

पूर्व के अध्ययन से स्पष्ट है कि समांग या समरूपी से तात्पर्य होता है अधिवासों या बस्तियों के चतुर्दिक फैला हुआ। समरूपी आवरण से है जैसे किसी अधिवास का विकास सामान्यतः एक सी दशाओं में होता है। इसके अलावा अधिवास के केन्द्रीय भाग से तात्पर्य होता है, अधिवासों की प्रारम्भिक इकाई अर्थात् मानव आवास या मकान। मानव आवास या मकान अधिवासों के तत्वों में सबसे महत्वपूर्ण है। विश्व में अनेक भागों की उच्चावचीय एवं जलवायुवीय दशाओं के आधार पर मकानों का निर्माण किया जाता है। अधिवास के अध्ययन में मकान का अध्ययन सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मानव की दूसरी सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। मकानों या आवासों का अध्ययन विभिन्न विद्वानों ने किया है।

मानव के आवास–गृह अधिवास की एक इकाई है। हम कह सकते हैं कि आवास या मकान अधिवास की एक महत्वपूर्ण इकाई है। **ब्रून्श** ने मकान को मानव की दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता माना है। मकान के अन्तर्गत उन्होंने भवन (House), आश्रय (Shelter), बस्ती अथवा मानव द्वारा निर्मित एक स्वरूप माना है। ब्रून्श के अनुसार भवन अथवा घर से तात्पर्य धरातल पर पाये जाने वाले बिखरे हुए हजारों ऐसे स्थान हैं जो कि लाल ईंटों, भूरे पत्थरों, सफेद संगमरमर आदि से बने व पुते हों, इसके अलावा घास–फूस, सूखी पत्तियों, टहनियों से बने हों अथवा बड़े स्वरूप में निकट हों या दूर–दूर हों एवं विभिन्न टिकाऊपन वाले हों। मनुष्य के आवास एवं घर एकांकी झोपड़ी से लेकर नवीनतम भवन, राज प्रासाद, दुर्ग, गिरिजाघर, एक मंजिला एवं एक से अधिक बहुमंजिला या महानगरीय बहुमंजिला अट्टालिकाएं हो सकते हैं। वर्तमान में मानव के आवास या मकान अपनी आधुनिक विशेषताओं के लिए जाने जाते हैं क्योंकि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास अपने चरम पर है जिसका प्रभाव मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। मानव अधिवास का इतिहास आदिकालीन मानव एवं खोहों तथा गुफाओं की खोज से प्रारम्भ होता है। मनुष्य जब प्राथमिक अवस्था में था और खानाबदोश था तब मनुष्य खोहों एवं गुफाओं में ही निवास करता था। धीरे–धीरे मनुष्य विकसित होकर पशुपालन की अवस्था में पहुँचा। इस समय मनुष्य झोपड़ों में रहना प्रारम्भ किया, इसके उपरान्त कृषि काल में मिट्टी की उपलब्धता होने से झोपड़ी मिट्टी के सहयोग से कच्चे घास–फूस वाले मकान तथा लकड़ी का सहयोग पाकर मिट्टी की छत वाले मकानों में बदल गयी। कृषि युग में मनुष्य ने व्यापार करना भी प्रारम्भ किया तथा दुकानें एवं स्टोर अलग बन गये।

इस प्रकार जैसे–जैसे विकास होता गया उसी के अनुरूप परिवहन केन्द्र, स्कूल, पंचायत घर आदि भी विकसित हुए। इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास (औद्योगिक क्रांति) ने एक क्रांतिकारी परिवर्तन किया, इसके परिणाम स्वरूप ईंट, पत्थरों, सीमेंट, तथा लोहे के प्रयोग ने न्यूयार्क की **'सीयर्स टावर'** तथा **'एम्पायर स्टेट'** जैसी ऊँची एवं बड़ी इमारतों (मकानों) को जन्म दिया। इसके परिणाम स्वरूप बड़े–बड़े नगरों में वृहदाकार इमारतें, अट्टालिकाएं बनती चली गयीं। इसी प्रकार निवास स्थल अलग बने तथा बाजार, दुकानें एवं स्टोर अलग बने। इसके अतिरिक्त स्कूल, अस्पताल तथा प्रशासनिक केन्द्रों का भी अलग–अलग निर्माण किया गया। समय के साथ मकानों की विशेषता बढ़ती गयी। इसका मूल कारण मकानों का रंग, आकार, विस्तार एवं इनमें प्रयुक्त होने पदार्थ थे। इस प्रकार समय के साथ मनुष्य गुफाओं से लेकर आधुनिक नवीन एवं रंगीन ऊँची–ऊँची अट्टालिकाओं तक का सफर तय किया। मकानों के निर्माण के पीछे क्या कारण रहे, इसका अध्ययन आवश्यक है। मानव जीवन के अनेक कारण रहे जिन्होंने मनुष्य को मकानों के निर्माण के लिए प्रेरित किया।

मानव आवास के निर्माण के प्रमुख प्रेरक कारण :–

- दिन भर श्रम के उपरान्त रात्रि विश्राम हेतु सुरक्षित स्थान के लिए मनुष्य ने मकानों के निर्माण को आवश्यक समझा।
- वन क्षेत्रों में, गाँव के किनारे या एकान्त में जंगली पशुओं, विभिन्न प्रकार के आक्रमणकारी (चोर, डाकू आदि) एवं शत्रुओं से सुरक्षा के लिए मनुष्य को आवास या मकान निर्माण के लिए प्रेरित किया।
- मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं द्वारा उत्पादित वस्तुओं के संग्रहण तथा सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए मकान आवश्यक होते हैं।
- कृषि उत्पादों के भण्डारण, कृषि कार्यों में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों, बीज, खाद आदि को रखने, पशुओं, डेयरी उत्पादों को खराब होने से बचाने के लिए कोल्ड स्टोरेज आदि के लिए मकानों एवं भवनों की आवश्यकता होती है।
- विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक गतिविधियों के सम्पादन हेतु दुकानें, कार्यालय, बैंक, बीमाघर, डाकघर आदि के लिए मकानों एवं भवनों की आवश्यकता होती है।
- विभिन्न प्रकार के सामाजिक कार्यों के संचालन के लिए गाँव में बने घर, बारात घर आदि की आवश्यकता होती है।
- सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, क्रियाकलापों के संचालन के लिए सभा भवन, क्लब, पूजा स्थल, मनोरंजन के लिए सभागार, सिनेमा, सरकारी संस्थान, पुलिस चौकी, सैन्य शिविर, अस्पताल, पोस्ट ऑफिस, तहसील, कोतवाली आदि के लिए भवनों की विशेष आवश्यकता होती है। भवनों, इमारतों या विभिन्न अवस्थापनात्मक सुविधाओं के अभाव में उपरोक्त कार्यों का सम्पादन सम्भव नहीं हो सकता है।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि मनुष्य के जीवन के समस्त पहलुओं, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक कार्यों के लिए तथा मनुष्य के निवास, सुरक्षा, शयन आदि के लिए भवनों या मकानों का होना नितान्त आवश्यक है।

13.6.2 अ– मकान या गृह निर्माण सामग्री :–

भारत में विभिन्न प्रकार की जलवायु पायी जाती है एवं उच्चावचीय विविधताएं पायी जाती हैं, जिनका प्रत्यक्ष प्रभाव मकानों के निर्माण एवं उसकी बनावट पर देखा जा सकता है। भारत के साथ विश्व भर में विभिन्न प्रकार की मकान निर्माण सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। मकानों के निर्माण में निम्नलिखित निर्माण सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है–

01– बर्फ :– विश्व के अति शीत (टुण्ड्रा) प्रदेशों में बर्फ से आवास का निर्माण किया जाता है जिसे '**इग्लू**' (Igloo) के नाम से जाना जाता है। इसकी बनावट विशेष प्रकार की होती है जिसका निर्माण एस्किमो जनजातियों द्वारा परम्परागत रूप से बनाया जाता है।

02– खाल :– विश्व के विभिन्न भागों, विशेषकर अरब एवं मध्य एशिया में पशुओं की खालों से तम्बुओं या आवास का निर्माण किया जाता है जिसमें यहां के लोग निवास/विश्राम करते हैं। मध्य एशिया के स्टेपी मैदोनों में टहनियों एवं बल्लियों के सहारे खिरगीज, काल्मुख तथा कज्जाक नामक जनजातियों के लोग पशुओं की खालों से '**युर्त**' नामक अस्थाई तम्बुओं का निर्माण करते हैं। इसके अलावा तिब्बत के पठार पर **याक** नामक पशुओं के बालों से बने **नमदे** के द्वारा भी तम्बू बनाए जाते हैं।

03– घास–फूस तथा नरकुल :– विश्व की विभिन्न जनजातियों द्वारा (दक्षिणी अफ्रीका के घास के मैदोनों में बाण्टू और काफिर तथा नेटाल में जुलू) घास एवं नरकुल से चन्द्राकार आकार की झोपड़ियों का निर्माण किया जाता है जिन्हें '**क्रॉल**' (Craal) कहा जाता है। इनके द्वारा पूरब की और होते हैं। ये झोपड़ियां वृत्ताकार रूप में बनायी जाती हैं जिनके बीच के स्थान पर पशुओं का बाड़ा बनाया जाता है। इसके अलावा घास की झोपड़ियां सूडान,

जिम्बाम्बे, पूर्वी अफ्रीका, तंजानिया आदि में भी पायी जाती है।

भारत में घास–फूस एवं नरकुल तथा बांस से बने आवास प्रायः देखने को मिल जाते हैं। भारत में झारखण्ड, बिहार, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान के आदिवासी घास–फूस की टहनियों और पत्तियों से झोपड़ियों का निर्माण करते हैं। इन झोपड़ियों में दीवारों पर मिट्टी का लेप लगा दिया जाता है।

चित्र सं–13.2 घास–फूस तथा नरकुल बने आवास

स्रोत–ऑनलाइन प्लेटफार्म गूगल सर्च।

03– बांस और धान की पुआल :–भारत के विभिन्न भागों में बांस एवं पुआल से झोपड़ों का निर्माण किया जाता है। भारत में पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, और बिहार के अनेक भागों में धान की पुआल से मकान का निर्माण किया जाता है।

04– कच्ची मिट्टी :– कच्ची मिट्टी के मकान प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों जिसमें बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश आदि इसके साथ नील नदी बेसिन (मिश्र), टोगोलैण्ड, मोरक्को, ईरान, आर्मेनिया का पठार, यूरोप और मध्य एशिया के अधिकांश मकान कॉप मिट्टी के बने हैं। इसके अलावा चीन के लोयस के मैदान, ह्वांगहो घाटी में पीली मिट्टी के मकान बनाए जाते हैं तथा यूरोप के विभिन्न देशों नार्वे, इटली, स्पेन, स्कॉटलैण्ड में मिट्टी के मकान बनाए जाते हैं।

05– कच्ची एवं पक्की ईंट :– ईंटों के बने मकान जो प्रायः शुष्क एवं अर्द्धशुष्क भागों एवं नदियों की घाटियों में पाये जाते हैं। भारत के गंगा यमुना के मैदोनों, नील एवं ह्वांगहो नदियों की घाटियों, उत्तरी नाईजीरिया, अरब, जॉर्डन, सीरिया, ईरान में सूर्य के प्रकाश में सुखाई गई कच्ची ईंटों के मकान बनाये गये हैं। इसके अलावा दक्षिणी–पश्चिमी सं0रा0अ0, नीदरलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीकाा, यूरोप के नार्वे, इटली, स्पेन, आयरलैण्ड, इंग्लैण्ड, और भारत के अनेक भागों में पक्की ईंटों के निर्मित मकान पाये जाते हैं। ईंट के बने मकान प्रायः टिकाऊ एवं स्थाई मकान पाये जाते हैं।

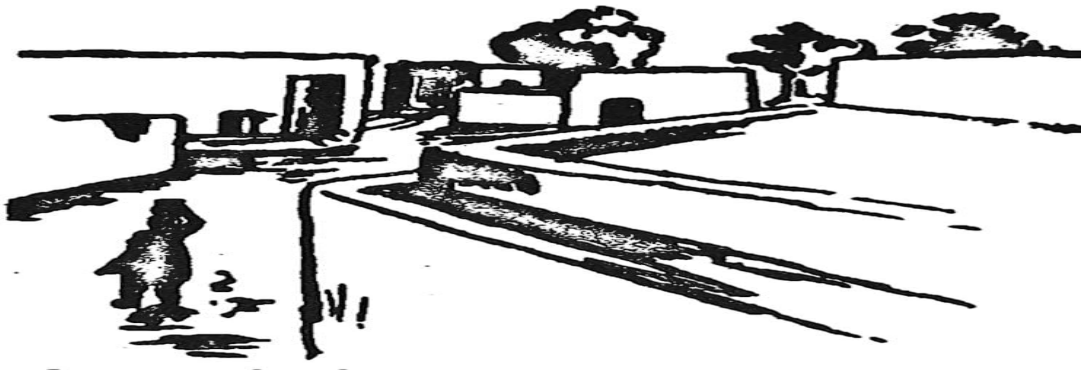

चित्र सं–13.3

स्रोत– भूगोल मामोरिया चतुर्भुज साहित्य भवन पब्लिकेशन।

पश्चिमी राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा में मिट्टी की पक्की ईंटों के बने समतल छत वाले मकान

06– पत्थर से बने मकान :– पत्थर से बने मकान, ईंट एवं अन्य पदार्थ से बनें मकान की तुलना में अधिक मजबूत होते हैं। जिन भागों में पत्थरों की अधिकता पायी जाती है, वहाँ पर पत्थरों से बने मकान मिलते हैं। मकान के साथ–साथ पत्थर अन्य कार्यों में भी प्रयोग में लाया जाता है। भूमध्य सागर के तटीय भागों में पत्थरों की बनी सुन्दर इमारतें पायी जाती हैं। स्पेन, सिसली, यूनान, येरुस्लम, इटली, इराक, ईरान, अरब, फिलिस्तीन, उत्तरी चीन, बाल्कन, ट्यूनीशिया, अल्जीरिया, भारत में राजस्थान एवं समीपी क्षेत्र में पत्थर के मकान पाये जाते हैं।

07– लकड़ी :– घने वन प्रदेशों में प्राकृतिक रूप से आपदा प्रभावित क्षेत्रों में लकड़ी से बने मकान पाये जाते हैं। कोंणधारी वनस्पतियों के क्षेत्र में लकड़ी से मकानों का निर्माण किया जाता है। इसके उदाहरण उ0 अमेरिका, यूरेशिया के उत्तरी भाग में, अलास्का से कनाडा तथा नार्वे, साइबेरियाा में कोंणधारी वनस्पतियां बहुतायत पायी जाती हैं।

केरल के कोट्टायम जिले में लकड़ी के लट्ठों पर आधारित छतों वाले घर

चित्र सं–13.4

स्रोत– भूगोल मामोरिया चतुर्भुज साहित्य भवन पब्लिकेशन।

भारत में लकड़ी के मकान कश्मीर, कुमायूँ एवं असम के क्षेत्रों में पाये जाते हैं। भूमध्यरेखीय भागों में

लकड़ी के मकान कठोर लकड़ी से बनाए जाते हैं। न्यूगिनी, थाईलैण्ड, वियतनाम, मलाया, इण्डोनेशिया में जमीन में 8 से 10 मीटर लट्ठे गाड़कर उनपर लकड़ी की झोपड़ियां बनायी जाती हैं। जापान में भी लकड़ी से निर्मित मकान पाये जाते हैं।

08– अन्य पदार्थ :–इस समय विज्ञान एवं तकनीकी ने अभूतपूर्व प्रगति कर ली है। इस समय ईंट, लकड़ी, घास–फूस उपरोक्त के अतिरिक्त सीमेन्ट, कंक्रीट, लोहा, कांच, प्लास्टिक, टिन, चादर, गत्तों, सीमेन्ट चादरों आदि का प्रयोग मकान निर्माण में किया जा रहा है। इस प्रकार के मकान आकर्षक, टिकाऊ, उपयोगी, एवं निर्माण में सरल होते हैं तथा इनमें सरलता से परिवर्तन किया जा सकता है। विश्व के प्रमुख नगरों, महानगरों में इनसे मकानों एवं आवासों का निर्माण किया जा रहा है। सं0रा0अ0, ग्रेट ब्रिटेन, पूर्व सोवियत संघ, जापान, फ्रांस जर्मनी और भारत के बड़े एवं विकसित आधुनिक नगरों में मिश्रित गृह निर्माण सामग्री का प्रयोग मकानों के निर्माण में किया जा रहा है। औद्योगिक एवं वृहत् व्यापारिक संस्थानों में स्पात के ढ़ांचे पर सीमेन्ट कंक्रीट की सहायता से बहुमंजिली इमारतें बनायी जा रही हैं।

13.6.2 ब– मकानों को प्रभावित करने वाले कारक :–

मानव आवास या मकान मनुष्य द्वारा निर्मित एक विशेष प्रकार की आकृति है। मकानों के निर्माण के समय मनुष्य को विभिन्न कारकों का ध्यान रखना पड़ता है जिसके अभाव में जिनकी उपस्थिति में हम एक आदर्श आवास का निर्माण कर सकते हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि प्राकृतिक कारक मनुष्य के प्रत्येक क्रियाकलाप को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। कह सकते हैं कि प्राकृतिक कारक मानव आवसों को प्रभावित करते हैं। इसके साथ ही साथ मानवकृत अनेक कारक हैं जो कि मानव निवास को प्रभावित करते हैं। जलवायु, भवन निर्माण सामग्री, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक मकानों के निर्माण को प्रभावित करते हैं। इनमें सामंजस्य स्थापित कर आवासों का निर्माण किया जा सकता है। मकानों के निर्माण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक निम्नलिखित हैं–

01:– जलवायु का मकानों (आवासों) पर प्रभाव–

मकानों के निर्माण, बनावट एवं प्रकार पर जलवायु के तत्वों का विशेष प्रभाव पड़ता है। विषुवत रेखीय प्रदेशों में मचानों पर बने झोपड़ों में (चित्र–13.5), शुष्क प्रदेशों के मिट्टी के भवनों में, स्टेपी घास के मैदोनों में तम्बुओं में और टुण्ड्रा प्रदेशों में बर्फ के इग्लू (चित्र सं 13.5) जैसे मकानों में मानव निवास करता है। विकसित देशों में मकानों के निर्माण पर जलवायु का प्रभाव कम और पिछड़े देशों में अधिक होता है। जलवायु के प्रमुख तत्व वायु, तापमान, वर्षा एवं आर्द्रता हैं जो मकानों के निर्माण में अपनी विशेष भूमिका अदा करते हैं। इनमें से तो तापमान का प्रभाव मकानों के निर्माण पर सीधे तौर पर देखा जा सकता है। प्रायः शीत प्रदेशों में एवं शीतोष्ण प्रदेशों में प्रातःकालीन सूर्य की किरणों से लाभान्वित होने के लिए मकानों के दरवाजे पूर्व की तरफ बनाए जाते हैं। कभी–कभी पश्चिम दिशा में भी दरवाजे बनाए जाते हैं जबकि दक्षिणमुखी दरवाजे अशुभ माने जाते हैं, क्योंकि दक्षिण दिशा न तो सूर्य का प्रकाश अधिक मिलता है और न ही हवा। उष्ण प्रदेशों में गर्मी से बचने के लिए मकानों के अग्र भागों में छप्पर आदि डालते हैं जिसे स्थानीय भाषा में ओसारा कहा जाता है।

घरों के दरवाजों एवं खिड़कियों, झरोखों का आकार एवं दीवारों की मोटाई भी तापमान से प्रभावित होती हैं। उष्ण प्रदेशों में दीवारों की मोटाई अधिक और छतों की ऊँचाई भी अपेक्षाकृत अधिक रखी जाती है। इस सन्दर्भ में **ब्रुक्श** ने बताया कि ''तापमान न केवल निर्माण सामग्री को ही वरन् दीवारों की मोटाई को भी प्रभावित करता है।'' भारतीय मकानों में आंगन की व्यवस्था होती है जो कि घर के तापमान को नियन्त्रित करते हैं। उत्तर भारत में आंगन उत्तर से दक्षिण लम्बा (**चन्द्रवेदी**) रखा जाता है। ऐसे आंगन में सूर्य की रोशनी देर तक नहीं पड़ती। पूरब–पश्चिम लम्बा (**सूर्य वेदी**) मकान इस दृष्टि से अहितकर समझा जाता है।

वायु की गति एवं दिशा भी मकानों के निर्माण पर प्रभाव डालती है, जहां वायु की गति अधिक होती है वहां के आवासों की दीवारें मोटी होती हैं। ब्रिटेन में पछुंआ हवाओं की तीव्र गति से चलने के कारण मकानों का रुख पूरब या दक्षिण पूरब की और रखा जाता है। भारत के उत्तर–पूर्वी भागों में मकानों के निर्माण के समय (खपरैल या छप्पर बनाते समय) हवा की दिशा को विशेष महत्व दिया जाता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त वर्षा एवं हिमपात की मात्रा भी मकानों को प्रभावित करती है। जिन क्षेत्रों में वर्षा कम होती है वहां मकानों की छत चौरस बनायी जाती है। बंगाल एवं केरल में वर्षा की मात्रा अधिक होने के कारण खपरैल एवं छप्पर वाले मकानों की छत ढलुआं होती है, जिसका झुकाव 40^0 से 60^0 होता है। विश्व के ऊँचे

पर्वतीय भागों में अथवा उच्च अक्षांशीय भागों उत्तरी साइबेरियाा, कनाडा, नार्वे, स्वीडन, आदि देशों में मकानों की छतें विशेष ढाल वाली होती हैं। इसके अलावा अधिक वर्षा वाले भागों में दरवाजों एवं खिड़कियों के ऊपर छज्जे बनाये जाते हैं।

02– मकानों की निर्माण सामग्री का प्रभाव :–

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक मकान या आवास निर्माण सामग्रियों में परिवर्तन होता रहा है। कुछ प्राचीन सामग्रियां आज भी प्रयोग में आ रही हैं जबकि कुछ आज चलन से बाहर हो गयीं हैं। मकान निर्माण सामग्रियों में स्थानिक विभिन्नता पायी जाती है। जहां जो संसाधन आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं वहाँ उन्हीं संसाधनों का प्रयोग कर मकानों का निर्माण किया जाता है जैसे मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, खर–पतवार बांस आदि। परन्तु वर्तमान औद्योगिक एवं तकनीकी विकास के साथ परिवहन सुविधाओं का विकास हो गया है। इसीलिए अब विशेषीकृत निर्माण सामग्रियों का यथा सीमेन्ट, लोहा, कांच, सीसा, चद्दर आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जाता है। फिर भी स्थानिक सामग्री की उपस्थिति का अपना अलग प्रभाव होता है।

मैदानी प्रदेशों में मिट्टी से मकानों का निर्माण किया जाता है क्योंकि यहां पर पत्थर एवं लकड़ी का प्रायः अभाव पाया जाता है। मिट्टी का उपयोग कई रूपों में किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में मिट्टी को निकालकर गूथकर तह–दर–तह जमा कर दीवार बनायी जाती है। इसके अलावा कुछ क्षेत्रों में मिट्टी से कच्ची एवं पक्की ईंटों का प्रयोग किया जाता है। पर्वतीय एवं पठारी भागों में मकानों का निर्माण पत्थरों एवं लकड़ी (जहां जिस पदार्थ की उपलब्धता हो) से किया जाता है। हिमालय अथवा दक्षिणी पठारी भागों में अधिकांश दीवारों एवं छतों का निर्माण पत्थरों से किया जाता है। वनाच्छादित क्षेत्रों में लकड़ी एवं बांस के प्रयोग से मकानों का निर्माण किया जाता है। हिमालय के ढालों पर चीड़ के पेड़ बहुतायत पाये जाते हैं। इन क्षेत्रों में मकान के निर्माण में लकड़ी के तख्ते और लट्ठे अधिक मात्रा में प्रयोग किए जाते हैं।

03– धरातलीय स्वरूप एवं संरचना :–

धरातलीय उच्चावच एवं संरचना का प्रभाव भी मकानों के स्वरूप प्रकार एवं प्रतिरूप पर पड़ता है। पहाड़ी, पठारी एवं मैदानी प्रदेशों के मकानों अथवा आवासों में इन्हीं तत्वों के कारण अन्तर पाया जाता है। पर्वतीय प्रदेशों के मकान स्तरीकृत होते हैं। यहां के मकान में निचले ढ़ाल की दीवार अधिक ऊँची होती है। पठारी एवं मैदानी भागों में छत का ढ़ाल लगभग समान होता है। दलदली प्रदेशों में बनने वाले मकानों की नींव मजबूत एवं अधिक गहराई तक होती है।

04– सुरक्षा की भावना का मकानों की संरचना पर प्रभाव :–

मकानों के निर्माण पर सुरक्षा, एकान्ता एवं गोपनीयता का भी प्रभाव देखा जाता है। मसाई जनजाति के आवास **'क्रॉल'** (Craal) (चित्र सं0 13.6) सुरक्षात्मक आधार के द्योतक माने जाते हैं। आजकल मकान निर्माण में सुरक्षा का विशेष ध्यान दिया जाता है। जैसे कि नगरों में मुख्य आवास के चारों और मोटी एवं मजबूत तथा नुकीले तार एवं नुकीले शीशे लगी हुई दीवार का निर्माण किया जाता है।

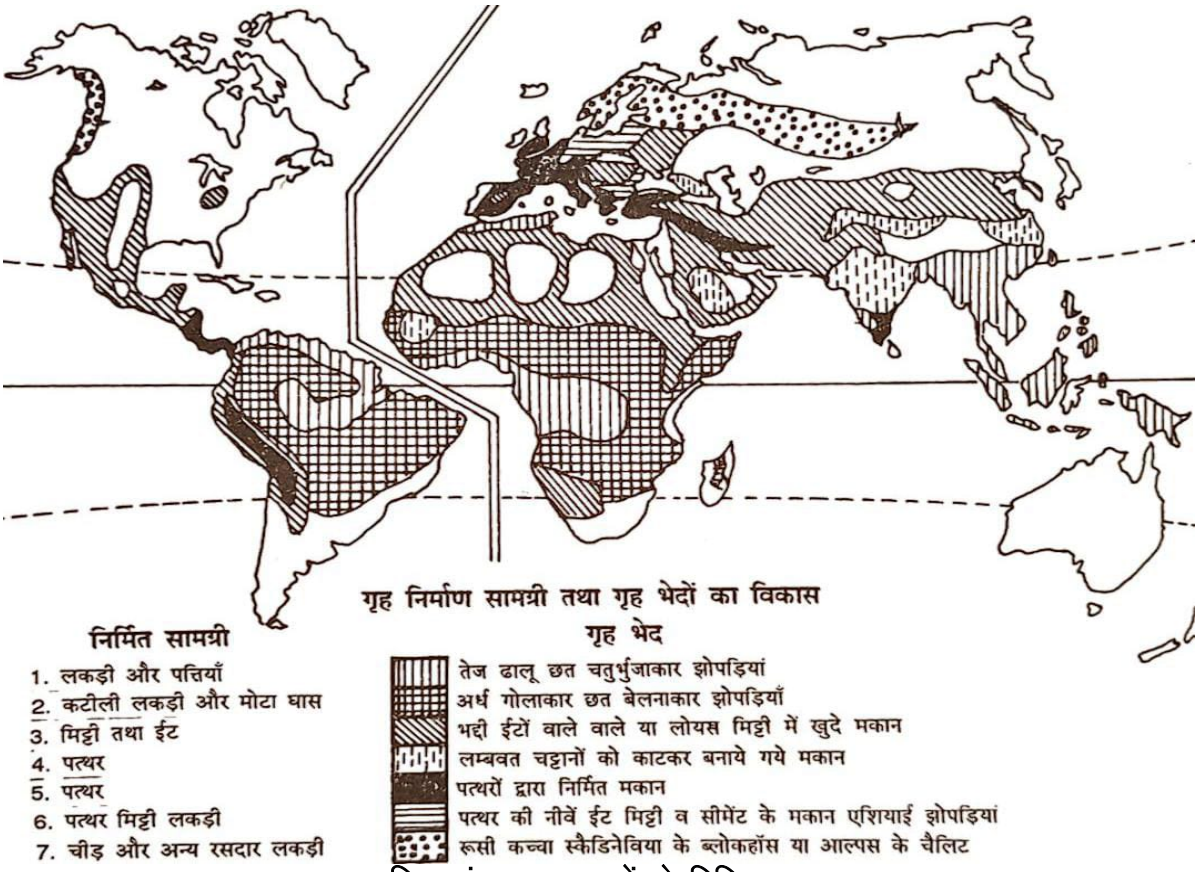

चित्र सं 13.5 आवासों के विभिन्न प्रकार

स्रोत–मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन प्रयागराज।

05–मनुष्य की आर्थिक स्थिति का मकानों पर प्रभाव :–

मकान का आकार–प्रकार एवं विशालता आर्थिक संपन्नता का द्योतक होता है। कुछ उदाहरण समीचीन होंगे–गाँव के मकान आज भी छप्पर एवं खपरैल के होते हैं। बहुत अधिक सम्पन्न परिवार ही बाहर से निर्माण सामग्रियों को मंगाकर मकानों का निर्माण करते हैं और पक्के एवं आधुनिक किस्म आवास का निर्माण करते हैं जबकि शहरों में रहने वाले लोग उच्च किस्म के मकानों का निर्माण करते हैं, जिसमें संगमरमर, टाइल्स, एवं अन्य विशेषीकृत गृह निर्माण सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। यह आर्थिक सम्पन्नता को प्रदर्शित करता है।

इस समय विभिन्न सरकारी प्रयासों से मकानों एवं लोगों के जीवन स्तर में समानता लाने का प्रयास किया जा रहा है तथा इसके अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त हो रहे हैं। उपरोक्त के अतिरिक्त धर्म, सामाजिक सांस्कृतिक परम्पराएं, शिक्षा, उद्योग आदि का मकानों के निर्माण पर प्रभाव पाया जाता है।

13.6.2 स– मकानों के प्रकार (Types of Houses)

विश्व में विभिन्न प्राकृतिक एवं मानवीय कारक मकानों आकार प्रकार आदि को प्रभावित करते हैं जिसका विवरण पूर्व में दिया जा चुका है। उक्त को दृष्टिगत रखते हुए यदि मूल्यांकन किया जाये जो तो एक बात स्पष्ट हो जाती है कि मकानों का वर्गीकरण एक कठिन कार्य है। आवास या मकान का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जाता है। गृहों के आकार, रूप–रंग, उनकी पारस्परिक दूरी और निर्माण सामग्री की उपलब्धता के आधार पर मकानों को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है–

अ– आकार के अनुसार मकानों या आवासों का वर्गीकरण :–

आकार के आधार पर मकानों को निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है–

01– गोल मकान :– ऐसे मकान यूरोप में डिनारिक, आल्पस, स्काटलैण्ड, आयरलैण्ड, में पाये जाते हैं। इनकी दीवारें प्रायः नीची होती हैं। इनकी छतें लकड़ी की शहतीरों, नरकुल आदि के लट्ठों से बनायी जाती हैं।

02– आयताकार मकान :– इस प्रकार के मकान उत्तरी पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका एवं रूस में देखने को मिलते हैं। भारत में भी इस प्रकार के मकान पाये जाते हैं।

03– चौकोर मकान :– इस प्रकार के मकान चौरस एवं कहीं–कहीं ढालू होते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों, अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों, शीतोष्ण जहां बर्फ गिरती है। इस प्रकार के ढालू छत वाले चौरस मकान पाये जाते हैं।

04– गोलाई लिए हुए नुकीली छत के मकान :– इस प्रकार के मकान आदिवासियों, पिछड़े एवं ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

ब– पारस्परिक दूरी के अनुसार मकानों का वर्गीकरण :– भवनों के बीच दूरी एवं स्थिति के आधार पर मकानों को दो प्रमुख वर्गों में रखा जाता है–

01– बिखरे हुए मकान

02– सघन मकान

स– डिमांजिया के अनुसार मकानों का वर्गीकरण :–

डिमांजिया ने मकानों के वर्गीकरण उनके कार्यों के आधार पर किया है। इसलिए इसे कार्यात्मक वर्गीकरण के रूप में देखा जा सकता है–

01– साधारण या अविकसित आवास (Rudimantary House**) :–**

ये किसानों के आवास हैं तथा इन घरों में किसान रहते हैं। इन्हीं आवासों में किसानों की कृषि से सम्बन्धित समस्त प्रकार के उपकरणों को रखा जाता है।

02– सघन या सम्बद्ध मकान (Compact House**) :–**

इस प्रकार के मकान विकसित, प्रगतिशील, ग्रामीण बस्तियों में या गहन कृषि करने वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

03– अपकीर्ण या असाधारण मकान (Stagging House**) :–**

इस प्रकार के आवास कृषीय रूप में महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इस प्रकार के मकान के दो भाग होते हैं, **प्रथम,** मुख्य भाग में कृषक एवं उसका परिवार रहता है जबकि **दूसरे** भाग में उसके पशु, कृषि उपकरण, चारा और ईंधन आदि रखने की व्यवस्था होती हैं।

04– लम्बवत या ऊँचे मकान (Vertical Houses) :–

इस प्रकार के मकान कई मंजिला होते हैं। निचले भाग में पशु तथा इसके ऊपर कृषक रहता है तथा इसके ऊपर किसानों के सामान रखा जाता है।

ब्रून्श ने **डिमांजिया** के इस वर्गीकरण को उपयुक्त नहीं माना है क्योंकि इन्होनें भिन्न–भिन्न आर्थिक स्तर वाले मकानों के एक ही वर्ग में रखा है।

द– मार्गरेट लेफेबर का वर्गीकरण :–

अल्बर्ट डिमांजिया के आवासों के वर्गीकरण में परिवर्तन कर मार्गरेट लेफेबर ने अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया। आपका वर्गीकरण मुख्यतः बेल्जियम के मकानों के आधार पर किया गया है–

01– बिखरे हुए मकान (Dispersed Houses) :–

इस वर्ग के अन्तर्गत ऐसे मकानों को रखा जाता है जो बिखरे रूप में पाये जाते हैं। जैसे–

• तटीय मकान

• बड़े एकांकी कृषि गृह

• समूहों के बिखरे मकान

• पुरवों के मकान

• अत्यधिक बिखरे हुए मकान

02– संकेन्द्रित मकान (Concentrated House)

इसके अन्तर्गत ऐसे मकानों को रखा जाता है जो संकेन्द्रित रूप में पाया जाता है जैसे–

• निहारिक गाँवों के घर

• केन्द्रीय गाँवों के घर

• चौराहों पर अवस्थित गृह तथा

• ओर्डनीज के निवासियों के घर

प्रो लेफेवर महोदय ने बेल्जियम के मकानों को एकांकी मकान, कई भागों वाले मकानों को में बांटा है। एकांकी मकानों के तीन तथा बहुभागी मकानों को दो उपभागों में बांटा है। लेफेवर महोदय का वर्गीकरण बेल्जियम पर आधारित है। यह वर्गीकरण अन्य देशों के मकानों के वर्गीकरण पर लागू नहीं होता है। इस प्रकार यह वर्गीकरण मकानों के वर्गीकरण की सही स्थिति को नहीं दर्शाता। इसलिए यह वर्गीकरण उपयुक्त नहीं माना जाता है।

य– प्रो0 हाउस्टन का वर्गीकरण–

प्रो0 हाउस्टन ने यूरोप के मकानों को निम्नलिखित पाँच भागों में वर्गीकृत किया है–

01– अनेक भागों वाले मकान (Multiple Dwelling**) :–**

यूरोप में सम्पूर्ण भाग में इस प्रकार के मकान पाये जाते हैं। इन आवासों में साथ–साथ पशुपालनका भी कार्य किया जाता है। यूरोप के डेनमार्क, पोलैण्ड, बाल्टिक क्षेत्र के राज्यों स्कैण्डेनेविया, फिनलैण्ड, और रूस में पाये जाते हैं।

02– एकांकी मकान (Single Unit**) :–**

इस प्रकार के मकानों के प्रकारों में बिखरे हुए एकांकी मकान पाये जाते हैं। इस प्रकार के मकान उत्तरी जर्मनी के मैदानी भागों में फ्रीजलैण्ड और हॉलैण्ड के तटीय भागों तथा लक्जमवर्ग, और लोटेन पठार पर पाये जाते हैं।

03– छोटे कृषकों के मकान (Small Form Steads**) :–**

इस प्रकार के मकान प्रायः अधिक आधुनिक नहीं होते हैं जिसका कारण किसानों की स्थिति का ठीक न होना है। इस प्रकार के मकान जर्मनी के आर्डेनीज, ब्रिटेन, मध्यवर्ती फ्रांस, वेल्स, स्कॉटलैण्ड, आयरलैण्ड, कार्पेथियन और डिनारिक आल्पस में मिलते हैं।

04– बहुमंजिला मकान (Multi-Storey Houses**) :–**

खाद्यान्न उत्पादक क्षेत्रों के कृषक बहुमंजिले मकान का निर्माण करते हैं। इनके आवासों में अनाज संग्रह के लिए कई कमरों के मकान बनाए जाते हैं। यहां अनाज का मुख्य उत्पादन है। इस प्रकार के मकान मध्य और पश्चिमी यूरोप के लोयस के मैदोनों में पाये जाते हैं।

05– लम्बवत मकान (Vertical Houses**):–**

इस प्रकार के गृहों में विभिन्न कृषि उत्पादनों के लिए पृथक–पृथक मंजिलें होती हैं। मकान की सबसे निचली तल पर शराब के गोदाम होते हैं तथा ऊपर की मंजिल पर निवास कक्ष और उसी के समीप अनाज के

कोठे होते हैं। इस प्रकार के आवास दक्षिणी यूरोप में मिलते हैं।

र– आकृति के आधार पर गृहों का विभाजन :–

आकृति के आधार पर मकानों को निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जाता है–

01– ढालू छत के मकान :– ऐसे प्रदेश जहां पर वर्षा एवं हिमपात होता है, वहां मकानों की छतें ढालुआं आकार बनायी जाती है। भारत में आसाम, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखण्ड, केरल, तमिलनाडु के तटीय प्रदेशों और हिमालय के गिरिपादों पर बने मकान इस श्रेणी के हैं।

02– मध्य ढाल की छत के गृह :– जिन प्रदेशों में वर्षा औसत अथवा मध्यम होती हैं। उन क्षेत्रों में आवास की छत का ढाल कम किया जाता है। पूर्वी उ0प्र0 (कानपुर से वाराणसी के मध्य), पूर्वी मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश में इस प्रकार के मकान पाये जाते हैं।

03– सपाट छत के गृह :– जिन क्षेत्रों में वर्षा की मात्रा कम पायी जाती है वहां पर मकानों की छतों का ढाल बहुत कम या न के बराबर रखा जाता है। भारत में राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, उत्तरी मध्य प्रदेश में प्रायः इस प्रकार के मकान बनाए जाते हैं।

04– चौकोर या आयताकार मकान :– इस प्रकार के मकान प्रायः मैदानी भागों में बनाए जाते हैं। भारत के अधिकांश प्रदेशों में इस प्रकार के मकान पाये जाते हैं।

05– वृत्ताकार मकान :– भारत में पायी जाने वाली जनजातियां प्रायः वृत्ताकार मकान का निर्माण करती हैं। इस प्रकार के गृह उड़ीसा के तटवर्ती क्षेत्रों, विशाखापत्तनम के पृष्ठ प्रदेशों, जगदलपुर आदि प्रदेशों में पाये जाते हैं। इस प्रकार के अस्थायी आवास पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कृषीय क्षेत्रों में पाये जाते हैं जिनका उपयोग कभी रहने के लिए तो कभी कृषीय उपजों के रखने के लिए किया जाता है।

06– मिश्रित आकृति के आवास :– इसमें अर्द्धवृत्ताकार, त्रिभुजाकार, दीर्घवृत्ताकार, सर्पफनाकार, चौकार आदि आकृतियां मिश्रित रूप से दृष्टिगोचर होती हैं। इनका निर्माण भूमि की उपलब्धता एवं संसाधन उपलब्धता तथा मानव की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। भारत के ग्रामीण क्षेत्र में इस प्रकार के मकान पाये जाते हैं।

07– द्विछतीय मकान :– ऐसे मकानों में दो प्रकारों की छतें होती (एक सीमेण्ट–कंक्रीट और एक खपरैल) होती हैं। इस प्रकार के मकान प्रमुखतया मध्य प्रदेश में पाये जाते हैं।

08– आहातेदार मकान :– ऐसे मकानों के चारों और से दीवार का घेरा बना दिया जाता है। इस प्रकार के मकान प्रमुखतया राजस्थान में पाये जाते हैं।

09– द्विद्वारा मकान :– ऐसे मकान जिनके दरवाजे दो दिशाओं में होते हैं। इस वर्ग में आते हैं। इस प्रकार के मकान प्रायः भारत के धनी कृषकों द्वारा बनाये जाते हैं।

ल– गृह निर्माण सामाग्री के आधार पर मकानों के प्रकार :–

01– छप्पर के बने मकान (झोपड़े) या गृह

02– नरकुल या घास की झोपड़ी

03– बांस एवं लकड़ी के बने मकान

04– कच्ची मिट्टी से बने मकान

05– ईंट और लकड़ी के बने मकान

06– ईंट, पत्थर, सीमेण्ट आदि से बने मकान

07– लोहे, कंक्रीट के बने मकान

08– मिश्रित सामग्री से बने मकान

13.6.3– मानव के अधिवास के परिसंचरण या परिवहन भागः–

मानव अधिवास के दो प्रमुख तत्वों **समांग या समरूपी और केन्द्रीय भाग** के अतिरिक्त दो प्रमुख

तत्वपरिवहन या परिसंचरण तथा विशिष्ट भाग प्रमुख हैं। किसी भी देश की परिवहन व्यवस्था वहां के आर्थिक ढांचे रूपी शरीर की स्नायु प्रणाली होती है। यह देश के दूरस्थ एवं एकान्त भागों को जोड़ने का कार्य करती है। संसाधनों की उपादेयता में वृद्धि करती है, मूल्यों में समता बनाए रखने में सहायता करती है तथा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को सम्बल प्रदान करती है।

मानव अधिवास के तत्वों में यह अति महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि बिना परिवहन व्यवस्था के अधिवास की कल्पना करना भी आसान नहीं है। परिवहन या परिसंचरण के माध्यम से ही अधिवास के अन्य तत्वों को एक साथ समेकित किया जा सकता है। मानव अधिवास में परिवहन मार्ग के होने से यहां के विभिन्न आवास आपस में जुड़ सकते हैं। अधिवासों में परिवहन मार्गों की उपस्थिति कोई आज की कल्पना नहीं है बल्कि यह हड़प्पा एवं मोहन जोदड़ो की संस्कृति के काल में भी विशेष रूप से चलन में थी। प्राचीन कालीन अधिवासों में परिवहन मार्गों की प्रचुरता होती थी (विभिन्न क्षेत्रों में खुदायी से प्राप्त नगरीय एवं ग्रामीण अधिवासों के प्राप्त अवशेषों से यह ज्ञात होता है)। मानव अधिवासों में परिवहन मार्गों की उपलब्धता से आवागमन एवं विभिन्न वस्तुओं के आदान–प्रदान एवं अन्य कार्यों में आसानी हो जाती है। वर्तमान विश्व में ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों में परिवहन एवं संचार माध्यमों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। आधुनिक नव विकसित नगरों एवं ग्रामीण व्यवस्था में परिवहन मार्गों का निर्माण प्राथमिकता में आ गया है तथा यह समाज के उच्चता के मापदण्ड के रूप में देखा जा रहा है।

13.6.4– विशिष्ट भाग :–

अधिवासों के उपरोक्त तत्वों के अतिरिकत चतुर्थ एवं सबसे विशिष्ट तत्व है अधिवासों के विशिष्ट भाग, जिसमें मठ, स्कूल, पंचायत, अखाड़ा तथा विशिष्ट अवस्थापनात्मक सुविधाओं को सम्मिलित किया जाता है। अधिवासों के विशिष्ट भाग के अभाव में नगरों की पूर्णता को स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि अधिवासों में मकान तो बने होते हैं (जिनका विवरण इस इकाई के पूर्व भाग में उल्लेखित किया गया है।) लेकिन वे मूल रूप से मानव निवास के लिए निर्मित किए जाते हैं। इनके अतिरिक्त भी अनेक प्रकार की इमारतें अधिवासों में पायी जाती हैं, जैसे धार्मिक प्रतिष्ठान (मन्दिर, मस्जिद, चर्च, या अन्य धार्मिक स्थल), शैक्षिक प्रतिष्ठान (स्कूल, कालेज, अन्य उच्च शैक्षिक प्रतिष्ठान) के अलावा पंचायत अर्थात् विभिन्न प्रकार के पंचायती इमारतें जिसमें ग्राम पंचायत, खण्ड पंचायत, जिला पंचायत आदि को सम्मिलित किया जाता है, आदि। इसके अतिरिक्त बाजार एवं फल एवं सब्जी मण्डी स्थल, स्थाई एवं अस्थाई औद्योगिक इकाई, एफ0सीआई0 गोदाम, संचारकारी भाग, परिवहन को गति प्रदान करने वाली सड़कें (ग्रामीण, राजकीय राजमार्ग, राष्ट्रीय राजमार्ग), नगरीय एवं ग्रामीण अधिवासों में पायी जाने वाली गलियां आदि को अधिवासों के विशेषतत्वों के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मानव अधिवासों के विशिष्ट तत्वों में चाहे वे ग्रामीण अधिवास हों या नगरीय अधिवास में उपरोक्त वर्णित तत्वों कों उपस्थिति प्रायः देखी जा सकती है।

13.7 सारांश

मानव अधिवास मानव जीवन की सर्वप्रमुख आवश्यकताओं में से एक हैं जिनके अभाव में मनुष्य के सामाजिक जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। प्रस्तुत इकाई में मानव अधिवास के प्रमुख तत्वों के विषय में विशेष अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत इकाई में मानव अधिवास का अर्थ बताते हुए विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के माध्यम से इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। मानव अधिवास के निर्माण के पीछे अनेक प्रकार के कारण उत्तरदायी होते हैं जिनको इस इकाई के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। मानव अधिवास को वास्तविक एवं पूर्ण अधिवास तभी माना जा सकता है जबकि उसमें विभिन्न अधिवासीय विशेषताएं पायी जाती हों। मानव अधिवास के निर्माण में अनेक तत्वों का योगदान होता है जैसे मकान जो कि सबसे महत्वपूर्ण है, इस इकाई में मकानों के निर्माण से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, तथा यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि मकानों के प्रकार कौन–कौन से हैं अर्थात् मकान निर्माण के आधारी तत्वों का वर्णन जिन पर आश्रित होकर इनका निर्माण किया जाता है, के आधार पर मकानों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। इसके अलावा इस इकाई में अधिवास के विशेषतत्व, परिसंचरण एवं परिवहन आदि का भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि अधिवास के अस्तित्व में आने के लिए विभिन्न तत्वों का योगदान होता है। आशा है यह इकाई विद्यार्थियों के अधिवास सम्बन्धी विभिन्न तत्वों के विषय में सकारात्मक जानकारी एवं वृद्धि करने में सार्थक सिद्ध होगी।

13.8 बोध प्रश्न

13.8.1– दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः–

प्रश्न–01 :– मानव अधिवास को परिभाषित करते हुए, इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न–02 :– मानव अधिवासों के विभिन्न तत्वों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–03 :– मानव समाज के लिए अधिवासों के महत्व पर एक निबन्ध लिखिए।

प्रश्न–04 :– "मानव अधिवास विभिन्न अधिवासीय तत्वों का संगह है" उक्त कथन की व्याख्या कीजिए।

13.8.2– लघु उत्तरीय प्रश्नः–

प्रश्न–01 :– मानव अधिवास से आप क्या समझते हैं स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न–02 :– मकान क्या हैं परिभाषित कीजिए।

प्रश्न–03 :– मकान के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–04 :– डिमांजिया के अनुसार मकानों के प्रकार का वर्णन कीजिए।

13.8.3– वस्तुष्ठि प्रश्न :–

प्रश्न–01 :– निम्नलिखित में से कौन अस्थाई बस्तियां बसाकर जीवन यापन करते हैं?

अ– खिरगीज **ब–** बद्दू

स– मसाई **द–** इनमें से कोई नहीं

प्रश्न–02 :– **क्रॉल** निवास गृह है :

अ– बद्दुओं के **ब–** खिरगीजों के

स– मसाई **द–** बुशमैन

प्रश्न–03 :– भूकम्पीय क्षेत्र में मकान का निर्माण किया जाता है–

अ– शीशा **ब–** लकड़ी

स– खपरैल **द–** इनमें से कोई नहीं

प्रश्न–04:– ढ़ालू छत वाले मकान बनाऐ जाते हैं जहां–

अ– वर्षा एवं बर्फ गिरती है **ब–** शुष्क क्षेत्रों में

स– कम वर्षा के क्षेत्रों में **द–** इनमें से कोई नहीं

प्रश्न–05:– प्रो0 हाउस्टन मकानों को कितने प्रकारों में वर्गीकृत किया है?

अ– तीन **ब–** पाँच

स– दस **द–** आठ

उत्तर–01– द 02– द 03– ब 04– अ 05– ब

13.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, प्रो0 माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन सत्यम अपार्टमेंट सेक्टर नं 3 जवाहर नगरजयपुर 302004, पृष्ठ सं–320 से 322।

02– मानव भूगोल, डॉ काशीनाथ सिंह, डॉ जगदीश सिंह, ज्ञानोदय प्रकाशन, 234 ग्रामीण संविकास संस्थान दाउदपुर, गोरखपुर 273001। पृष्ठ सं–227, 228 ,229।

03– मानव भूगोल, एस0 डी0 मौर्य, शारदा पुस्तक भवन 11, यूनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज, 211002, पृष्ठ सं–209।

04– मानव भूगोल, डॉ मोहम्मद हारुन, विजडम पब्लिकेशन, मैदागिन वाराणसी, पृष्ठ सं–196।

05– मानव भूगोल बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए0 यूनिवर्सिटी रोड, प्रयागराज–211002। पृष्ठ सं–351, 356, 357।

06– भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, डॉ रतन जोशी साहित्य भवन पब्लिकेशन हॉस्पिटल रोड आगरा, 282003। पृष्ठ सं–137।

07– भारत का भूगोल, ओझा एस0के0, बौद्धिक प्रकाशन, प्रधान कार्यालय B-4A, "श्रीराम भवन" देवनगर, झूंसी, प्रयागराज, पृष्ठ सं–288।

08– Prof. R L Singh, Evolution of Settlement in the middle Ganga Valley, N.G.Jour of India, 1955।

इकाई–14 अधिवास का वर्गीकरण, ग्राम एवं नगर, बस्तियों के प्रकार, प्रकीर्ण बस्तियां, सामूहिक अधिवास, भारतीय गांव

इकाई की रूपरेखा

14.1– प्रस्तावना

14.2– उद्देश्य

14.3– अधिवास का वर्गीकरण

14.4– ग्रामीण अधिवास

14.5– भारत में ग्रामीण अधिवासों का विकास

14.6– ग्रामीण बस्तियों के प्रकार

14.7– भारतीय गाँव

14.8– नगरीय अधिवास

14.9– नगरीय बस्तियों का वर्गीकरण

14.10– नगरीय बस्तियों की विशेषताएं

14.11– मानव बस्तियों के प्रकार

14.12– सारांश

14.13– बोध प्रश्न

14.14– संदर्भ ग्रन्थ सूची

14.1 प्रस्तावना (Preface)

मानव जीवन की आवश्यकताओं में भोजन के उपरान्त प्रमुख स्थान आवास का है। मानव जीवन में समस्त क्रियाकलापों का अपना महत्व है। मनुष्य विभिन्न क्रिया–कलापों में तभी संलग्न रह सकता है जब उसके पास आवास (आश्रय) हो। मानव आवास विभिन्न जैविक एवं भौतिक तत्वों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। स्पष्ट रूप में कह सकते हैं कि –मानव के बुद्धि, कौशल द्वारा भौतिक पर्यावरण परिवर्तन एवं परिमार्जन की सकारात्मक पहल चलेती है जिसके परिणाम स्वरूप मानव के अनुकूल एक विशेष प्रकार के पर्यावरण का निर्माण होता है जिसे सांस्कृतिक पर्यावरण कहते हैं, और इस सांस्कृतिक भू–दृश्य में मानव अधिवास प्रमुख स्थान रखते हैं। इन्हें मनुष्य अपने निवास के लिए, कार्य संचालन के लिए, अपने द्वारा अर्जित की गयी विभिन्न वस्तुओं के संग्रह के लिए, पालतू पशुओं को रखने के लिए तथा विभिन्न प्रकार की सामाजिक सांस्कृतिक एवं राजनीतिक गतिविधियों के संपादनार्थ निर्मित करता है। मानव अधिवास को विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुसार परिभाषित करने का प्रयास किया है, जैसे ब्रून्श के अनुसार– ''अधिवास मानवीय रचनाओं में सर्वाधिक स्पष्ट और दूर से दिखाई देने वाली ठोस रचना है।'' अधिवास का आकार किसी प्रदेश या क्षेत्र में दो–चार गृहों वाले लघु पुरवा से लेकर सैकड़ों, हजारों गृहों महानगर जैसा विशाल भी हो सकता है। भारत में छोटे गांव से लेकर बड़े–बड़े महानगर (मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता, दिल्ली आदि) जैसे वृहत अधिवास के रूप कहे जा सकते हैं। मानव अधिवासों के निर्माण के अनेकों उद्देश्य होते हैं जिनके अनुरूप अधिवासों का निर्माण किया जाता है। अधिवासों के वर्गीकरण के लिए विभिन्न आधारों की सहायता ली जाती है। प्रस्तुत इकाई में मानव अधिवासों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा रहा है। इसी के साथ ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों, बस्तियों के प्रकारों तथा भारतीय गांवों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे विद्यार्थियों को अधिवासों के विषय में अधिकाधिक जानकारी हो सकेगी।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

01– अधिवासों के सन्दर्भ में विद्यार्थियों को जानकारी उपलब्ध कराना तथा साथ ही साथ अधिवासों का वर्गीकरण कर उन्हें व्याख्यायित करना।

02– विद्यार्थियों को अधिवास के विभिन्न लक्षणों एवं विशेषताओं से अवगत कराना।

03– विभिन्न आधारों पर अधिवासों के निर्माण को समझाना तथा विद्यार्थियों को स्पष्टीकरण देकर विभिन्न प्रदेशों में बनने वाले अधिवासों के विषय में जानकारी उपलब्ध कराना।

04– विभिन्न प्रकार की बस्तियों की जानकारी उपलब्ध कराना।

05– अधिवासों के प्रतिरूपों को स्पष्ट करना।

06– इस इकाई के माध्यम से स्पष्ट करना कि किस प्रदेश में किस प्रकार के अधिवास का निर्माण किया जाता है। अर्थात अधिवासों पर भौतिक स्वरूपों की प्रकृति की भूमिका को समझाना।

07– भारतीय गांव के विशेष अध्ययन द्वारा यहां के अधिवासों के गुणों एवं विशेषताओं से विद्यार्थियों को अवगत कराना।

14.3 अधिवास का वर्गीकरण (classification of settelments)

मानव अधिवास से तात्पर्य मानव द्वारा रचित उस रचना से है जो मानव के रहने अथवा कार्य करने, वस्तु संग्रह, या अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निर्मित किये जाते हैं। ये अधिवास मानव के सांस्कृतिक वातावरण के अभिन्न अंग होते हैं जिसके निर्माण में मानव को भौतिक या प्राकृतिक वातावरण में परिवर्तन एवं परिमार्जन करना पड़ता है। मानव अधिवासों को निर्मित करने में विभिन्न तत्वों का योगदान होता है तथा विभिन्न आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इनका निर्माण किया जाता है। अतः अधिवासों का वर्गीकरण भी विभिन्न आधारों पर किया जाता है–

सर्वप्रमुख वर्गीकरण है–

01– ग्रामीण अधिवास

02– नगरीय अधिवास

प्रधानतया जिन बस्तियों के लोग प्राथमिक कार्यों में लगे होते हैं उन्हें ग्रामीण अधिवास कहते है। अर्थात् ग्रामीण अधिवासों में प्राथमिक आर्थिक क्रिया–कलापों की प्रधानता होती है। जहां द्वितीयक, तृतीयक तथा चतुर्थक कार्यों में अधिकतर लोग लगे हों उन्हें नगरीय अधिवास कहते हैं। आकार, प्रकार, कार्य संरचना, भूदृश्य, जनसंख्या घनत्व आदि विभिन्न आधारों पर इन्हें विलग इकाइयां मानते हैं। समष्टिगत रूप में एकांकीझोपड़ी, कैम्प फार्मस्टेड, पुरवा या नगला, गांव, कस्बा, छोटा नगर, महानगर और वृहदाकार महानगर मानव अधिवास की पदाक्रमिक इकाइयां हैं।

मानव अधिवास का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जाता है।

01– उत्पत्ति

02– अवस्थिति

03– आकार

04– आकृति प्रकार्य

05– गृह घनत्व

06– काल आदि

अधिवासो के वर्गीकरण में कई आधारों को मापदण्ड के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके लिए किसी

एक या कुछ विशेषताओं की समानता के आधार पर कुछ वर्ग बनाए जाते हैं और सम्बन्धित अधिवासों को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। इस प्रकार मानव अधिवासों को विभिन्न आधारों पर पृथक–पृथक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। अधिवासों का वर्गीकरण **सामान्यतया स्थल एवं स्थिति (site And situstion),** आकार (size), अकारिकी (morphology), गृह संख्या एवं घनत्व (number And density of house), विकास अवस्था (development stage), कार्यालय विशिष्टता (functional specialization) आदि आधारों पर किया जाता है जिसका विवरण निम्नवत है।

14.3.1 स्थल एवं स्थिति–

कोई अधिवास जितनी भूमि को आच्छादित करता है, वह भूमि उस अधिवास का स्थल कहलाती है। उस स्थल के चतुर्दिक व्याप्त समस्त भौतिक सांस्कृतिक दशाएं स्थिति के अन्तर्गत आती है। अधिवास का उद्‌भव या स्थापना के लिए स्थल का उपयुक्त होना प्रायः अनिवार्य माना जाता है। उसके भावी विकास का निर्धारण स्थिति की उपयुक्ता पर ही निर्भर करती है। स्थल एवं स्थिति के विचार से अधिवास निम्नलिखित प्रकार के हो सकते है–

01– मैदानी अधिवास (Plain settlements)

02– पर्वतीय अधिवास (Mountain settlements)

अ– अंतः पर्वतीय अधिवास

ब– गिरिपदीय अधिवास

03– पठारी अधिवास

04– वनस्थली अधिवास

05– जलीय स्थिति वाले अधिवास

अ– सागर तटीय

ब– नदी तटीय

स– झील तटीय

06– मार्ग संगम अधिवास (Nodal settlement)

07– चौराहे वाले अधिवास

08– रेलवे जंक्शन अधिवास

14.3.2– आकार (Size):–

अधिवास–आकार के अन्तर्गत सामान्यतः उसके क्षेत्रीय विस्तार, उर्ध्ववर्ती विस्तार तथा जनसंख्या को सम्मिलित किया जाता है। अधिवासों के आकार निर्धारण में मुख्य रुप से जनसंख्या को सम्मिलित किया जाता है। जनसंख्या आकार का प्रत्यक्ष प्रभाव अधिवास के क्षेत्रीय विस्तार पर भी पाया जाता है। जनसंख्या एवं क्षेत्रीय आकार के अनुसार अधिवासों को निम्नलिखित वर्गो में विभाजित किया जाता है।

01. पुरवा

02. ग्राम

03. नगरीय ग्राम

04. कस्बा

05. नगर या शहर

06. महानगर

07. वृहत नगर

14.3.3 आकारिकी (morphology):–

अधिवासों के बाह्य आकृति ही उसकी भौतिक आकारिकी (Physical morphology) को प्रकट करती है। इस बाह्य आकृति को सामान्यतः ज्यामितीय अथवा अन्य आकृतियों द्वारा व्यक्त किया जाता है। अधिवासों की आकृति निर्धारण उनके विन्यास (Lay out) का मुख्य हाथ होता है क्योंकि मार्गों और गलियों कर स्थिति एवं बनावट के द्वारा ही अधिवासों का बाह्य स्वरूप निर्धारित होता है। आकृति और आकारिकी के अनुसार अधिवासों के मुख्य प्रकार इस प्रकार है –

1. रेखीय अधिवास (Liner settlement)
2. आयताकार अधिवास (Rectangular settlement)
3. वर्गाकार अधिवास (Square settlement)
4. वृत्ताकार अधिवास (circular settlement)
5. अर्ध्दवृत्ताकार अधिवास (Semi-circular settlement)
6. त्रिभुजाकार अधिवास (Triangular settlement)
7. अंडाकार अधिवास (oval settlement)
8. अरीय अधिवास (Are settlement)
9. अन्य आकृति (तारा,पंखा आदि) वाले अधिवास (Other types settlement)
10. अनाकार अधिवास (Amorphus settlement)

14.3.4– गृह संख्या एवं घनत्व (numberAnd density of houses) :–

लघु अधिवासों में सामान्यतः गृहों की संख्या कम और उनके बीच की दूरी अधिक होती है किन्तु बड़े अधिवासों में गृह पास–पास होते है और उनकी संख्या भी अधिक रहती है गृहों की संख्या और गृह घनत्व (House density) या गृह अंतरण (House spacing) के आधार पर अधिवास मुख्यतः तीन प्रकार के होते है–

1. प्रकीर्ण या एकांकी अधिवास
2. अर्द्ध सघन या अपखंडित अधिवास
3. सघन या पुंजित अधिवास

ग्रामीण अधिवास इनमें से किसी भी प्रकार का हो सकता है। किन्तु नगरीय अधिवास सघन या पुंजित प्रकार का ही होता है। नगर प्रायः प्रकीर्ण या अपखंडित नहीं होते हैं।

14.3.5– विकास अवस्था (Development stage):–

अधिवासों का जन्म प्रायः कुछ गृहों से होता है। और बाद में विकास की विभिन्न अवस्थाओं से होते हुए ये अधिवास क्रमशः ग्राम, नगर और महानगर का स्वरूप धारण कर लेते हैं। मानव जीवन की ही भांति अधिवासों के विकास की भी अवस्थाएं पायी जाती है। इन अवस्थाओं को क्रमशः शैशवावस्था, बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था, जीर्णावस्था आदि वर्गों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाता है। **ग्रिफिथ टेलर** नें अधिवासों (मुख्यतः नगरों) के विकास की सात अवस्थाएं बताया है। किसी अधिवास की उत्पत्ति से लेकर उसके अन्तिम चरण की क्रमिक अवस्थाओं को इंगित करते हैं।

1. पूर्व शैषवावस्था (sub-infatile stage)
2. शैषवावस्था (infatile stage)
3. बाल्यावस्था (juvenile stage)
4. किशोरावस्था

5. प्रौढ़ावस्था
6. उत्तर प्रौढ़ावस्था
7. जीर्णावस्था

अधिवासों के विकास में उपर्युक्त सातों अवस्थाओं का आना अनिवार्य नहीं होता है। नियोजित प्रकार से बसायी गयी अनेक बस्तियों को प्रारम्भ की कुछ अवस्थाओं से नहीं गुजरना पड़ता। इसी प्रकार कुछ अधिवास अंतिम अवस्था तक पहुंचने से पहले ही नष्ट या समाप्त हो जाते है। किन्तु इतना अवश्य होता है कि पूर्व शैषवावस्था के रुप में एक अधिवास जीर्णावस्था तक पहुंचने के पहले विभिन्न क्रमिक अवस्थाओं से गुजरता है भले ही किसी अवस्था की अवधि अधिक और किसी अवस्था की अवधि कम रहे क्योंकि विकास की गति एवं स्थिरता विभिन्न आर्थिक–राजनीतिक कारको से भी नियंत्रित होती है।

14.3.6– कार्यात्मक विशिष्टता (Functinal specialization):–

अधिवासों में निवास करने वाले लोग कई प्रकार के व्यवसायों या आर्थिक कार्यो से सम्बन्धित होते हैं। विभिन्न प्रकार के व्यवसाय अपनाने वाले लोगों की गृह योजना, सामाजिक एवं आर्थिक स्तर, जीवन यापन के ढंग, सांस्कृतिक दशाओं आदि में उल्लेखनीय अन्तर देखने को मिलता है। अधिवासों के भूमि उपयोग तथा विन्यास पर भी व्यवसाय या कार्य का महत्वपूर्ण नियंत्रण पाया जाता है। इसीलिए अधिवासों को व्यवसायों की प्रधानता के आधार पर दो प्रधान वर्गों में विभक्त किया जाता है।

1. ग्रामीण अधिवास (Rurl Settlement)
2. नगरीय अधिवास (Urban Settlement)

ऐसे अधिवास जहाँ निवास करने वाली सम्पूर्ण अथवा अधिकांश जनसंख्या प्राथमिक क्रियाओं (Primary Activity) में संलग्न होती है और उन्ही से जीविका प्राप्त करती है। उन्हे ग्रामीण अधिवास कहा जाता है। प्राथमिक क्रियाएं प्रकृति तथा भूमि से प्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध होती है आखेट, मत्स्य पालन, कृषि, पशुपालन। ग्रामीण अधिवासों के विपरीत नगरीय अधिवासों की अधिकांशजनसंख्या द्वितीयक, तृतीयक, और चतुर्थक कार्यो में संलग्न पायी जाती है। नगरीय अधिवास या नगर प्रायः **बहुकार्यात्मक (Multifunctinal)** होते हैं। जहॉ उद्योग, व्यापार, प्रशासन, परिवहन शिक्षा, शैन्य, पर्यटन तथा बहुत से सामाजिक–राजनीतिक एवं धार्मिक–सांस्कृतिक कार्यो की प्रधानता पायी जाती है।

14.4 ग्रामीण अधिवास

कोई भी बस्ती जिसमें अधिकांश लोग कृषि, वानिकी, खनन और मत्स्य पालन में लगे होते हैं 'ग्रामीण बस्ती' कहलाती है। ग्रामीण क्षेत्रों को भारत में 'ग्रामीण इलाकों' या गांव के रूप में भी जाना जाता। यहां जनसंख्या घनत्व बहुत कम है, ग्रामीण क्षेत्रों में मछली पकड़ने, कुटीर उद्योग, मिट्टी के बर्तन आदि के साथ–साथ कृषि आजीविका का मुख्य श्रोत है। ए0वी0 परपल्लू ने अपनी पुस्तक मानव भूगोल में स्पश्टः लिखा है :– "Arural settlement is fact mainly on Agricultural workshop and it can not be separated from the land whose use it insurs. It's shape and akangement are often in strict accord with th the kind of the work, the Agricultural techiiques and the way that the soil in used."

ग्रामीण बस्तियों में मुख्यरूप से किसान रहते हैं, जहाँ कृषक अपने जीविकोपार्जन के लिए विशेष रूप से कृषि पर निर्भर रहता है तथा कृषि से सम्बन्धित कार्यों में सदैव लगा रहता है। कृषकों के जीवन का आधार उनका खेत होता है जिससे किसान विशेष रूप से सम्बन्धित रहता है। अपने खेतों में कार्य करने के पश्चात वह उन्हीं खेतों के समीप ही रहना पसन्द करता है। जिसके लिए मानव के अधिवास खेतों के समीप बनाए जाते हैं, जहां किसान समूह में रहता है। कृषि प्राथमिक कार्य का प्रमुख उदाहरण है जिसमें पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता होती है।

सघन ग्रामीण बस्तियां प्रायः समतल धरातल, उर्वर मृदा, अनुकूल जलवायु, एवं स्वच्छ सुलभ जल के क्षेत्र में पायी जाती हैं। इस प्रकार की बस्तियां प्रायः भारत और चीन में प्रमुख रूप में पायी जाती हैं। चीन की लोयस मृदा के क्षेत्रों में पाये जाने वाले गांव के सन्दर्भ में **रिचथोफेन** ने बताया है– ''ये परिवारों के ऐसे समूह हैं जो एक

ही वंश परम्परा द्वारा मिले हुए हैं तथा इनके रीति–रिवाज समान हैं। ये एक सी फसलों के उत्पादन में सहयोग के लिए एक–दूसरे से सम्बन्धित हैं।'' मानसून एशिया के देशों के नदी घाटियों तथा मैदानी भागों में जमा हुआ ग्रामीण समुदाय पाया जाता है। ऐसे उदाहरण भारत एवं चीन में पाये जाते हैं। यहां के गावों में मुख्यरूप से किसानों के आवास पाये जाते हैं परन्तु साथ ही में इनमें थोड़े बहुत बाजार, व्यापारिक प्रतिष्ठान एवं छोट–छोटे उद्योग–धन्धे भी पाये जाते हैं। विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के लोग यहां निवास करते हैं जैसे लोहार, बढ़ई, कुम्हार, तेली, नाई, धोबी, चमार, दर्जी, बनिया, चमार, बरई आदि। इन गांवों में अनेक सार्वजनिक सुविधाएं भी उपलब्ध रहती हैं जैसे सार्वजनिक कुआँ, तालाब, मन्दिर, मस्जिद, स्कूल, पंचायत, पुलिस थाना, पंचायत घर, डाकघर, चिकित्सा, गोदाम, कोल्ड स्टोरेज, क्रय–विक्रय केन्द्र आदि। अब आधुनिक सुविधाएं भी गावों तक पहुँच रही हैं जैसे रेलवे लाइन, बैंकिंग सेवायें आदि। इस प्रकार देखें तो नगरों जैसी सुविधाएं गांवों में मिलने लगी हैं। गावों में सौहर्द एवं आपसी सामंजस्य पाया जाता है।

ग्रामीण अधिवास की परिभाषाः–

योजना आयोग के अनुसार 15000 की अधिकतम आबादी वाले अधिवास को प्रकृति में ग्रामीण माना जाता है। National sample servey organisation (NSSO) राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन ग्रामीण क्षेत्र को निम्नानुसार परिभाषित करता है।

1. अधिकतम 400 प्रति वर्ग किलोमीटर तक के जनसंख्या घनत्व वाला क्षेत्र।
2. स्पष्ट सर्वेक्षण सीमाओं वाला गांव लेकिन कोई नगरपालिका बोर्ड नहीं।
3. कम से कम 75 प्रतिशत पुरुष कामकाजी आबादी कृषि और सम्बद्ध गतिविधियों में शामिल।

ग्रामीण अधिवास पहचान के दो कारक हैं–

प्रतिरूप :– अधिवास के ज्यामितीय रूप और आकार को संदर्भित करता है जो विभिन्न प्रकार के हो सकते है

प्रकार :– आवासों/घरों की संख्या और साइटों की संख्या को संदर्भित करता है।

इस प्रकार गांव एक सुस्पष्ट एवं पृथक इकाई होता है जिसकी अपनी विशेषताएं पायी जाती हैं। मैदोनों में स्थित गांव अपनी केन्द्रीय स्थिति के कारण जाने जाते हैं, जिसके चारों और अनेक प्रकार के भूमि–उपयोग प्रतिरूप पाये जाते हैं। ग्रामीण बस्तियों की पहचान वहां पर होने वाले प्राथमिक कार्यों द्वारा होती है। इन प्राथमिक कार्यों में स्थानिक विविधता पायी जाती है जो कि धरातलीय स्वरूपों (उच्चावचीय स्वरूपों), जलवायु, एवं सामाजिक कार्यों द्वारा निर्धारित होती है।

ग्रामीण बस्तियों के उद्भव एवं विकास :–

ग्रामीण बस्तियां एक स्वतन्त्र इकाई हैं जिसकी अपनी स्वयं की विशेषताएं होती हैं। रही बात इनके उद्भव तो इस सन्दर्भ में स्पष्ट रूप कुछ कहा नहीं जा सकता है और न ही कोई सामयिक घोषणा ही की जा सकती है। परन्तु विभिन्न प्रकार के साक्ष्यों एवं वैज्ञानिक शोधों के द्वारा अनुमान अवश्य ही लगाये जा सकते हैं कि मानव अधिवास का स्वरूप प्राचीन काल में कैसा रहा होगा? विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि पूर्व पाषाण काल में मनुष्य गुफाओं से बाहर आया और मानव ने स्वयं खुले आसमान के नीचे वृक्षों की शाखाओं एवं पत्तियों से अपना आश्रय बनाना प्रारम्भ किया। आगे चलकर मानव ने उत्तर पाषाण काल में मानव ने आग का आविष्कार कर लिया जिससे मानव के जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिला। मध्य एवं नव पाषाण काल तक मनुष्य ने खाल से तम्बुओं का निर्माण किया तथा स्थाई निवास का निर्माण प्रारम्भ किया जिसमें स्थानीय गृह निर्माण सामग्री का प्रयोग करना प्रारम्भ किया। मानव ने विशेष स्थान का चयन कर आवासों का निर्माण करना प्रारम्भ किया, जैसे झीलों के किनारे, ऊँचे एवं समतल मैदानी भागों में बस्तियों का निर्माण।

सारणी सं0–14.1

ग्रामीण अधिवासों का उद्भव एवं विकास–क्रम

क्र0 सं	काल खण्ड	आश्रय सम्बन्धी क्रिया कलाप

01	पुरा पाषाण काल 10 लाख वर्ष पूर्व से 10 हजार ई0पू0	इस समय मानव ने गुफाओं से बाहर आकर वृक्षों की टहनियों एवं पत्तियों से आश्रय का निर्माण करना प्रारम्भ किया।
02	उत्तरपाषाण काल 11 हजार ई0पू0तक	खाल से बने तम्बुओं का निर्माण करना प्रारम्भ किया।
03	मध्य पाषण काल 10 से 6 हजार ई0पू0	अपेक्षाकृत स्थायी निवास–स्थलों का चयन कर अवास बनाना शुरू किया।
04	नव पाषाण काल 6 से 4 हजार ई0पू0	स्थानीय गृह निर्माण सामग्री का प्रयोग करना प्रारम्भ किया तथा विशेष स्थानों का चयन कर आश्रय का निर्माण करना प्रारम्भ किया।

स्रोत– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह पृष्ठ सं–371

कृषि कार्य के विकास एवं प्रसरण के साथ साथ विश्व के अनेक भागों में ग्रामीण बस्तियों का विकास हुआ। ग्रामीण बस्तियों के विकास के प्रमुख कारणों में कृषि सबसे प्रमुख है। विभिन्न विद्वान यह अनुमान लगाते हैं कि सबसे पहले गाँव का उद्भव कॉप मृदा से युक्त नदी घाटी में नवपाषाण युग में हुआ। कृषि कार्य में आपसी सहयोग की आवश्यकता होती है क्योंकि कृषि कार्य में भूमि की जुताई करने, सिंचाई करने, नालियों का निर्माण करने, फसलों को काटना सुखाना तथा उनका भण्डारण किसी एक व्यक्ति का कार्य नहीं है बल्कि समूह की आवश्यकता होती है। इसीलिए विशेष रूप से सामूहीकरण की आवश्यकता महसूस की गयी। कृषि कार्य के अलावा जंगली पशुओं से सुरक्षा, शिकार करने, मछली पकड़ने आदि प्राथमिक क्रियाओं में मानव समूह में रहकर कार्य करने लगा। फलतः व्यवसाय के अनुरूप लोग छोटी–छोटी बस्तियों में रहने लगे।

मानव की जन्मजात प्रवृत्ति के कारण ग्रामीण बस्तियों का उद्भव एवं विकास हुआ। मानव अपने परिवार एवं सगे सम्बन्धियों के साथ रहना अधिक पसन्द करता है। समूह एवं संयुक्त परिवार भारतीयों की पहचान रही है। इनके अतिरिक्त विश्व के अन्य भागों यथा उ0पू0 कोलम्बिया में **तुकानो इण्डियन** घर 21 मी0 लम्बें एवं 15 मी चौड़े होते हैं जिसमें एक ही कबीले के 20 से अधिक लोग निवास करते हैं। इसी प्रकार ड्रयाक लोगों के घर 198 मीटर लम्बे होते हैं जिसमें पूरा कबीला रहता है, इसमें लगभग 600 से अधिक लोग एक साथ निवास कर सकते हैं। यह कई खण्डों में विभक्त होता है जिसमें अलग–अलग परिवार रहते हैं। ये आवास पर्यावरण के अनुकूल होते हैं। इनका निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री द्वारा होता है तथा इन घरों के लोगों की रूचि, आर्थिक स्थिति एवं प्राविधिक सुविधाओं पर आधारित होता है।

14.5 भारत में ग्रामीण अधिवासों का विकास

भारतीय ग्रामीण अधिवासों को समय के अनुसार निम्नलिखित चरणों में विभाजित किया जा सकता है–

14.5.1– प्रागैतिहासिक कालीन अधिवास (320 ई0पू0 तक)–

इस काल में मनुष्य आदिमानव के रूप में निवास करता था जिसे इक्ष्वाक–आही, प्रोटो इण्डिक्स या प्रोटो आस्ट्रेलायड कहते हैं। समयोपरान्त इन्हें निशाद, किरात, दास, दस्यु, और असुर नाम से जाना जाता था। इस समय मानव गुफाओं में निवास करता था। विभिन्न प्रकार के पुरातत्विक सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि इस प्रकार के अधिवास प्रतापगढ़ (उ0प्र0) के समीप पट्टी तहसील के समीप **सराय नहर राय और** गाजीपुर के समीप जलोढ़ क्षेत्र में नव पाषाणकालीन अधिवास मिले हैं। इसके साथ–साथ उत्तरी विन्ध्यन क्षेत्र, मध्य गंगा घाटी, छोटानागपुर, आदि में पुरा एवं नव पाषाणकालीन अधिवासों के अवशेष मिले हैं।

14.5.2– आर्यन अधिवास :–

भारत में आर्यों का प्रवेश दो शाखाओं के रूप में हुआ एक शाखा घाघरा घाटी से होकर अवध क्षेत्र तथा दूसरी शाखा गंगा यमुना दोआब की और आकर बसे तथा अयोध्या और काशी को अपनी राजधानी बनाया। **प्रो0**

आर0 एल0 सिंह के अनुसार–''इस पूर्व सघन बसे क्षेत्र आर्य उपनिवेश क्षेत्रों को जीतकर या फुसलाकर स्थापित हुआ।''[03] आर्यन कालीन अधिवासों को निम्नलिखित 6 प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है–

01– घोसा या गोपा (वृजा) 02–पल्ली 03–ग्राम 04–दुर्ग

05– खर्वाट या पत्ताना 06–नगर

उपरोक्त में प्रथम तीन ग्रामीण अधिवासों की श्रेणी में आते हैं। इस काल के अधिवासों को गोत्र अथवा कुल के नाम पर नाम दिया जाता था जैसे– कुरु, पांचाल आदि।

14.5.3– बौद्ध एवं मौर्यकालीन अधिवास–

इस काल में गाँवों का नामकरण आकार के आकार के आधार पर किया गया है जैसे– गामाक (लघु ग्राम), गाम (साधारण ग्राम), निगमागम (बृहद् ग्राम), द्वारा ग्राम (उपनगरी ग्राम) और पदन्ता ग्राम (प्रादेशिक ग्राम) आदि के वर्णन मिलते हैं।

14.5.4– पूर्व राजपूत अधिवास :–

हर्ष की मृत्यु के पश्चात भारत में अन्धकार युग का आगमन हुआ। इस समय गंगा यमुना दोआब के तराई क्षेत्र में सघन वनावरण विद्यमान थे। इस प्रदेश में अधिकांश राजपूत मालवा, राजस्थान, मध्यप्रदेश से स्थानान्तरित होकर इस क्षेत्र में आ बसे। इन्होंने अनेक प्रकार के अधिवासों का निर्माण किया गया।

14.5.5– मुस्लिमकालीन अधिवास–

1193 ई0 में राजपूतों से दिल्ली और कन्नौज का पतन हो गया और राजपूत प्रवासित होकर उत्तर पूर्व और दक्षिण की और प्रवासित हो गये। निम्न गंगा यमुना दोआब में 13 वीं और 14 वीं सदी में राजपूत कुल का निवास था। इस क्षेत्र में सल्तनत शासन काल 200 वर्षों तक रहा। 16 वीं सदी में मुगलों का साम्राज्य विकसित हुआ। उन्होंने पूरे साम्राज्य को 5 भागों में वर्गीकृत किया। ये हैं– सूबा, सरकार, दस्तूर, परगना और महल।

14.5.6– ब्रिटिश कालीन अधिवास :–

ब्रिटिश शासकों ने शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना के लिए नये–नये अधिवासों का निर्माण करवाया। **प्रो0 आर0एल0 सिंह** के अनुसार ''गाँव में बसे लोग समाज में षान्ति और सुरक्षा की बहाली के उपरान्त अपने–अपने खेतों के समीप स्थापित होने लगे। फलतः बाह्य स्थित नंगलों का अभ्युदय एवं विकास हुआ।[05]''

14.6– ग्रामीण बस्तियों के प्रकार :–

किसी दिये हुए क्षेत्र में आवासों के विस्तार तथा एकत्रीकरण तथा गृह प्रतिष्ठानों के समंजन एवं संहत्ता की मात्रा (Degree of cohesion and Compactness) के आधार पर मानव अधिवासों को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है जो हैं–

01– एकत्रित (Agglomerated)

02– संहत (Compact)

ग्रामीण अधिवास का बहुविधि वर्गीकरण अग्रांकित पंक्तियों में किया जा रहा है। डॉ0 रामबली सिंह ने ग्रामीण अधिवासों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया है। इस वर्गीकरण में एक प्रशासनिक इकाई में पल्लियों अथवा पुरवों की संख्या (Hn), ग्रामों की संख्या (Vn), और अध्यारोपित इकाई (Oun) को आधार बनाया है। ग्रामीण बस्तियों के दो स्वरूप प्रमुखतया देखे जाते हैं–

01– कृषि गृह (Form Stead)

02– पुरवा एवं गाँव (Hamlet and Village)

14.6.1– कृषि गृह (Form Stead)

यह ग्रामीण अधिवास की सबसे प्रमुख एवं छोटी इाकई है। इसका निर्माण कृषि फार्मों एवं खेतों के समीप एक या दो कमरों के मकान के रूप में होती है। अतः कृषि आवास मुख्य रूप से विस्तृत खेतिहर मैदोनों की एक इकाई है। इस आवास में धीरे–धीरे कृषि कार्यों के साथ–साथ घरेलू कार्य एवं पशुपालन कार्य का संचालन भी

होने लगता है। ऐसे कृषि गृह उन स्थानों पर पाये जाते हैं जहां की भूमि सुलभ एवं उपजाऊ होती है। ये फार्म हाउस कभी–कभी समीप होते हैं तो कभी दूर होते हैं। परन्तु सामान्यतः दूरी अधिक ही पायी जाती है। ये फार्म हाउस पक्के भी होते हैं और कभी–कभी कच्चे भी होते हैं। फार्म हाउस का स्वामी तथा तथा उसके परिवार के सदस्य भी यहाँ निवास करते हैं। यहां पर कृषि से सम्बन्धित अनेक प्रकार की सुविधाएं भी रखी जाती हैं जैसे–अनाज भण्डारण के लिए गोदाम, बीज गोदाम, पशुओं के लिए चारा, खाद एवं कृषि उपकरण, सिंचाई के उपकरण, फार्म हाउस के समीप मुर्गियों के कमरे, चौपाये पशुओं के बाड़े, गाड़ी रखने के गराज, पानी के लिए हौज आदि की सुविधाएं यहाँ पर रखी जाती हैं।

ग्रामीण बस्तियों का वर्गीकरण

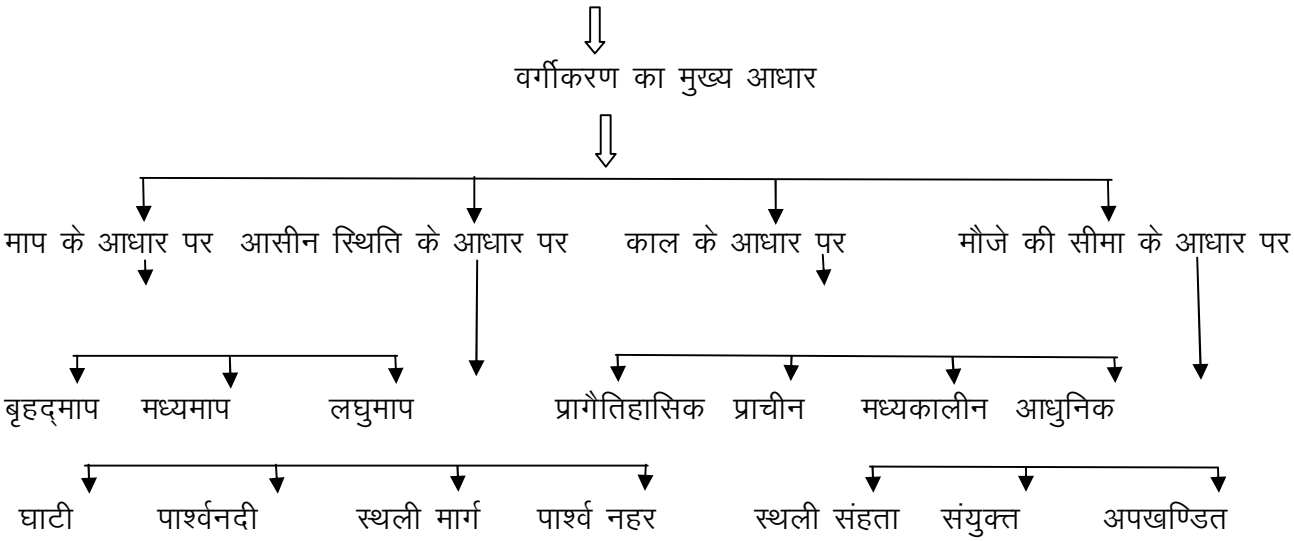

अमेरिकन फार्म का नमूना जिसमें एक डेयरी फार्म है

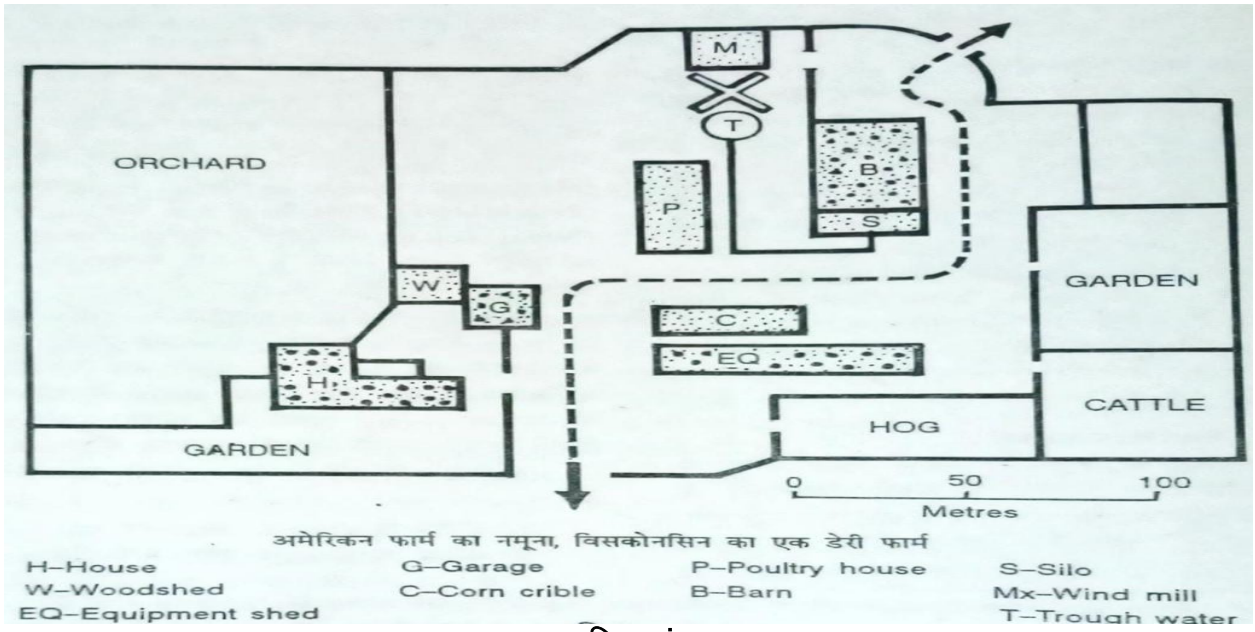

चित्र सं–14.1

स्रोत– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह पृष्ठ सं–376

इस प्रकार अमेरिकी फार्म हाउस सिर्फ सुविधाओं का केन्द्र न होकर सांस्कृतिक संरचना के केन्द्र होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका (चित्र सं 14.1) कनाडा, डेन्यूब नदी के मैदान, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, अर्जेन्टीना आदि देशों में कृषि बस्ती का स्वरूप फार्मस्टेड के रूप में मिलता है। इन फार्मों पर कृषि एवं पशुपालन से सम्बन्धित

कार्य सम्पादित होते हैं। इन कृषि फार्मों पर फार्म मालिक का परिवार भी रहता है। ये फार्म आधुनिक सुविधाओं से युक्त होते हैं। जैसे परिवहन मार्गों द्वारा ये फार्म हाउस नगरों से जुड़े होते हैं। कृषि गृहों में रहने वाले लोग साहसी और स्वावलम्बी होते हैं। यह प्रवृत्ति अमेरिकी कृषि फार्मों में अधिक पायी जाती है। ये फार्म हाउस भारत की तुलना में भिन्न होते हैं। भारत में इस प्रकार के अधिवास एकांकी रूप में पाये जाते हैं जो निर्धनता और मजबूरी का प्रतिफल होता है। भारत के कृषक एवं फार्म हाउस अभावग्रस्त होते हैं। हालॉकि इस प्रकार के अधिवास भारत में पंजाब एवं हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा बिखरे रूप में भारत के अन्य राज्यों में भी पाये जाते हैं।

14.6.2– पुरवा (Hamlet) :–

पुरवा एक ऐसी इकाई होती है जिसका आकार गाँव की तुलना में बहुत छोटा होता है। सही अर्थों में यदि देखा जाये तो पुरवा गाँव की प्रारम्भिक अवस्था का द्योतक होता है जो मुख्य गाँव से जुड़ा होता है। ये ही नंगले या पुरवे जब अतिरिक्त सुविधाएं प्राप्त कर जाते हैं तो क्रमशः गाँव (Village), बाजारी गाँव (Market Village), और कस्बों (Town) का रूप धारण कर लेते हैं। कभी–कभी यह प्रगति तीव्र तो कभी निम्न गति से विकसित होते हैं। यह शिथिलता एवं तीव्रता सुविधाओं की उपलब्धता पर आधारित होती है। भारत में नंगला या पुरवा राजस्व गाँव की सीमा के अन्तर्गत स्थित होते हैं। मध्य गंगा के मैदान में कुशीनगर में इन पुरवों या टोलों की संख्या 52 (गुरुम्हियां गाँव के अन्तर्गत) तथा कुसुम्हा गाँव में इन टोलों की संख्या 56 तक है। कुछ राजस्व गाँव ऐसे हैं जहां इतने तो नहीं परन्तु अधिक पुरवे पाये जाते हैं। विभिन्न आधारों पर इनके नामकरण किए जाते हैं जैसे जाति, मानव व्यवसाय आदि। कुछ उदाहरण हैं– चमरौटी, कोंहरवटी, पसियान, अहिरान, दुबान, लोहरान, ठकुराही, बभनवटी, मुसहट्टी हैं।

14.6.3– गाँव (Village) :–

परिवार, पुरवा के बाद गाँव एक प्रमुख इकाई है जो कृषि कार्यों से परिपूर्ण होते हैं। यहां पर अनेक विशेषताएं पायी जाती हैं। ब्लॉश महोदय के अनुसार– ''गाँव परिवार या वंश से बड़े समुदाय के प्रतीक हैं।'' ''(The village is the expression of type of community larger than family or class.)''

मुख्यतः गाँव रहने के स्थान होते हैं न कि व्यवसाय केन्द्र। इस प्रकार की बस्ती मूल रूप से किसी प्रदेश अथवा देश के भौतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तत्वों के समन्वय से अस्तित्व में आती है। वर्तमान में आधुनिक सुख सुविधाओं के कारण नगरों में लगातार वृद्धि के परिणाम स्वरूप गाँव का महत्व दिनों दिन कम होता जा रहा है और इस प्रकार के अधिवासों की उपेक्षा हो रही है। भारत में लगातार मानव जनसंख्या बढ़ रही है जिसके परिणाम स्वरूप मनुष्य की आवश्यकताएं एवं अपेक्षाएं बढ़ रही हैं। जिनकी पूर्ति के लिए जनसंख्या का ग्रामीण स्वरूप भी परिवर्तित होता जा रहा है जिसमें शैक्षिक सुविधाएं, प्रशासनिक, राजनैतिक तथा सामाजिक एवं अवस्थापनात्मक संस्थान प्रमुख हैं।

वर्तमान में विभिन्न सरकारों द्वारा अनेक प्रकार की ग्राम विकास योजनाएं चलाई जा रही हैं जिससे गाँव की दिशा एवं दशा में द्रुतगति से सकारात्मक परिवर्तन हो रहे हैं और अधिवासीय स्वरूप परिवर्तित हुआ है। उदाहरण स्वरूप गाँवों में प्रधान मन्त्री आवास योजना, पेय जल के लिए जल निगम का गाँवों तक पहुँच, ग्राम सड़कों को जिला एवं राष्ट्रीय राजमार्गों से जोड़ने की एवं विद्युत सप्लाई आदि अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं। भारतीय गाँव जो कभी पिछड़ेपन के लिए जाने जाते थे आज वे ही विकास के पर्याय बन गये है। हालॉकि इसी गति से नगरों का भी विकास हुआ है, इसलिए कहा जा सकता है कि गाँव और नगर की स्थिति में अन्तर आज भी विषमता विद्यमान है। ग्रामीण परिवेश में आज भी नगरों की तुलना में सामाजिक सौहार्द विद्यमान हैं। **प्रो0 आर0 एन0 मुखर्जी** के अनुसार ''ग्राम वह समुदाय है अपेक्षतया अधिक समांगता, अनौपचारिकता, प्राथमिक समूहों की प्रधानता, कम जनसंख्या घनत्व तथा प्रमुख व्यवसाय के रूप में कृषि पायी जाती है।'' बसाव प्रतिरूप एवं आन्तरिक बनावट के आधार पर गाँवों को निम्नलिखित तीन प्रकारों में विभाजित किया जाता है–

अ– सघन अधिवास– इस प्रकार के अधिवास में मकानों की दूरी कम होती है तथा सघन प्रतिरूप पाया जाता है। इनके चारों और खेत, खलिहान, बगीचा एवं चरागाह फैले होते हैं।

ब– अर्द्ध सघन अधिवास– इस प्रकार के अधिवास में मुख्य आबादी के अतिरिक्त ग्राम सीमा के अन्तर्गत छोटे–छोटे पुरवे या नंगले पाये जाते हैं।

स– अपखण्डित अधिवास– इस प्रकार के अधिवास ग्राम सीमा के अन्दर बिखरे रूप में पाये जाते हैं।

ग्रामीण बस्तियों के प्रकार (Types of rural settlement):–

संरचना, आकार, जनसंख्या का विकास तथा कार्य के आधार पर ग्रामीण बस्तियों को मोटे तौर पर दो वर्गो में विभाजित किया जाता है–

i. सघन अथवा केन्द्रीयकृत बस्तियां

ii. पक्षिप्त अथवा प्रकीर्ण बस्तियां

अ–सघन बस्तियां (Compact settlement):–

इन बस्तियों को संकेन्द्रित (Concentrated), पुंजित (Clusterd) नाभिकीय एवं एकत्रित बस्तियों के नाम से भी जाना जाता है। ये बस्तियां धरातल की एकरूपता, मिट्टी की अधिक उत्पादकता, वर्षा की पर्याप्त मात्रा, पीने के पानी की पर्याप्त सुविधा विकसित कृषि व्यवस्था के परिणाम है। सघन बस्तियां धरातल की एकरूपता के साथ–साथ विश्व के अत्यन्त उपजाऊ जलोढ़ मैदोनों की महत्वपूर्ण विशेषता है।

01. मानसूनी पुंजित बस्ती:–

इस प्रकार की बस्तियां मानसूनी जलवायु के मुख्यतः जलोढ़ मैदानो में पायी जाती है जहां धान की कृषि की जाती है। पूर्वी चीन के मैदान, भारत में पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिम बंगाल, बांग्लादेश, इरावदी मेनांग एवं मेकांग के मैदान आदि क्षेत्रो में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती है।

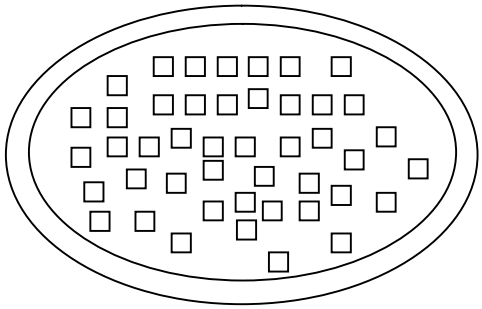

02. लगभग पुंजित बस्ती या पुरवा पुंजित बस्ती (hamleted compact rural settlement) :–

इस प्रकार बस्ती में अनेक पुरवे होते हैं एवं अन्य विशेषताएं मानसूनी पुंजित बस्ती के समान ही होते हैं। इस प्रकार की बस्तियां दोआब क्षेत्र की महत्वपूर्ण विशेषता है। इस प्रकार बस्ती पर धर्म एवं जाति का भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। भारत में इस प्रकार की बस्ती में विभिन्न जातियों के अलग–अलग टोले होते हैं। इस प्रकार की बस्तियां भारत में विशाल मैदान के पश्चिमी भाग के ऊपरी मैदानी भाग, पाकिस्तान के मैदानी भाग एवं भू–मध्यसागर के तटवर्ती क्षेत्रों में पायी जाती है।

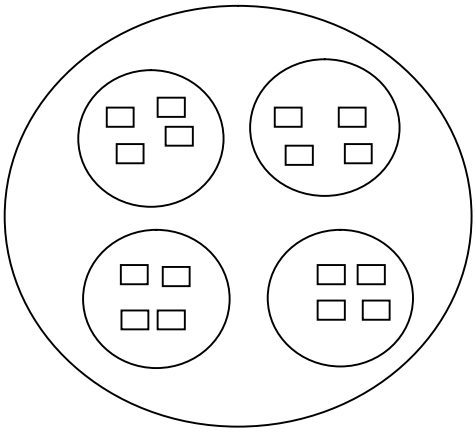

03. **पुंजित रेखीय बस्तीः–**

इस प्रकार की बस्ती का विकास नहरों, नदियों एवं परिवहन मार्गों के किनारे होता है। प्राकृतिक बांध पर भी इस प्रकार की बस्तियां पाई जाती है। इस प्रकार की बस्तियों का विकास भारत में कन्याकुमारी से त्रिवेन्द्रम के बीच उच्च मार्ग के किनारे एवं राजस्थान नहर के किनारे हुआ है। नील नदी के किनारे भी इस प्रकार की बस्तियां विकसित हुई है।

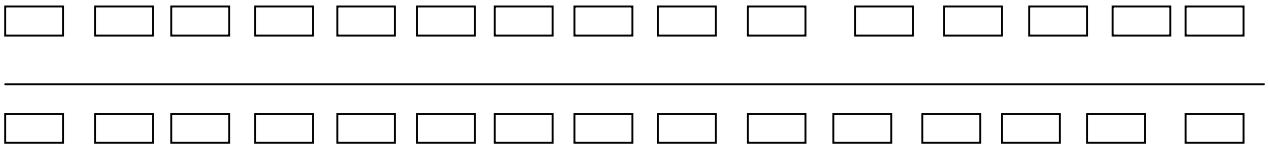

04. पुंजित सह–पुरवा बस्तीः–

यह मानसूनी प्रदेश (मुख्यतः दक्षिणी एशिया) की मुख्य विशेषता है, केन्द्रीय बस्ती में प्रभावशाली जाति के लोग निवास करते हैं, जबकि छोटी जाति के लोग बाहरी भाग में अधिवासित होते हैं, इन्हें संयुक्त बस्तियां भी कहा जाता है।

05. पुंजित सह–पुरवा सह प्रकीर्ण बस्तीः–

इस प्रकार की बस्ती में प्रधान बस्ती एवं पुरवों के अलावा यत्र तत्र बिखरे हुए एकांकी मकान भी रहते हैं। ऐसी बस्तियां परम्परागत रूप से दक्षिण एशिया में पाई जाती है। हाल के वर्षों में नील नदी के डेल्टाई क्षेत्र में भी इस प्रकार की बस्तियों का विकास हुआ। दक्षिण भारत में ये बस्तियां जमींदारी प्रथा के परिणाम है। हाल के वर्षो में हरित क्रांन्ति वाले क्षेत्रो में फार्म हाउस के निर्माण के कारण गुच्छित सह पुरवा बस्तियों में परिवर्तित हो गई है।

ब. बिखरी एवं प्रकीर्ण बस्तियां :–

ये एक या दो घरों की बस्तियां होती है जो एक सामान्य सूत्र से बंधी होती है। अफ्रीका के कुछ देशो में चर्च या मस्जिदें इस प्रकार का कार्य करती है। जब किसी बस्ती में मकान एक दूसरे से पृथक–पृथक बीच में दूरियां छोड़कर या कृषि भूमि को छोड़कर बसे होते हैं वे बस्तियां प्रकीर्ण बस्तियां कहलाती है। इस प्रकार की बस्तियां विषम स्थलाकृति वाले क्षेत्रों, घने वनों, अनुपजाऊ कृषि प्रदेश, दलदली मरूस्थलीय जैसे क्षेत्रो में पायी जाती है। विकसित देशों में इस प्रकार की बस्तियों के पाए जाने का कारण है। एक ही परिवार द्वारा उन्नत कृषितकनीकी द्वारा विस्तृत क्षेत्र पर कृषि करना जैसे– यू0एस0ए0, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि देशो की बस्तियां। इथोपिया की उच्च भूमि, कजाकिस्तान, उज्बेकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान के घास के मैदोनों में इस प्रकार की बस्तियां पाई जाती है।

01– एकांकी व गृह बस्तियां :–

इस प्रकार की बस्तियां विस्तृत एवं मिश्रित कृषि वाले क्षेत्रो की महत्वपूर्ण विषेशता है यू0एस0ए0 के प्रयेरी, अर्जेन्टीना के पम्पास, दक्षिणी अफ्रीका के वेल्ड, अफ्रीकाा के डाउन्स, इटली के पो घाटी में इस प्रकार की बस्तियां

पायी जाती है।

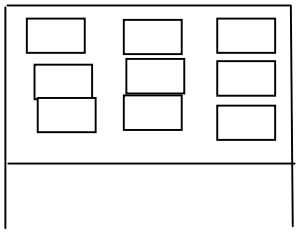

02. पुरवा प्रकीर्ण बस्तियां :–

इस प्रकार की बस्ती में मकान एक दूसरे से अलग–अलग कुछ–कुछ दूरी पर एक ही बस्ती में बसी होती है। कुछ बस्तियां कई छोटे–छोटे पुरवों में विभाजित होती है। इसके उदाहरण उपजाऊ पठारी एवं पर्वतीय घाटियों में देखने को मिलते है। छोटानागपुर पठार, गढ़वाल, कश्मीर की घाटी, मालवा पठार, मेघालय, घाना, नाइजीरिया, ब्राजील के पठार, उत्तरी चीन आदि क्षेत्रो में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती है।

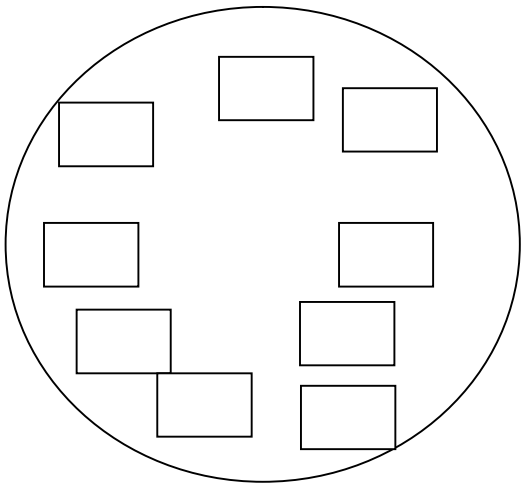

03. रेखीय प्रकीर्ण बस्ती :–

इनका विकास नदियों, नहरों, पगडंडियों एवं परिवहन मार्गो के किनारे हुआ है। राजमहल की पहाड़ी, सिक्किम, अरूणांचल प्रदेश में, अफ्रीका की अधिकांश बड़ी नदियों के किनारे तथा कनाडा, साइबेरिया, सं0रा0 अमेरिका एवं प0 अफ्रीकाा (पर्थ एडिलेड उच्च मार्ग के किनारे) में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती हैं।

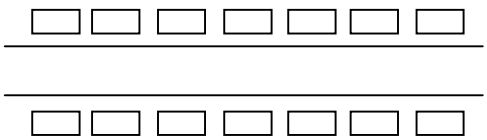

04. सीढ़ीनुमा प्रकीर्ण बस्ती :–

इस प्रकार की प्रकीर्ण बस्तियों का विकास उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में सड़कों एवं पगडंडियों के किनारे हुआ है। इसके उदाहरण–हिमालय, रॉकी, एण्डीज आदि पर्वतीय क्षेत्रों में देखने को मिलता है।

14.7 भारतीय गांव (Indian village)

गांव भारत का अभिन्न अंग है क्योंकि 60% से अधिक भारतीय आबादी गांव में ही रहती है। भारत में यह एक समूह कृषि विरासत है। गांव पूरे राष्ट्र के लिए अन्न का उत्पादन करने में सक्षम है। हमें चावल, गेहूँ, मक्का इत्यादि जैसे खाद्यान्नों का आयात नहीं करना पड़ता। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। यदि गांव को असली भारत कहा जाये तो गलत नहीं होगा क्योकि भारतीय गांव अपनी विशिष्टता गांव में ही वास्तविक रूप से दिखती है क्योकि गांव ही भारत की वास्तविक परम्परा और संस्कृति को आगे बढाते है। गांव कई मायनों में सर्वश्रेष्ठ है। गांव का जीवन एक परिष्कृत शहर के जीवन से कहीं अधिक बेहतर है। भारत का उत्तरी भाग हो या दक्षिणी, गांव हर जगह है और उसके पास जीवन जीने का एक अलग ही ढंग है। भारत जम्मू कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और अरूणांचल प्रदेश से लेकर गुजरात तक अनेक संस्कृतियों, विविधताओं, कलाओं, मान्यताओं से अभीभूत है। यहां की विविधता में एकता इसकी पहचान है। भरतीय किसानों की वजह से ही संभव है, वे कड़ी मेहनत करते हैं और वे गांवों में रहते हैं। वे न केवल हमारे लिए भोजन का उत्पादन करते हैं बल्कि हमारी अर्थव्यवस्था के निर्माण में भी अहम योगदान देते हैं। क्योंकि यहां शहरों की तरह भीड़–भाड़ नहीं होती। भारतीय इतिहास में दीर्घकाल तक होने वाले उत्थान पतन तथा आर्थिक सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप यहां के गांवो की रचना पर विविध संस्कृतियों तथा स्थापत्य कलाओं का प्रभाव पड़ा है। योजना आयोग के अनुसार अधिकतम 15000 की आबादी वाले अधिवास की प्रकृति में ग्रामीण माना जाता है। इन क्षेत्रों में पंचायत सभी निर्णय लेती है।

14.8 नगरीय अधिवास

नगरीय अधिवास वे अधिवास होते हैं जिसमें रहने वाली जनसंख्या प्राथमिक कार्यों में संलग्न न होकर द्वितीयक, तृतीयक एवं चतुर्थक आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होती है। नगरीय जनसंख्या प्राथमिक क्रियाओं से प्राप्त संसाधनों का रूप परिवर्तन करते है तथा अपने लिए संसाधन का निर्माण करते हैं। इसके साथ–साथ इस अधिवासीय क्षेत्र में अनेक प्रकार की भौतिक सुविधाएं उपलब्ध होती हैं तथा प्रबन्धन एवं प्रशासन यहीं से संचालित होता है। यहां की जनसंख्या एवं अधिवास दोनों सघन रूप में पाये जाते हैं। ग्रामीण अधिवास की तुलना में नगरीय अधिवास विस्तृत, जटिल एवं आन्तरिक संरचना वाला होता है। सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टिकोण से नगरीय संरचना अधिक विस्तृत होती है। नगरीय क्षेत्रों में उद्योग, व्यापार, परिवहन, वाणिज्य, शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, तकनीकी विकास आदि सेवा केन्द्र के रूप में होते हैं। इन्हें मानव सभ्यता का पर्याय माना जाता है क्योंकि हमारी सभ्यताएं इनसे विशेष रूप से जुड़ी मानी जाती हैं। यदि नगरीकरण को एक सांख्यिकीय प्रक्रिया मान लिया जाये तब कहा जा सकता है कि नगरीय स्थान वे होते हैं, जिनकी जनसंख्या आकार में अधिक हो। दूसरे शब्दों में कहें तो जहां जनसंख्या का घनत्व अधिक हो। नगरीय स्थानों की जनगणनाओं और उनकी परिभाषाओं में आकार, घनत्व और व्यवसाय को मानदण्ड के रूप में प्रायः उपयोग किया जाता है। नगरीय बस्तियां तत्कालीन मानव सभ्यता की चरम सीमा की प्रतीक होती हैं जहां साधारणतः मानव जन समूह एकत्रित होता है। ये बस्तियां अपने क्षेत्र विशेष की भौतिक एवं सांस्कृतिक प्रगति की सूचक होती हैं।

नगर या शहरी क्षेत्रों की परिभाषा :–

1–**फेडरिक रेटजलः–**

19**वीं** शताब्दी के अंतिम वर्ष में कई तत्वों के सम्मिलित आधार पर नगर को इस प्रकार परिभाषित किया थाः– **''नगर जनसंख्या और गृहों का सत्त समूह होता है जो भूमि के वृहद भाग को आवृत्त करता है। और वृहद व्यापारिक मार्गो के केन्द्र पर स्थित होता है।''**

1-"A city is a contiguous and dense agglomerate on of people and dwelling occupying a large area of ground and lying at the focus of grate trade routes."**F. Ratzal**

2–**जर्मन भूगोलवेत्ता रिचथोफेन (Von Richthofen) के अनुसारः–**

''नगर एक संगठित समूह होता है जिसमे सामान्यतः कृषि व्यवसायों के विपरीत वाणिज्य और उद्योग प्रमुख व्यवसाय होता हैं।''

"The town consist of an organized group in which normaly the main occupation are concerned with commerse and industry as opposed to agriculture persuits.'' **Von Richthofen**

3–प्रख्यात फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता ब्लाश के शब्दों में :–

''नगर अपेक्षाकृत अधिक विस्तार वाला सामाजिक संगठन होता है। यह उस सभ्यता का प्रतीक होता है जिसे कुछ क्षेत्र नहीं प्राप्त कर पाये है और संम्भवतः वे इसे कभी प्राप्त भी न कर सके।''

"A city is a social organigation of much greater scopia it is the expression at a stage of civilization which certain localities have not achived and which they may perhapes never of themselves attain."**Vidal de-La- Blache**

4. ब्रूश के अनुसार : (Jeane Brunches):–

''किसी बस्ती को नगर की संज्ञा तभी दी जा सकती है जब उसकी अधिकांश जनसंख्या अपना अधिकांश समय उसकी (नगर की) सीमा के अन्दर व्यतीत करती हो।''

"A town can be said exist if the majority of population spend the greater part of its time which the bouns of agglomeration."**Jeane Brunches**

नगर की परिभाषा के मापदंड :–

शहर क्षेत्र की कोई समान सार्वभौमिक परिभाषा नहीं है। विद्वान किसी स्थान को शहर के रूप में परिभाषित करने के लिए विभिन्न मापदण्डों का उपयोग करते हैं। एक शहरी क्षेत्र को निम्नलिखित में से एक या अधिक मापदंडों के आधार पर परिभाषित किया गया है। प्रशासनिक या राजनीतिक सीमा, एक सीमा जनसंख्या का आकार, जनसंख्या घनत्व, आर्थिक कार्य या शहरी विशेषताओं की उपस्थिति **(पक्की सड़कें, बिजली की रोशनी, पानी की आपूर्ति आदि)।**

01– जनसंख्या का आकार और घनत्व :–

इसे शहरी क्षेत्रों को परिभाषित करने के लिए देशों द्वारा उपयोग किए जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण मानदंडो में से एक माना जाता है। शहरी बस्ती के रूप में अर्हता प्राप्त करने के लिए जनसंख्या का आकार अलग–अलग देशों में भिन्न होता है **(स्वीडन में 200 से लेकर जापान में 50,000 तक)** लेकिन आम तौर पर 2000 से अधिक निवासियों वाले स्थान को शहरी माना जाता है। भारत में जनसंख्या का आकार,घनत्व 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 है। जनसंख्या के आकार के अलावा जनसंख्या का घनत्व वाले देश घनी आबादी वाले देशो की तुलना में आंकड़े के रूप में कम संख्या का चयन कर सकते है।

2– व्यावसायिक संरचना :–

कुछ देशों में किसी बस्ती को शहरी के रूप में नामित करने में जनसंख्या के आकार के अतिरिक्त प्रमुख आर्थिक गतिविधियों को भी ध्यान में रखा जाता है। जनसंख्या के आकार के अलावा भारत में प्रति वर्ग किमी0 400 व्यक्तियों का घनत्व और गैर–कृषि श्रमिकों की हिस्सेदारी (75 प्रतिशत) को ध्यान में रखा जाता है। इटली में एक बस्ती को शहर कहा जाता है यदि इसकी आर्थिक रूप से उत्पादक आबादी का 50 प्रतिशत से अधिक गैर–कृषि कार्यो में संलग्न है।

3. प्रशासन :– (Administrative):-

कुछ देशों में किसी बस्ती को शहरी के रूप में वर्गीकृत करने के लिए प्रशासनिक व्यवस्था भी एक मानदंड है। उदाहरण के लिए भारत में किसी भी आकार की एक बस्ती को शहरी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, यदि उसके पास नगरपालिका, छावनी बोर्ड, या अधिसूचित क्षेत्र परिषद है लैटिन अमेरिकी देशों में जैसे ब्राजील और बोलिविया किसी भी प्रशासनिक केन्द्र को शहरी माना जाता है। भले ही उसकी आबादी का आकार कुछ भी हो।

शहरों का स्तरीकरण

Sr. no	Classes	Population
1	Class I	100,000AndAbove

2	Class Ⅱ	50,000 to 99,999
3	Class Ⅲ	20,000 to 49,999
4	Class Ⅳ	10,000 to 19,999
5	Class Ⅴ	5,000 to 9999
6	Class Ⅵ	Less than 5000

Based on the population site the census of India classifies urlban centers into six classes

मम्फोर्ड ने नगरों के सामाजिक महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है– ''जैसा कि इतिहास में मिलता है। नगर एक समुदाय की शक्ति और संस्कृति के मिलने का सबसे बड़ा केन्द्र होता है। यहां विभिन्न जीवों की किरण एक होकर सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हो जाती है। यह सामाजिक सम्बन्ध का द्योतक है। यह मन्दिर, बाजार, न्यायालय, और शिक्षा का घर होता है। नगर में सभ्यता की वस्तुओं का उत्पादन और आदान–प्रदान होता है। यहीं मानव अनुभव दृष्टव्य–चिह्नों, चरित्र के स्वरूपों तथा विशिष्ट व्यय के रूप में फलता–फूलता है। यहीं सभ्यता की चर्चायें होती हैं और यहीं समय–समय पर समाज के विभिन्न ड्रामे खेले जाते हैं।''[07] इन्हीं नगरों में जनसंख्या धीरे–धीरे विभिन्न क्षेत्रों से एकत्रित होती रहती है।

14.9 नगरीय बस्तियों का वर्गीकरण

नगर मानव जनसंख्या के संकेन्द्रण के प्रमुख केन्द्र होते हैं। चूँकि नगरों में मानव जीवन शैली से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के क्रियाकलाप संचालित होते रहते हैं इसीलिए नगर कई प्रकार के होते हैं। वर्तमान में नगरों के अनेक रूप देखे जा सकते हैं। किसी एक आधार पर नगरों का वर्गीकरण के एक दुरूह कार्य है। फिर भी इनके आकार, जनसंख्या एवं नागरिक कार्यों के आधार पर नगरीय बस्तियों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त किया जाता है–

14.9.1– पुरवा– (Hamlet) :–

पुरवा एक ऐसी बस्ती होती है जिसका आकार प्रायः छोटा होता है। इस प्रकार के अधिवास संयुक्त राज्य अमेरिका एवं ब्रिटेन सहित यूरोप के अन्य भागों में पाये जाते हैं। ऐसी बस्तियों न तो अधिक सघन होती हैं और न ही विरल तथा इनमें न तो पूर्णतः ग्रामीण होती हैं और न ही पूर्णतः नगरीय होती हैं, बल्कि इनमें ग्रामीण एवं नगरीय दोनों प्रकार की बस्तियों के लक्षण पाये जाते हैं। इनका सम्बन्ध बड़े–बड़े कृषि फार्मों से होता है। इन फार्मों के सभी नगरीय कार्य इन्हीं बस्तियों के लोगों द्वारा किए जाते हैं। इनमें कृषक न होकर श्रमिकों का निवास पाया जाता है। यदि मूलरूप में देखें तो कह सकते हैं कि इन्हें श्रमिकों की पूर्ति के लिए ही बसाया जाता है। इन बस्तियों में अस्पताल, डाकघर, गिरजाघर, पाठशाला, तारघर, मोटर गैरेज, जनरल स्टोर, आटे की चक्कियां एवं धर्मशालाएं आदि होती हैं। प्रायः भारत में इस प्रकार के पुरवे नहीं पाये जाते हैं।

14.9.2– नगरीय या बाजार केन्द्र (Urban or Market Centre) :–

नगरीय या बाजार केन्द्र ऐसी बस्तियां होती हैं जहां कृषि फार्मों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक क्रियाएं सम्पन्न होती हैं। इन बस्तियों में कारीगर, दुकानदार, दलाल अथवा व्यवसायी लोग रहते हैं। जो कृषि निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं परन्तु यहां पर रहने वाले लोग प्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्य नहीं करते। इनका प्रमुख कार्य कृषकों द्वारा उपलब्ध माल को खरीदना या बेचना होता है। इस क्षेत्र की जनसंख्या आंग्ल अमेरिकी देशों में 25 से 250, ब्रिटेन में 500 तक और भारत में 10000 से भी अधिक हो सकती है। सं0रा0अ0, सोवियत रूस, कनाडा और आस्ट्रेलिया में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती हैं। परन्तु भारत में इस प्रकार की बस्तियां प्रायः कम देखने को मिलेती हैं क्योंकि भारत में कोई भी बस्ती शुद्ध रूप में न तो कृषि कार्य में संलग्न होती है और न ही पूर्ण रूप से व्यावसायिक रूप में।

14.9.3– कस्बे (Towns) :–

अमेरिकी विद्वान **सी जे गैल्पिन (1915 ई0)** ग्रामीण एवं नगरीय बस्तियों के मध्य के अधिवासों के लिए **'कस्बा'** शब्द का प्रयोग किया है। ये अपेक्षकृत प्रभावशाली केन्द्र होते हैं। कस्बों में नागरिक कार्यों की बहुतायत होती है। कस्बों में ऐसी विशिष्ट क्रियाएं एवं सेवाएं पायी जाती हैं जो सामान्यतः गाँवों में नहीं पायी जाती हैं। अतः गाँव व कस्बों में अन्तर उनके कार्य व स्वरूपों के कारण पायी जाती है। इनमें ग्रामीण क्षेत्रों एवं कृषि विकासपरक संस्थाओं के साथ ही बैंक, कोल्डस्टोरेज, बस अड्डा, डाकघर, पुलिस चौकी, स्कूल, औषधालय, मनोरंजन के साधन तथा प्रशासनिक केन्द्र आदि पाये जाते हैं। **प्रो0 जोन्स के अनुसार–**''कस्बों का अर्थ सभी मनुष्यों के लिए सभी वस्तुओं से है।''(Town seems to be all things to be all men)। भारत में नगरों की संज्ञा से वंचित देहाती सेवा केन्द्र के रूप में कस्बे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इन कस्बों की संख्या 1000 से 10000 तक मानी जाती है। भारत में गंगा यमुना दोआब क्षेत्र में अनेक कस्बे बसे हैं। ऐसे नगरों की जनसंख्या 30000 या 35000 अथवा इससे भी अधिक पायी जाती है। टेलर ने ऐसे कस्बों को चरम कस्बों की संज्ञा दी है जिनकी जनसंख्या 50000 से अधिक है।

14.9.4–नगर (City) :–

धराटल पर मानव क्रियाओं द्वारा निर्मित एक विशिष्ट प्रकार का सामाजिक संगठन होता है जिसकी उत्पत्ति जल निकास की सुविधाओं, उपयुक्त धरातलीय आधार, एवं अन्य मानव जीवनोपयोगी सुविधाओं के आधार पर होती है। नगर के आस–पास के क्षेत्र संसाधनों की दृष्टि से सम्पन्न होते हैं तथा इन्हीं संसाधनों से नगरीय जनसंख्या की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है तथा उस नगर का विकास होता है। क्योंकि नगर एक बड़ी इकाई होती है इसलिए नगरों का कार्यक्षेत्र अधिक बड़ा होता है। साथ ही साथ अनेक व्यवसाय करने वाला होता है। यह नगर आस पास के क्षेत्र का केन्द्रीय स्थान होता है। मानव जीवन के सांस्कृतिक तत्वों (परिवहन, उद्योग, व्यापार, तथा सामाजिक इकाईयां, राजनीतिक इकाइयों आदि) सेवाओं के केन्द्रीय स्थान होती है। नगर में विभिन्न प्रकार की दुकानें, व्यापारिक एवं प्रशासनिक दफ्तर, प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षण संस्थाऐं, मनोरंजन के साधन, चिकित्सालय, औद्योगिक बस्तियां, यातायात केन्द्र आदि सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। नगर कस्बों से बड़ा एवं अधिक विस्तृत क्षेत्र होता है। जो कि सेवा क्षेत्र एवं आकारिकी तथा जनसंख्या में अधिक विविधता रखते हैं। **डिकिन्सन महोदय ने** नगरों को कस्बों का राजा माना है जो अपने समीपवर्ती क्षेत्रों का नेतृत्व करता है। (A city is a king among towns enjoying leadership over it's neighbours)।

सिंह ने नगरों को जनसंख्या के आधार पर वर्गीकृत किया है–

अ– छोटा नगर (Town) :–छोटे नगरों को टाउन कहा जाता है। विभिन्न देशों में नगरों की जनसंख्या 5000 से 50000 मानी जाती है।

ब– मध्यम आकारकीय नगर– (Larger City) :– इन नगरों की जनसंख्या 50000 से 100000 तक होती है। भारत में इस प्रकार के नगर द्वितीय श्रेणी में रखे जाते है।

स– बड़े नगर– (City) :–इस श्रेणी में 100000 से अधिक जनसंख्या वाले नगर आते हैं।

कार्यात्मक दृष्टिकोंण से कस्बों एवं नगरों में बहुत कम अन्तर पाया जाता है। प्रायः कस्बे ही विकसित होकर नगरों का रूप धारित करते हैं। हालॉकि जनसंख्या के दृष्टिकोंण से दोनों में समानता पायी जाती है पर कार्यात्मक दृष्टि से दोनों कुछ बुनियादी अन्तर अवश्य पाये जाते हैं। कस्बों के कार्य सीमित होते हैं तथा नगरों की भांति कार्य क्षेत्र का स्पष्ट विभाजन नहीं होता है। नगरों में कार्य वृहत् स्तर होते हैं। कस्बों में आवागमन, विनिमय, विपणन व्यवस्था, बैंकिंग सुविधाएं आदि की सुविधाएं नगरों की तुलना में निम्न स्तर की होती हैं। इसके साथ–साथ कस्बों एवं नगरों के सामाजिक संगठन में भी अन्तर पाया जाता है।

14.10 नगरीय बस्तियों की विशेषताएं

नगरीय बस्तियों की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

01– यह केवल कुछ बस्तियों की ही इकाई नहीं होती वरन् कार्य के आधार पर इनमें अनेक स्पष्ट भाग होते हैं : मध्यम वर्ग एवं उनके आवास, श्रमिकों तथा वाणिज्य व्यवसाय में लगे लोगों के निवास गृह, लघु, मध्यम व वृहत् औद्यौगिक क्षेत्र, व्यापारिक व प्रशासनिक प्रखण्ड कार्यालय व मनोरंजन के स्थान, स्वास्थ्य एवं शिक्षा

संस्थाएं आदि। विभिन्न प्रकार के राजनीतिक एवं प्रशासनिक सेवाओं से सम्बन्धित प्रतिष्ठान यथा–पुलिस स्टेशन, कारागार, एवं न्यायालय आदि।

02– नगरों की व्यवस्था का मुख्य आधार गैर कृषि क्रियाकलाप होते हैं। यहां के अधिकांश निवासी स्वास्थ्य, शिक्षा, व्यापार, प्रशासनिक एवं परिवहन सम्बन्धी सेवाओं में फुटकर या थोक व्यापार में, हस्तकला (चर्मकार, राज मिस्त्री, दर्जी, तकनीकी कार्य आदि) कार्यों में संलग्न होते हैं।

03– नगरीय अधिवास स्वरूप की विशेषताएं होती हैं जो कि ग्रामीण अधिवासों से भिन्न होती हैं। यहां मकानों की बनावट सघन होती है तथा पुंज के रूप में होती है। नगरों का जनघनत्व गाँवों की तुलना में अधिक होता है। मकान की निर्माण सामग्री एवं ऊँचाई ग्रामीण अधिवासों से भिन्न होती है। विश्व के कुछ देश ऐसे हैं जहां की इमारतों की ऊँचाई 80 से 90 मंजिल की होती है। जबकि भारत के शहरों में यह ऊँचाई 40 से 45 मंजिल तक होती हैं। ये अधिवास समस्त सुविधाओं से सम्पन्न होते हैं।

04– नगरीय अधिवास परिवहन एवं संचार साधनों से सम्पन्न होते हैं। टेलीफोन, टेलीविजन, रेडियो, अखबार, पत्र–पत्रिकाएं आदि की अधिकता होती है। मोटर कारों, स्कूटरों तथा अन्य वाहनों के कारण नगरीय क्षेत्रों में भीड़ होती है। नगरों में अधिवासों में स्पष्ट विभाजन होता है।

05– परिवार के अधिकांश लोगों का आर्थिक कार्यों में संलग्न रहना नगरों की प्रमुख विशेषताएं होती हैं। वर्तमान में नगरों में रहने वाले लोगों में व्यक्तिवादिता की भावना का विकास हो रहा है जिसके परिणाम स्वरूप नगरीय समाज में भाई–चारा की कमी देखी जा सकती है।

भारत की जनगणना 2011 शहरी भारत को परिभाषित करती है

शहरी भारत को इस प्रकार परिभाषित किया जाता हैः–

1. नगरपलिका, निगम, छावनी बोर्ड या अधिसूचित नगर क्षेत्र समिति के साथ सभी वैधानिक स्थान एक स्थान जो सभी मानदण्डों को पूरा करता है।
2. 5,000 की न्यूनतम जनसंख्या।
3. जनसंख्या घनत्व कम से कम 400 प्रति वर्ग किमी0 (1,000 प्रति वर्ग किमी)।
4. कम से कम 75% पुरुष कामकाजी आबादी गैर–कृषि गतिविधियों में लगे हुए है।

14.10.1– शहरीकरणः–

शहरीकरण का अर्थ है ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या का स्थानान्तरण, शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के अनुपात में क्रमिक वृद्धि और जिस तरह से प्रत्येक समाज इस परिवर्तन को अपनाता है। यह मुख्य रूप से वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कस्बे और शहर बनते है और बड़े हो जाते है क्योकि अधिक लोग केन्द्रीय क्षेत्रों में रहना और काम करना शुरू करते हैं। यद्यपि दो अवधारणाओं को कभी–कभी एक दूसरे के लिए उपयोग किया जाता है। शहरीकरण को शहरी विकास से अलग किया जाना चाहिए, शहरीकरण, शहरी के रूप में वर्गीकृत क्षेत्रों में रहने वाली कुल राष्ट्रीय आबादी का अनुपात है, जबकि शहरी विकास'' शहरी के रूप में वर्गीकृत क्षेत्रों में रहने वाली लोगो की पूर्ण संख्या को संदर्भित करता है।

14.11 मानव बस्तियों के प्रकार (Types of Human Settlements)

मानव ने अपने भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन कर अपने अनुरूप एक सांस्कृतिक भू–दृश्य का निर्माण किया। इस सांस्कृतिक भू–दृश्य में मानव बस्तियां सबसे महत्वपूर्ण कृति है। मानव बस्तियां मनुष्य को आश्रय प्रदान करती हैं। मानवीय बस्तियां मुख्यरूप से भौतिक एवं मानवीय तत्वों से प्रभावित होती हैं। कह सकते हैं मानव बस्तियों की स्थिति, आकार, स्वरूप, एवं प्रतिरूप तथा कार्य न केवल भौतिक अथवा प्राकृतिक वातावरण बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी, आर्थिक, जनांकिकी तथा व्यावसायिक प्रक्रियाओं द्वारा प्रभावित होती हैं। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर मानव बस्तियों को निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है–

14.11.1– प्रकीर्ण, बिखरी हुई, एकांकी अथवा बिरल बस्तियां (Dispresed, Scattered, Isolate or loose-Knit Settlement)

14.11.2– संकेन्द्रित, पुंजित, सघन, न्येष्ठित अथवा गुंछित बस्तियां (Concentrated, Clustered, Compact, Nucliated, Bunched settlements)

14.11.3– संयुक्त या समिश्र बस्तियां (Composit settlement)

14.11.4– अपखण्डित बस्तियां (Fragmented settlement)

उपरोक्त बस्तियों को संक्षिप्त रूप में निम्नानुसार स्पष्ट किया जा सकता है–

14.11.1– प्रकीर्ण, बिखरी हुई, एकांकी अथवा विरल बस्तियां (Dispresed, Scattered, Isolate or loose-Knit Settlement) :–

इस प्रकार की बस्तियां सबसे प्राचीन प्रकार की बस्तियां मानी जाती हैं। प्राचीन काल में मानव एकांकी जीवन व्यतीत करता था। समय के साथ मानव चेतना का विकास हुआ तथा वह समूह बनाकर रहने लगा तथा पारिवारिक भावना का विकास हुआ। इसके उपरान्त मानव परिवार के साथ एकत्रित रूप में रहने लगा। इस प्रकार प्रकीर्ण मानव बस्तियों का विकास हो पाया। प्रकीर्ण बस्तियों में आवास दूर–बने होते हैं। प्रकीर्ण बस्तियों अलग–अलग बसे हुए घर या फार्म हाउस होते हैं। इस प्रकार की बस्ती में प्रत्येक घर में निवास होता है चाहे वे बस्तियां पक्की हों, कच्ची हों या झोपड़ी। प्रकीर्ण अथवा एकांकी बस्तियां वे बस्तियां होती हैं जिनमें घर दूर–दूर होते हैं और इनका सम्पर्क पगडण्डियों द्वारा भी होता है। शिकारी, घुमक्कड़, पशुपालक अथवा स्थानान्तरणशील कृषि करने वाले लोगों में, पर्वतीय भागों में, नव बसाव वाले देशों में अति आर्द्र अथवा अति शुष्क प्रदेशों में, दलदली क्षेत्रों में, वनों में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, थार एवं सहारा के मरुभूमियों में तथा पर्वतीय ढालानों पर इस प्रकार की बस्तियां विशेष रूप से मिलेती हैं। प्रत्येक फार्म हाउस एवं बास–गृह एक दूसरे से कुछ दूरी पर बसे होते हैं।

छितरी हुई बस्तियां (बाड़मेर और जालौर जिले राजस्थान)

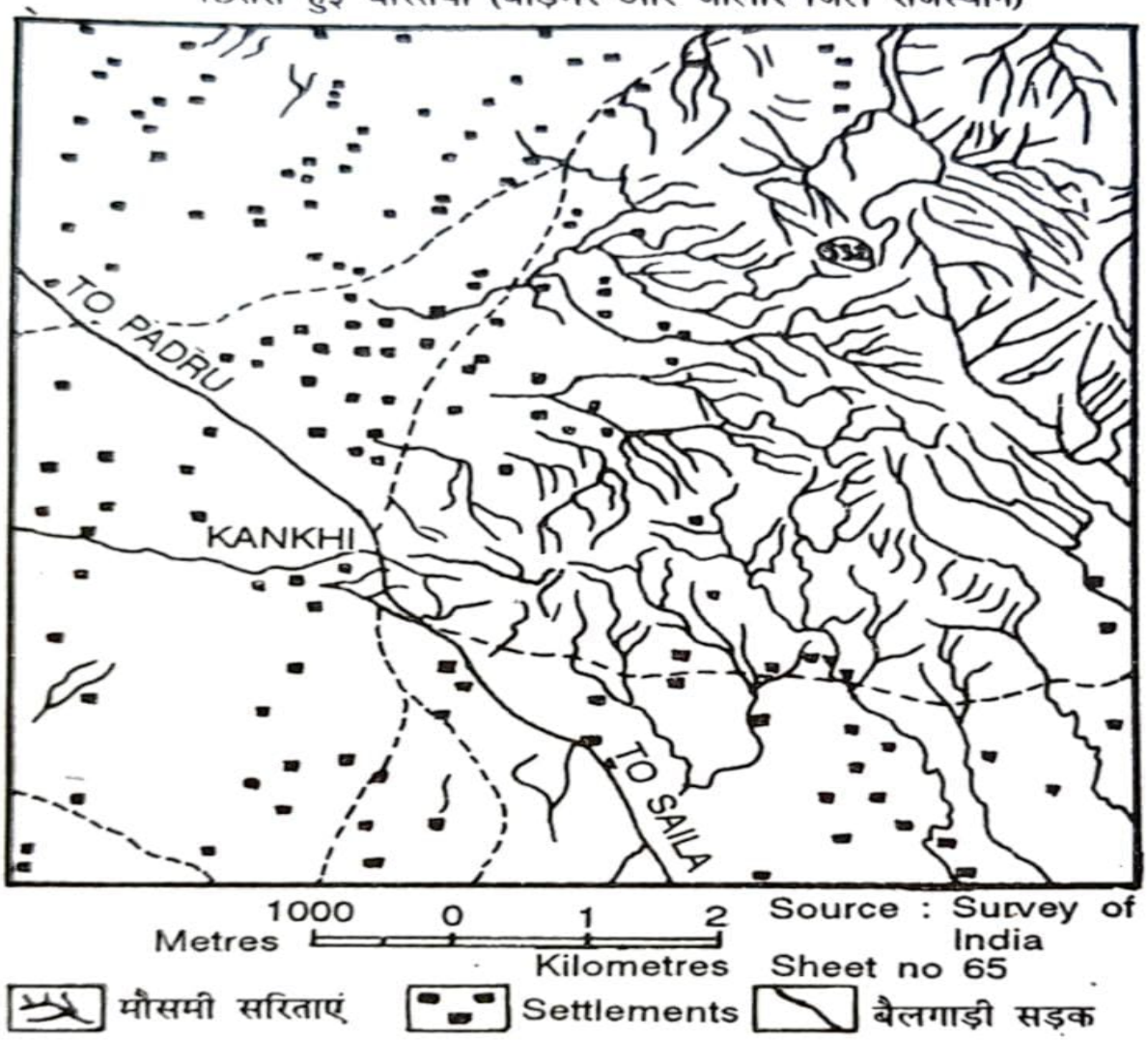

चित्र सं–14.2

स्रोत– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह पृष्ठ सं–363

विकीर्ण अथवा प्रविकीर्ण बस्तियों का क्षेत्रीय वितरण :–

इस प्रकार की बस्तियां विश्व के विभिन्न भागों में पायी जाती हैं। शिकारी, भ्रमणशील पशुपालन, विश्व के अनेक जनजातीय समुदाय, स्थानान्तरणशील कृषि करने वाले लोग प्रायः इस प्रकार की बस्तियों में निवास करते हैं। जर्मन एवं फ्रांसीसी विद्वानों ने बस्तियों का एकांकी एवं सघन होने के लिए आर्थिक एवं ऐतिहासिक कारकों को उत्तरदायी माना है। **ब्लॉश** ने विरल अधिवासों को उन स्थानों पर बताया जहां उच्चावच, मृदा, जलप्रवाह में विषम दशाएं पायी जाती हैं। कृषि भूमि बिखरी हुई पायी जाती है तथा खेत बिखरे रूप में पाये जाते हैं। इस प्रकार की बस्तियों के वितरण को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

14.11.1 अ– नव बसाव वाले देशों में (In Newly Populated Countries) :–

इस प्रकार की बस्तियां मुख्यरूप से कृषि फार्मों के रूप में पायी जाती हैं। यू0एस0ए0, कनाडा, न्यूजीलैण्ड, अर्जेन्टीना, उरुग्वे और यूरोप के विस्तृत भूभागों में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती हैं। विश्व के इन भागों में यान्त्रिक कृषि की जाती है तथा खेतों का आकर काफी विस्तृत होता है। ये बस्तियां खेतों में बनी होती हैं। इसी कारण दूर–दूर बनायी जाती हैं। बस्तियों के खेतों में बने होने के कारण पशुपालन, यन्त्रों एवं खेतों का रखरखाव आसान हो जाता है। परिवार के यहां पर निवास करने से अन्य सदस्यों का सहयोग भी कृषि कार्य में मिल जाता है।

14.11.1 ब– पर्वतीय क्षेत्रों में (HillAreas) :–

पर्वतीय प्रदेशों का धरातल असमान पाया जाता है। इस प्रकार के विषम धरातल पर मानव जीवन में सामान्यतः विभिन्न प्रकार की असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। यहां कृषि कार्य करना कठिन होता है क्योंकि सिंचाई करना एक दुरूह कार्य है, इसीलिए खेतों का आकार छोटा होता है। यहां खेत दूर–दूर पाये जाते हैं। इन्हीं के सापेक्ष प्रकीर्ण अधिवास यहां पाये जाते हैं। इस प्रकार के अधिवास नार्वे, स्विटजरलैण्ड, स्वीडन, आस्ट्रिया, दक्षिणी पश्चिमी हंगरी, चेकोस्लोवकिया, डिनारिक, आल्पस के क्षेत्रों में, दक्षिणी अमेरिका में एण्डीज व भारत में हिमालय के ढालों पर तथा जापान के पर्वतीय क्षेत्रों में पाये जाते हैं चित्र सं–14.3।

14.11.1 स– अतिवृष्टि वाले क्षेत्रों में (In theArea of Heavy Rainfall) :–

विश्व में अनेकों ऐसे क्षेत्र पाये जाते हैं जहां पर वर्षा अधिक मात्रा में होती है। इन प्रदेशों की मृदा वर्षा के कारण कट जाती है तथा भूमि छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट जाती है। इन्हीं पर कृषिकार्य किया जाता है। निश्चित रूप से इन खेतों के निकट अधिवास बनते हैं, खेतों की उपस्थिति के अनुसार अधिवास भी बिखरे रूप में पाये जाते हैं। **फ्लैण्डरस** में अधिक भाग में जल की प्राप्ति के कारण ही ऐसी बस्तियां पायी जाती हैं। अफ्रीका के अधिक वर्षा वाले भागों में आदिवासी एकांकी जीवन व्यतीत करते हैं।

14.11.1 द– शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में– (AridAnd semiAridAresa) :–

मरुस्थलीय एवं शुष्क क्षेत्र प्रदेशों में वर्षा कम होने के कारण कृषि कार्य एवं अन्य जीवनोपयोगी क्रियाकलापों के लिए प्रतिकूल होती है इसलिए यहां जनबसाव कम हो पाता है। इसलिए इन क्षेत्रों में प्रकीर्ण बस्तियां पायी जाती है। अफ्रीका, सहारा, कालाहारी, भारत में थार, अरब एवं गोबी आदि शुष्क क्षेत्रों में इस प्रकार की बस्तियां पायी जाती हैं। ऐसे प्रदेशों में जहां कहीं झील या अन्य जलस्रोत पाये जाते हैं वहां पर जनसंख्या घनत्व अधिक पाया जाता है तथा सघन बस्तियां पायी जाती है।

14.11.1 य– आदिम संस्कृति वाले क्षेत्रों में (In Primitive CultureAreas) :–

वर्तमान आधुनिक समाज में जहां मानव समाज विकास के चरम पर पहुँच चुका है वहीं विश्व में अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जहां का जनमानस आज भी बहुत पिछड़ी अवस्था में हैं। विश्व के लगभग सभी महाद्वीपों जनजातीय क्षेत्र पाये जाते हैं जो अपनी जीविका के लिए आखेट, पशुपालन, मत्स्य, वस्तु संग्रह, लकड़ी काटना आदि कार्यों में संलग्न हैं। इन क्षेत्रों में अभी विकास नहीं हुआ है। यहां की जनसंख्या को स्थानान्तरित होना पड़ता है तथा आवास बनाना पड़ता है। स्विटजरलैण्ड, आस्ट्रिया और नार्वे में **चलैट और आमूरहट** छोटी बस्तियों के रूप में बिखरे हुए रूप में मिलती हैं। भारत में राजस्थान में इस प्रकार की बस्तियां देखने को मिलती हैं।

पर्वतीय क्षेत्र का एक प्राकृतिक गॉव

चित्र सं–14.3

14.11.1 र–अन्य क्षेत्रों में (In OtherAreas) :–

उपरोक्त क्षेत्रों के अतिरिक्त विश्व के अनेक भागों में प्रकीर्ण बस्तियां पायी जाती हैं। द0 अमेरिका के अमेजन बेसिन, ओरोनिको नदी बेसिन, चीन के जेचुआन प्रान्त, ब्राजील, पश्चिमी द्वीप समूह, साइबेरिया, चीन, जापान, एवं पूर्वी अफ्रीका, भारत के दक्षिण के पठार एवं अनुपजाऊ और पथरीली ऊबड़–खाबड़ एवं बीहड़ क्षेत्रों, दलदल, वन प्रदेश आदि क्षेत्रों में इस प्रकार के अधिवास पाये जाते हैं। भारत में उत्तर प्रदेश में हिमालय के निचले क्षेत्र, दून घाटियों, सागर क्षेत्र, घाघरा एवं गंगा नदियों के बांगर क्षेत्र में इस प्रकार के अधिवास मिलते हैं।

प्रकीर्ण अधिवासों की विशेषताएं–

प्रकीर्ण अधिवास विश्व के अनेक भागों में विस्तृत हैं जो अपनी विशेषताओं के नाते जाने जाते हैं। प्रकीर्ण अधिवासों की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

01– प्रकीर्ण बस्तियों में घर गुंफित या सघन न होकर बिखरे रूप में पाये जाते हैं।

02– प्रकीर्ण अधिवास उन क्षेत्रों में पाये जाते हैं जहां कृषि उन्नत दशा में पायी जाती है।

03– प्रकीर्ण अधिवासों का आकार छोटा होता है और इसमें रहने वाले लोगों का जीवन एकांकी होता है। यहां के निवासी संगठित ग्रामीण अथवा नगरीय जीवन के लोगों से सर्वदा वंचित रहते हैं।

04– इन बस्तियों के लोग प्रकृति से प्रत्यक्षरूप से जुड़े होते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग करते हैं।

05– प्रकीर्ण बस्तियों के लोग समाज की प्रत्यक्ष राजनीति से प्रायः विलग होते हैं और अपने जीवन को चलाने में व्यस्त रहते हैं।

14.11.2– संकेन्द्रित, पुंजित, सघन, न्येष्ठित अथवा गुंछित बस्तियां (Concentrated, Clustered, Compact, Nucliated, Bunched settlements) :–

सघन अथवा गुच्छित बस्तियां वे बस्तियां होती हैं जिनमें गलियों एवं मकान निकट होते हैं। इन बस्तियों की गलियां संकरी होती है और यही गलियां बस्ती के केन्द्रीय भाग को बाहरी भागों से जोड़ती हैं। इसमें मकान एक दूसरे से सटे होते हैं तथा इनका केन्द्रीयकरण सड़कों के किनारे होता है। इस प्रकार के अधिवास मनुष्य के संगठित सामाजिक जीवन के प्रतीक होते हैं क्योंकि इनमें मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक एवं धार्मिक कार्य किए जाते हैं। इन्हीं कार्यों की वजह से ये एक सूत्र में बंधे होते हैं। इस प्रकार की बस्तियों को फिंच एवं ट्रिवार्था ने **न्येष्ठित या सघन बस्तियां** दोनों नाम दिया है। **ब्लॉश** ने इस प्रकार की बस्तियों को **पुंजित बस्तियां** (Clustered Settlement) नाम दिया है। **ब्रून्श** ने इस प्रकार की बस्तियों को **संकेन्द्रित** (Concentrated) नाम से अभिहीत किया है। इस प्रकार उपरोक्त के अतिरिक्त अनेक नामों से जाना जाता है।

बस्तियों के केन्द्रण के लिए कोई न कोई विशेष कारण होता है। वे कारण भौतिक या सांस्कृतिक अथवा दोनों हो सकते हैं। जिन स्थानों पर इस प्रकार का पुंजन होता है उन्हें बस्तियों का बीज स्थल (Seed beds) कहते हैं। इनके चतुर्दिक जनसंख्या का जमाव होने लगता है और कालान्तर में ये बस्तियां सघन एवं विशाल बन जाती हैं। अनेक सघन अधिवास अत्यन्त उपजाऊ कछारी भागों में पाये जाते हैं। इन उपजाऊ मैदोनों में खेतिहर समुदाय स्थाई रूप से बसे हुए हैं। आज से लगभग 8000 वर्ष पूर्व जब मानव ने पौधों एवं पशुओं को घरेलू बनाना प्रारम्भ किया था तभी से अस्थाई अधिवासों की शुरुआत हुई। प्राचीन काल में मानव प्राकृतिक जीवन यापन के लिए मजबूर था क्योंकि वर्तमान की तरह वह तकनीकी रूप से समर्थ नहीं था। उस पर वातावरण का पूर्ण नियन्त्रण था। लेकिन वह प्रकृति से संघर्ष कर अपने लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण किया। मनुष्य कृषि के लिए वनों में आग लगाकर उसे साफ कर कृषि कार्य करता था जिसके लिए उसे अन्य लोगों का सहयोग लेना होता था। सघन अधिवासों के विकास में इस प्रकार के सहयोग की महत्वपूर्ण भूमिकाा रही है (चित्र सं–14.4)।

कृषि की आदिम तकनीकी के साथ कृषक समुदाय को भौतिक कठिनाइयों से निजात पाने के लिए समूह में मिलकर काम करना पड़ता था। मनुष्य समूहों में रहकर कृषि कार्य करने लगा था। इस प्रकार सघन अधिवासों की स्थापना की जाने लगी। कृषि कार्य के अलावा भी अनेक कारण सघन बस्तियों की स्थापना के लिए उत्तरदायी हैं जैसे– मनुष्य को अपने जान–माल की रक्षा के लिए, अपने उपयोगी पशुओं की जंगली जानवरों से रक्षा के लिए, वस्तुओं के आदान–प्रदान के लिए, कृषि उपजों के भण्डारण के लिए एवं इस प्रकार के अनेकों कार्यकलाप। शिवालिक की घाटियों और वनों में तथा मेघालय, मणिपुर, नागालैण्ड, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों में जंगली पशुओं एवं शत्रुओं से रक्षा के लिए अनेक सघन अधिवासों की स्थापना हुई। सिन्धु–गंगा मैदान, ह्वांगहो घाटी, नील घाटी आदि के उपजाऊ कछारी मैदोनों में पूर्व ऐतिहासिक काल में सघन अधिवासों की स्थापना हुई (चित्र 14.4)। उपरोक्त सघन आबादी वाले एवं सघन अधिवास वाले क्षेत्र हैं।

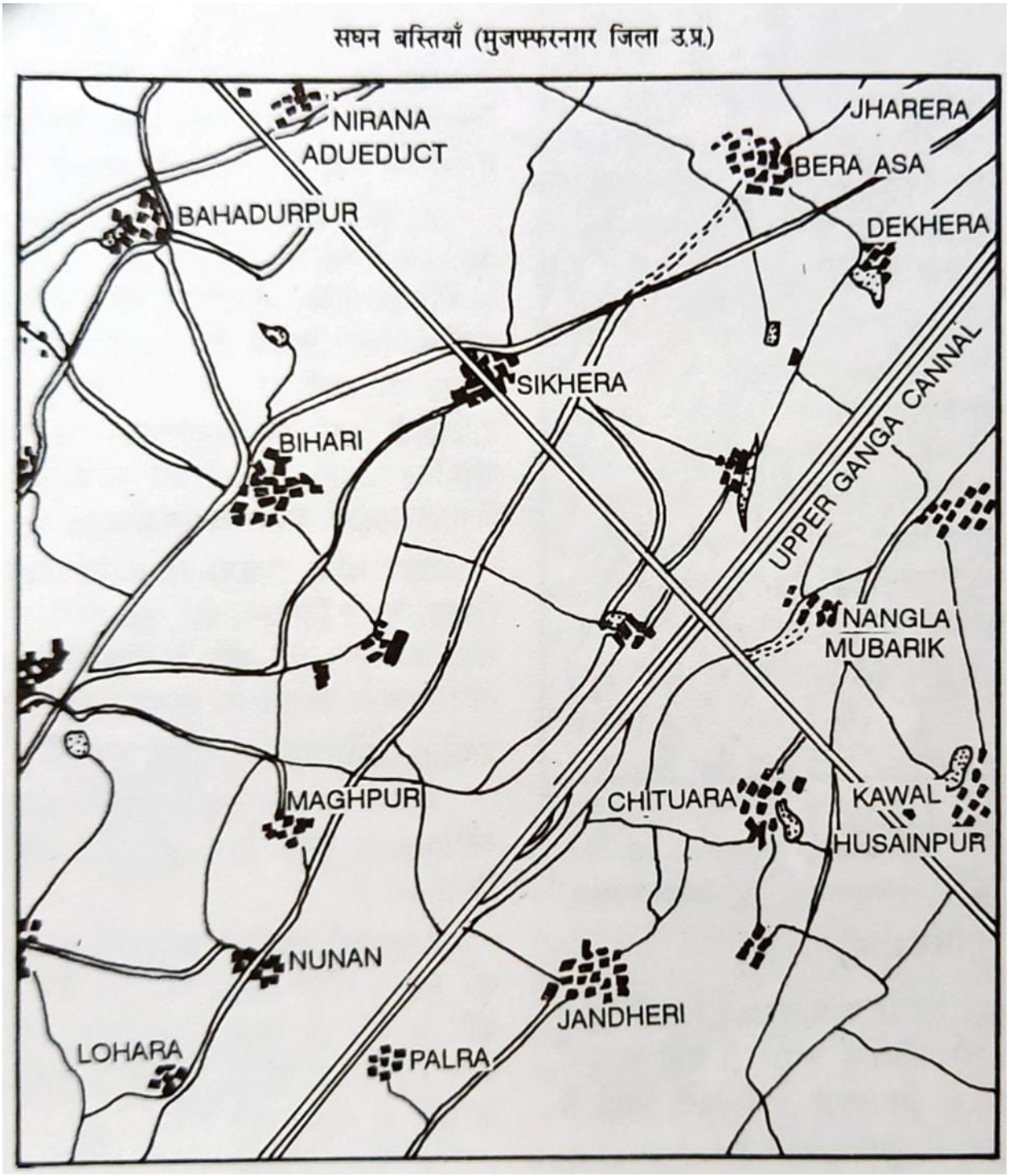

चित्र सं–14.4

स्रोत– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह पृष्ठ सं–365

वर्तमान में सघन या गुच्छित बस्तियों की संख्या अनगिनत हो गयी है जिसके अनेक भौतिक, एवं सांस्कृतिक कारण हैं। इन बस्तियों की अनेक विशेषताएं होती हैं। इस प्रकार की बस्ती का स्वरूप एक मकड़ी की जाल के समान होता है जिसमें अनेक केन्द्र होते हैं जिनको मिलाने के लिए अनेक सड़के एवं गलियां होती हैं। केन्द्रों की स्थापना सापेक्षिक महत्ता तथा विलोमता परिवर्तनशील होती हैं और बस्ती के मुख्य केन्द्र स्थानान्तरित होते रहते हैं। उपयुक्त परिवर्तन आर्थिक विकास के कारण सम्भव होता है। इसी आर्थिक विकास के कारण बस्ती के आकार में वृद्धि होती है। इसके अलावा भी कुछ बस्तियों संकेन्द्रण एवं विकास के लिए शैक्षिक, तकनीकी,

औद्योगिक, व्यापार, मनोरंजन, एवं धार्मिक कारक महत्वपूर्ण भूमिकाा निभाते हैं। कुछ उदाहरण उल्लेखनीय है– उत्तर प्रदेश के प्रयागराज महानगर के केन्द्रण के अनेक कारणों में शैक्षिक कारण अधिक महत्वपूर्ण है। इसके अलावा कानपुर उद्योग के लिए, वाराणसी धर्म एवं शिक्षा के लिए, दिल्ली राजनीति के लिए, बंगलौरतकनीकी के लिए आदि। सघन बस्तियों को आकार के आधार पर निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

01– नंगला, पुरवा या टोला, पल्ली (Hamlet)

02– गाँव (Village)

03– कस्बा (Town)

04– नगर (City) →

- नगर (City)
- महानगर (Metropolice)
- सन्नगर (Conurvation)
- मैगालोपॉलिस (Megalopolice)

सघन अधिवासों की विशेषताएं–

सघन अधिवासों की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

01– ये अधिवास कई रूपों में पाये जाते हैं। इनका सबसे छोटा रूप पुरवा एवं सबसे बड़ा रूप महानगर होता है।

02– अधिवास गृहों का पुंज होता है। ये प्रमुख रूप से स्थानीय संसाधनों द्वारा निर्मित किए जाते हैं। हालॉकि अब इनकी निर्माण बाहर से आयात्ति की जाती है।

03– प्रमुख रूप से इस प्रकार के अधिवास जलीय सुविधा केन्द्रों के निकट स्थापित होते है और बाद में इनका आकार वृहत् होता जाता है।

04– ये अधिवास अनेक प्रकार की आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न होते हैं एवं इनका सामाजिक, राजनीतिक एवं शैक्षिक स्तर उच्च होता है।

05– ग्रामीण सघन अधिवास में प्राथमिक आर्थिक क्रियाकलापों की अधिकता होती है जबकि नगरीय सघन अधिवास में द्वितीयक, तृतीयक एवं चतुर्थक आर्थिक क्रियाओं की प्रधानता होती है।

06– सघन अधिवासीय क्षेत्र उच्च जीवन स्तर के संकेतक होते हैं तथा यहां पर अनेक प्रकार की सुविधाएं सभी जगह देखी जा सकती हैं।

14.12 सारांश

इस प्रकार स्पष्ट है कि मानव अधिवास मानव की प्राथमिक आवश्यकताओं में से एक है। मानव अधिवास एवं आवास को सांस्कृतिक भू–दृश्य में सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। ये मानव द्वारा निर्मित होते हैं और ये आवास एवं अधिवास मानव के आश्रय, कार्य–कलाप एवं सुरक्षा के स्थल होते हैं। मौसम की विषमताओं से सुरक्षा, अर्जित संसाधन के संरक्षण, सामाजिक आवश्यकता (शिक्षा, विवाह, धर्म, उद्योग, व्यापार, आदि), आर्थिक आवश्यकताएं, भौतिक जीवन की विविधता के लिए अधिवासों का निर्माण किया जाता है। ये आश्रय क्राल, इग्लू से लेकर विभिन्न प्रकार की सामग्रियों से बनी हुई अट्टालिकाएं आदि रूपों में निर्मित होते हैं। इन्हीं के समूहों के संहत रूप को अधिवास कहा जाता है, ये अधिवास बिखरे अथवा सघन रूप में पाये जाते हैं। प्रस्तुत इकाई में मानव अधिवास से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है जो विद्यार्थियों को मानव अधिवासों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की भ्रान्तियों को दूर कर उनका उचित मार्गदर्शन कर ज्ञान में वृद्धि करेगी।

14.13 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– मानव अधिवास से आप क्या समझते हैं ? इसका वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न 02– ग्रामीण अधिवास क्या हैं? इसके प्रकार एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 03– नगरीय अधिवासों को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न 01– ग्रामीण अधिवास के प्रकार बताइए।

प्रश्न 02– नगरीय अधिवास की विशेषताएं बताइए।

प्रश्न 03– सघन अधिवासों से आप क्या समझते हैं स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 04– प्रकीर्ण बस्तियां क्या हैं, समझाइए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नेत्तर–

प्रश्न 01– निम्नलिखित में से कौन अस्थाई बस्तिया बसाकर जीवनयापन करते हैं–

अ– खिरगीज ब– बद्दू

स– मसाई द– इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 02– पर्वतीय अधिवास में कौन से अधिवास पाये जाते हैं?

अ– सघन ब– प्रकीर्ण

स– न्येष्टित द– इनमें से कोई नहीं

प्रश्न 03– झील के चारों और बसा हुआ गाँव किस प्रतिरूप में होगा?

अ– अरीय ब– निहारिकीय

स– नाभिक द– तारा

प्रश्न 04– आकार के आधार पर बस्तियों का सबसे छोटा रूप है–

अ– नंगला, पुरवा, टोला **ब–** कस्बा

स– सन्नगर **द–** उपरोक्त में से कोई नहीं

प्रश्न 05– न्येष्ठित बस्तियों से तात्पर्य है–

अ– बिखरी हुई बस्तियां **ब–** एकांकी बस्तियां

स– सघन बस्तियां **द–** उपरोक्त में से कोई नहीं

उत्तरमाला–

01–द **02**–ब **03**–द **04**–अ **05**–स

14.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, डॉ काशीनाथ सिंह, डॉ जगदीश सिंह, ज्ञानोदय प्रकाशन, 234 ग्रामीण संविकास संस्थान दाउदपुर, गोरखपुर 273001। पृष्ठ सं–230

02– मानव भूगोल बी0एन0 सिंह, मनीष कुमार सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन 20–ए0 यूनिवर्सिटी रोड,

प्रयागराज–211002। पृष्ठ सं–370, 372, 373,362,363

03– R K Mukharjee, Hindu Civilization, London, P-142

04– Quoted by Vidal de-La-Blaache,V.In Principle of Human Geography P-299

05- Prof. R L Singh, Evolution of Settlement in the middle Ganga Valley, N.G.Jour of India, 1955, P-82.

06- Finch V.C., Trewartha, G.T., Elements of Geography P-549.

07- भूगोल, मामोरिया चतुर्भुज, डॉ रतन जोशी साहित्य भवन पब्लिकेशन हॉस्पिटल रोड आगरा, 282003। पृष्ठ सं–118

09– मानव भूगोल, प्रो0 माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन सत्यम अपार्टमेंट सेक्टर नं 3 जवाहर नगरजयपुर 302004, पृष्ठ सं–324 से 327।

इकाई–15 नगरीकरण का विश्व प्रतिरूप, नगरीकरण का प्रभाव, नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के कारण, नगरों का वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

15.1– प्रस्तावना

15.2– उद्देश्य

15.3– नगरीकरण का अर्थ एवं परिभाषा

15.4– नगरीकरण की ऐतिहासिक अवस्थाएं

15.5– विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्ति

15.6– विश्व में नगरीकरण का वर्तमान प्रतिरूप

15.7– नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के कारक

- 15.7.1– भौतिक कारक
- 15.7.2– मानवीय कारक

15.8– नगर विकास की अवस्थाएं

15.9– नगरों का वर्गीकरण

- 15.9.1– नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण
- 15.9.2– जनसंख्या के आधार पर नगरों का वर्गीकरण
- 15.9.3– स्मार्ट सिटी मिशन

15.10– नगरीकरण का प्रभाव

15.11– सारांश

15.12– बोध प्रश्न

15.13– संदर्भ ग्रन्थ सूची

15.1 प्रस्तावना

नगर एवं नगरीकरण दोनों शब्द एक दूसरे से विधिवत रूप से परस्पर अन्तर्सम्बन्धित हैं। हिन्दी भाषा में प्रयोग किया जाने वाला शब्द 'नगर' अंग्रेजी भाषा के सिटी (City) का पर्यायवची शब्द है। यह शब्द सिटी (City) लैटिन भाषा के सिविटास (Civitas) शब्द से लिया गया है। इस शब्द का प्रयोग रोमन साम्राज्य के अधीन संगठनों के लिए किया जाता है। फ्रेंच भाषा के सिटे (Cite), जर्मन भाषा का स्टाट (Stadt), स्वीडन के स्टैडेन (Staden), शब्द सिटी (City) शब्द के समानार्थी है। नगरों में मानव के बसने, नगरों के क्षेत्रीय विस्तार होने, नगरीय प्रवृत्तियों के बढ़ने आदि प्रक्रियाओं को सामान्यतः **नगरीकरण** के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

नगरीकरण किसी भी समाज में हो रहे क्रान्तिकारी परिर्वतन की और संकेत करते हैं। नगरीकरण की प्रक्रिया का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। नगरीकरण का प्रारम्भ प्रागैतिहासिक काल से लगभग 10,000 वर्ष पूर्व हुआ था। जब मानव ने पौधों एवं पशुओं को घरेलू बनाना आरम्भ किया था। मानव की कृषि करने की कला ने मानव के जीवन में परिवर्तन किया क्योंकि इससे मानव की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन हुआ। भोजन की खोज के कारण स्थायी निवास करने हेतु समर्थ बना दिया। विश्व स्तर पर अनेक उदाहरण मिलते हैं जिससे स्पष्ट होता है। स्थायी अधिवासों का विकास मिश्र, मेसोपोटामिया, सिंधु सभ्यता, चीन एवं मध्य अमेरिका में हुआ था। इन सभी उदाहरणों में कृषक समुदायों ने अन्तः नगरीय समुदायों एवं नगरीय अधिवासों का विकास किया। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक मानव जीवन विभिन्न चरणों से गुजरा और समय–समय पर मानवीय जीवन शैली में परिवर्तन

होने के साथ–साथ मानवीय अधिवास ग्रामीण से नगरीय होता चला गया और आज नगरों का विकास अपने चरम अवस्था को प्राप्त करने की स्थिति में आ गया है। इस इकाई में नगरों के विश्व प्रतिरूप के साथ–साथ नगरीकरण के प्रभावों को प्रस्तुत किया जा रहा है। इसी के साथ–साथ नगरों के उद्भव एवं विकास के कारणों को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। विभिन्न विद्वानों के द्वारा नगरीकरण के वर्गीकरण को भी इस इकाई के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है जो विद्यार्थियों को नगरों के सन्दर्भ में ज्ञान में अपेक्षित वृद्धि करने में सहायक सिद्ध होगा।

15.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

01– नगरीकरण को परिभाषित करते हुए एवं इसका अर्थ बताते हुए इससे सम्बन्धित विभिन्न अवधारणाओं को प्रस्तुत करना।

02– नगरीकरण के वर्तमान विश्व प्रतिरूप को विभिन्न आधारों पर प्रस्तुत कर विद्यार्थियों को नगरीकरण प्रतिरूप एवं वितरण से अवगत कराना।

03– नगरीकरण के उद्भव एवं विकास के विभिन्न कारणों की पहचान करना एवं उच्च नगरीकरण के अपेक्षित परिणामों से विद्यार्थियों को अवगत कराना।

04– विश्व में लगातार बढ़ रहे नगरीकरण एवं ग्रामीण जनसंख्या के नगरों की और पलायन की वास्तविक तस्वीर प्रस्तुत करना।

05– वर्तमान में नगरों के अनेक प्रकार पाये जाते हैं जिनका वर्गीकरण करना अत्यन्त कठिन कार्य है। इस सन्दर्भ में विश्व के विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किए गये नगरों के प्रकारों से विद्यार्थियों को अवगत कराना।

06– इस इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों के नगर एवं नगरीकरण से सम्बन्धी विभिन्न भ्रांतियों को दूर करते हुए इनके प्रति विद्यार्थियों के दृष्टिकोंण को स्पष्ट करना।

15.3 नगरीकरण का अर्थ एवं परिभाषा (MeaningAnd Definition of Urbanization)

नगरीकरण एक व्यापक शब्द है जिसका वर्णन एवं इसके स्वरूप का अध्ययन करना आवश्यक है। पूर्व के अध्ययनों में आपने देखा कि अधिवास एवं जनसंख्या का विस्तार दो रूपों (ग्रामीण एवं नगरीय) में पाया जाता है। ग्रामीण जनसंख्या गांवों में निवास करती है एवं नगरीय जनसंख्या नगरों में। नगरीय जनसंख्या का जीवन–स्तर गावों की तुलना में उच्च माना जाता है इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में से जनसंख्या का पलायन नगरों की तरफ होता है। इस प्रकार नगरों की जनसंख्या में वृद्धि के परिणाम स्वरूप नगर के क्षेत्र में विस्तार की आवश्यकता होती है और इसी के सापेक्ष नगरों के समीपी भाग भी नगरों की ही तरफ विकसित होने लगते हैं एवं नगरों का क्षेत्र एवं स्वरूप विस्तृत हो जाता है, इसी प्रक्रिया को **नगरीकरण** कहा जाता है। इसका शाब्दिक अर्थ है नगरीय हो जाना अथवा नगरीय बना देना। नगरीकरण का सम्बन्ध जनसंख्या के नगरीय होने से है। यह नगरीय जनसंख्या जिस भूभाग में रहने लगती है वह नगरीय भूभाग कहलाता है। इस प्रकार जनसंख्या का नगरीय होना विभिन्न भागों के नगरीय होने से सम्बन्धित है।

नगरीकरण किसी भी समाज में हो रहे क्रान्तिकारी परिवर्तन की और संकेत करता है। इससे किसी भी नगरीय समाज के स्वरूप में विशेष परिवर्तन होता है, लोगों का जीवन स्तर परिवर्तित हो जाता है। **एफ बेबर, मार्क जेफर्सन, एम अरासू, लवेदान, एम सोर्रे, किंग्सले, डेविस, पी0 एम0 हॉसर, जे0 क्लार्क, एच0 हॉयट, जिंसवर्ग, टेलर, ट्रिवार्था** आदि विद्वानों ने नगरीकरण की संकल्पना पर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है। विश्व स्तर पर नगरीकरण का अध्ययन करते समय यह तथ्य ध्यान में रखना आवश्यक है कि विभिन्न देशों में नगरीय केन्द्रों के मापदण्ड या परिभाषा समान नहीं है।[02] वास्तव में देखा जाये तो नगरीय जनसंख्या एंव उसके अनुपात में वृद्धि होना नगरीकरण कहलाता है। विभिन्न विद्वानों ने नगरीकरण को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया है–

अ–ई0 ई0 वर्गेस :–

"ग्रामों के नगरीय क्षेत्रों में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को नगरीकरण कहते हैं।"

ब– ग्रिफिथ टेलर : –

"गाँवों से नगरों को जनसंख्या का स्थानान्तरण ही नगरीकरण कहलाता है।" यदि नगरों की जनसंख्या में उतनी ही या उससे कम वृद्धि होती है जितना कि वृद्धि ग्रामों की जनसंख्या में होती है तो इस स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता कि नगरीकरण में कोई वृद्धि हुई है। वास्तव में यदि मनुष्यों का चिंतन आचार–विचार तथा सामाजिक मूल्य नगरीय हैं तो वे ग्रामों में रहते हुए भी नगरीकृत हैं, परन्तु हमारा भौगोलिक उद्देश्य समाज के उस वर्ग से है जो प्रायः अकृषित कार्यों में लगा हुआ है।[03]

स– किंग्सले डेविस :–

"कुल जनसंख्या में नगरीय बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या के अनुपात या इस अनुपात में वृद्धि को नगरीकरण कहते हैं।"

द– बी0एन0 घोष :–

"नगरीकरण वह प्रक्रिया है, जिसमें गाँव कस्बों में और कस्बे नगरों में परिवर्तित होते जाते हैं।"

य– बी0 एल0 एस0 प्रकाशाराव :–

"नगरीकरण एक प्रक्रिया के रूप में एकल केन्द्र अथवा बहु–नाभीय केन्द्र के चारों और अकृषित कार्य–कलापों व भूमि उपयोगों का संकेन्द्रण है। यह जनसंख्या के ग्रामीण क्षेत्र से नगरीय क्षेत्रों को प्रवास करने के परिणाम स्वरूप घटित होता है। यह नगरीय क्षेत्र या समीपवर्ती देहात क्षेत्र पर अपने विकास के लिए निर्भर करते हैं अथवा आधुनिक संचार एवं परिवहन साधनों की सहायता से इस समीपवर्ती क्षेत्र की सेवा करते है।"

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि नगरीकरण की प्रवृत्ति स्थिर न होकर गतिशील होती है। नगरीकरण की गति पर अर्थव्यवस्था का प्रभाव पड़ता है। अर्थव्यवस्था के विकास के अनुरूप नगरीय जनसंख्या भी बढ़ती एवं घटती है।

15.4 नगरीकरण की ऐतिहासिक अवस्थाएं (Historical Stages of Urbanization)

नगरीकरण मानव सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण घटना है। नगरीकरण कोई आज की त्वरित घटित प्रक्रिया नहीं है, वरन् इसकी शुरुआत मानव सभ्यता की और बढाये पहले कदम के समय हुई। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक नगरीकरण एवं नगर का स्वरूप परिवर्तित होता रहा है। गिब्स ने इन अवस्थाओं को पाँच तथा लैम्पर्ड ने दो भागों में वर्गीकृत किया है। इस वर्गीकरण को ध्यान में रखते हुए नगरों की ऐतिहासिक अवस्थाओं को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है–

15.4.1:– अति प्राचीन नगरीकरण :–

यह नगरीकरण की प्रारम्भिक अवस्था को प्रदर्शित करता है। जब मानव ने सभ्यता के निर्माण में पहला कदम रखा। इस समय की बस्तियां व्यवस्थित रूप में नहीं थीं। इस समय मानव ने पर्यावरण के साथ समायोजन करते हुए नगरीय संगठन की स्थापना की गयी। इस समय अतिरिक्त उत्पादन के प्रोत्साहन के परिणाम स्वरूप कुछ सुविधाजनक बस्तियों में जनसंख्या का केन्द्रकरण हुआ। इस समय यही बस्तियां नगर के प्रारम्भिक स्वरूप थे। हालॉकि उस समय इनमें जनसंख्या की मात्रा बहुत कम थी।

15.4.2:– सुनिश्चित नगरीकरण :–

यह वह समय है जब नगरीकरण सभ्यता का विकास निम्नलिखित छः केन्द्रों में हुआ–

अ– नील घाटी **ब**– मेसोपोटामिया **स**– सिंधु

द– ह्वांगहो **य**–मेसो–अमेरिका **र**– पेरू

इन स्थानों पर नगरीकरण की आधारशिला रखी गयी। इस समय कृषि उत्पादन के क्षेत्रों नें नगरों को मजबूत आधार प्रदान किया, इसलिए इसे सुनिश्चित नगरीकरण कहा जाता है।

15.4.3:– चिरसम्मत अथवा पूर्व औद्योगिक नगरीकरण :–

यह नगरीकरण औद्योगिक नगरीकरण के पूर्व की अवस्था है। इसके विकास के लिए हस्तकलाओं, कुटीर

उद्योगों, व्यापार, प्रशासन, धार्मिक कार्य–कलापों का योगदान प्रमुख रहा। इस समय नगर आकार में बड़े नहीं थे, केवल 3% जनसंख्या ही नगरों में निवास करती थी।

15.4.4:– औद्योगिक नगरीकरण (Industrial Urbanization) :-

यह नगरीकरण औद्योगीकरण के कारण विकसित हुआ। 18 वीं शताब्दी के मध्य में तकनीकी विकास एवं बड़े–बड़े उद्योगों की शुरुआत ने इस नगरीकरण को जन्म दिया। जिन देशों में औद्योगीकरण का जितना विकास हुआ, वहां पर उतना ही अधिक नगरीकरण का विकास हुआ। अफ्रीका, फ्रांस, ब्रिटेन, जर्मनी, जापान, आस्ट्रेलिया, आदि इसी प्रकार विकसित नगरीय देश है।

15.4.5:– उत्तर औद्योगिक नगरीकरण (Post Industrial Urbanization) :-

यह वह स्थिति है जब नगरीकरण अपने चरम पर होता है और नगरों की जनसंख्या अधिकतम सीमा को प्राप्त कर जाती है। इस अवस्था में नगर में अनेक समस्याएं एवं बुराइयां उत्पन्न होने लगती है।

15.5 विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्ति

जब हम किसी प्रदेश की कुल जनसंख्या पर विचार करते हैं तो उसमें ग्रामीण एवं नगरीय दोनों प्रकार की जनसंख्या सम्मिलित होती है। नगरीकरण या नगरीय अनुपात इन दोनों के क्रियाकलापों के परिणाम होते हैं। इन दोनों में कार्यात्मक आधार पर अन्तर पाया जाता है। वर्तमान युग में नगरीकरण में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। नगरीकरण कोई नयी प्रक्रिया या संघटन नहीं है बल्कि नगरीकरण ने मानव इतिहास के लम्बे काल में बहुत धीरे–धीरे कदम बढ़ाया है। औद्योगिक क्रांति एवं औद्योगीकरण के पूर्व नगरों का विकास एवं नगरीकरण बहुत कम था। क्योंकि कृषि उत्पादन से प्राप्त लाभ उद्योगों की तुलना में बहुत कम था और नगरों के पास कृषि उपजों के बदले में देने के लिए वस्तुओं का अभाव था लेकिन जब मानव ने अपने तकनीकी विकास से और औद्योगीकरण के सहयोग से विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन प्रारम्भ किया तो कृषि उत्पादनों को प्रोत्साहन मिला। इससे नगरों को विभिन्न प्रकार की आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति होने लगी एवं ग्रामीण कृषि क्षेत्रों को प्रोत्साहन मिला। इस समेंकित विकास से नगरीकरण को विशेष प्रोत्साहन मिला।

विश्व में नगरीकरण एवं नगरीय जनसंख्या के विकास को निम्नलिखित तथ्यों से समझा जा सकता है–

विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार अनुमान लगाया जाता है कि 1000 ई0 तक विश्व की कुल नगरीय जनसंख्या 434 लाख थी जो कि कुल जनसंख्या का मात्र 4.79% थी। इसमें से 5000 से कम जनसंख्या वाले नगरों में 217 लाख, 20000 से 100000 जनसंख्या वाले नगरों में 61 लाख तथा शेष 10 हजार से अधिक जनसंख्या वाले नगरों में 156 लाख जनसंख्या निवास करती थी। इस प्रकार कुल नगरीय जनसंख्या का 50% छोटे नगरों में, 14.5% मध्यम नगरों में, 35.94 % वृहत् नगरों में निवास करती थी। इस समय कुल 750 नगर सम्पूर्ण विश्व में थे जिसमें 505 नगर लघु आकार के, 200 नगर मध्यम आकार के एवं 45 वृहत् आकार के नगर थे। उस समय कोई भी नगर 10 लाखी नगर नहीं था।

1800 से 1850 ई0 के दौरान नगरीकरण में 574 लाख की वृद्धि दर्ज की गयी तथा नगरीय जनसंख्या का कुल जनसंख्या में प्रतिशत बढ़कर 8.6 तक पहुँच गया। प्रत्येक 10 वर्षों में 26.45% जनसंख्या की बढ़त होती थी। इसके बाद 1850 से 1900 ई0 तक जनसंख्या में दो गुनी वृद्धि हो गयी। इस समय जनसंख्या 1008 लाख से बढ़कर 2000 लाख तक पहुँच गयी। इस प्रकार 19 वीं सदी के पूर्वाद्ध में प्रति शताब्दी औसत वृद्धि 23.65% रही जो 19 वीं सदी के पूर्वाद्ध से कम रही लेकिन जनसंख्या में वृद्धि इससे अधिक रही। इस शताब्दी में जनसंख्या में वृद्धि का प्रमुख कारण लघु एवं वृहत् आकार के नगरों की संख्या एवं उनकी जनसंख्या में वृद्धि का होना था।

विश्व में नगरीय जनसंख्या (लाख में) परिवर्तन एवं वृद्धि

वर्ष	कुल जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या (% में)	वृद्धि (% में)
1800	9060	434	4.79	--

1850	11710	1008	8.60	0.26
1900	16080	2200	13.68	23.65
1950	25100	7320	29.00	46.55
1960	30270	9614	31.76	31.34
1980	44150	16330	37.00	34.92
1990	52920	23820	45.01	31.44
2000	62600	29420	47.00	23.51
2005	65422	31990	48.90	8.74
2010	69582	35713	51.30	11.64
2015	73830	39573	53.60	9.97
2016	74670	40342	54.00	1.94
2017	75503	41108	54.40	1.90
2018	76328	41870	54.90	1.85

सारणी सं–15.1

स्रोत–नगरीय भूगोल डॉ एस0 सी0 बंशल पृष्ठ सं–179

नोट–2000 से 2015 तक की जनसंख्या वृद्धि पांच वर्षों के अन्तर से व 2015 से 2018 की वृद्धि वार्षिक है। (विभिन्न स्रोतों के आधार परः संयुक्त राष्ट्र नेशन मास्टर आदि)

(विश्व की कुल नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या में वृद्धि की प्रवृत्तियाँ)

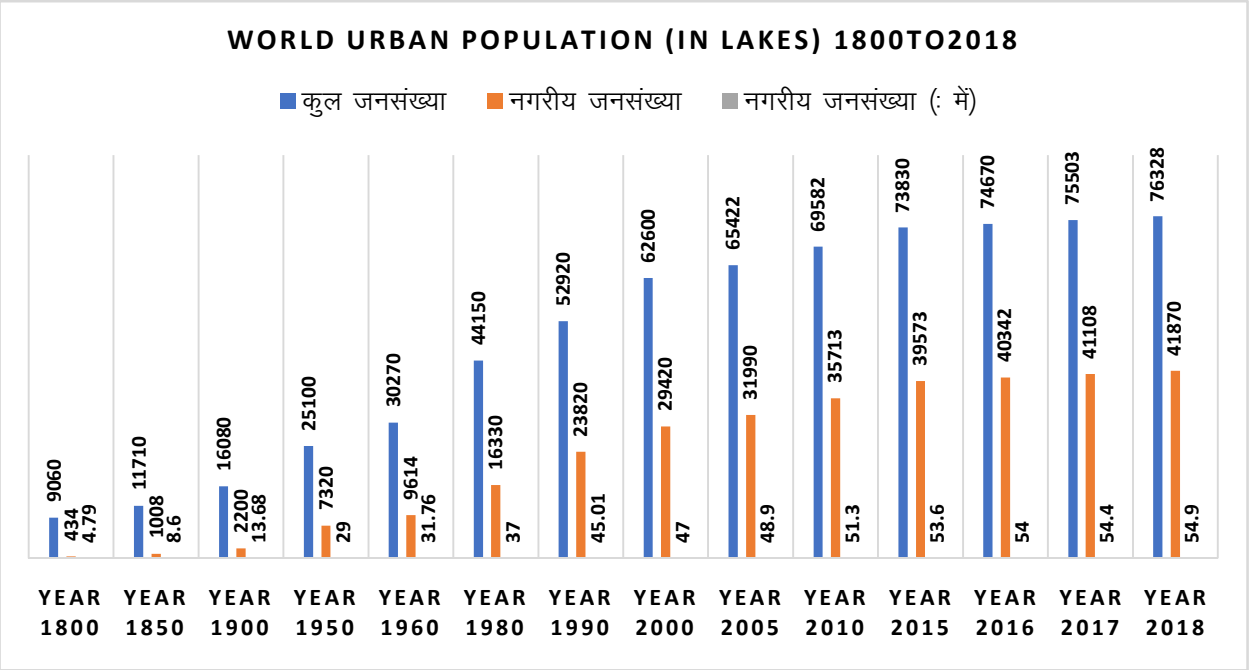

चित्र सं–15.1

स्रोत– नगरीय भूगोल डॉ एस0 सी0 बंशल पृष्ठ सं–179

20 वीं सदी के पूर्व के वर्षों में 1900 से 1950 ई0 तक के वर्षों में नगरों की जनसंख्या में 5120 लाख की वृद्धि हुई जिसका वृद्धि प्रतिशत 46.55 रहा। 1950 से 2000 की अवधि में नगरीय जनसंख्या में 22100 लाख की वृद्धि दर्ज की गयी। इस औद्योगिक क्रांति के पांच दशकों में विश्व में नगरीय जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की गयी। नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत भी 29% से बढ़कर 47 तक पहुँच गया। इस प्रकार प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि जनसंख्या एवं नगरीकरण दोनों के विकास की गति बहुत अधिक रही।

21 वीं सदी के प्रथम एवं द्वितीय दशक में नगरीय जनसंख्या में 6490 लाख की वृद्धि हुई है। यह वृद्धि दर 22 % के लगभग है। इस समय नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 51.30 % है। इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि वर्तमान विश्व की लगभग आधी आबादी अब नगरों में निवास करने लगी है। यह इस बात का प्रमाण है कि विश्व में कृषि क्षेत्रों में तकनीकी एवं प्रोत्साहन से कृषि उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई जिससे नगरीय जनसंख्या के भरण–पोषण में सहयोग प्रदान किया है। इसके और अन्य कारण हैं विभिन्न उद्योगों की स्थापना, औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि, परिवहन सुविधा, आधुनिक जीवन शैली में प्रतिस्पर्धा आदि हैं। विकसित देशों के साथ–साथ कम विकसित देशों में नगरीकरण तीव्र गति से बढ़ रहा है। विश्व के विकसित देशों ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में नगरीकरण अपनी अन्तिम सीमा पर पहुँच चुका है। मध्यम विकसित देशों में यह त्वरण अवस्था की और बढ़ रहा है। ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि अगले 35 से 40 वर्षों में विश्व की दो तिहाई जनसंख्या नगरीय हो जायेगी। इन चार दशकों में नगरीय जनसंख्या 35910 लाख से बढ़कर 60000 लाख हो जाने का पूरा अनुमान है। नगरीय जनसंख्या के इतनी तीव्र गति से बढ़ाने में मुख्य रूप से कम विकसित एवं विकासशील देशों का योगदान है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2018 में नगरीय जनसंख्या गाँव में रहने वाली जनसंख्या से अधिक हो गयी है।

15.6 विश्व में नगरीकरण का वर्तमान प्रतिरूप (Distribution Pattern of Urbanization in World):-

नगरीकरण का तात्पर्य नगरों, कस्बों, उपनगरों में रहने वाली जनसंख्या के अनुपात में होने वाले परिवर्तन से है। नगरीकरण में जनसंख्या का प्रतिरूप सदैव परिवर्तनशील रहता है, इसे पूर्व के काल में जनसंख्या के नगरीकृत होने और वर्तमान में नगरीकृत जनसंख्या के प्रतिरूप को देखकर भली–भांति समझा जा सकता है। इसका सम्बन्ध प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से औद्योगीकरण से है जिसने उद्योग एवं कृषि के उत्पादन में वृद्धि करके

लोगों को नगरों में निवास करने के लिए प्रेरित किया और इसी के साथ अवसर भी प्रदान किया। आर्थिक शक्तियों एवं परिवहन सुविधाओं ने भी नगरों को उद्योगों के स्थापन के लिए आदर्श स्थल बनाया और लोगों को नगरों में रहने के लिए प्रेरित किया। वर्तमान नगरीकरण की प्रवृत्ति को दृष्टिगत रखते हुए अनुमान लगाया जा सकता है कि विश्व की 60% जनसंख्या 2030 तक नगरीकृत हो जायेगी। विश्व में नगरीय जनसंख्या 20 वीं सदी के प्रारम्भ तक 17% थी जो 1950 ई0 में बढ़कर 40%हो गयी तथा 2010 ई0 में यह प्रतिशत बढ़कर 51.30% तक पहुँच गया। विश्व के विभिन्न देशों की नगरीय जनसंख्या या नगरीकरण का प्रतिशत अलग–अलग है। विश्व की लगभग आधी नगरीय आबादी एशिया महाद्वीप में निवास करती है जिसमें यूरोप का हिस्सा 19% अफ्रीका का 11%,लैटिन अमेरिका का 10%, उत्तरी अमेरिका का 8% है (संयुक्त राज्य अमेरिका का अकेले हिस्सा 7%) एशिया के देश चीन का हिस्सा विश्व में 15%, भारत में 10%,तथा जापान में 3%है। दस लाखी नगरों में विश्व की 40% नगरीय जनसंख्या केन्द्रित है।

विश्व नगरीकरण स्तर एवं प्रादेशिक योगदान–2023

(प्रतिशत में)

क्र0सं0	प्रदेश	नगरीकरण का स्तर
01	उत्तरी अमेरिका	83.2
02	यूरोप	74.99
03	लैटिन अमेरिका	82.01
04	ओसेनिया	68.01
05	अफ्रीका	45.01
06	एशिया	52.98
	विश्व	57.00

स्रोत–United Nations Department of Economic and social affairs report,2023 and online data base

विश्व में नगरीकरण की प्रवृत्ति एवं दर अलग–अलग समय में अलग–अलग रही। नगरीकरण का विकास संसाधनों की उपलब्धता एवं तकनीकी विकास के कारण सम्भव हुआ है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सामाजिक व्यूरो ने नगरीकरण की नवीनता के आधार पर विश्व को तीन प्रदेशों में वर्गीकृत किया है–

अ– शीघ्र नगरीकृत प्रदेश :– इस वर्ग में उन देशों को सम्मिलित किया जाता है जो कि 1920 ई तक 25% नगरीकरण के स्तर को प्राप्त कर चुके थे। इन प्रदेशों में उत्तरी पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका, शीतोष्ण दक्षिणी अमेरिका, आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड सम्मिलित हैं।

ब– नव नगरीकृत प्रदेश :– इस वर्ग के अन्तर्गत उन देशों को सम्मिलित किया जाता है जो 1920 ई0 तक 25% नगरीकरण के स्तर को तो प्राप्त नहीं कर सके परन्तु 1960 ई0 तक 25% नगरीकरण के स्तर को प्राप्त कर लिए। इस वर्ग में दक्षिणी यूरोप, पूर्वी यूरोप, जापान, अन्य पूर्वी एशिया, सोवियत संघ, उष्ण कटिबन्ध दक्षिण, अमेरिका, मध्य अमेरिका की मुख्य भूमि उत्तरी अफ्रीका और दक्षिणी अफ्रीका सम्मिलित है।

स– न्यूनतम नगरीकृत प्रदेश :– इस वर्ग में उन प्रदेशों को सम्मिलित किया गया है जो की 1960 ई तक भी 25% नगरीकरण के आंकड़ों को प्राप्त नहीं कर सके। इसमें पूर्वी एशिया मुख्य भूमि मध्य भूमि, मध्य एशिया, दक्षिणी पूर्वी एशिया, दक्षिण पष्चिम एशिया, कैरीबियन प्रदेश, उष्ण कटिबन्धीय अफ्रीका व ओसेनिया सम्मिलित है। विश्व स्तर पर नगरीकरण प्रतिरूप को स्पष्ट करने से पूर्व निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है–

अ– विश्व के कुछ देश ऐसे हैं जहां पर नगरीकरण अपने विकास के चरम पर है, ये देश हैं– चिली, अर्जेन्टीना, वेनेजुएला, आस्ट्रेलिया, ग्रीनलैण्ड, स्पेन, ओमान, जर्मनी, ब्रिटेन, न्यूजीलैण्ड।

ब– विश्व में अनेक देश ऐसे हैं जहां पर नगरीकरण का प्रतिशत 60 से 80 पाया जाता है, जैसे– सं0रा0अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको, पेरू, ब्राजील एवं मंगोलिया।

स– नाइजीरिया, कजाकिस्तान, मलेशिया में यह अनुपात 40 से 60 के मध्य पाया जाता है।

द– मुख्यरूप से एशियाई देश भारत, चीन, पाकिस्तान, यमन, जायरे, नामीबिया, मेडागास्कर, सूडान में 20 से 40% जनसंख्या नगरों में निवास करती है।

15.6.1:– नगरीकरण के अनुसार जनसंख्या वितरण प्रतिरूपः–

किसी भी देश में जनसंख्या का ग्रामीण एवं नगरों में निवास करना वहां के विकास (तकनीकी एवं औद्योगिक) को इंगित करता है तथा नगरीकरण का प्रतिशत वहां के जीवन स्तर का सूचक होता है। विश्व के कुछ देश हैं जो उच्चतम नगरीकरण के लक्ष्य को प्राप्त कर चुके हैं एवं अब वे अवनयन की दशा को प्राप्त हैं क्योंकि अधिकतम के बाद अवनयन प्रारम्भ हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे जैविक अनुक्रम में वनस्पतियाँ का विकास अपने पूर्ण रूप को प्राप्त कर जाता है तो उसे चरम वनस्पति कहते हैं, जिसके उपरान्त उसका विनाश प्रारम्भ हो जाता है। विश्व में नगरीकरण के प्रतिरूप के अनुसार नगरों को निम्नलिखित पांच प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है–

15.6.1अः– अति निम्न नगरीकृत प्रदेश :–

इसके अन्तर्गत वे सभी देश सम्मिलित हैं जहां पर नगरीकरण का प्रतिशत 19 या इससे भी कम पाया जाता है। इस श्रेणी के देशों में पूरी व्यवस्था लगभग कृषि पर आधारित होती है जो कि उन्नत दशा में नहीं पायी जाती है। ये देश आर्थिक, औद्योगिक एवं तकनीकी दृष्टि से अति पिछड़े होते हैं। यहां पर शिक्षा स्वास्थ्य आदि सुविधाओं का प्रायः अभाव पाया जाता है। वर्तमान में मानव तकनीकी विकास एवं वैश्वीकरण के कारण विश्व के लगभग सभी देश किसी न किसी रूप में एक दूसरे देशों से जुड़ रहे हैं। परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण विश्व का समवेत् रूप में विकास हो रहा है। नगरीकरण के स्तर में निरन्तर वृद्धि के कारण इस वर्ग में सम्मिलित देशों की संख्या निरन्तर कम होती जा रही है। 21 वीं सदी में प्रवेश के समय अफ्रीका में बुकिनाफांसो, बुरुण्डी, नाइजर, इरीट्रिया, इथियोपिया, मलावी, रवाण्डा, युगाण्डा, एशिया में कम्बोडिया, भूटान व नेपाल इसके साथ–साथ आस्ट्रेलिया में पापुआ न्यूगिनी व सोलोमन द्वीप अति निम्न नगरीकरण धारित करने वाले देश थे।

विश्व के नगरीकरण के स्तर

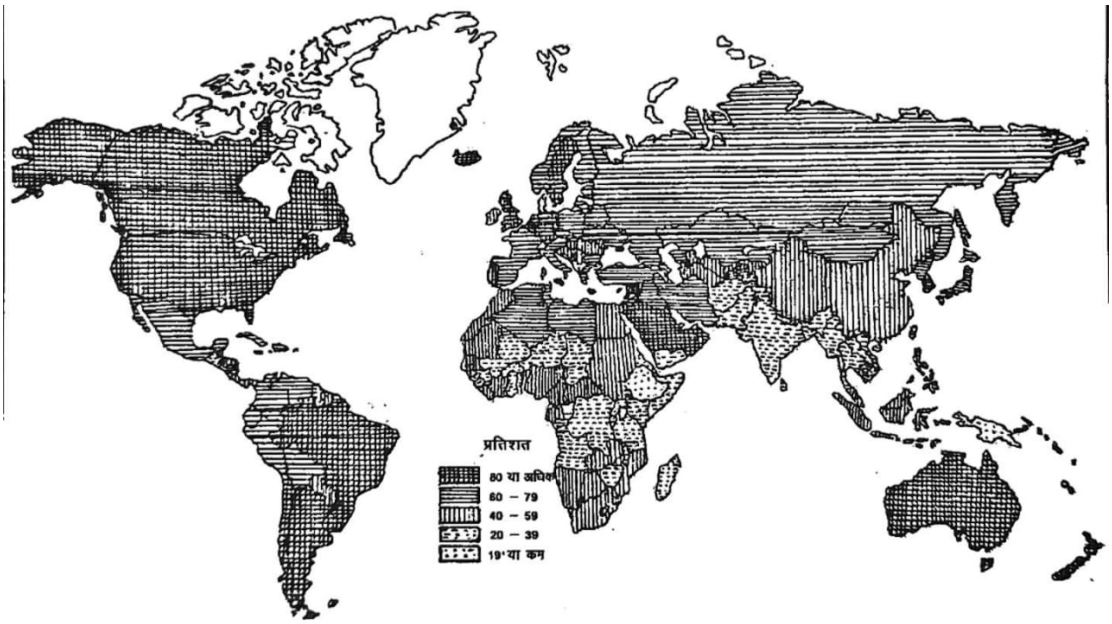

चित्र सं0–15.2

स्रोत– नगरीय भूगोल, डॉ रतन जोशी पृष्ठ सं–114

15.6.1 बः– निम्न नगरीकृत देश :–

निम्न नगरीकृत देशों की श्रेणी में उन देशों को सम्मिलित किया जाता है जो 20 से 39% नगरीकृत हैं। इस प्रकार के देशों में नगरीकरण का विकास अपने विकासशील अवस्था में है। निरन्तर तकनीकी एवं औद्योगिक विकास के कारण नगरीकरण में भी वृद्धि हो रही है। अधिकांशतः अफ्रीका एवं एशिया के देश इस वर्ग में आते हैं। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, थाईलैण्ड, अफगानिस्तान, वियतनाम, म्यांमार आदि एशियाई देश इसी वर्ग में आते हैं। भारत में नगरीय जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि आर्थिक एवं औद्योगिक विकास के उपरान्त भी नगरीकरण में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो सकी है। इसके पीछे का प्रमुख कारण है, नगरीय विकास के सापेक्ष ही ग्रामीण विकास भी हो रहा है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में भी नगरीय सुविधाएं प्राप्त हो जाती हैं। अफ्रीका के सोमालिया, मोजाम्बिक, केन्या, माली, जिम्बाम्बे, जाम्बिया, तन्जानिया, कांगो व गिनी इसी वर्ग के देश हैं जहां पर नगरीकरण अभी निम्न अवस्था में हैं लेकिन अमेरिका से मात्र गुयाना तथा मध्य अमेरिका से ग्वाटेमाला व हैती देश इसी वर्ग में सम्मिलित किये जाते हैं।

15.6.1 सः– मध्यम नगरीकृत देश :–

इस वर्ग में वे देश आते हैं जो न तो पूरी तरह विकसित देशों की श्रेणी में आते हैं और न ही बहुत पिछड़े वर्ग के देशों में आते हैं। इसमें वे देश आते हैं जो कि विकासशील अवस्था से गुजर रहे हैं, तथा जिन देशों में नगरीकरण का प्रतिशत 40 से 59% के मध्य पाया जाता है। अफ्रीका में मिश्र, अंगोला, कैमरून, मोरक्को, नाइजीरिया, घाना, सेनेगल एवं सूडान, द0 अफ्रीका आदि इस वर्ग के देश हैं। यूरोप के कुछ देश भी इस वर्ग में आते हैं जैसे–अल्बानिया, पुर्तगाल व रोमानिया एवं लैटिन अमेरिका में सूरीनाम, निकारागुआ एशिया महाद्वीप में चीन, इण्डोनेशिया, सीरिया आदि देश भी इसी वर्ग में आते हैं। मध्यम नगरीकृत देशों में विकास की धारा पहुँच रही है जिससे इनका विकास भी हो रहा है। धीरे–धीरे ये देश भी उच्च नगरीकृत हो सकते हैं। विकास को देखते हुए यह अपेक्षा की जाती है।

15.6.1 दः– उच्च नगरीकृत देश :–

यह वर्ग विशेषीकृत नगरीकृत प्रदेश माना जाता है और इस वर्ग में वे देश आते हैं जो औद्योगिक, आर्थिक एवं संसाधन की दृष्टि से सम्पन्न होते हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत वे सभी देश आते हैं जहां 60 से 79% जनसंख्या नगरों में निवास करती है। ये अधिकांशतः विकसित व औद्योगिक राष्ट्र हैं। इसमें वे देशविशेष रूप से सम्मिलित किए जाते हैं जहां उन्नत कृषि एवं खनिज तेल का उत्पादन होता है। उत्तरी अमेरिका में मैक्सिको, अधिकांश लैटिन अमेरिका व यूरोप के देश इस वर्ग में आते हैं। एशिया महाद्वीप में ईराक, ईरान, फिलीपीन्स, ताइवान, उत्तरी कोरिया, जापान आदि उच्च नगरीकृत देश हैं। अफ्रीका में अल्जीरिया, ट्यूनीशिया भी इसी वर्ग में आते हैं।

15.6.1 यः– अति उच्च नगरीकृत देश :–

इस वर्ग में वे देश आते हैं जो नगरीकरण के उच्चतम स्थान को प्राप्त कर चुके हैं। इन प्रदेशों में नगरीकरण का प्रतिशत 80 या उससे अधिक है। इस वर्ग के देश 1950 ई0 से पूर्व ही नगरीकृत हो चुके थे। इन प्रदेशों में तकनीकी, प्रौद्योगिकी एवं आर्थिक विकास पर्याप्त मात्रा में हो चुका है। यहां के लोगों का जीवन स्तर काफी उच्च पाया जाता है। इस वर्ग के प्रमुख देश यूरोप से हैं। यूरोप में ब्रिटेन, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, स्वीडन, डेनमार्क व लक्जमवर्ग हैं। लैटिन अमेरिका में अर्जेन्टीना, ब्राजील, चिली, उरुग्वे, वेनेजुएला, अफ्रीका महाद्वीप में लीबिया। इसके साथ एशिया में इजराइल, दक्षिण कोरिया, जॉर्डन, सऊदी अरब लेबनान व कुछ पश्चिम एशियाई तेल उत्पादक देश इसके अन्तर्गत आते हैं। उत्तरी अमेरिका महाद्वीप में संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और ओसेनिया में आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड इस वर्ग में आते हैं। विश्व के कुछ देश ऐसे हैं जिसमें नगरीकरण 90% से भी अधिक है, जैसे उरुग्वे, अर्जेन्टीना, बेल्जियम, इजराइल तथा वेनेजुएला। प्रादेशिक दृष्टि से अवलोकन किया जाये तो आस्ट्रेलिया विश्व का सर्वाधिक नगरीकृत प्रदेश है।

सारणी सं–15.3

प्रमुख देशों में नगरीकरण का स्तर

क्रम सं0	देश	कुल जनसंख्या (करोड़ में)	नगरीकरण स्तर (प्रतिशत)
01	चीन	135.4	51.1
02	भारत	121.4	31.1

03	सं0रा0 अमेरिका	31.7	79.1
04	इण्डोनेशिया	23.2	48.1
05	ब्राजील	19.5	84.3
06	पाकिस्तान	18.4	34.9
07	बांग्लादेश	16.4	25.1
08	नाइजीरिया	15.8	48.2
09	रूस	14.0	73.0
10	जापान	12.7	65.8
11	मैक्सिको	11.0	76.0
	विश्व	723.8	57.00

Source-The Statesman's yearbook-2019 **प्रदेशों के अनुसार विश्व की नगरीय जनसंख्या (% में)**

(2019**)**

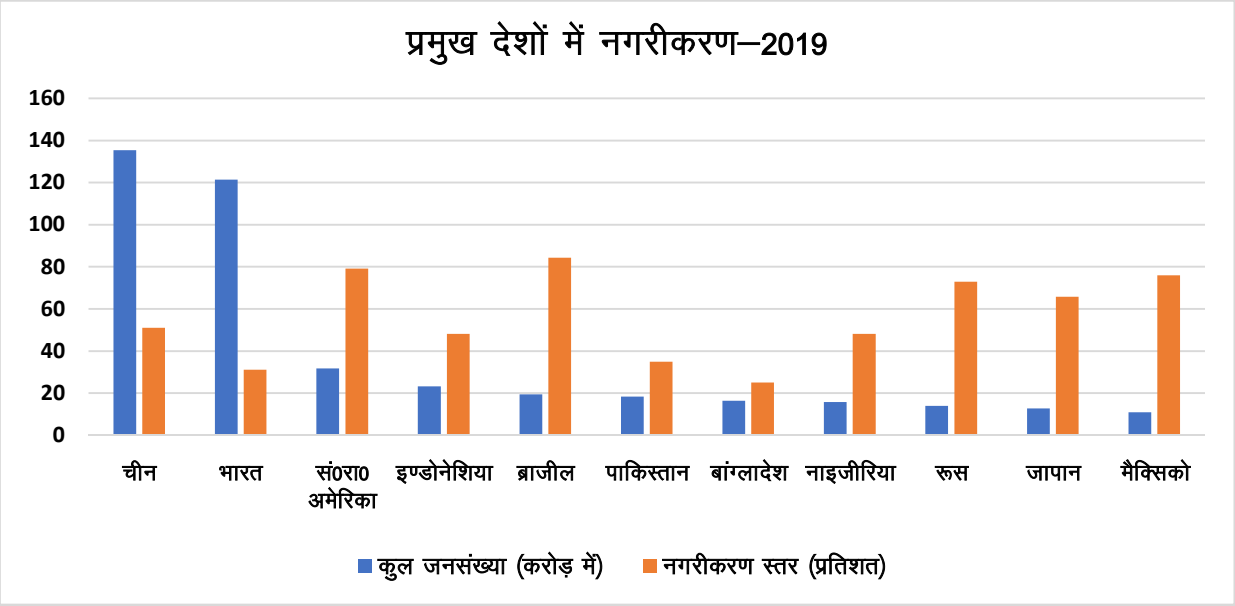

चित्र सं–15.3

15.7 नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के कारक (Factor of the OriginAnd development of cities) :–

नगरों का इतिहास प्राचीन एवं रोचक है। ये नगर किसी देश या प्रदेश के सांस्कृतिक विकास के संकेतक हैं। किसी देश या प्रदेश में नगरों की स्थिति उस देश के भौतिक तत्वों की अनुकूलता एवं तकनीकी विकास का परिचायक होता है। नगरों के विकास का अध्ययन करने से पूर्व समझना आवश्यक है कि नगर सबसे पहले कब बने और कहां बसाये गये। आज भी यह प्रश्न विवाद का विषय बना हुआ है। प्राचीन काल से नगरों के स्वरूप एवं स्वभाव में परिवर्तन होते रहे हैं। कुछ नगर ऐसे हैं जो अपने अन्दर आधुनिकता आने के पश्चात भी अपनी मौलिक विशेषताओं को बरकरार रखे हैं, जबकि कुछ देश आधुनिक तकनीकी विकास की चकाचौंध में विलीन हो गये और नये स्वरूप को धारित कर लिए। नगरों के सम्बन्ध में **ए0 वी0 गैलियन** (A B Gallion) ने कहा है कि प्रारम्भ में मानव को दो अवस्थाओं से गुजरना पड़ा। **प्रथम** मानव गुफाओं से निकलकर बाहर खुले क्षेत्र में आया और अपने रहने के लिए वृक्ष की टहनियों, पत्तों आदि की सहायता से घर बनाना प्रारम्भ किया। यह नगरीकरण

का प्रथम प्रयास था। यह अवस्था पुरा पाषाण काल की थी। **दूसरी** अवस्था में मानव ने कृषि कार्य (प्राथमिक कृषि) करना प्रारम्भ किया एवं पशुओं को पालतू बनाया। यह घटना उत्तर पाषाण काल में हुई। इसी समय मानव एक दूसरे की भावनाओं को समझकर समूह के रूप में सद्भाव एवं प्रेम पूर्वक रहने लगा।[03]

सामाजिक विकास एवं सुरक्षा के परिणाम स्वरूप मानव ने ग्रामों के निर्माण में योगदान दिया। यह गाँव प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षित स्थान पर बसाए गये। सबसे प्राचीन गाँव **स्विस लेक** में पाइल्स पर बना मिलता है। इन्ही गाँवों ने वर्तमान में नगरों का रूप धारण कर लिया। एस0 ए0 क्वीन एवं एल0 एफ0 थामस (S.A. Queen and L.F. Thomas) के अनुसार "वर्तमान नगर गाँवों का ही परिवर्तित रूप है। मानव सभ्यता का विकास पूर्णतः नगरों से जुड़ हुआ है, इसीलिए कहा जा सकता है कि नगर उतने ही प्राचीन हैं जितनी मानव सभ्यता।" **मम्फोर्ड** ने नगरों को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "अपने सम्पूर्ण अर्थ में शहर एक भौगोलिक तन्त्र जाल है, आर्थिक संगठन, सामाजिक कार्य की रंगभूमि तथा सामूहिक एकता का सुरुचि सम्पन्न प्रतिरूप है। एक और वह सामान्य घरेलू कार्यों का स्थूल ढ़ांचा है तो दूसरी और मानव संस्कृति के वृहत्तर अर्थपूर्ण कार्यों एवं उदात्त भावनाओं की चेतनायुक्त नाटकीय पृष्ठभूमि है।" विश्व में सबसे प्राचीन नगरीकरण का प्रमाण ई0पू0 5000 से 3000 वर्षों के बीच मेसोपोटामिया में दजला एवं फरात नदियों के मध्य में पाया जाता है जिसमें पहिएदार गाड़ी, बैल द्वारा खींचे जाने वाला हल, नाव, सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण, धातुओं को शुद्ध करने की कला का विकास आदि विभिन्न प्रकार की प्रौद्योगिकियों के विकास का प्रमुख योगदान रहा। इस कृषि एवं परिवहन में अपेक्षित विकास हुआ। कृषि एवं परिवहन के विकास के फलस्वरूप खाद्यान्न भण्डारण एवं पुनर्वितरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इन तीनों प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप नगरों में व्यापार की शुरुआत हुई। इसी विकास के परिणाम स्वरूप बेबीलोन जैसे समृद्ध नगर का विकास हुआ। नगरीकरण का प्रसार मेसोपोटामिया से धीरे–धीरे मिश्र, पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र सिन्धु घाटी, चीन तथा दक्षिण पूर्व एशिया की और हुआ।[10]

मूल रूप से यदि देखा जाये तो यह बात स्पष्ट होती है कि नगरों की उत्पत्ति एवं विकास भौगोलिक कारकों के अनुरूप होता है। भौतिक तत्व नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के निर्धारक तत्व होते हैं और ये नगर मानव जीवन–शैली पर गहन रूप से प्रभाव डालते हैं। नगरों से मनुष्य का जीवन–स्तर सुधर जाता है। नगरों की उत्पत्ति एवं विकास को प्रभावित करने वाले कारकों को प्रमुख रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जाता है–

15.7.1 :– प्राकृतिक या भौतिक कारक

15.7.2 :– मानवीय कारक

इन कारकों को विषद रूप में इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है–

15.7.1:– प्राकृतिक या भौतिक कारक :–

मनुष्य को अपने जन्म के बाद एक विशेष प्रकार का प्राकृतिक वातावरण मिला जिसमें मनुष्य ने अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तन एवं परिमार्जन कर के सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया, और नगर मानव द्वारा निर्मित सांस्कृतिक भू–दृश्य है परन्तु नगरों का उद्भव स्थल एवं विकास में भौतिक तत्वों का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से महत्वपूर्ण योगदान है। नियतिवादियों ने यहां तक कहा था कि मानव निवास एवं अधिवास पूर्ण रूप से प्राकृतिक तत्वों द्वारा निर्धारित होते हैं लेकिन इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि भौतिक तत्व नगरों के उद्भव एवं विकास को प्रभावित करते हैं। इन भौतिक कारकों में संस्थिति, अवस्थिति, जलवायु, जलापूर्ति, जलनिकास आदि हैं। इन कारकों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है–

15.7.1 अ– संस्थिति (Site)

नगर के बसाव स्थल को सामान्यतः स्थल कहा जाता है। इससे अभिप्राय उस भू–भाग से है जिस पर

नगर बसा हुआ है और जितनी भूमि पर नगर का प्रसार है। संस्थिति की नगर के उद्‌भव एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके अन्तर्गत त्तस्थान के उच्चावच, भूआकृतिक बनावट एवं अपवाह तन्त्र का अध्ययन करते हैं। **डिकिन्सन** के अनुसार "स्थल के अन्तर्गत उच्चावच के विभिन्न लक्षणों को सम्मिलित करते हैं जिस पर नगर का उद्‌भव एवं प्रसार हुआ है।" बसाव स्थल का प्रभाव नगर के गठन एवं संरचना पर मुख्यरूप से पड़ता है। नगरीकरण के प्रारम्भिक अवस्था में नगरों के विकास पर प्रभाव अधिक होता है लेकिन नगर विकास के आगे जाने पर (अर्थात् समयोपरान्त) स्थल पर निर्भरता कुछ कम होती जाती है। स्थल के लक्षणों की अमिट छाप नगर की आकृति एवं आकारिकी पर सदैव देखने को मिलती है। किसी नगर की वाह्य स्थिति कैसी होगी? नगर विकास की दिशा क्या होगी? नगर में मार्गों एवं भवनों का स्वरूप कैसा होगा? इस प्रकार के सभी प्रश्नें का सम्बन्ध नगर के बसाव स्थल से होता है। प्राचीन काल के नगरों की उत्पत्ति एवं विकास में बसाव स्थल का प्रभाव विशेष रूप से प्रभावी रहा।

ब्लॉश ने बसाव स्थल का मानव अधिवास पर प्रभाव को स्पष्ट करते हुए बताया है कि नगरों पर कुछ विशिष्ट स्थानों पर बसने (स्थापित होने) की प्रवृत्ति पायी जाती है। नगरों के बसाव स्थल का चयन करते समय कुछ प्राकृतिक तत्वों यथा–जल की उपलब्धता, जलवायु की अनुकूलता, प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता, सुरक्षात्मकता आदि तत्वों का विशेष ध्यान रखा जाता है। प्रारम्भिक नगर धरातल के साथ मनुष्य के घनिष्ठ सम्बन्ध के परिचायक रहे हैं। विभिन्न कालों में नगरों की स्थापना मुख्य रूप से निम्नलिखित स्थलों पर हुई है–

नदी तट :–

यह तथ्य सर्वविदित है कि जल ही मानव एवं जीवों का आधार है। मानव जीवन के समस्त प्रमुख क्रियाकलाप जल के अभाव में संचालित नहीं हो सकते हैं। मानव बस्तियों की स्थापना में जलापूर्ति सदैव एक महत्वपूर्ण कारक रही है। प्राचीन काल में नगरों की स्थापना जलोढ़ मैदानी भागों में की गयी। नदी घाटियों में बसे प्रथम नगरों के स्थल का निर्धारण करते समय जल की सुविधाओं के साथ–साथ बाढ़ से सुरक्षा को भी ध्यान में रखा गया क्योंकि विश्व में अनेकों उदाहरण देखे गये जो बाढ़ की चपेट में आकर जन सम्पदा की क्षति से ग्रसित हो गये हैं। मेसोपोटामिया में नगरों का विकास दोआब के ऐसे स्थलों पर हुआ जो कि बाढ़ से सुरक्षित थे। सिन्धु घाटी सभ्यता के प्रतिनिधि नगर हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं। नदियों के समीप अनेक शहर नदी जल के कटाव के कारण अनेक परेशानियों का सामना कर रहे हैं। कुछ नगर तो अपने अस्तित्व को बचाने में लगे हैं। फिर भी विश्व के अनेक प्रमुख नगरों की स्थापना नदियों के तट पर हुई है। जैसे–

नदियों के किनारे बसे प्रमुख नगर

क्रम सं	नगर	नदी का नाम	क्रम सं	नगर	नदी का नाम
01	अयोध्या	सरयू	08	श्रीनगर	झेलम
02	गुवाहाटी	ब्रह्मपुत्र	09	वाराणसी	गंगा
03	दिल्ली	यमुना	10	अहमदाबाद	सरस्वती
04	कोटा	चम्बल	11	उज्जैन	क्षिप्रा
05	नासिक	गोदावरी	12	लंदन	टेम्स

06	लुधियाना	सतलज	13	रोम	टाइबर
07	सूरत	ताप्ती			

इसी प्रकार कुछ नगर ऐसे स्थल पर हैं जो दो नदियों के संगम पर स्थित हैं जैसे प्रयागराज (गंगा, यमुना, सरस्वती), सेंट लुईस (मिसीसिपी, मिसौरी), खारतून (नीली नील–श्वेत नील), कुछ नगरों की स्थापना नदियों के मुहानों पर हुई है, जैसे सेन्टलॉरेन्स नदी पर क्यूबेक, हुगली पर कोलकाता, पदमा पर ढाका, नील पर काहिरा, सिंधु पर कराची, इरावदी पर रंगून आदि। इसके साथ कुछ नगरों की स्थापना नदियों के मोड़ों पर भी हुई है जैसे विजयबाड़ा कृष्णा नदी पर, कटक महानदी पर, बोल्गा ग्राड वोल्गा नदी पर, काइफेंग ह्वांगहो नदी पर आदि।

पर्वतीय स्थल :–

विश्व अनेक अस्थिरताओं के दौर से गुजरा है। जिसके अनेक राजनीतिक एवं सामाजिक तथा सुरक्षा सम्बन्धी कारण रहे हैं। प्राचीन एवं मध्य काल में नगरों की स्थापना में महत्वपूर्ण पक्ष नगरों की सुरक्षा था। इस काल में नगरों की स्थापना अत्यन्त सुरक्षित स्थलों जैसे पहाड़ियों एवं पर्वतों पर हुई है। **दुर्ग नगर** इसका प्रमुख उदाहरण है। सुरक्षात्मक दृष्टिकोंण से वे बसाव स्थल उपयुक्त माने गये हैं जहां पर एक से अधिक सुविधाएं उपलब्ध थीं। **एडिनबर्ग व दुर्ग** की स्थापना हिमानी निर्मित श्रृंग पर की गयी।

इस प्रकार के नगर के उपयुक्त उदाहरण के तौर पर चित्तौड़गढ़ नगर को लिया जा सकता है, जो मूल रूप से पहाड़ी पर तो है ही, इसके साथ गम्भीरी व बेड़च दो नदियों द्वारा दोहरी सुरक्षा प्राप्त था। इसी प्रकार गंगा तट पर चुनार का दुर्ग एक ऊँची पहाड़ी पर बना हुआ है। कुछ नगर ऐसे हैं जो पहाड़ियों के सुरक्षा घेरे में बसे हुए हैं जैसे उदयपुर व पन्ना।

मैदानी भाग या समतल धरातल :–

उपरोक्त वर्णित स्थलों के अतिरिक्त समतल भूमि व पठारी भाग नगर बसाव के लिए उपयुक्त माने जाते हैं। विश्व नगरीकरण को यदि देखा जाये तो मैदानी प्रदेश ऐसे प्रदेश हैं जहां पर नगरीकरण पर्याप्त मात्रा में हुआ है। पर्वतीय नगर अपनी स्थिति के कारण ही प्रसारित नहीं हो पाते जबकि मैदोनों में नगरीकरण का प्रसार निरन्तर होता रहता है। कानपुर, प्रयागराज, वाराणसी, आगरा दिल्ली आदि अनेक ऐसे नगर हैं जो कि मैदानी प्रदेशों में बसे हुए हैं। विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक स्थलीय अवरोध नगरों के विकास को प्रभावित करते हैं जैसे जेनेवा व मार्सेलीज, उदयपुर, जयपुर आदि।

15.7.1 बः– भूगर्भिक संरचना :–

किसी भी नगर के स्थल पर भौमिकी संरचना या भूगर्भिक संरचना का प्रभाव पड़ता है। इसका सम्बन्ध भूकम्प, भू–जल, खनिज व मृदा से होता है। सं0रा0अ0 में अप्लेशियन श्रेणियों के पूर्व में भ्रंश रेखा के सहारे स्थित प्रपात नगर–मोण्टागोमरी, कोलम्बस, मेकोन, ऑगस्टा, कोलम्बिया, रेले, रिचमण्ड इस प्रकार के मुख्य उदाहरण हैं। सिडनी बेसिन में स्थित सिडनी महानगर भी भूगर्भिक संरचना का उदाहरण है। कुछ नगर स्थल ऐसे भी हैं जो खनिजों के प्रभाव स्वरूप विकसित हुए हैं जैसे वर्मिंघम (लोहा एवं कोयला), कोलार (सोने की खदान), धनबाद (कोयले की खदान), किम्बरले (हीरे की खदान) आदि।

15.7.1 सः– तटीय स्थिति :–

सागरीय भाग ऐसे प्राकृतिक कारक हैं जो कि मानव सभ्यता के प्रसार में एवं वर्तमान में वैश्वीकरण, पूर्व में यात्राओं आदि के लिए आधार प्रदान किया एवं कर रहा है। यदि सागरीय तट अधिक कटा–फटा हो तो वह

बंदरगाहों के लिए उपयुक्त दशाएं प्रस्तुत करते हैं। प्राकृतिक पोताश्रय की सुविधा वाले स्थानों पर अनेक बड़े बन्दरगाह नगर विकसित हुए हैं जैसे भारत की आर्थिक राजधानी मुम्बई इसका प्रमुख उदाहरण है। प्रवाल द्वारा निर्मित द्वीपों पर भी श्रेष्ठ पोताश्रय के कारण नगरों की स्थापना हो जाती है जैसे होनोलुलु व पर्ल हार्बर। स्थलीय बाधाएं नगरीकरण को विभिन्न स्तरों पर प्रभावित करती हैं लेकिन मानव के प्राविधिक विकास ने स्थलीय बाधाओं को दूर करके नगरीकरण को बढ़ाने का प्रयास किया है। इसमें दलदली भागों को सुखाना, जलाशयों को पाटना, पहाड़ियों को काटना आदि। मुम्बई का प्रसिद्ध **मैरीन ड्राइव** समुद्र से प्राप्त भू–भाग पर बसा है। दिल्ली में दिल्ली रेंज का अधिकांश भाग तोड़कर समतल कर दिया गया है। इस प्रकार लंदन, पेरिस, ऑलिएन्स, बेलफास्ट आदि का विस्तार स्थलीय भागों के सुधारकर बनाया गया है। मानव इस प्रकार नगरों के विकास को आगे बढ़ाया परन्तु इससे स्थल के प्रभाव की तीव्रता को कम ही किया जा सकता है उसे समाप्त नहीं किया जा सकता।

संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रपात रेखा नगर

चित्र सं–15.4

स्रोत–नगरीय भूगोल, डॉ रतन जोशी पृष्ठ सं–29

15.7.1 दः– अवस्थिति :–

अवस्थिति से तात्पर्य आस–पास के क्षेत्रों में नगर की स्थिति अथवा उसके अपेक्षित सम्बन्ध है। इसके अन्तर्गत नगर के चारों और विस्तृत क्षेत्र की धरातलीय विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है तथा उसकी स्थिति का मूल्यांकन उसके चारों और के विस्तृत क्षेत्रों के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। वस्तुतः अवस्थिति किसी प्रदेश की उर्वरता, संसाधनों की उपलब्ध क्षमता तथा बाह्य प्रदेशों से इस प्रदेश की अभिगम्यता आदि का प्रभाव नगरीय विकास पर स्पष्ट रूप से देखा जाता है। एक उदाहरण का उल्लेख उपयुक्त होगा–विश्व में एक नगर ऐसा है जो अपनी अलग पहचान रखता है, वह है सिंगापुर जो कि अपनी अनुकूल अवस्थिति के कारण समस्त सुविधाओं से सम्पन्न है और सम्पूर्ण विश्व के लोगों के आकर्षण का केन्द्र बिन्दु के रूप में जाना जाता है।

सिंगापुर का स्थल एवं स्थिति

01–अनेकानेक व्यापारिक मार्गों का मिलन 02–द्वीप समूहों द्वारा निर्मित बन्दरगाह

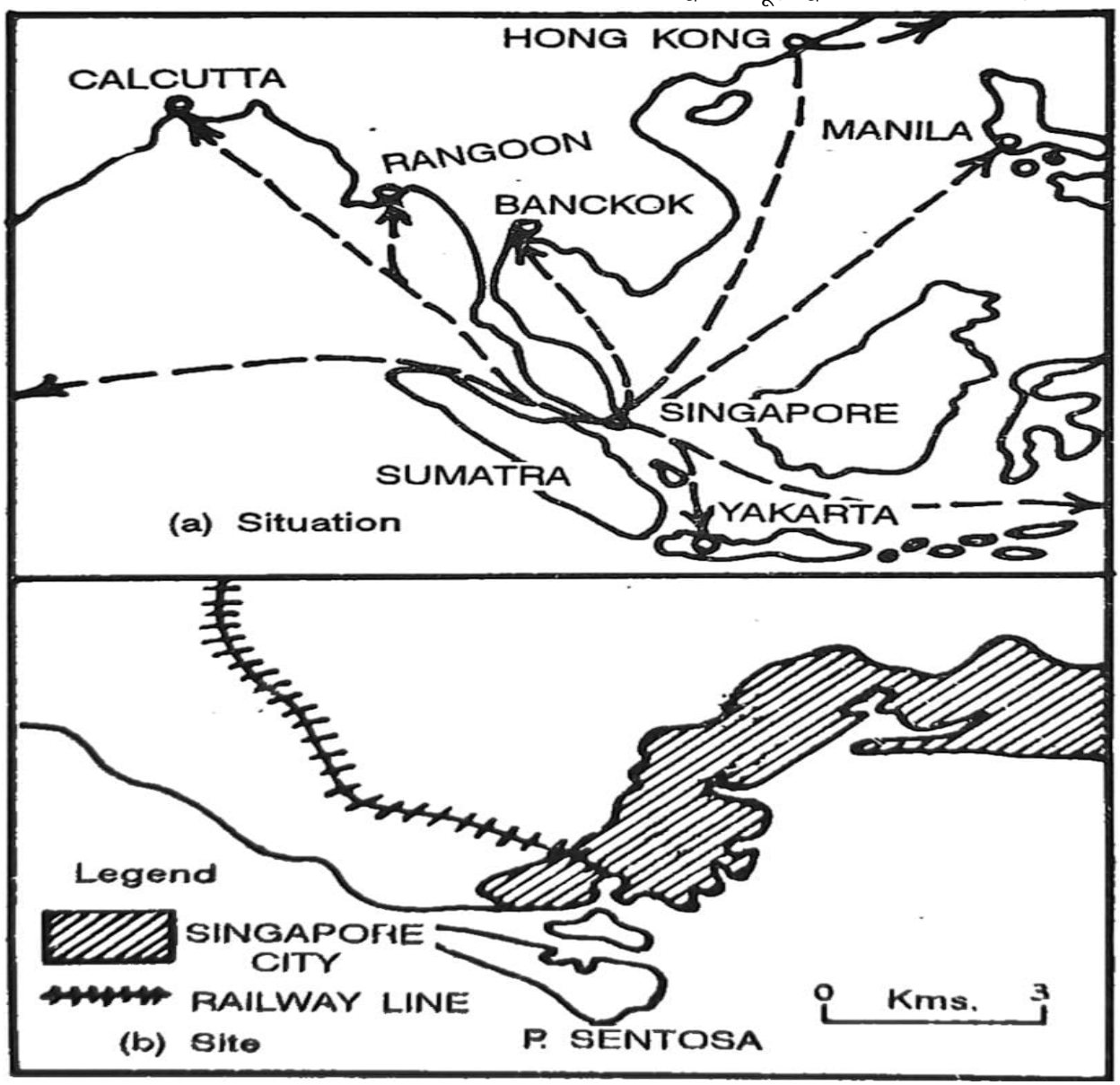

चित्र सं–15.5

स्रोत–मानव भूगोल, पो0 बी एन सिंह, मनीष कुमार सिंह पृष्ठ–402

जलवायु :–

पृथ्वी की सुन्दरता (मानव एवं जीव–जन्तुओं की उपस्थिति) के पीछे का सबसे प्रमुख कारण यहां पर पायी

जाने वाली जलवायु। जलवायु ही वह कारक है जो पृथ्वी पर पाये जाने वाले भौतिक एवं जैविक तत्वों को प्रभावित करती है। मानव जीवन एवं इससे सम्बन्धित सांस्कृतिक भू–स्वरूप जलवायु द्वारा निर्धारित होते है, आज के युग में भी ऐसा कहना अतिशयोक्ति न होगा। इसी क्रम में कह सकते हैं कि जलवायु का नगरों के उद्भव एवं विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव देखा जा सकता है। नगरों के विकास में जलवायु प्रेरक का कार्य करती है जैसे उपोष्ण एवं शीतोष्ण जलवायु नगरों के विकास के लिए उपयुक्त मानी जाती है। इसके विपरीत उष्ण, शुष्क या अतिशीत जलवायु नगरीकरण के विकास के लिए बाधक होती है। उष्ण प्रदेशों में नगरीकरण उन स्थलों पर होता है जहां पर जल की सुविधा होती है। ऐसे कटिबन्धों में सागरीय तटों पर नगरीकरण बहुतायत देखने को मिलता है।

वर्तमान जगत में नगरीकरण का अधिकतम विकास शीतोष्ण या उपोष्ण कटिबन्धीय जलवायु प्रदेशों में अधिक हुआ है जैसे टोकिया, न्यूयार्क, ब्यूनस आयर्स, शंघाई, लॉस एन्जिल्स, बीजिंग, 30^0 उत्तरी अक्षांश के उत्तर में बसे हुए हैं जहां जलवायु नगरीकरण के लिए बहुत अनुकूल है।

15.7.2:– मानवीय कारक :–

नगर मानव द्वारा निर्मित भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन के द्वारा निर्मित सांस्कतिक भू–दृश्य का प्रमुख घटक हैं। नगरों के निर्माण में स्थान चयन, नियोजन के मूल में मानवीय विचार, कल्पनाशीलता एवं प्रौद्योगिकी का सत्त् योगदान रहा है। किसी देश या प्रदेश की संस्कृति एवं सभ्यता किस स्तर की है, वहां के नगरों में परिलक्षित होती है। वस्तुतः मानव सभ्यता का विकास नगरों के विकास से स्पष्ट रूप से जुड़ा हुआ है। इस सन्दर्भ में यह कह सकते हैं कि नगरीकरण को भौतिक कारण तो प्रभावित तो करते ही हैं, इसके साथ–साथ मानवीय कारक भी नगरीकरण को प्रभावित करते हैं। प्राचीन नगरों भौतिक एवं मानवीय तत्वों का समन्वय देखा जा सकता है। प्रमुख मानवीय कारक निम्नलिखित हैं–

15.7.2 अः– क्षेत्रीय आर्थिक आधार (Regional Economic Base) :–

नगरों के उद्भव एवं विकास पर क्षेत्रीय आर्थिक आधार का विशेष प्रभाव होता है। किसी भी नगर का विकास उसके समीपवर्ती क्षेत्रों के संसाधन की सम्पन्नता एवं उसके दोहन पर निर्भर करता है क्योंकि समीपी क्षेत्र ही नगरों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते हैं। किसी भी नगर में लोग प्राथमिक कार्यों में संलग्न न होकर द्वितीयक आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होते हैं। इन द्वितीयक कार्यों के लिए प्राथमिक संसाधनों एवं उससे प्राप्त संसाधनों की आवश्यकता होती है। इनकी पूर्ति के लिए नगर के समीपी क्षेत्र सदैव मुख्य भूमिका निभाते हैं। नगर इन्हीं क्षेत्रों से नगरों के खाद्यान्न, उद्योगों के लिए कच्चा माल, सब्जी, दूध आदि वस्तुओं की पूर्ति होती है तथा इसके बदले नगर आस–पास के लोगों को विभिन्न नगरीय सेवाएं प्रदान करता है। इस प्रकार नगर और उसके प्रभाव क्षेत्र में अन्योन्यश्रित सम्बन्ध होता है। प्रभाव क्षेत्र की आर्थिक समृद्धि का नगर के विकास एवं कार्यों पर स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है जो नगर जितना बड़ा होता है उसका आर्थिक आधार उतना ही सशक्त एवं सुदृढ़ होता है।

15.7.2 बः– प्रशासनिक एवं राजनीतिक अनिवार्यता (Administrative and Political Exigenecies) :–

प्रशासनिक एवं राजनीतिक अनिवार्यता नगरों के उद्भव एवं विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक माना जाता है। इन्हीं अनिवार्यताओं के कारण अनेक नगरों का विकास हुआ है। किसी देश में प्रशासनिक एवं राजनीतिक कारणों से यदि कहीं पर किसी प्रतिष्ठान की स्थापना होने पर स्वतः ही वहां पर परिवहन, बाजार, वाणिज्य, उद्योग, सुरक्षा आदि विभिन्न प्रकार की नगरीय सेवाओं का केन्द्रण हो जाता है और धीरे–धीरे वह नगरीकृत हो जाता है। एक उदाहरण के द्वारा इस तथ्य को समझा जा सकता है– मान लिया कि उत्तर प्रदेश जो कि भारत का एक विशाल राज्य है। यदि इसके चार भाग अथवा चार राज्य का निर्माण कर दिया जाये तो इन राज्यों के लिए राजधानी क्षेत्र का चयन करना होगा। परिणाम यह होगा कि उस क्षेत्र का नगरीय विकास स्वतः ही हो जायेगा। एक कस्बा भी प्रान्तीय या राष्ट्रीय राजधानी का दर्जा प्राप्त कर तीव्र गति से विकास करता है। आज से 12 वर्ष पूर्व उत्तर प्रदेश में एक नये जनपद (अमेठी) का निर्माण किया गया जिसका प्रमुख प्रशासनिक कार्य इस जनपद के छोटे से कस्बे गौरीगंज को दिया गया। परिणाम यह हुआ कि अल्प समय में ही गौरीगंज का नगरीकरण वृहत स्तर पर हुआ। इस प्रकार राजनीतिक निर्णय एवं नीतियां नगर की वृद्धि अथवा ह्रास के प्रमुख कारण हो सकते हैं।

15.7.2 सः– तकनीकी विकास (Technological Development**)** :–

नगरों के उद्‌भव एवं विकास में तकनीकी विकास का प्रभाव पड़ता है, जो नगर तकनीकी रूप से जितना अधिक सम्पन्न होगा उसका नगरीय विकास भी उसी प्रकार तीव्र गति से होगा। मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही मानव के तकनीकी विकास के प्रमाण मिलते हैं। खुरपी, तीर–कमान, भाला, लोहे के हल, पहियेदार गाड़ी, वाष्पचालित इंजन, विद्युत, वायुयान, कम्प्यूटर आदि समय–समय पर नगरों के उत्थान एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यूरोप महाद्वीप के नगरीकरण के विकास में औद्योगिक क्रान्ति की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। विश्व के अनेक नगर ऐसे हैं जो अपने तकनीकी विकास के कारण विकास के चरम को प्राप्त किये हैं जैसे बंगलुरू को आईटी सिटी, नोयडा को मोबाइल सिटी के नाम से जाना जाता है।

15.7.2 दः– कार्यात्मक आधार (Functional base**)** :–

नगरीकरण के विकास में नगरों के कार्यात्मक आधार का विशेष महत्व होता है। प्रत्येक नगर में कुछ–न–कुछ आधारभूत कार्यों का सम्पादन होता है जो नगरीय विकास एवं नगरीकरण को आधार प्रदान करता है जैसे– वस्तु निर्माण उद्योग, (लघु, मध्यम एवं वृहत्) एवं परिवहन नगरों के विकास के महत्वपूर्ण कार्य हैं। इसी प्रकार नगर संचालन के लिए आवश्यक कार्य यथा–वाणिज्य, प्रशासन, स्वास्थ्य, चिकित्सा, शिक्षा, मनोरंजन, निर्माण, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कार्य नगरीय विकास को प्रभावित करते हैं। नगर का कार्यात्मक आधार उसके द्वारा प्रदत्त सेवाओं के स्तर यातायात, संचार, अभिगम्यता से प्रभावित होता है। परिवहन वह माध्यम है जो नगरों को विभिन्न रूपों में सहायता प्रदान करता है। परिवहन में जो समय एवं व्यय लगता है उसी से नगरों की आर्थिक दूरी का निर्धारण होता है, जिससे नगरों में रहने वाले लोगों का गमनागमन प्रभावित होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि नगर में प्राप्त होने वाली कार्यात्मक सुविधाएं उच्च होने की दशा में नगरीकरण में आशातीत वृद्धि होती है।

15.7.2 यः– जनांकिकी एवं सामाजिक विकास स्तर (Stage of Demographic and Social Development**)** :–

जनांकिकी एवं सामाजिक विकास का स्तर नगरीकरण को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं क्योंकि ये ऐसे मूल आधार हैं जिस पर नगरीकरण का अस्तित्व टिका हुआ है। जनांकिकी से नगरों को जनबल प्राप्त होता है और सामाजिक विकास विभिन्न प्रदेशों से लोगों को आकर्षित करता है। निकट के वर्षों में देखा गया है कि विकासशील देशों में विभिन्न प्रकार की चिकित्सकीय सुविधाओं के विकास के कारण जन्मदर में वृद्धि पायी गयी है जबकि मृत्युदर में कमी देखी गयी है। परिणाम स्वरूप जनसंख्या विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। इसी के परिणाम स्वरूप नगरीय जनसंख्या का केन्द्रण बढ़ रहा है और नगरीय विकास को प्रोत्साहन मिल रहा है। भारत इसका एक प्रमुख उदाहरण है। इसके सापेक्ष ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग निवास करता है। नगरीय क्षेत्रों में सामाजिक विकास के कारण एवं उच्च जीवन स्तर के कारण ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों की और लोगों का पलायन हो रहा है। उपरोक्त के अतिरिक्त विकसित देशों में जनसंख्या वृद्धि की गति अति निम्न है। यहां की नगरीय जनसंख्या नगरीय कोलाहल, भीड़–भाड़, विकलता, प्रदूषण आदि के खतरों से बचने के लिए नगरों से गाँवों की और पलायन कर रही है।

इस प्रकार नगर के विकास मूलक बहुधन्धी कारक यथा–राजसत्ता, प्रशासन, धर्मसत्ता, व्यापार, उद्योग, सुरक्षा, संगठन, विकास, कल्याण आदि के नगरों में केन्द्रण के कारण नगरीय क्षेत्रों का लगातार विकास हो रहा है। नगरों में स्थापित उद्योग, रोजगार, पूँजी, धन, उच्च विनिमय सेवाएं, तकनीकी विकास आदि के कारण नगरीकरण का निरन्तर विकास हो रहा है।

15.8 नगर विकास की अवस्थाएं (Stages of Evolution of Cities)

इस संसार के सभी तत्वों (प्राकृतिक एवं मानव कृत) में क्रमिक विकास होता है। जिस प्रकार मानव जीवन शैशवावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था, एवं वृद्धास्था के क्रम से गुजरता है। ठीक इसी प्रकार नगरों के भी विकास की अवस्थाएं होती हैं। इस सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों ने अपने अनुसार नगरों की अवस्थाओं का निर्धारण किया है जैसे–

15.8 अः– पैट्रिक गेड्स :– इन्होंने नगरों की स्थिति एवं कार्यों, आर्थिक एवं ऐतिहासिक सम्बन्धों के आधार पर नगरों की अवस्थाओं का निर्धारण किया है–

अ– आदि युगीन प्रविधि (Eotechnic) आदिम अवस्था लगभग (1000 से 1800 ई0)

ब– पुरायुगीन प्रविधि (Paleotechnic) इसमें प्राचीन अर्थव्यवस्था को रखा गया है (1800 से 1900 ई0)

स– नूतन प्रविधि (Neo-Technic) इसमें नवीन मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था देखी जाती है (1900 ई0 के बाद)।

15.8 ब– लेविस मम्फोर्ड :– प्रसिद्ध अमेरिकी समाजशास्त्री मम्फोर्ड ने विभिन्न नगरों के कार्यों एवं उनके ऐतिहासिक सूक्ष्म तत्वों के अध्ययन के आधार नगर विकास की निम्नलिखित 6 अवस्थाएं बताई हैं–

अ– इओपोलिस (Eopolis)
ब– पोलिस (Polise)
स– मेट्रोपोलिस (Metropolis)
द– मेगालोपोलिस (Megalopolis)
य– टायरेनोपोलिस (Tyranopolis)
र– नेक्रोपोलिस (Nekropolis)

15.8 स– ग्रिफिथ टेलर :– ग्रिफिथ टेलर ने अपने नगरीय अध्ययनों के उपरान्त नगर विकास की निम्नलिखित सात अवस्थाएं बताई हैं–

अ– पूर्व–शैशवावस्था (Sub-Infantile Stage)
ब– शैशवावस्था (Infantile Stage)
स– बाल्यावस्था (Juvenil Stage)
द– किशोरावस्था (Adolescent Stage)
य– प्रौढ़ावस्था (Meture Stage)
र– उत्तर प्रौढ़ावस्था (Late Meture Stage)
ल– वृद्धावस्था (Semile Stage)

15.9 नगरों का वर्गीकरण (Classifications of Towns)

नगर मानवीय सभ्यता के संकेतक रहे हैं। नगरों का आकार, प्रकार, स्वरूप, निर्माण सामग्री आदि के आधार पर नगरों को पहचाना जाता है। नगर मानव विकास के प्रत्येक चरण में बदलते रहे हैं क्योंकि मनुष्य अपने विकास के चरणों में निरन्तर नवीन खोजों के माध्यम से नगर निर्माण सामग्रियों में परिवर्तन करता रहा है। इसके साथ–साथ नगरों के आधारी तत्वों में भी परिवर्तन होते रहे हैं। जैसे औद्योगिक नगरों का वास्तविक विकास औद्योगिक क्रान्ति के उपरान्त ही हो सका है। इस प्रकार नगरों का वर्गीकरण करना एक कठिन कार्य है लेकिन विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधारों पर नगरों का वर्गीकरण किया है। नगरों का विभिन्न आधारों पर वर्गीकरण निम्नलिखित है–

15.9.1– नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण (Functional Classification of Towns) :-

विश्व में अनेक प्रकार के लघु, मध्यम एवं वृहत नगर पाये जाते हैं जो अपनी विशेषताओं के कारण जाने जाते हैं। किसी भी नगर की उत्पत्ति एवं विकास तथा उसकी विशेषताओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस नगर की कार्यात्मक विशेषता कैसी है तथा किस प्रकार के आर्थिक कार्य के कारण उस नगर का विकास हुआ है। **डिकिन्सन** के अनुसार कार्य नगर–जीवन की चालक शक्ति है जो एक बड़े पैमाने पर उसके विकास और आकारिकी को प्रभावित करते हैं।

मार्क जैफर्सन ने बताया कि नगरों का उद्भव एवं विकास ग्रामीण क्षेत्रों एवं लघु आकार के नगरों की सेवा एवं उनको सुविधा प्रदान करने के लिए होता है। कुछ नगर अपनी कार्यात्मक प्रधानता के नाते जाने जाते हैं। उन नगरों में कार्यों की प्रधानता के आधार कारण विशेषीकरण हो जाता है जैसे जमशेदपुर को इस्पात नगर के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार मानचेस्टर उद्योग के लिए जाना जाता है। भारत देश की राजधानी दिल्ली है जिसका मुख्य कार्य प्रशासन है लेकिन इसके साथ यहां पर शैक्षणिक, व्यापारिक, औद्योगिक, चिकित्सा, परिवहन, औद्योगिक केन्द्र हैं जो समीपवर्ती क्षेत्र के लिए प्रमुख बाजार की भूमिका का निर्वहन करते हैं। कार्यों की प्रधानता के आधार पर विभिन्न विद्वानों ने नगरों को वर्गीकृत करने का कार्य किये हैं। कुछ प्रमुख वर्गीकरण निम्नलिखित हैं–

15.9.1 अ– मार्शल अरुसो का वर्गीकरणः–

मार्शल अरुसो ने कार्यो की प्रधानता के अधार पर नगरों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। आपने इस आधार पर कस्बों एवं नगरों को 6 वृहत् वर्गों एवं 28 उपवर्गों में वर्गीकृत किया है तथा प्रशासन, सुरक्षा, संस्कृति, उत्पादन, मनोरंजन तथा आवागमन को इस वर्गीकरण का आधार बनाया है जो कि निम्नलिखित है–

अ– प्रशासन (Administration)

- राजधानियां

- प्रशासनिक केन्द्र वाले नगर एवं कस्बे

ब– सुरक्षा (Defence**)**

- किले या गढ़
- सैनिक कस्बे
- सामुद्रिक सैनिक कस्बे

स– सांस्कृतिक आधार (Cultural base**)**

- गिरिजाघर वाले कस्बे
- विश्वविद्यालय वाले कस्बे
- कला केन्द्र
- तीर्थ यात्रा विश्राम केन्द्र

द– उत्पादन (Production**)**

- औद्योगिक नगर
- व्यावसायिक नगर

य– मनोरंजन (Recreation**)**

- स्वास्थ्य केन्द्र
- भ्रमण केन्द्र
- अवकाश केन्द्र

र– संचार एवं आदान प्रदान (Communication**)**

- एकल सम्बन्धी :– इसके अन्तर्गत खनिज, मछली पकड़ने के केन्द्र, वनों के निकटवर्ती केन्द्र बिन्दु, गोदाम वाले केन्द्र सम्मिलित किए गये हैं।
- वितरण सम्बन्धी :– इसमें निर्यात केन्द्र, आयात केन्द्र एवं पूर्ति वाले नगर सम्मिलित हैं।
- स्थानान्तरण सम्बन्धी :–इसके अन्तर्गत बाजार, प्रपात नगर, समान तोड़क नगर, पुल वाले नगर, ज्वार सीमान्त वाले नगर, पुल वाले नगर, नौ सीमान्त वाले नगर सम्मिलित हैं।

15.9.1 ब– हैरिस का वर्गीकरण

सी0डी0 हैरिस ने अमेरिका के 984 नगरों की व्यावसायिक जनसंख्या का अध्ययन किया एवं प्राप्त आँकड़ों के आधार पर नगरों का कार्यात्मक वर्गीकरण प्रस्तुत किया। हैरिस का वर्गीकरण निम्नलिखित है–

01– विनिर्माण केन्द्र (Manufacturing Centers**) :–**

हैरिस ने इसके लिए अंग्रेजी के 'M' अक्षर का प्रयोग किया है। विनिर्माण का स्थान प्राप्त करने के लिए नगर की जनसंख्या का 60% जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कारखानों में कार्य करना होना चाहिए। इस प्रकार के नगर सं0रा0 अमेरिका के औद्योगिक पेटी में पाये जाते हैं। इस पेटी का विस्तार ओहियो नदी के उत्तर में तथा पीडमाण्ट पठार तक दक्षिण में एवं अप्लेशियन घाटी तक विस्तृत हैं। इस प्रकार के प्रदेशों में फिलाडेल्फिया, पिट्सवर्ग, ओहियो, डेट्रायट आदि हैं। भारत में इस प्रकार के नगर भिलाई, दुर्ग, मोदीनगर, जमशेदपुर आदि हैं।

02– फुटकर व्यापार केन्द्र (Retail Trade Center**) :-**

इस प्रकार के केन्द्र के लिए हैरिस ने 'R' शब्द का प्रयोग किया है। इस प्रकार के नगर में जनसंख्या का विनिर्माण उद्योग, थोक एवं फुटकर व्यापार के कुल रोजगार का कम से कम 50% तथा थोक व्यापार का कम से कम 2.2 गुना फुटकर व्यापार में लगा होना चाहिए। इसमें विचिया, तुलसा, श्रेवेपोर्ट आदि प्रमुख नगर केन्द्र हैं।

03– थोक व्यापार वाले केन्द्र (Whole Sale Trade Center**) :-**

हैरिस ने इस प्रकार के केन्द्र के लिए अंग्रेजी के 'W' अक्षर का प्रयोग किया है। इसमें उपर्युक्त के कुल रोजगार का कम से कम 25% तथा फुटकर व्यापार का कम सेकम 45% थोक व्यापार में लगा होना चाहिए। इस श्रेणी के प्रमुख नगर सेन फ्रांसिस्को, सिएटल, साल्टलेक आदि हैं।

04– विनिमय केन्द्र (Diversified Centers**) :–**

इसके लिए हैरिस ने अंग्रेजी के 'D' अक्षर का प्रयोग किया है। यहां केन्द्र में विनिर्माण, थोक और फुटकर व्यापार के कुल रोजगार का क्रमशः 60, 20 और 50% भाग कम से कम इन नगरों में पाया जाता है। इस प्रकार के नगरों में बोस्टन, न्यूयार्क, बाल्टिमोर, बर्मिंघम, शिकागो, लॉस एन्जिल्स आदि हैं। भारत में इस प्रकार के नगर के उदाहरण कानपुर, दिल्ली, इन्दौर, आगरा आदि हैं।

05– यातायात केन्द्र (Transport Centers**)** :–

इस प्रकार के नगर के लिए हैरिस ने अंग्रेजी के 'T' अक्षर का प्रयोग किया है। इस वर्ग में वे नगर आते हैं जिसमें रहने वाली जनसंख्या का 11% जनसंख्या इससे सम्बन्धित होती है। प्रायः ये नगर रेलमार्गों एवं बंदरगाहों पर स्थित पाये जाते हैं। न्यूआर्लियंस, गैलवेस्टन, कम्बरलैण्ड, सवाना आदि इस श्रेणी के नगर के प्रमुख उदाहरण हैं।

06– खनन केन्द्र (Mining Centers**)** :–

इस प्रकार के नगर के लिए अंग्रेजी के 'S' अक्षर का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के नगरों की जनसंख्या लगभग 25000 होती है जिसकी 15% से भी अधिक जनसंख्या खनन कार्य में संलग्न होती है। इस प्रकार के नगरीय केन्द्रों में खनन एवं खनन से सम्बन्धित कार्यों की प्रधानता होती है।

07– विश्वविद्यालय नगर (University Towns**) :–**

इसके लिए हैरिस ने अंग्रेजी के 'E' अक्षर का प्रयोग किया है। इस प्रकार के नगरों की कुल जनसंख्या का 25% भाग का नामांकन शिक्षण संस्थाओं में होता है। विश्व में अनेकों नगर ऐसे हैं जो अपनी शिक्षा के लिए उपलब्ध सुविधाओं के लिए जाने जाते हैं।

08– सैरगाह और निवृत्ति नगर (Resort And Retirement Cities**) :–**

हैरिस ने इस प्रकार के नगर के लिए अंगेजी के 'X' का प्रयोग किया है। इसका निर्धारण जनसंख्या से मिले आंकडों के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार के नगरों में स्वास्थ्य एवं मनोरंजन को ध्यान में रखकर लोगों का सम्बन्ध होता है। इस प्रकार के नगर में रहने वाले लोगों के लिए मनोरंजन एवं स्वास्थ्य के केन्द्र माने जाते हैं।

09– राजनीतिक एवं अन्य प्रकर के नगर (Political And Other Towns**)** :–

इस प्रकार के नगर के लिए अंग्रेजी के 'P' अक्षर का प्रयोग किया जाता है। इसमें राजधानी, छावनी, वित्तीय एवं व्यापारिक केन्द्र आदि सम्मिलित हैं। इसका भी निर्धारण सांख्यिकीय आधार पर नहीं किया गया है।

इस प्रकार हैरिस ने कार्यात्मक आधार पर नगरों का वर्गीकरण किया हैं। कुछ विद्वानों ने इस वर्गीकरण को महत्व प्रदान किया है जबकि कुछ विद्वानों ने इस वर्गीकरण को स्वीकार न करते हुए आलोचना की है। इनका वर्गीकरण भिन्न–भिन्न कार्यों के लिए अलग–अलग आधार मूल्य तथा आँकड़ों के विधिवत स्रोत की आलोचना के आधार बने। इनके वर्गीकरण में सार्वजनिक प्रशासन, वित्तीय और व्यावसायिक क्रियाकलापों में अन्तर करना एक दुरूह कार्य है।

15.9.1 स– एच0 जे0 नेल्सन का वर्गीकरण (H J Nelson Classification of Towns**) :-**

नेल्सन ने 1955 ई0 में एक नयी विधिके द्वारा अमेरिकी नगरों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इस विधि को नेल्सन की प्रामाणिक विचलन विधि (Standard Deviation Method or S.D. Method) के नाम से जाना जाता है। इसका मूल आधार पाउनेल द्वारा प्रयुक्त की गयी विधि थी। इसके अनुसार किसी नगर की विशिष्टीकरण की मात्रा की गणना उसकी कुल कार्यशील जनसंख्या में प्रत्येक कार्यात्मक वर्ग में लगी जनसंख्या के प्रतिशत को, उसी

कार्य के उस प्रदेश के सभी नगरों के माध्य एवं प्रामाणिक विचलन के सन्दर्भ में की गई। इस आधार पर उसने अमेरिकी नगरों को दस कार्यात्मक वर्गों में रखा।

नेल्सन ने 10000 व उससे अधिक जनसंख्या वाले 897 अमेरिकी नगरों को अध्ययन के लिए चुना। मानक विचलन विधि के आधार पर उन नगरों को 10 कार्यात्मक वर्गों में विभाजित किया तथा प्रत्येक नगर के लिए विशेष भिन्न–भिन्न संकेताक्षरों का प्रयोग किया–

i. विनिर्माण उद्योग (Manufacturing-MF) -Mf, Mf2, Mf3
ii. खुदरा व्यापार (Retail Trade- R) R, R2, R3
iii. व्यावसायिक सेवा (Proffessional Service – Pf) pf, Pf2, Pf3
iv. यातायात एवं संचार (TransportationAnd Communication- T) -T, T2, T3
v. व्यक्तिगत सेवा (Personal Service -Ps)- Ps, Ps2, Ps3
vi. सार्वजनिक प्रशासन (Public Administration - Pb) – Pb, Pb2, Pb3
vii. थोक व्यापार (Wholesale Trade - W) – W, W2, W3
viii. वित्त वीमा एवं स्थावर सम्पत्ति (Finance,InsuranceAnd Real Estate-F) -F, F2, F3
ix. खनन (Mining – Mi) -Mi, Mi2, Mi3
x. विभिन्नीकृत (DiversiFied - D)

नेल्सन की यह विधि नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण के लिए सर्वाधिक लोकप्रिय हुई। यह पद्धति पष्चिम के देशों के नगरों के लिए उपयुक्त है जहां पर प्रत्येक नगर में किसी न किसी एक काम का विशेषीकरण पाया जाता है। नेल्सन की विधि सरल व वैज्ञानिक होते हुए भी विश्व के सभी भागों के लिए उपयुक्त नहीं है। भारत जैसे विकासशील देशों जहां अधिकांश नगर बहुकार्मिक विशेषता वाले होते हैं, वहां पर यह विधि अधिक उपयोगी नहीं लगती है। यह विधि नगरों के मात्रात्मक विशेषता के आंकलन के स्थान पर उसकी गुणात्मक विशेषता की धारणा में अधिक उपयुक्त लगती है। इस विधि में जनसंख्या की मात्रा को अधिक महत्व नहीं दिया गया है।

15.9.1 द– अलेक्जेंडर ने नगरों को कार्यात्मक आधार पर दो प्रमुख प्रकारों में वर्गीकृत किया है–

अ– मौलिक कार्य के आधार पर :–

मौलिक कार्य वे कार्य हैं जो जिनसे नगर को बाहर से आय प्राप्त होती है। यही वे आधार हैं जो नगरों के जीवन एवं अस्तित्व को आधार प्रदान करते हैं। इसमें उन क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनसे नगर को बाहरी क्षेत्रों से आय प्राप्त होती है। इन क्रियाओं को प्राथमिक, नगर निर्माणक, संचालन या संचालक उदर पोषण आदि नामों से जाना जाता है।

ब– गैर मौलिक कार्य के आधार पर :–

नगर के निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सम्पादित की जाने वाली क्रियाओं को गैर मौलिक क्रियाएं कहा जाता है। इसमें उन वस्तुओं एवं सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका उत्पादन नगर के भीतर होता है तथा इनका विक्रय भी नगर क्षेत्र के भीतर ही केवल नगरवासियों में होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में नगर दो प्रकार के होते हैं एक तो ऐसे जो किसी विशेष कार्य के लिए जाने जाते हैं। जैसे उद्योग धन्धे, व्यापार, परिवहन, बन्दरगाह, प्रशासन, उत्खनन, शिक्षा, सुरक्षा, धर्म, मनोरंजन, स्वास्थ्य आदि विशिष्ट कार्यों के लिए नगरों को जाना जाता है जबकि दूसरे ऐसे नगर होते हैं जहां पर एक प्रकार की कार्यात्मक विशेषता न होकर कई प्रकार के कार्य प्रधान होते हैं अर्थात् एक ही नगर में अनेक धन्धों की उपलब्धता पायी जाती है।

विशिष्ट कार्य एवं व्यवसाय की प्रमुखता के आधार पर नगरों को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है जैसे– प्रशासनिक नगर, औद्योगिक नगर, व्यापारिक नगर, परिवहन नगर, मण्डी या बाजार नगर, सुरक्षा नगर

आदि हैं। इनका संक्षिप्त विश्लेषण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है–

01– प्रशासनिक नगर (Administrative City**) :-**

प्रशासनिक नगर ऐसे नगर होते हैं जहां से उस देश जिसका कि वह नगर है, के सम्पूर्ण प्रशासनिक कार्य सम्पादित किए जाते हैं। अर्थात् ये नगर उस देश के समस्त प्रशासनिक एवं राजनीतिक गतिविधियों के केन्द्र होते हैं। इस नगर में प्रशासनिक कार्यालय, भवन आदि स्थित होते हैं। इस सन्दर्भ में एक उदाहरण उल्लेखनीय है। दिल्ली भारत का पूर्ण प्रशासनिक महानगर है। यहां पर संसद भवन, राष्ट्रपति भवन, प्रधानमन्त्री कार्यालय, मन्त्रियों एवं अधिकारियों के निवास, विभिन्न देशों के दूतावास, विभिन्न विभागों, के कार्यालय एवं अनेक प्रकार के भवन–उद्योग भवन, कषि भवन, राष्ट्रीय संग्रहालय, चुनाव आयोग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग आदि स्थित हैं। भारत जैसे विशाल देश में प्रशासन एवं अन्य कार्य का सम्पादन काफी कठिन कार्य है जिसके सफल संचालन के लिए एक प्रमुख प्रशासनिक नगर होना आवश्यक है। इसके अलावा भारत के विभिन्न राज्यों के अलग–अलग प्रशासनिक भवनों की स्थापना की गयी है। दिल्ली के अलावा कोलकाता, मुम्बई, चेन्नई, लखनऊ आदि नगर हैं।

प्राचीन काल में प्रशासनिक नगर किले या गढ़ हुआ करते थे जिसके चारों और चारदीवारियां एवं गहरी खाइयां हुआ करती थीं। जैसे उदयपुर, चित्तौड़, झांसी आदि। वर्तमान विश्व के अनेक प्रशासनिक नगरों के उदाहरण वाशिंगटन, मास्को, बीजिंग, जेनेवा आदि नगर हैं। चीन का प्रशासनिक नगर बीजिंग जो कि चीन की राजधानी है। इस प्रकार के नगर का प्रमुख उदाहरण है। यह चीन का प्रमुख प्रशासनिक नगर है। इस नगर में राजकीय कार्यालय, सार्वजनिक भवन, राजमहल, राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री एवं मन्त्रियों के आवास यहां पर बने हुए हैं। इस नगर में प्रशासनिक भवनों के साथ अन्य विभिन्न प्रकार के सरकारी एवं गैर सरकारी प्रतिष्ठान यहां पर स्थित हैं, चित्र–15.6।

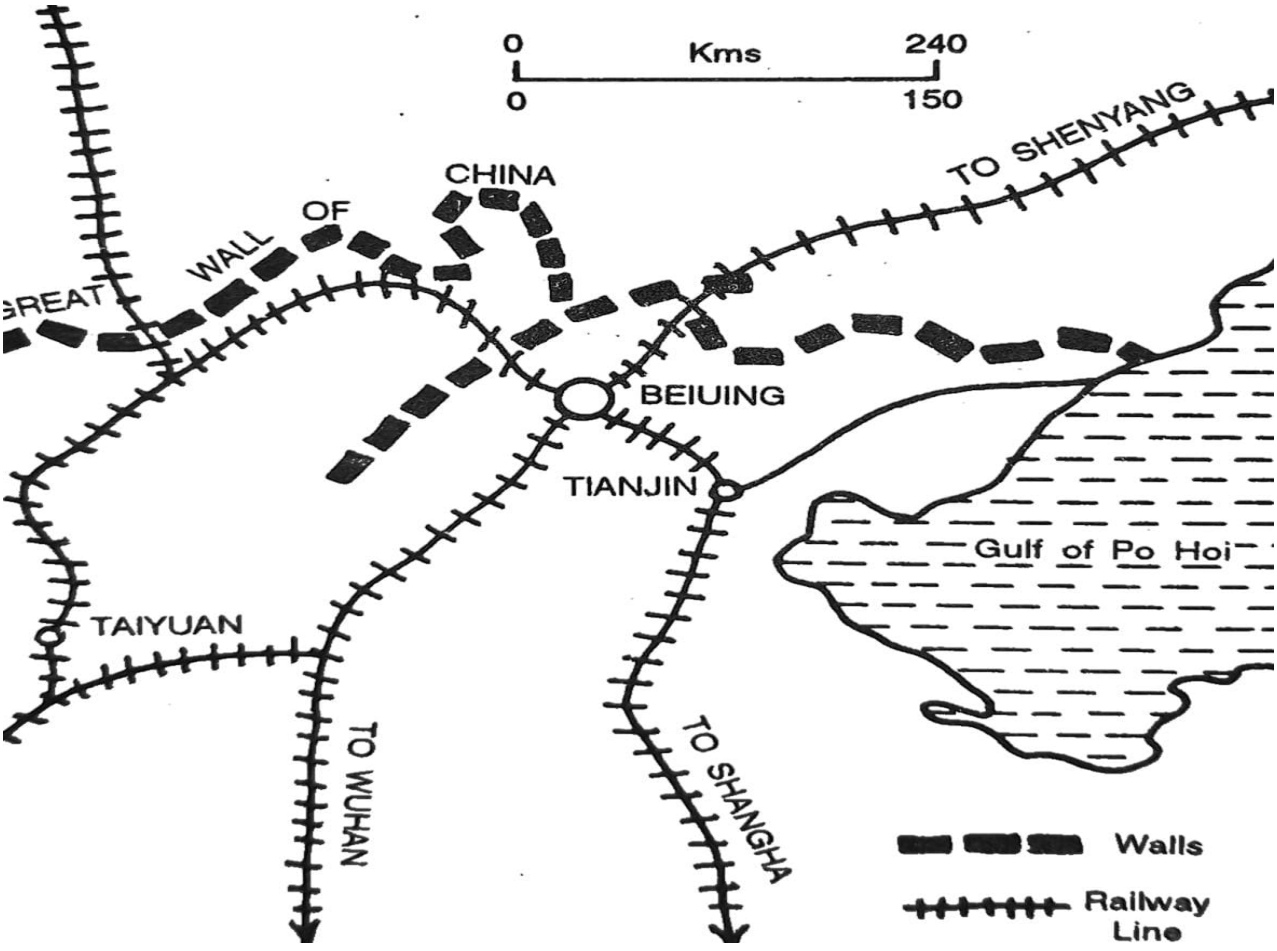

चित्र सं–15.6

चीन का प्रशासनिक नगर बीजिंग का मार्ग संगम नगर[05]

02– औद्योगिक नगर (Industrial City**)** :–

किसी विशेष प्रकार के औद्योगिक स्थापना के कारण बसे हुए नगर को औद्योगिक नगर कहा जाता है। यहां विभिन्न स्रोतों से प्राप्त कच्चे माल का संगह कर उन्हें उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। अथवा कभी–कभी किसी विशेष प्रकार के कच्चे माल के समीप ही नगर की स्थापना हो जाती है तो भी उसे औद्योगिक नगर की संज्ञा दी जाती है। धीरे–धीरे इन प्रदेशों में अनेक सह उद्योगों, पूँजी, श्रम, जलापूर्ति, बैंकिग आदि सुविधाओं की व्यवस्था हो जाती है। इस प्रकार लोगों के यहां आगमन से एक जनसंकुल क्षेत्र का निर्माण हो जाता है और विभिन्न प्रकार की नगरीय सेवाओं का केन्द्रण हो जाता है। जमशेदपुर, भद्रावती, भिलाई, बरौनी, कोलकाता, मुम्बई, बर्मिंघम, ग्लास्गो, पिट्सवर्ग, शिकागो, मैनचेस्टर आदि इस प्रकार के नगरों के उदाहरण हैं। उत्तर प्रदेश में कानपुर एक महत्वपूर्ण औद्योगिक नगर है चित्र सं–15.7।

चित्र सं–15.7

औद्योगिक एवं व्यापारिक नगर–कानपुर[05]

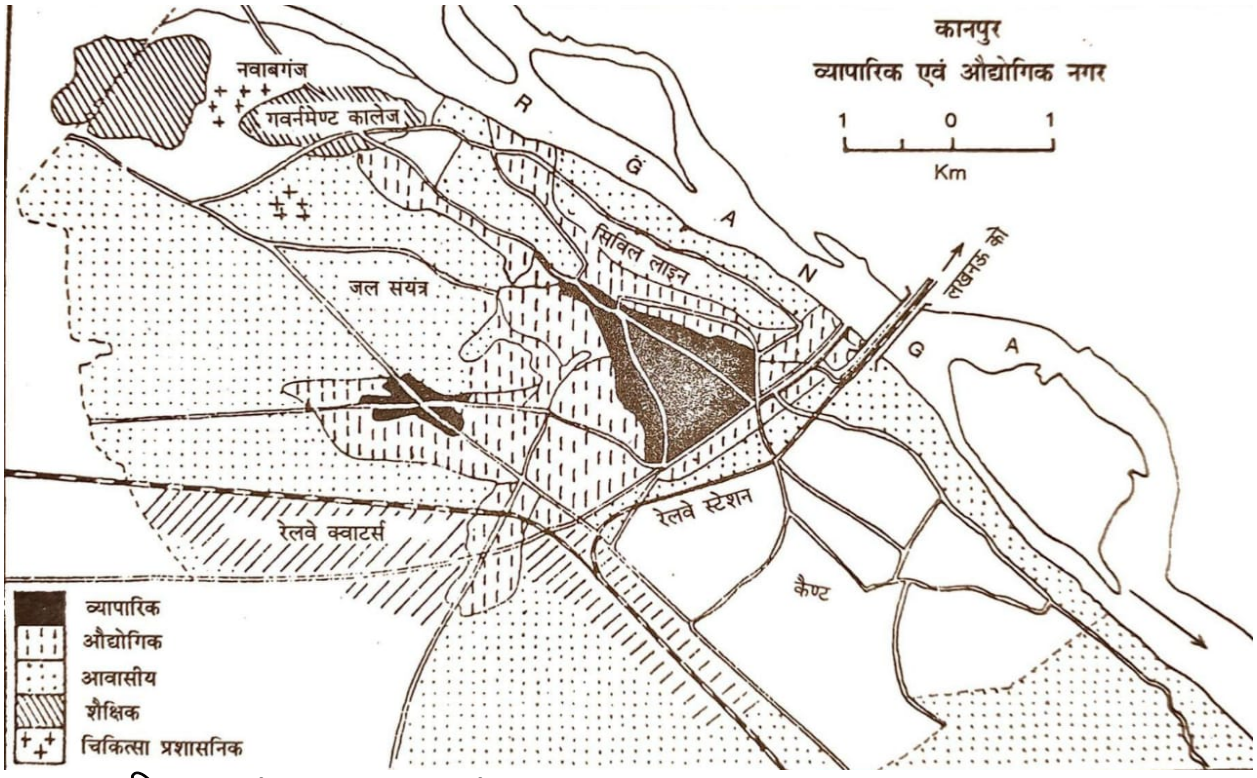

03– व्यापारिक नगर (Commercial City**)** :–

इस वर्ग में ऐसे नगरों को सम्मिलित किया जाता है जिसके अन्तर्गत वस्तुओं का क्रय–विक्रय, विनिमय और संग्रह आदि के कार्य किये जाते हैं। इस प्रकार के नगर का प्रमुख उदाहरण लंदन का स्टॉक एक्सचेंज, न्यूयार्क का वाल स्ट्रीट, भारत में मुम्बई प्रमुख व्यापारिक एवं वित्तीय केन्द्र हैं। इस दृष्टिकोंण से कानपुर एक महत्वपूर्ण नगर है। ऐसे नगरों का बसाव कुछ विशेष स्थलों पर ही होता है जैसे– विभिन्न प्रकार के उत्पादन करने वाले नगरों के मिलन बिन्दु पर, विभिन्न प्रकार के धरातलीय स्वरूपों के संगम बिन्दुओं पर, परिवहन प्रणालियों के संगम पर, बन्दरगाहों पर आदि। इस प्रकार के नगरों के प्रमुख उदाहरण हैं कांगो, सहारा का कुछ भाग, खारतूम नगर, शिकागो, मुम्बई आदि।

04– परिवहन नगर (Transport City**)** :–

ये ऐसे नगर हैं जो परिवहन मार्गों के मिलन बिन्दुओं पर बसे होते हैं। इस प्रकार के नगरों के बसने में परिवहन मार्गों में अवरोध मुख्य भूमिका निभाते हैं क्योंकि इस अवरोध के बाद परिवहन की विधा परिवर्तित हो जाती है जैसे रेलमार्ग टर्मिनस, जैसे रेलमार्गों के समाप्त हो जाने पर सड़क मार्ग का प्रारम्भ हो जाता है।इस प्रकार के प्रमुख

नगर ऋषिकेश, काठगोदाम, जम्मू, टनकपुर आदि। कुल मिलाकर समवेत रूप में कह सकते हैं कि ऐसे नगर जो परिवहन सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करते हैं या परिवहन की सुविधा के केन्द्र पर अवस्थित होते हैं इस वर्ग में आते हैं। मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, लंदन, शंघाई इस प्रकार के प्रमुख उदाहरण हैं।

05– खनन उत्पादक नगर (Mining Town):-

इस प्रकार के नगर खनन केन्द्रों के समीप अवस्थित होते हैं। इन नगरों से प्राथमिक आर्थिक क्रियाओं का कार्य सम्पादित होता है। इस प्रकार के नगर में जनसंख्या प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में लगी रहती है। इसमे खनिज उत्पादन, तेल उत्पादन इसी प्रकार के नगरो में सम्पन्न होता है। इन नगरों में खनिज कार्य में लगे लोगों द्वारा खनिज व्यवसाय कार्यालय की भरमार होती थी। इस प्रकार के नगरों के उदाहरण विश्व में अनेक देशों में पाये जाते हैं। बिहार में कोडरमा (Mica Town), झरिया, गिरिडीह (Coal Towns), तथा कर्नाटक में कोलार (Gold Town) के नाम से जाना जाता है। दक्षिण अफ्रीका का जोहान्सवर्ग, आस्ट्रेलिया के कालगुर्ली–कुलगार्डी, स्वर्ण नगर के रूप में, संयुक्त राज्य अमेरिका में स्क्रैन्टन, एन्थ्रेसाइट कोयला के लिए तथा कनाडा में टसेंसबरी निकिल के लिए प्रसिद्ध हैं। खनिजों के समाप्त हो जाने और जीवन के अन्य आधार न रहने पर ऐसे शहरों को प्रेत नगर कहा जाता है।

06– मण्डी या बाजार नगर (Mandis or market Towns) :–

मण्डी नगर ऐसे नगर होते हैं जहां पर उस परिक्षेत्र में आने वाले सेवा क्षेत्रों को विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान की जाती है तथा आस–पास के क्षेत्रों से उत्पादित वस्तुओं का संग्रहण भी यहां पर जमा होता है। कह सकते हैं– कृषि एवं चरागाही क्षेत्रों के विभिन्न संसाधनों के संचयन एवं वितरण केन्द्र के रूप में बाजारों या मण्डियों का विकास होता है। उ0प्र0 में हापुड़, विहार का विहार शरीफ, इंग्लैण्ड का नार्विच, घाना तथा कुमासी ऐसे ही नगर हैं। इन्हीं मण्डियों के कारण बाद में यहां लोगों का बसाव बढ़ता जाता है जिससे एक बड़े नगर का विकास हो जाता है।

07– सुरक्षा केन्द्र (Defence Centers):-

विश्व में अनेक नगरों का विकास सुरक्षा के दृष्टिकोंण से किया गया। मध्यकाल में दुर्ग नगर इसी के उदाहरण हैं। इन नगरों की स्थापना सुरक्षा एवं प्रशासनिक कारणों से की गयी थी। वर्तमान में कैन्टोनमेन्ट क्षेत्र, नौ सैनिक केन्द्र समुद्री किनारों पर विकसित किए गये हैं। उत्तरी सागर तट के सहारे स्थित कुवस, हैबन, इंग्लैण्ड के तट के सहारे स्थित पोर्ट्स माउथ इसी प्रकार के नगर के उदाहरण हैं।

08– सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षिक नगर (Cultura, Religious And Educational Centers)

प्रसिद्ध विद्वान कारपेण्टर ने इन सांस्कृतिक नगरों को पावन नगर (Shrine City) नाम दिया है। इन नगरों के निर्माण का आधार धार्मिक, शैक्षिक और कलात्मक विशेषताओं के कारण हुआ है। इस प्रकार के नगरों की जनसंख्या में कमी एवं अधिकता प्रायः देखी जाती है जैसे कुम्भ के दौरान प्रयागराज, हरिद्वार, उज्जैन एवं नासिक, हज के समय मक्का, क्रिसमस के समय येरूस्लम, रामनवमी के समय अयोध्या, शिवरात्रि के अवसर पर काशी (वाराणसी), कृष्ण जन्माष्टमी के समय मथुरा के समय इन नगरों की जनसंख्या में श्रद्धालुओं की अप्रत्याशित वृद्धि हो जाती है। इस प्रकार के नगर धार्मिक नगर की श्रेणी में आते हैं। भारत का एक विशेष प्रतिष्ठित नगर वाराणसी इस प्रकार के नगर का प्रमुख उदाहरण माना जाता है। इसके अलावा ब्रिटेन के ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज, सं0रा0 अमेरिका का बर्कले, स्वीडन का लुण्ड, नीदरलैण्ड का लीडेन विश्व के प्रमुख शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक नगर हैं।

09– विभिन्नीकृत नगर (Diversified Towns):-

इस वर्ग में वे नगर आते हैं जो किसी एक प्रकार की कार्यात्मक विशेषता के अतिरिक्त अनेक विशेषताओं के लिए जाने जाते हैं। इसमें मिले–जुले कार्य सम्पादित किए जाते हैं। इसमें तृतीय विश्व के अनेक नगरों में इस प्रकार के शहर पाये जाते हैं।

15.9.2– जनसंख्या के आधार पर नगरों का वर्गीकरण :–

जनसंख्या किसी नगर की आधारी तत्व है। बिना इस तत्व के किसी भी नगर की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। नगरों में जनसंख्या का केन्द्रीकरण के लिए अनेक कारण उत्तरदायी होते हैं। इन कारणों के माध्यम से

जनसंख्या का केन्द्रण होते रहने से नगरों का निर्माण हो जाता है। किसी प्रदेश में जनसंख्या का जमाव अधिक तो किसी प्रदेश में जनसंख्या का जमाव कम होता है। जनसंख्या के आधार पर नगरों को निम्नलिखित प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है–

01– पुरवे या नगले और अनुमार्गी बाजार :– सं0रा0अ0, कनाडा, अर्जेंटीना आदि देशों में इस प्रकार के जनसमूह पाये जाते हैं। इनमें दुकान, चर्च, स्कूल एंव छोटे अस्पताल तथा पोस्ट ऑफिस पाये जाते हैं।

02– नगरीय गाँव :– ये पुरवे से बड़े सेवा केन्द्र होते हैं। इन गावों की जनसंख्या अलग–अलग देशों में भिन्न–भिन्न पायी जाती है।

03– कस्बे :– प्रसिद्ध विद्वान सी0 जे0 गैल्पिन ने ग्रामीण एवं नगरीय बस्तियों के लिए कस्बा (Towun) शब्द का प्रयोग किया है। इस प्रकार के जनबसाव केन्द्र में बैंक, कोल्ड स्टोरेज, बस अड्डा, हाई स्कूल एवं माध्यमिक तक के विद्यालय पाये जाते हैं। भारत में कस्बों की जनसंख्या 1000 से 10000 तक मानी गयी है।

04– नगर :– यह जनसंख्या का केन्द्र कस्बे से अधिक विस्तृत एवं बड़ा नगर होता है। इसमें उच्च स्तर की सेवाएं पायी जाती हैं। **डिकिंशन** ने इस प्रकार के जन संकुल को कस्बों का राजा कहा है। सिंह ने नगरों को जनसंख्या के आधार पर तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया है जो क्रमशः छोटा नगर, मध्यम आकार के नगर, बड़े नगर हैं।

05– महानगर :– मरफी ने इस प्रकार के नगर को प्रादेशिक राजधानी स्तर का नगर बताया है। **लेविस मम्फोर्ड** ने 'Cultural of Cities' में महानगर को नगर विकास की तृतीय अवस्था माना है। सं0रा0अ0 में इस प्रकार के नगर की न्यूनतम जनसंख्या 50000 मानी है।

06– दस लाखी नगर :– ऐसे नगर जिनकी जनसंख्या 1,000,000 से अधिक पायी जाती है, उसे दस लाखी नगर की संज्ञा दी जाती है। विश्व के बड़े देशों में इस प्रकार के नगरों की उपस्थिति पायी जाती है। भारत में मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, दिल्ली, हैदराबाद, बंगलौर, अहमदाबाद, कानपुर, लखनऊ, पुणे, नागपुर इस प्रकार के नगरों के विशेष उदाहरण हैं।

07– सन्नगर :– जब एक क्रमबद्ध एक सूत्रीय स्तर पर एक या अधिक केन्द्रीय नगर अन्य छोटे नगरों के साथ परस्पर कार्यात्मक एवं संरचनात्मक रूप से सम्बद्ध हो जाते हैं तो ऐसे बृहत् महानगरीय श्रृंखला क्रम को सन्नगर कहते हैं। नगरीय भूगोल में सन्नगर के विकास की संकल्पना का श्रेय **पैट्रिक गेड्स** को दिया जाता है। इस प्रकार के नगरों के लिए कोनरवेशन शब्द का प्रयोग किया जाता है जैसे– कोलकाता कोनरवेशन, देहली कोनरवेशन, लंकाशायर कोनरवेशन आदि।

08– मेगालोपोलिस :– यह ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है 'बहुत बड़ा नगर'। यह एक बृहत् नगरीय क्षेत्र होता है जिसका निर्माण कई नगरीय क्षेत्रों के मिलने से होता है। न्यू हैम्पशायर, मेसाच्यूसेट्स, न्यूयार्क, पेन्सिलवेनिया, नार्थ कैरोलिना इस प्रकार के नगर के उदाहरण हैं।

09– एकुमेनोपोलिस :– नगरीय विकास की गति आज सम्पूर्ण विश्व में अत्यधिक तीव्र पायी जाती है और ऐसी उम्मीद की जाती है कि निकट भविष्य में एक समय ऐसा भी आयेगा जब यातायात एवं संचार साधनों में तीव्र विकास के कारण नगरीय प्रदेश आपस में मिलकर एक वृहत् एवं जटिल नगरीय तन्त्र का निर्माण करेंगे जो बहुकेन्द्रीय होगा और उसे **विश्व नगरी कहना उपयुक्त होगा।**

15.9.2– स्मार्ट सिटी मिशनः–

स्मार्ट सिटी मिशन स्थानीय विकास को सक्षम करने और प्रौद्योगिकी की मदद से नागरिकों के लिए बेहतर परिणामों के माध्यम से जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने तथा आर्थिक विकास को गति देने हेतु भारत सरकार द्वारा एक अभिनव और नई पहल है। स्मार्ट सिटीज मिशन की शुरुआत 2015 में हुई थी। इस मिशन का लक्ष्य ऐसे शहरों को तैयार करना है जो अपने नागरिकों को बुनियादी अवसंरचना और बेहतर जीवनशैली उपलब्ध कराते हों, साथ ही स्वच्छ एवं संधारणीय वातावरण और ''स्मार्ट'' सॉल्यूशन अनुप्रयोग है। स्मार्ट सिटी में निहित बुनियादी तत्वों में प्रचुर जलापूर्ति; सुनिश्चित बिजली आपूर्ति; स्वच्छता; ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन; सुचारु शहरी आवागमन और सार्वजनिक परिवहन; वहनीय आवास–खासकर निर्धन वर्ग के लिए, मजबूत आईटी कनेक्टिविटी और डिजिटलीकरण; सुशासन–विशेषकर ई–गवर्नेंस और नागरिक सहभागिता, नागरिकों की सुरक्षा तथा महिलाओं,

बच्चों और वृद्धों के लिए उचित वातावरण एवं स्वास्थ्य और शिक्षा।

इसके तहत अखिल भारतीय प्रतियोगिता के आधार पर चार चरणों में 100 शहरों का चयन किया गया। इन सभी 100 शहरों में स्पेशल पर्पस (एसपीवी) व्हीकल, षहर स्तरीय सलाहकार फोरम (सीएलएएफ) को षामिल किया गया है तथा प्रायोजन सलाहकारों की नियुक्ति की गई है।

15.10– नगरीकरण का प्रभाव :– (Impact of Urbanization)

नगरीकरण की वर्तमान प्रवृत्तियां यह चेतावनी दे रही हैं कि नगरों की स्थिति भयावह दृश्य उपस्थित कर रही है। क्या आज का बालक भीड़–भाड़ वाले नगरों में जन्म ले रहा है? आज के नगर नियोजक क्या ऐसे नगर बसाने में लगे हैं जो पर्यावरण के हर पहलू को नजरअन्दाज न करता हो। विश्व के अनेक नगर आज विकास के मार्ग की और अग्रसर नहीं हो रहे हैं बल्कि विकास के अवरोधों की और बढ़ रहे हैं। समीपवर्ती देहात क्षेत्र के लोग नगरों में अमानवीय बस्तियों को जन्म दे रहे हैं। यह अमानवीय बस्तियां–झुग्गी झोपड़ियों चाल, विकीर्ण एवं टूटे–फूटे मकानों के रूप में हैं। यह प्रवृत्ति नगरों को गन्दी एवं जर्जर झोपड़ियों की बस्तियों में बदल रहे हैं।

राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग के एक आंकड़े के अनुसार भारत की नगरीय जनसंख्या अगले जनगणना वर्ष में जब 5350 लाख तक पहुँच जायेगी तो गंदी बस्तियों की जनसंख्या 1040 लाख तक अर्थात् कुल नगरीय जनसंख्या का 19.4% हो जायेंगी जो कि विचारणीय बिन्दु है। विशुद्ध रूप में यदि देखा जाये तो वास्तव में नगरीकरण में विस्तार एवं वृद्धि का तात्पर्य होता है नगरों में मानव जनसंख्या के सांद्रण एवं अत्यधिक वृद्धि तथा इस नगरीय जनसंख्या में प्रस्फोट के कारण भवनों, सड़कों, गलियों, मल–जल के नालों, बरसाती नालों, प्लास्टर वाली सतह, स्वचालित वाहनों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, नगरों द्वारा निःसृत अपमार्जक पदार्थों, धूल, राख, कचरा मल–जल, दूषित जल एवं हानिकारक गैसों आदि में भारी मात्रा में वृद्धि होती है जो विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न करती हैं। विभिन्न शहरों यथा दिल्ली, आगरा, कानपुर, अब एक मल–जल वाहक बन कर रह गयी हैं। नगरीकरण के प्रभाव का ऑकलन करना एक कठिन कार्य है क्योंकि इसका प्रभाव किसी एक क्षेत्र में न होकर अनेक क्षेत्रों पर पड़ता है। कुछ प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–

- पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव
- कूड़ा–करकट का विसर्जन (ठोस अपशिष्ट, द्रव अपशिष्ट एवं गैसीय अपशिष्ट)
- नगरीय प्रसार व कृषि भूमि का संकुचन
- शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं
- अवैध निर्माण एवं सरकारी एवं गैर सरकारी भूमि का अधिग्रहण
- खुले भू–भागों में कमी
- नगर निकायों का वित्तीय संकट
- आतंकी हमले
- जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभाव
- अन्य समस्याएं

इस प्रकार नगरीकरण के प्रभाव स्वरूप विभिन्न क्षेत्र किसी न किसी रूप में प्रभावित होते हैं। आज तक के नगरीकरण के प्रभावों के अवलोकन से इस बात का स्पष्ट मूल्यांकन किया जा सकता है।

15.11 सारांश

प्रिय विद्याथियों वर्तमान विश्व में प्रत्येक देश नगरीकरण को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं में शामिल कर रखे हैं और इस दिशा में अत्यधिक तीव्र गति से प्रयास किए जा रहे हैं। विभिन्न प्रकार के अन्वेषणों द्वारा नगरीकरण के विकास के सन्दर्भ में नित नवीन शोध हो रहे हैं और लगातार नगरीय जनसंख्या में वृद्धि को निरन्तर प्रोत्साहित कर रहे हैं। आज विश्व की आधे से अधिक जनसंख्या नगरों में निवास कर रही है। विकसित देशों की लगभग तीन चौथाई तथा विकासशील देशों की लगभग एक तिहाई जनसंख्या नगरों में निवास करती है।

जनसंख्या के केन्द्रण के कारणों में विभिन्नता पायी जाती है और इन्हीं विशेषताओं के आधार पर नगरीकण एवं नगरों के प्रकारों के विभिन्न प्रकारों को इस इकाई के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। ऐसी अपेक्षा की जाती है कि यह इकाई विद्यार्थियों के नगर एवं नगरीकरण सम्बन्धी ज्ञान में वृद्धि करेगी एवं नगरीकरण के लाभों एवं हानियों का मूल्यांकन कर नीति निर्धारण करने के लिए अपने आप को समर्थ बना सकेंगे।

15.12 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01– नगरीकरण क्या है? इसका अर्थ बताते हुए इसके प्रतिरूप का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–02– विश्व में नगरीकरण के वितरण को बताते हुए इसके प्रभाव का वर्णन कीजिए।

प्रश्न–03– जनसंख्या के आधार पर विश्व में नगरों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।

प्रश्न–04– नगरों की उत्पत्ति एवं विकास के कारणों का विस्तृत व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न–01 नगरीकरण को परिभाषित कीजिए।

प्रश्न–02– नगरों के विकास में स्थलीय कारकों के प्रभाव को समझाइए।

प्रश्न–03– औद्योगीकरण का नगरों पर प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न–04– नगरीकरण की ऐतिहासिक अवस्थाएं बताइए।

15.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01– मानव भूगोल, डॉ0 हुसैन माजिद, रावत पब्लिकेशन, सत्यम अपार्टमेन्ट, सेक्टर 3 जवाहर नगर, जयपुर, 302004, पृष्ठ सं–374।

02– नगरीय भूगोल, डॉ0 रतन जोशी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्लाट नं 1 झालाना, सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर, पृष्ठ सं–25, 29, 101, 113, 116।

03– नगरीय भूगोल, डॉ0 बंसल सुरेश चन्द्र, मीनक्षी प्रकाशन, अकेडेमिक प्रेस, मेरठ, पृष्ठ सं–169, 170, 85।

04– Breese G,The City in Newky Developing Countries, op.cit.p-53.

05– मानव भूगोल, प्रो0 बी0 एन0 सिंह, प्रयाग पुस्तक भवन, प्रयागराज, पृष्ठ सं–401, 402, 403, 404, 405।

06– Mumford. Levis, Culture of Cities. 1938AD, P-481.

07– Smail.A. E. The Geography of Towns, op. cit. P-41.

08– Dikinson R.E. The Scope Status of Urban Geography. op. cit. p-12.

09– Yeats M. H. Garner B.J. The NorthAmerican City,

10– Hudson, F. S. ;A Geography of Settlement, 1970, p-79

11– Aurosseau, M; Distribution of Population;A Constructive problem, Geographical Review, Vol.II,1921, P.574.

12– Nelson H J ; 'A Service Classification ofAmerican Cities', Economic Geography,vol. 31, 1955,pp189-210, reprinted in Readings in urban Geography , op. cit.,139-160.

13– Garnier, J. BeaujeuAnd G.Chabot,; Urban Geography 1967,P-149.

14– भारत 2022, वार्षिक सन्दर्भ ग्रन्थ, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003, पृष्ठ सं–516।

NOTE